

एक बूँद सहसा उछली

सच्चिदानन्द वात्स्यायन

जन्म कुशीनगर जिला देवरिया फाल्गुन शुक्ल सप्तमी सं० १९६७ तदनुसार ७ मार्च १९११।

बचपन लखनऊ कश्मीर नालन्दा-पटना और नीलगिरिमें बीता जहाँ संस्कृतके साथ कुछ फारसीका और हिन्दीतर भारतीय भाषाओंका अध्ययन किया। विश्वविद्यालयीन शिक्षा मद्रास और लाहौरमें हुई बी० एस-सी० करके अंग्रेजी विषयमें एम० ए० की पढ़ाई करते समय क्रान्तिकारी आन्दोलनके प्रसंगमें फरार हुए और १९३० के अन्तमें पकड़े गये। चार वर्ष जेलमें और दो वर्ष नजरबन्द रहे। किसान-आन्दोलनमें भाग लिया। हिन्दी और अंग्रेजीके विभिन्न पत्रोंका सम्पादन किया और अब वाक् (अंग्रेजी त्रैमासिक) निकालते हैं। कुछ वर्ष आल इंडिया रेडियोमें रहे तीन वर्ष सेनामें। सन् १९५५-५६ में युनेस्कोकी एक ल्यक-वृत्तिपर यूरोप गये सन् १९५७-५८ में रॉकफेलर कोषकी यात्रा-वृत्तिपर पूर्वेशिया। सन १९६ में पुनः यूरोप गये।

पहली रचना (कहानी) सन १९२४ में छपी पहली कविता सन् १९२७ में।

एक बूँद सहसा उछली

[यूरोप-यात्राओंके वृत्त और संस्मरण]

सच्चिदानन्द वात्स्यायन

भारतीय ज्ञानपीठ
काशी

हिन्दी-ग्रन्थाङ्क—१३०
ज्ञानपीठ लोकोदय-ग्रन्थमाला-सम्पादक और नियामक
श्री लक्ष्मीचन्द्र जैन

प्रथम संस्करण
१९६०
मूल्य सात रुपये

प्रकाशक
मन्त्री भारतीय ज्ञानपीठ
दुर्गाकुण्ड रोड वाराणसी

मुद्रक
बाबूलाल जैन फागुल्ल
सन्मति मुद्रणालय वाराणसी

मैंने देखा
एक बूँद सहसा
उछली सागरके झागसे—
रँगी गयी क्षण भर
ढलते सूरजकी आगसे ।
—मुझको दीख गया
हर आलोक-छुआ अपनापन
है उन्मोचन
नश्वरताके दागसे ।

गिज़ेलाके लिए

यद्यपि उतना ही निष्प्रयोजन, जितना
एक प्राचीन गिरजाघरमें बने हुए भिक्षु विहारमें बैठ कर
अन्यमनस्क भावसे यह कहना कि 'मैं जानता हूँ
एक दिन मैं फकीर हो जाऊँगा।'

क्रम-सूची

	निवदन	१३
१	यूरोपकी अमरावती रामा	१०
२	विद्रोहकी परम्पराम	३८
३	यूरोपकी पद्मावती फिरेंजे	४१
४	खुदाके मसखरेके घर असासी	५४
५	यूरोपकी छतपर स्विट्जरलैण्ड	६३
६	एक यूरोपीय चिन्तकसे भेंट	[illegible]
७	तो यह परिस ह !	८५
८	एक दूसरा फ्रास	९६
९	बालूकी भीतपर	११३
१०	सयुक्त राज्य दो राजधानियाँ	१२८
११	ताल-तलहटी मौत और स्रष्टा	१४२
१२	बीस हजार राष्ट्रकवि	१६७
१३	नीलमका सागर, पन्नेका द्वीप	१७
१४	धर्म विश्वासोंका गोकुला	१ ०
१५	बीसवी शतीका गोलोक	२०७
१६	एक अनमना कवि	२३०
१७	लोकोत्तर	२४६
१८	सागर कन्या और लग गावक	२६०
१९	राइनक साथ-साथ	२६८
२०	पतझरका एक पात	२८३
२१	यूरोपका स्नायुकेन्द्र बर्लिन	२८६
२२	प्राची प्रतीची	३१२

चित्र-सूची

		पृष्ठ
१	मन देखा —(पेरिस १९५५)	मुख चित्र
२	रोमा कोलोसियमके रोमिक खडहर	३२
३	रोमा रोमिक चौकपर सूर्यास्त	२
४	कवि कीटसकी समाधिपर	३
५	रोमा स्पानी चौक	३३
६	फ्लोरेंस संग्रहालय और पुराना मन्दिर	४८
७	फ्लोरेंस आर्नो नदीके दो पुल	४८
८	फ्लोरेंसका बड़ा गिरजाघर	४८–४९
९	फ्लोरेंसके कलासंग्रहोंमें परिदृश्य	४८–४९
१०	असीसी विहगम दृश्य	४८–४९
११	असीसी सन्तकी समाधि	४८–४९
१२	सुबासियाका गुफा विहार	४९
१३	दूसरा ईसा सन्त फ्रांसिस	४९
१४	फ्लोरेंसका मरियमका गिरजाघर	४९
१५	स्वप्नमें सूर्योदय	६
१६	फ्रांसी मिमासका अन्तरीपपर उषा किरण	९६
१७	पेरिस आवागमन आत्मा मानार	९६–९७
१८	पेरिसका विजय-स्मारक (उद्यान)	९६–९७
१	पेरिस नात्र दामका गिरजाघर	९६–९७
२	पेरिस नात्र दाम और सन नदी	९६– ७
२१	पेरिस विश्व-वारका मन्दिर	९७

२२	पिएर विव-वीरकी मरियम	९७
२३	पिएर विव-वीर मठका द्वार	९७
२४	हालंड एक पवन-चक्की	११२
२५	हालंड राजधानीका सागर-तट	११२
२६	एम्स्टर्डामकी एक नहर	११३
२७	स्खेवनिंडेनका 'स्वास्थ्य भवन	११४
२८	शेक्सपियर स्मारक रंगशाला स्ट्रटफार्ड	१२८
२९	एडिनबरा दुर्ग (रातमें)	१२९
३०	वर्ड्स्वर्थका घर	१६०
३१	राइडाल्वाटर	१६०
३२	रस्किन शिला	१६१
३३	डर्वेंटवाटर	१६१
३४	पुल्हेली (वल्स) का विहगम दृश्य	१७६
३५	सेंट फर्गस उद्यानमें सोसेका हौज	१७६
३६	आयरलंडका सागर-तट	१७७
३७	स्टाकहोममें सूर्यास्त	२०८
३८	मध्य रात्रिका सूर्य आबिस्को	२०९
३९	तोर्ने त्रास्क झील लापोनिया	२०९
४०	अमनोत्सवकी तयारी—सिगतुना	२२४
४१	(क) स्टाकहोममें एक काव्य गोष्ठी	२२५
४१	(ख) ग्रीष्मकालीन विद्यालयमें	२२५
४२	हिमानी और हिम शिखित झील	२५६
४३	हमलेटका दुर्ग—एल्सिनोर	२५७
४४	एल्सिनोर दुर्गका भीतरी प्रकोष्ठ	२५७
४५	राइन प्रदेशमें विगरब्रुक	२७२
४६	कार्ल्सरुहे नगर भवनका उद्यान	२७२

४७ बाढ क्रोएत्सनाख २७३
४८ डा० फाउस्टका घर क्रोएत्सनाख २७३
४९ बॉन बटहोवन भवन ३०४
५० बोन बटहोवनका जन्म-स्थल ३०४
५१ बर्लिन सीमा रक्षा ३०५

निवेदन

इस पुस्तकमें क्या है इसके बारेमें कुछ कहनेकी आवश्यकता मैं नहीं समझता। इसके पाठकोंमें एक वर्ग अवश्य ऐसा होगा जो कि पुस्तक पढ़नेके बाद ही स्वतन्त्र रूपसे निर्णय करना चाहेगा कि उसकी रायमें इस पुस्तकमें क्या है और उसपर इसका तनिक भी प्रभाव नहीं पड़ेगा कि मैंने उसके विषयमें क्या कहा है। निःसन्देह एक दूसरा वर्ग ऐसा भी होगा जिसने पुस्तक पढ़नेसे पहले अपनी पक्की धारणा बना रखी होगी कि क्या उसे मेरी पुस्तकमें पाना है, इस वर्गको भी इससे प्रयोजन नहीं होगा कि मैंने भूमिकामें पुस्तकके विषयमें क्या कहा है—या कि पुस्तकमें ही क्या कहा है।

इसलिए पुस्तकमें जो कुछ है उसके बारेमें कोई सफाई मुझे नहीं देनी है। क्या-क्या वह नहीं है इसीके बारेमें दो एक शब्द कहना चाहता हूँ।

यह पुस्तक मार्गदर्शिका नहीं है। इसके सहारे यूरोपकी यात्रा करनेवाला यह जान लेना चाहे कि कैसे वह कहाँसे कहाँ जा सकेगा या कैसे मौसमके लिए कैसे कपड़े उसे ले जाने होंगे या कि वहाँ कितनेमें उसका खर्चा चल सकेगा, तो उसे निराशा होगी। जो यह जानना चाहते हों कि वहाँसे नाइलानकी साड़ियाँ—या कैमरे, या घड़ियाँ या सेंट, या ऐसी दूसरी चीजें जो कि भारतवासी विदेशोंसे उन कला-वस्तुओंके एवजमें लाते हैं जो कि विदेशी यहाँसे ले जाते हैं—कहाँसे किफायतमें मिल जायेंगी उनके भी कामकी यह पुस्तक नहीं होगी। वास्तवमें ऐसे पाठकको यह पुस्तक पढ़नेकी कोई आवश्यकता नहीं है और मैं उन लेखकोंमेंसे नहीं हूँ जो समझते हैं कि अगर पाठकने मुगालतेसे किताब खरीद ली तो वह भी लाभ ही हुआ क्योंकि बिक्री तो हुई। जिस पाठकके द्वारा मैं पढ़ा जाना चाहता हूँ उसका स्वरूप मेरे सम्मुख स्पष्ट है। मैं उसका सम्मान भी करता हूँ। और इसलिए

भरसक उस भ्रान्तिमें न डाल रखना चाहता, न भ्रान्त होनेका अवसर देना चाहता हूँ।

उस मेरे वांछित पाठक-वर्गमें समाजके और शिक्षाके सभी स्तरोंके लोग हैं। (अशिक्षा शिक्षाका स्तर नहीं है, उसका नकार है।) उसमें ऐसे भी हैं जो अंग्रेज़ी या अंग्रेज़ीके अलावा दूसरी विदेशी भाषाएँ जानते हैं (और इसके बावजूद हिन्दी भी पढ़ लेते हैं!) और ऐसे भी हैं जो कोई विदेशी भाषा नहीं जानते या हिन्दीके अतिरिक्त कोई दूसरी भाषा नहीं जानते। उनमें ऐसे लोग हैं जो अनेक बार पश्चिम और पूर्वके विभिन्न देशोंकी सैर कर आये हैं, ऐसे भी हैं जो शीघ्र विदेशोंको जानेवाले हैं, ऐसे भी हैं जो जानेवाले हों या न हों विदेश-यात्राके सपने देखते हैं और ऐसे भी हैं जिनके सम्मुख ऐसी कोई सम्भावना नहीं है और इसके लिए विशेष उत्कण्ठा भी नहीं है। वास्तवमें इन सब बातोंमेंसे कोई भी पाठककी कसौटी नहीं है।

मेरा पाठक संवेदनशील हो, यह मैं उससे चाहता हूँ। क्योंकि बिना इसके वह उसे नहीं अपना सकेगा जो मेरी संवेदनाने ग्रहण किया। जो स्वयं संवेदनशील नहीं है वह यह नहीं पहचानता कि सबकी संवेदना अलग-अलग होती है—उसके निकट संवेदनाका भी एक बना-बनाया ढाँचा होता है। वह किसी अनुभवको तत्त्वतः ग्रहण ही नहीं कर सकता, केवल उसके टुकड़े करके अलग-अलग खाँचोंमें रख सकता है।

पाठक उदारमना हो, यह भी मैं चाहता हूँ। बिना इसके वह दूसरेके विचारोंका सम्मान नहीं कर सकता। बल्कि वह शायद अपने भी विचार नहीं रख सकता, क्योंकि अनुदार विचार तो अपनी उपलब्धि नहीं, रूढ़िकी देन होते हैं।

पाठक अनुभवके प्रति सच्चा हो, जीवनसे प्रेम करता हो, यह भी मैं चाहता हूँ। जो अनुभवके प्रति सच्चा नहीं है उसे दूसरेके अनुभवसे भी क्या प्रयोजन हो सकता है? और जो जीवनसे प्रेम नहीं करता उसके निकट अनुभवका ही क्या मूल्य है? जीवन प्रेम हो तभी तो अनुभवका धन

के रूपमें पहचाना जा सकता है तभी सम्पन्न और दरिद्र की पहचानके आधार आर्थिक मूल्य न रहकर मानवीय मूल्य हो जाते हैं—जीवनके मूल्य ही तो मानवीय मूल्य हैं।

वास्तवमें जो ऐसे पाठक हैं उन्हें यह भी नहीं बताना होगा कि पुस्तकमें क्या नहीं है। उनकी सम्भावना—और सत्ता—स्वयं नीर-क्षीर करती चलेगी। उन्हें जो मिलेगा उतना ही केवल उनकी नहीं बल्कि मेरी भी उपलब्धि होगा। जो नहीं मिलेगा वह उसमें है ऐसा कहनेकी हठधर्मी मैं न करूँगा।

क्या ऐसे पाठक बहुत थोड़े हैं? कहा जाता है कि मैं अभिजात वर्गका हूँ (कहनेवालेके निकट 'अभिजात' का जो भी अर्थ हो), और इसलिए अल्पसंख्य पाठकोंके लिए ही लिखता हूँ—अभिजात पाठकोंके लिए ही। कोई क्या जान बूझकर अपने पाठकोंकी संख्या कम करना चाहेगा यह मैं नहीं जानता। हर कोई मेरा लिखा हुआ जरूर पढ़े ही ऐसा मेरा कोई आग्रह नहीं है ऐसी कोई अवचेतन कामना भी मेरी न होगी। किन्तु हर कोई मेरा पाठक हो सकता है ऐसा मैं मानता हूँ।

मानवमें मेरी श्रद्धा है। मानव मात्रको मैं अभिजात मानता हूँ। मेरा परिश्रम उसके काम आवे इसे मैं अपनी सफलता मानता हूँ। इस पुस्तकमें जो परिश्रम हुआ है जो कुछ प्रस्तुत किया गया है वह उस समृद्धिमें कुछ भी योग दे सके जिसके मानदण्ड आर्थिक नहीं हैं तो मैं अपनेको धन्य मानूँगा। योग वह दे सके या न दे सके उस परिश्रमके पीछे मेरी भावना यही रही है जो कुछ मेरी ओरसे निवेदित है उसके मूलमें यही साध है।

—सच्चिदानन्द वात्स्यायन

§ इस पुस्तकमें दिये गये प्रायः सभी चित्र लेखक द्वारा लिये गये फोटो हैं। जहाँ ऐसा नहीं है वहाँ चित्रके साथ इस बातका उल्लेख कर दिया गया है।

§ विदेशी नाम साधारणतया तद्देशीय उच्चारणके अनुसार लिखे गये हैं। यूरोपीय नामोंके यूरोपीय रूप बहुधा उनके अंग्रेज़ी रूपोंकी अपेक्षा हिन्दीके स्वभावके अधिक निकट होते हैं और उन्हें नागरीमें लिखना भी सुगमतर। जहाँ अंग्रेज़ी द्वारा परिचित रूप और देशीय रूप बहुत भिन्न हैं वहाँ सुविधाके लिए अंग्रेज़ी रूपका भी उल्लेख कर दिया गया है।

§ मुद्रणके लिए पाण्डुलिपि तैयार करनेमें श्री भोगराज थानीने जितना परिश्रम किया है उसका तो आभार है ही, पर जिस प्रसन्न उत्साहके साथ यह सहयोग उन्होंने लेखकको दिया है वह आभार-स्वीकारसे परे उन दुर्लभ विस्मयकर अनुभवोंकी श्रेणीमें है जो हिन्दीके लेखक जीवनको भी काम्य बना देते हैं।

—लेखक

§ इस पुस्तकमें दिये गये स्थान [illegible] जिन रूपोंमें [illegible] लिखे गये हैं। जहाँ बताया [illegible] है वहाँ विशेष नाम [illegible] उल्लेख कर दिया गया है।

§ विदेशी नाम साधारणतया स्थानीय उच्चारणके अनुसार लिखे गये हैं। यूरोपीय नामोंके यूरोपीय रूप बहुधा उनके अंग्रेजी रूपोंकी अपेक्षा हिन्दीके स्वभावके अधिक निकट होते हैं और उन्हें नागरीमें लिखना भी सुगमतर। जहाँ अंग्रेजी रूप परिचित रूप और स्थानीय रूप बहुत भिन्न हैं वहाँ सुविधाके लिए अंग्रेजी रूपका भी उल्लेख कर दिया गया है।

§ [illegible] लिए पाण्डुलिपि तैयार करनेमें श्री [illegible] जितना परिश्रम किया है उसका तो आभार है ही पर जिस प्रकार [illegible] साथ यह [illegible] लेखकको दिया है [illegible] आभार-स्वीकारसे पर उन दुर्लभ विस्मयकर अनुभवोंके ऋणमें है जो [illegible] जीवनको भी काम्य बना देते हैं।

—लेखक



'मैंने देखा—'

[परिसम पतझर शीर्षक एक वृत्तात्मक फिल्म के लिए चित्र लेते समय एक सहकर्मिणी द्वारा लिया गया फोटो]

फोटो [एवा मस्किएत्ति परिस दिसम्बर १९५५]

एक बूँद सहसा उछली

यूरोपकी अमरावती : रोमा

ज्ञान-वृद्धि और अनुभव-संचयके लिए देशाटन उपयोगी है यह पुरानी बात है। एक समय था जब कि कविके लिए—और क्योंकि काव्यकार ही एकमात्र कृतिकार था इसलिए समझ लीजिए कि अपने अर्थमें साहित्यकार मात्रके लिए देशाटन अनिवार्य समझा जाता था। किन्तु देशाटन कैसे किया जाय इसकी कोई विशेष पद्धति शास्त्रकारोंने नहीं बतायी—तीर्थाटनकी परम्परा थी लेकिन उसका उद्देश्य अनुभव-संचय नहीं बल्कि पुण्य-संचय था और वह भी भवानुभवसे मुक्ति पानेके लिए।

दुनियाकी जानकारी—और आज ज्ञान अथवा अनुभवसे जानकारी ही अधिक महत्त्वपूर्ण समझी जाती है—प्राप्त करनेके और उसके विषयमें अधिकारपूर्वक लिख सकनेके इधर दो अलग-अलग तरीके हो गये हैं। एक तो यह है कि आप सप्ताह भरमें दुनियाका हवाई—बल्कि तूफ़ानी दौरा करके लौट आइए फिर या तो एक 'संवाददाता सम्मेलन' बुला लीजिए और उसे अपनी प्रथम धारणाओंके बारेमें एक-एक बयान दे डालिए, या फिर एक शीघ्रलिपिक बुला लीजिए और एक पुस्तक लिखा डालिए जो साथ-साथ छपती भी जाय—क्योंकि अन्यथा आपके अनुभवोंके पुराने पड़कर अरोचक हो जानेका डर है। लिखनेके लिए अनुकूल समय और एकान्त आवश्यक हो तो पुस्तक लिपिककी बजाय रिकार्ड करनेवाले यन्त्रको भी लिखायी जा सकती है।

स्पष्ट है कि यह मार्ग बड़े आदमी ही अपना सकते हैं जिनके बयानका महत्त्व जितना उसकी विषय-वस्तुके कारण हो उतना ही वक्ताके नामके कारण। आपने यह बात कहाँ सुनी? "जी, ठीक घोड़ेके मुँहसे प्राप्त

हुई है। (अब तक सब पुस्तकें अंग्रेज़ी अनुवाद करनेके लिए समितियाँ बन रही हैं। अब यहाँ भी अंग्रेज़ी सफलताका अनुवाद कर लिया गया है। इतना अवश्य है कि यदि यह अनुवाद किसी समिति द्वारा किया गया होता तो पाठक मेरे जैसा सीधी और सहज बात न कहकर 'हृदयस्पन्दन' या 'तुरङ्गमन' जैसे किसी प्रभावशाली शब्दका उपयोग किया जाता। अपनी अल्पज्ञता और गुरुत्वहीनता स्वीकार करता हूँ।)

दूसरा तरीका यह है कि आप काला छाता निरवधि मानकर इस विपुल देशकी परिक्रमा करने निकल जाइए और यह चिन्ता छोड़ दीजिए कि कब लौटना होगा या कब यात्रा पूरी होगी। प्रत्यावर्तनकी चिन्ता किस दिन कब अगस्त्य जी लौटकर प्रत्यावर्तनका आशीर्वाद पाकर सिर उठाकर पूछ सकेगा कि प्रभु पाद किसको कब प्राप्त होगा? आप यह मार्ग अपनायें तो जो देश जितना समय माँगे निस्संकोच देते चलिए, पहले ही देशमें दो चार छः वर्ष लग जायँ तो भी चिन्ता न कीजिए, यह मान लीजिए कि आरम्भका यह विलम्ब आगेकी प्रगतिके लिए नींव-भूमिकाका काम देगा।

स्पष्ट है कि यह दूसरा मार्ग सिद्धों-सन्तोंका है—सिद्धोंका नहीं तो असाध्य घुमक्कड़ोंका।

मैं साधारण बीच बचौला आदमी होनेके नाते न तो इतना सौभाग्यशाली हो सकता हूँ कि दूसरी कोटिमें आऊँ, न इतना विशिष्ट अभागा हूँ कि पहली कोटिमें गिन लिया जाऊँ। मुझे यूरोप भ्रमणके लिए [illegible] मासका समय दिया गया जिसे खींच-खाँचकर मैंने दस मास तक बढ़ाया। किन्तु इतना समय भी केवल यही भर जाननेके लिए पर्याप्त होता है कि कुछ भी जाननेके लिए वह कितना अपर्याप्त है! यात्री अपने पहले सप्ताहका सब जाननेवाला-पन खो चुकता है और जिज्ञासाओंकी सूची भर बनाकर लौट आता है।

किन्तु जानना ही सब कुछ नहीं है। देखना और जो देखा उसके बारेमें सोचना भी बड़ी बात है। और पूर्वग्रहोंको छोड़ सकना तथा

पूछनेके लिए सही प्रश्नोंकी सूची बना लेना—यह और भी बड़ी उपलब्धि है। आजके युगमें, जब कुछ खोजने चलनेसे कुछ मानकर चलनेको अधिक महत्त्व दिया जाता है और जब यात्री प्रायः कुछ देखने नहीं, जो मानकर चले हैं उसकी पुष्टि पाने निकलते हैं, तब उसका महत्त्व और भी अधिक है। यात्री अधिक पूजा न लेकर लौटें या फालतू असबाबसे छुट्टी पाकर सहज यात्रा करना ही सीख आयें यही बहुत है। मैं उन लोगोंकी बात नहीं कहता जो यहाँसे कई एक खाली झोले लेकर चलते हैं और लौटते समय जिनके कपड़ोंके हर सलवटसे कलाई घड़ियोंकी लड़ियाँ, जूतोंके भीतरसे छः-छः जोड़े नाइलोनके मोजे या कोटके अस्तरमेंसे गजों आरगेंडी निकला करती है। न उन्हीं लोगोंकी बात कहता हूँ जिनके लिए स्वर्गीय आनन्द कुमार स्वामीने बहुत दुःखी होकर कहा था कि 'आप जब विदेशमें आयें तो वहाँके लोगोंको यह भी अनुभव करनेका कारण दीजिए कि आप अपने साथ खर्च करनेके लिए पैसोंके अलावा भी कुछ लेकर आये हैं!' * इन दोनों प्रकारके यात्रियोंको दूर ही से नमस्कार करता हूँ। जितनी अधिक दूर वे चले जायँ उतना ही अधिक विनत मेरा नमस्कार!

फालतू असबाबसे छुट्टी पाते हुए सहज भावसे यात्रा करना सीखते चलना ही मेरा उद्देश्य रहा है—विदेशाटनमें ही नहीं जीवन यात्रामें भी। इस प्रकार क्रमागत बेसरोसामान हो जानेमें संन्यासकी नाटकी तीव्रता या आत्यन्तिकता नहीं है लेकिन इससे मिलनेवाले हल्केपनसे मुक्तिका जो बोध होता है वह कुछ कम मूल्यवान नहीं है। लेकिन अंतिम उपलब्धिकी बात अभीसे करना दार्शनिकताके पचड़ेमें ले बढ़ना जान पड़ सकता है इसलिए उसे छोड़ आपको शान्ताके विमानपर बिठाकर सैर करानेके मेरे

---

* मसूरीमें कुछ पूर्व अमरीका जाते हुए भारतीय विद्यार्थियोंको सम्बोधन करते समय स्व० कुमार स्वामीने भारतीय संस्कारोंपर बल देते हुए यह कहा था। —लेखक

प्रयत्नमें मेरा उद्देश्य यही है कि हम महज आसमानमें अमूर्त लगे हुए आत्मा भी प्रत्यक्ष करा गए। पर एक स्थल है जिसका मुकाबला होना आवश्यक था है। तो लीजिए, पुराण भगवान् ईश्वर इन्द्र विमानकी सवारीके लिए तैयार हो जाइए।

अनन्तर उत्तराखण्ड एक रात्रि विश्राम कर। शून्य आकाश। वास्तवमें शून्य आकाश, क्योंकि आकाशमें जिस अनाम धूल या धूम होती है वह तो हमारे नीचे है। और धूल उसमें है भी नहीं। चाँदी-सी चमकीली धूप ही है बहुत बारीक धुनी हुई रुई-सी।

यह ऊपर आकाश नहीं है
रूपहीन आलोक मात्र। हम अचल-पंख
तिरते जाते हैं
भार मुक्त।
नीचे यह तारों घनी रूई-सी उजली
बादल सेज बिछी है
स्वप्न मसृण
या यहीं हमीं अपना सपना हैं?

हम नीचे उतर रहे हैं। धीरे धीरे आकाश कुछ कम खुला हो आता है और फिर नीचे बादल धवली रोशनी दीखने लगती है। विमानके भीतर चालकके केबिनको यात्रियोंके कमरेसे अलग करनेवाले द्वारके ऊपर बत्ती जल उठती है। पेटियाँ लगा लीजिए — सिगरेट बुझा दीजिए। एक गूँज-सी होती है, फिर स्वर आता है: थोड़ी देरमें हम लोग रोमके चाम्पीनो हवाई अड्डेपर उतरेंगे।

भारतसे रोम (इटालीय रोमाका अंग्रेज़ी रूप) तक २२ घण्टे लगे। देहलीसे ब्राह्मवेलामें चलना हुआ था और रोममें तो अभी रात ही थी। अमवाककी पड़तालमें अधिक समय नहीं लगा, और रोम उतरनेवाले यात्री सवारी गाड़ीमें बैठ गये। हवाई यात्राका सबसे अधिक समय लेनेवाला अंश वह होता है जब भूमिपर होते हैं : शहरसे हवाई अड्डे तक या अड्डेसे शहर तक आने-जाने और विमानकी प्रतीक्षामें। पर रातके सन्नाटेमें हमारी बस बहुत तेजीसे सड़कको लम्बाई नापती चलती है और शीघ्र ही हम रोम शहरमें प्रवेश करते हैं। मैं जानता हूँ कि दिनके प्रकाशमें रोम बिल्कुल दूसरा दीखने लगेगा पर इस समय भी जो दीख रहा है वह अपूर्व और आकर्षक है। अंगूरकी कटी-छटी बेलें—इतनी सीधी कटी हुई कि पौधे मालूम हों। लिलाककी झाड़ियाँ जिनके बकायन जैसे फूलोंके गुच्छोंका रंग रातमें नहीं पहचाना जाता। पर मधुर गन्ध वायुमण्डलको भर रही है। तरह तरहके खण्डहर जिनमें कुछ चित्रों द्वारा परिचित हैं कुछ अपरिचित। स्वच्छ सुन्दर सड़कें जहाँ-तहाँ प्रतिमा मण्डित फव्वारे—ये फव्वारे न केवल इटलीकी मूर्तिशिल्प और वास्तु प्रतिभाके उत्कृष्ट नमूने हैं वरन पौराणिक आख्यानोंसे इतने गुंथे हुए हैं कि पूरी क्लासिकल परम्परा उनकी फुहारके साथ मानो झरती रहती है। नगरके मध्यमें फोन्ताना दि त्रेवी मानो कल्पस्रोत है—वहाँपर यात्री जलमें सिक्का फेंककर मन्नत करते हैं कि उनका फिर रोम आना हो। सुना है कि त्रेवीकी शक्ति दिल्लीकी हथिया पीर से कुछ कम नहीं है किन्तु इटली फिर आना चाहकर भी मन उसका सहयोग नहीं माँगा! या उत्सुक अथवा चिन्तित प्रेमी-युगलोंकी भीड़ त्रेवीपर लगी ही रहती है और विदेशी यात्रियोंको स्थायी स्मृति सुख देनेके लिए गिद्धों-सी तीव्र दृष्टिवाले फोटोग्राफरोंकी पंक्तियाँ भी दिन रात कैमरे और रोशनीका सामान लिये फुव्वारेके आस-पास मँडराती रहती हैं।

किन्तु मैं अपनी कलमसे भी अधिक तेज गतिसे चलने लगा! मुड़ना

बलखाती हुई गलियाँ और चक्करदार ऊँची-नीची गलियाँ जिनमें विभिन्न कालोंके विभिन्न स्थापत्य शैलियोंके साथ-साथ मकान, भवन-भवन बंगल गुम्बद और शैलियोंका यह मिश्रण और घरोंकी बनावटकी अपना एक अलग सौन्दर्य लिये हुए है। और जहाँ-तहाँ अप्रत्याशित स्थलोंपर—जैसे सड़कके बीचो-बीच या चौराहेपर, गलियोंके मोड़पर, सिपाहियोंके खड़े होनेके चबूतरेके आस-पास गमलोंके, फव्वारे और—फूलोंकी क्यारियाँ।

अनन्तर रोमके ... यूरोपकी गलियोंके बारेमें और भी बहुत कुछ जानेगा, पर यह तो पहलेसे ही स्पष्ट लगता है कि यूरोपके पुराने शहरोंकी ये बलखाती गलियाँ एक अनिवार्य सौन्दर्य लिये हुए हैं। कभी सड़कोंको देखकर चल जाना मानो एक लिफाफेको देखकर बिना उसके भीतरके निजी पत्रकी बात पढ़े ही चल देना है। रोममें उस दिन चार दिनके प्रवासके बाद मन इटलीके विभिन्न शहरोंकी गलियोंमें—विशेषकर फिरेंज (अर्थात् फ्लोरेंस), पेरुजिया, असीसी आदि मध्य इटलीके प्राचीन शहरोंकी गलियोंमें पैदल भटक-भटक कितने घण्टे बिताये हैं और कितने मील नापे हैं इसका हिसाब नहीं है। और इसी प्रकार पेरिसकी गलियोंमें और जनीवा, वीएना, बान, एम्स्टर्डाम, डल्फ़्ट, स्टाकहोम आदि पुराने और कम पुराने शहरोंके पुराने भागोंकी गलियोंमें। और सचमुच हम इस बातसे प्रसन्न हो सकते हैं कि यद्यपि बड़ी सड़कोंसे हटकर गलियोंमें जानेका अर्थ सर्वत्र यही हुआ कि किसी शहरके बारेमें दावेसे कुछ कह सकना कठिनतर हो गया, गलियोंमें जानेपर शहरोंके निवासी सहसा एक गति-युक्त रक्त परम्परा-सम्पन्न जीवन्त मानव समाजके रूपमें भरे निकट आ गये हैं, पहचाने गये हैं। कोई पूछ सकता है कि यदि ऐसा है तो क्या उनके बारेमें कुछ कहना कठिनतर हो गया है? तो उसका उत्तर यही है कि इसीलिए। इस लिए कि लोग सहसा एक इतर समाजसे निकट आकर घरके-से लोग हो गये हैं। घरके लोगोंके बारेमें यह कह देना तो आसान होता है कि

अच्छे लगने है या कि हमें नहीं अच्छे लगते पर उनका वर्णन करना उतना आसान नहीं रह जाता।

भीड़में
जब जब जिस जिससे आँखें मिलती हैं
वह सहसा दिख जाता है
मानव
अंगारे सा भगवान् सा
अकेला।

और इस प्रकार आँखें मिलनेके बाद उसके बारेमें कुछ कहना कठिन तर हो जाता है—इसलिए और भी अधिक कि उसकी आँखोंमें प्रच्छन्न या प्रकट रूपमें अपनी प्रतिच्छवि झाँकती जान पड़ती है

खड़ा मिलेगा
वहाँ सामने तुमको
अनपेक्षित प्रतिरूप तुम्हारा
नर जिसकी अनभिप्र आँखोंमें नारायणकी व्यथा भरी है।

यों तो ऐसे एक अकेले व्यक्तिके चित्रणसे भी एक पूरे देशका, सभ्यताका युगका चित्र खींचा जा सकता है। यूरोपके एकाधिक देशोंमें मुझे ऐसे व्यक्तियोंका दर्शन या उनसे मिलनेका सहयोग हुआ जिनके माध्यमसे कुछ क्षणोंमें ही मुझ एक पूरे समाजकी—या कम-से कम विशेष युग स्थितिमें समाजकी जीवन-परिपाटी बिजलीकी-सी कौंधके साथ दीख गयी—मुझे ऐसा लगा कि मन सहसा पूरे देश—बल्कि समूचे यूरोपकी आत्माकी एक झाँकी पा ली है। जैसा कि ब्राउनिंगने कहा है

बलखाती हुई सर्पों और चक्करदार ऊँची-नीची गलियाँ जिनमें विभिन्न कालोंके विभिन्न स्थापत्य-शैलियोंके तरह-तरहके मकान अपने-अपने ढंगसे सुंदर और गलियोंका यह मिश्रण और घरोंकी बनावटोंकी अपना एक अलग सौन्दर्य लिये हुए है। और जहाँ-तहाँ अप्रत्याशित स्थलोंपर—जैसे सड़कोंके बीचों-बीच या चौराहोंपर गलियोंके मोड़पर सिपाहियोंके खड़े होनेके चबूतरके आस-पास सन्तरीके ठियेके चारों ओर—फूलोंकी क्यारियाँ।

अनन्तर रोमके इटलीके यूरोपकी गलियोंके बारेमें और भी बहुत कुछ जानूँगा पर यह तो पहले ही दीख रहा है कि यूरोपके पुराने शहरोंकी ये बलखाती गलियाँ एक अन्तिम सौन्दर्य लिये हुए हैं। बड़ी सड़कोंको देखकर चले जाना मानो एक लिफ़ाफ़ेको देखकर बिना उसके भीतरके निजी पत्रकी बात पढ़े ही चल देना है। रोमके उन पहले चार दिनोंके प्रथमके बाद मन इटलीके विभिन्न शहरोंकी गलियोंमें—विशेषकर फ़िरेंज़े (अर्थात् फ्लोरेंस) पेरूजिया असीसी आदि मध्य इटलीके प्राचीन शहरोंकी गलियोंमें पैदल भटक-भटक कितने घण्टे बिताये हैं और कितने मील नापे हैं इसका हिसाब नहीं है। और इसी प्रकार पेरिसकी गलियोंमें और जनीवा वीएना वॉन एम्स्टर्डम डेल्फ़्ट स्टाकहोम आदि पुराने और कम पुराने शहरोंके पुराने भागोंकी गलियोंमें। और सचमुच इस बातसे प्रसन्न हो सका हूँ कि यद्यपि बड़ी सड़कोंसे हटकर गलियोंमें जानेका अर्थ अवश्य यही हुआ कि किसी शहरके बारेमें दावेसे कुछ कह सकना कठिनतर हो गया गलियोंमें जानेपर शहरोंके निवासी सहसा एक अति-पुष्ट क्रम रत परम्परा सम्पन्न जीवन्त मानव-समाजके रूपमें मेरे निकट आ गये हैं पहचान गये हैं। कोई पूछ सकता है कि यदि ऐसा है तो क्यों उनके बारेमें कुछ कहना कठिनतर हो गया है? तो उसका उत्तर यही है कि इसीलिए। इस लिए कि लोग सहसा एक इतर समाजसे निकट आकर घरके-से लोग हो गये हैं। घरके लोगोंके बारेमें यह कह देना तो आसान होता है कि

`

अच्छे लगते हैं या कि हमें नहीं अच्छे लगते पर उनका वर्णन करना उतना आसान नहीं रह जाता।

भीड़में
जब जब जिस जिसमें आँखें मिलती हैं
वह सहसा दिख जाता है
मानव
अंगारे सा, भगवान् सा
अकेला।

और इस प्रकार आँखें मिलनेके बाद उसके बारेमें कुछ कहना कठिनतर हो जाता है—इसलिए और भी अधिक कि उसकी आँखोंमें प्रच्छन्न या प्रकट रूपसे अपनी प्रतिच्छवि झाँकती जान पड़ती है:

खड़ा मिलेगा
वहाँ सामने तुमको
अनपेक्षित प्रतिरूप तुम्हारा
नर जिसकी अनझिप आँखोंमें नारायणकी व्यथा भरी है।

यों तो एक एक अकेले व्यक्तिके चित्रणमें भी एक पूरे देशका, सभ्यताका युगका चित्र खींचा जा सकता है। यूरोपके एकाधिक देशोंमें मुझे ऐसे व्यक्तियोंका दर्शन या उनसे मिलनेका सुयोग हुआ जिनके माध्यमसे कुछ क्षणोंमें ही मुझे एक पूरे समाजकी—या कम-से-कम विशेष युग स्थितिके समाजकी जीवन-परिपाटी बिजलीकी-सी कौंधके साथ दीख गयी—मुझे ऐसा लगा कि मैंने सहसा पूरे देश—बल्कि समूचे यूरोपकी आत्माकी एक झाँकी पा ली है। जैसा कि ब्राउनिंगने कहा है

बनवाये हुए सड़कें और चक्करदार ऊँची-नीची गलियाँ जिनमें विभिन्न कालोंके विभिन्न स्थापत्य शैलियोंके तरह-तरहके मकान अपने-अपने ढंगसे सुन्दर और गलियोंका यह मिश्रण और घरोंकी बनावट अपना एक अलग सौन्दर्य लिये हुए है। और जहाँ-तहाँ अप्रत्याशित स्थलोंपर—जैसे सड़कोंके बीचो-बीच या चौराहेपर गलियोंके मोड़पर सिपाहियोंके खड़े होनेके चबूतरेके आस-पास सन्तरीके ठियेके चारों ओर—फूलोंकी क्यारियाँ।

अनन्तर रोमके इटलीके यूरोपकी गलियोंके बारेमें और भी बहुत कुछ जानेंगे पर यह तो पहले ही दृष्टिमें दीखता है कि यूरोपके पुराने शहरोंकी ये बलखाती गलियाँ एक अद्वितीय सौन्दर्य लिये हुए हैं। बड़ी सड़कोंको देखकर चले जाना मानो एक लिफाफेको देखकर बिना उसके भीतरके निजी पत्रको खोले पढ़े ही चल देना है। रोमके उस पहले चार दिनके प्रवासके बाद मैंने इटलीके विभिन्न शहरोंकी गलियोंमें—विशेषकर फिरेंजे (अर्थात् फ्लारेंस) वेनिजिया असीसी आदि मध्य इटलीके प्राचीन शहरोंकी गलियोंमें पैदल भटक-भटक कितने घण्टे बिताये हैं और कितने मील नापे हैं इसका हिसाब नहीं है। और इसी प्रकार पेरिसकी गलियोंमें और जनीवा वीएना बान एम्स्टर्डम डेल्फ्ट स्टाकहोम आदि पुराने और कम पुराने शहरोंके पुराने भागोंकी गलियोंमें। और सर्वत्र इस बातसे प्रसन्न हो सकता हूँ कि यद्यपि बड़ी सड़कोंसे हटकर गलियोंमें जानेका अर्थ सचमुच यही हुआ कि किसी शहरके बारेमें दावेसे कुछ कह सकना कठिनतर हो गया, गलियोंमें जानेपर शहरोंके निवासी सहसा एक गति-युक्त कर्म-रत परम्परा-सम्पन्न जीवन्त मानव-समाजके रूपमें मेरे निकट आ गये हैं, पहचाने गये हैं। कोई पूछ सकता है कि यदि ऐसा है तो क्या उनके बारेमें कुछ कहना कठिनतर हो गया है? तो उसका उत्तर यही है कि इसीलिए। इस लिए कि लोग सहसा एक स्तर समाजसे निकट आकर घरके-से लोग हो गये हैं। परके लोगोंके बारेमें यह कहना तो आसान होता है कि

अच्छे लगते हैं या कि हमें नहीं अच्छे लगते, पर उनका वर्णन करना उतना आसान नहीं रह जाता।

भीड़में
जब जब जिस जिससे आँखें मिलती हैं
वह सहसा दिख जाता है
मानव
बेचारे सा भगवान् सा
अकेला।

और इस प्रकार आँखें मिलनेके बाद उनके बारेमें कुछ कहना कठिनतर हो जाता है—इसलिए और भी अधिक कि उनकी आँखोंमें प्रच्छन्न या प्रकट रूपसे अपनी प्रतिच्छवि झाँकती जान पड़ती है:

जहाँ मिलेगा
वहाँ सामने तुमको
अनपेक्षित प्रतिरूप तुम्हारा
नर, जिसकी अनझिप आँखोंमें नारायणकी व्यथा भरी है।

यों तो एक एक अकेले व्यक्तिके चित्रणमें भी एक पूरे समाजका सभ्यताका युगका चित्र खींचा जा सकता है। यूरोपके एकाधिक स्थानोंमें मुझे ऐसे व्यक्तियोंको देखने या उनसे मिलनेका सौभाग्य हुआ जिनके माध्यमसे कुछ क्षणोंमें ही मुझे एक पूरे समाजकी—या कम-से-कम विशेष वर्ग विशिष्ट समाजकी, जीवन-परिपाटी बिजलीकी-सी कौंधके साथ दीख गया—मुझे ऐसा लगा कि मैंने सहसा पूरे देशकी—बल्कि समूचे युगकी आत्माकी एक झाँकी पा ली है। जैसा कि ब्राउनिंगने कहा है

देयर आर फ्लैशेज़ स्ट्रक फ्राम मिडनाइट्स

(मध्यरात्रिमें कभी एसी कौंध होती है)

और मैं समूचे यूरोपका चित्र खींचना चाहता तो यह भी कर सकता और कदाचित् वह अधिक प्रभावशाली भी होता—कि ऐसे चार छः विशिष्ट व्यक्तियोंका चरित्र उपस्थित कर देता । किन्तु उपन्यासकारकी दृष्टि पर्यटककी दृष्टि नहीं है । वह किसी आत्माको देखनेकी ओर बढ़ेगा जबकि मुझे अपनी देशी दृष्टिके सम्मुख किसी भूमिको भी रखना है । हाँ मिट्टीकी प्रतिमा बन जानेके बाद उसमें आत्माकी झलक आ जाय तो वह मेरा अहोभाग्य !

अनन्तर यह भी जाना कि रोम यूरोपका सबसे स्वच्छ शहर नहीं है । बल्कि स्टाकहोम और कोपनहागनसे लौटकर इटलीके बड़े शहर (और लन्दन और पेरिस भी) बस गन्दे जान पड़ते हैं जैसे इटलीसे लौटकर भारतके शहर । और यह भी जाना कि पहली दृष्टिमें रोमकी जो विशेषताएँ लगीं उनमेंसे बहुत सी समूचे दक्षिणी-पश्चिमी यूरोपमें भी पायी जायेंगी और कुछ तो सारे यूरोपमें ।

(कभी-कभी यह भी हुआ कि किसी शहरमें जो बात विशेष जान पड़ी थी भारत लौटकर पाया कि वह यहाँ भी पहुँच गयी है । उदाहरण के लिए फ्रैंकफर्टमें रंग बिरंगी बत्तियों द्वारा विज्ञापन — लौट कर देखा कि दिल्लीमें भी उनका प्रवेश हो गया है । या कि लन्दन और पेरिसकी दुकानों अथवा विज्ञापनोंमें स्त्रियोंके अर्धनग्न चित्रोंका अतिरिक्त प्रदर्शन—अपने यहाँ शादियोंमें लाउडस्पीकरोंसे गोलियोंकी बौछारकी तरह बरसनेवाले घटिया फिल्मी गानोंके समान गला फाड़ फाड़कर अपनी ओर ध्यान खींचनेवाले भोंडे विज्ञापन—किन्तु भारत लौटकर देखता हूँ कि दिल्ली और कलकत्ताके केन्द्रीय बाज़ारोंके गलियारे भी इन्हींसे पट गये हैं—दीवारोंपर

उभार-उभारकर टाँगी हुई चालियाँ और जमीनपर बिखरी हुई उनकी हरी रंग बिरंगी पत्तियाँ। मशीन सब कुछ उघाड़ती चलती है मशीनके आत्मा नहीं है। लेकिन मशीनका दास होकर मनुष्य भी निरन्तर अपनेको उघाड़ता जा रहा है—आत्मा उसके पास नहीं है यह मानना तो कठिन है लेकिन वह अनाहत है यह कहना तो सरासर झूठ होगा।)

सन्दर्भके बीचमें फूल इटलीमें मिल सकते हैं और स्वीडनमें भी, इंग्लैंडमें भी और जर्मनीमें भी। हाँ इटलीके मध्ययुगीन नियमित अलंकृत उद्यानोंका सौष्ठव एक ढंगका है फ्रांसकी सजीली वाटिकाओंका दूसरे ढंगका इंग्लैंडके विशाल तरु राजियोंसे छाये हुए खुले हरियाले पार्कोंका और एक ढंगका और जर्मनीके वनोद्यानोंका और एक ढंगका। सहज अकुण्ठित और अनाहत भावसे बढ़ रहे पेड़की शोभा क्या होती है यह इंग्लैण्डमें ही देखनेको मिला। यहाँ भारतमें पेड़-पौधोंको पूज तो लेते हैं लेकिन सहज भावसे पनपने नहीं देते जिनको गाय-बकरीके खानेके लिए दतुवनके लिए नोच नहीं लेते उन्हें यों ही ऐसी तंग जगहमें बाँधकर रखते हैं कि उनका सहज विकास नहीं होता। चमत्कारके लिए हम यह भी सिद्ध करना चाहते हों कि किसी जातिके स्वभाव और उसके बनाये हुए बगीचोंमें समानता होती है तो उसके लिए मनचाही युक्तियाँ हमें यूरोपमें उतनी ही आसानीसे मिल सकती हैं जितनी पश्चिमोत्तर भारतके मुगल उद्यानोंसे या बनारसकी फुलवाड़ियोंसे। पर उसे छोड़ दें तो इतना अवश्य कहा जा सकता है कि प्रत्येक शैलीके उद्यान अपने-अपने प्रदेश, परिवेश और जलवायुमें ही अधिक सुंदर लगते हैं। इटलीके तरतीबदार सरू और मोरपंखीके पेड़ और पत्थरकी मूर्तियाँ वहाँके नीले आकाश और नीले सागरके परिपार्श्वमें शोभा देती हैं और आस-पासके ऊँचे-नीचे प्रदेशके अतुल पुष्पोंसे भरी घाटियों और सजीले हँसमुख नर नारियोंके साथ मेल खाती हैं। बल्कि जैसे वहाँके विलास-प्रेमी जीवनातुर संगीत मुखर शृंगार-वृत्ति लोगोंके बीच काले या भूरे लबादे और

काउ या उनावी टाप पहने हुए कथालिक पादरी और श्रमण सहज भावसे अपनेको खपा लेते हैं बसे ही अपनेमें लिपटे सिमटे से सम्भ्रान्त मारपेखा थाई भी वहाँकी दृश्य-परम्परामें अपना स्थान बना लेते हैं। और उन्हीं उद्यानोंकी जब हम किसी गिरजाघरसे सलग्न विहारकी चार दीवारोंके अन्दर बन्द पाते हैं तो दीवारके पुराने पत्थरोंके साथ इन श्रमणोंका क्लान्त उदासीन भाव फिर एक नया सामंजस्य प्राप्त कर लेता है मानो विलासितासे ऊबा हुआ कोई अभिजात रसिक अब दूसरेको याद दिला रहा हो कि कालो न जीर्णो वयमेव जीर्णाः !

किन्तु प्राचीन उद्यानों और मधुगन्धिनी अंगूर-बल्लरी की चर्चासे यह न समझ लिया जाय कि पश्चिमका जीवन अचंचल गतिसे चलता है। पहली दृष्टिमें यही सबसे बड़ा अन्तर पूर्व और पश्चिममें दीखता है : पूर्वका जीवन विलम्बित लयमें चलता है और पश्चिमका द्रुत लयमें। और भारत में तो हम—योजनाओंके बावजूद !—आलाप लेनेमें ही लगे रहते हैं ! यों और देशोंकी अपेक्षा इटली कुछ धीरे चलना पसन्द करता है और जब-तब विश्राम करने या गलीके मोड़पर बिलमानेको तैयार है, फिर भी वह असंदिग्ध रूपसे है पश्चिमी देश ही। कम से कम आधुनिक इटली। पुरा कालमें जब वह पूर्व नहीं तो मध्यपूर्वसे आक्रान्त था, रोमिक लोग अधलेटे भोजन करते थे और एक प्यालेमें [redacted] घण्टे बीत जाना साधारण बात थी पर आजका रोमी खड़े खड़े ही खाता है। खानेके बादका विश्राम वह अनिवार्य मानता है और इसलिए यूरोप भरमें इटलीके दफ्तरोंमें लचकी लम्बी छुट्टी होती है—नियमतः दो घण्टे पर व्यवहारमें तीन घण्टे। किन्तु दूसरी ओर वह काम देरतक करता है और उसकी कारीगरी प्रसिद्ध है। यूरोपमें सवेरे उठते ही जीवनकी दौड़ आरम्भ होती है और राततक चली ही जाती है। मेरा अनुमान है कि औसत यूरोपीयको प्रतिदिन छः-सात घण्टे तो परायेके घर-खड़े बीतते हैं—अधिक भी हों तो अचम्भा नहीं। फिर वह खड़े रहना चाहे घरपर नाश्ता बनाते समयका खड़े रहना हो

चाहे ट्राम-बसमें दफ्तर जानेको खड़ा होना, चाहे सिनेमाके टिकटके लिए लम्बी कतारका खड़ा होना। और चाहे खाते-पीने समयका खड़े होना— क्योंकि प्रायः दिनमें एक बार ही बैठकर भोजन किया जाता होगा।

ऐसा क्यों है? यन्त्रने इतनी सुविधा दी है सो क्या केवल खड़े होनेके लिए? हाँ, यन्त्रने साधन बहुत दिये हैं, माँग बहुत खाये हैं: हर व्यक्तिको यह सिखा दिया है कि वह तनिक और लपके तो कुछ और पा लेगा, तनिक और तेज चले तो कहीं पहुँच जायगा। और इसलिए सारा जीवन लपककर कुछ पा लेनेका, दौड़कर कहीं पहुँच जानेका एक अन्तहीन प्रयास हो गया है। यदि आकांक्षाकी प्रेरणासे ही ऐसा होता तो भी कुछ बात थी—भारतीय दर्शन कहता रहता कि आकांक्षा अन्त नहीं है, पर पश्चिमको अहंकी तृप्तिका गहरा सन्तोष मिलता रहता। पर बहुत-से यूरोपीय पहचानने लगे हैं कि आकांक्षाकी प्रेरणासे भी बलवती निरे यन्त्रकी अनिवार्यता होती जा रही है: दौड़ इसलिए नहीं है कि दौड़ना चाहते हैं, इसलिए है कि रुक नहीं सकते! अहंकी पुष्टिके लिए बनायी गयी मशीन ऐसी हावी हो गयी है कि वह व्यक्तिको ही कुचले दे रही है: वह अपनेको अधिकाधिक नगण्य पाता हुआ दौड़ रहा है, दौड़ रहा है और दौड़ता हुआ भी क्रमशः और नगण्य होता जा रहा है। अस्तित्ववादके नामपर यूरोपमें जो कुछ आया सब स्वस्थ नहीं था, पर जो स्वस्थ था उसके मूलमें इसी अकिंचनत्वका साहसपूर्ण साक्षात्कार था और मानवको इस परिस्थितिसे उबरनेके मार्गकी खोज। सार्त्रका मतलीका दर्शन केवल 'न कुछ' के आतंककी छटपटाहट है जो ग्लानि उत्पन्न करती है, पर गेब्रिएल मार्सेल और कार्ल यास्पर्सका दर्शन आधुनिक यूरोपीय चिन्तनकी मौलिकता और साहसका प्रमाण है। यास्पर्ससे मेरी भेंट और मनोरंजक बातचीत भी हुई थी: उनसे हाथ मिलाते ही लगा था कि चारों ओर छायी अशान्तिके बीच यह व्यक्ति शान्त स्थिर और अचंचल है—कि इसने कुछ पाया है। कहना न होगा कि यूरोपमें ऐसा अनुभव बार-बार नहीं हुआ!

काले या उनाबी टोप पहने हुए कैथालिक पादरी और श्रमण सन्त भावुक अपनको सदा ऐसे ही अपनमें लिपटे सिमटे व सम्भ्रान्त मोरपंखी झाड़ भी वहाँकी दृश्य-परम्परामें अपना स्थान बना लेते हैं। और उन्हीं उद्यानोंको जब हम किसी गिरजाघरसे संलग्न विहारकी चार दीवारोंके अन्दर बन्द पाते हैं तो दीवारके पुराने पत्थरोंके साथ इन वृक्षोंका क्लान्त उदासीन भाव फिर एक नया सामंजस्य प्राप्त कर लेता है मानो विलासितासे ऊबा हुआ कोई अभिजात रसिक अब दूसरोंको याद दिला रहा हो कि कालो न जीर्णो वयमेव जीर्णाः!

किन्तु प्राचीन उद्यानों और मधुगन्धिनी अंगूर बेलोंकी चर्चासे यह न समझ लिया जाय कि पश्चिमका जीवन अचंचल गतिसे चलता है। पहली दृष्टिमें यही सबसे बड़ा अन्तर पूर्व और पश्चिमका दीखता है: पूर्वका जीवन विलम्बित लयमें चलता है और पश्चिमका द्रुत लयमें। और भारतमें तो हम—योजनाओंके बावजूद!—आलाप लेनेमें ही खोये रहते हैं! यों और देशोंकी अपेक्षा इटली कुछ धीरे चलना पसन्द करता है और जब-तब विश्राम करने या गम्भीर मोदपर विलमानेको तैयार है, फिर भी वह असन्दिग्ध रूपसे है पश्चिमी देश ही। कम से कम आधुनिक इटली। पुराकालमें जब वह पूर्व नहीं तो मध्यपूर्वसे आक्रान्त था, रोमिक लोग अधलेटे भोजन करते थे और एक भोजमें छः घण्टे बीत जाना साधारण बात थी पर आजका रोमी खड़े खड़े खा लेता है। खानेके बादका विश्राम वह अनिवार्य मानता है और इसलिए यूरोप भरमें इटलीके दफ्तरोंमें सबकी लम्बी छुट्टी होती है—नियमसे दो घण्टे पर व्यवहारमें तीन घण्टे। किन्तु दूसरी ओर वह काम डटकर करता है और उसकी कारीगरी प्रसिद्ध है। यूरोपमें सवेरे उठते ही जीवनकी दौड़ आरम्भ होती है और रात तक चली ही जाती है। मेरा अनुमान है कि औसत यूरोपीयको प्रतिदिन छ-सात घण्टे तो पैरोंपर खड़े-खड़े बीतते हैं—अधिक भी हों तो अचम्भा नहीं। फिर वह खड़े रहना चाहे घरपर नाश्ता बनाते समय का खड़े रहना हो

चाहे ट्राम-बसमें ऊपर जानेको खड़ा होना, चाहे सिनेमाके टिकटके लिए लगी कतारका खड़े होना। और चाहे खाते-पीते समयका खड़े होना—क्योंकि प्रायः दिनमें एक बार ही बैठकर भोजन किया जाता होगा।

ऐसा क्यों है? यन्त्रोंने इतनी सुविधा दी है सो क्या केवल खड़े होनेके लिए? हाँ, यन्त्रने साधन बहुत दिये हैं, माँग बहुत बढ़ा दी है, हर व्यक्तिको यह सिखा दिया है कि वह तनिक और लपके तो कुछ और पा लेगा, तनिक और तेज चले तो कहीं पहुँच जायगा। और इसलिए सारा जीवन लपककर कुछ पा लेनेका, दौड़कर कहीं पहुँच जानेका एक अन्तहीन प्रयास हो गया है। यदि आकांक्षाकी प्रेरणासे ही ऐसा होता तो भी कुछ बात थी—भारतीय दर्शन कहता रहता कि आकांक्षाका अन्त नहीं है, पर पश्चिमको अपनी तृप्तिका गहरा सन्तोष मिलता रहता। पर बहुत-से यूरोपीय पहचानने लगे हैं कि आकांक्षाकी प्रेरणासे भी बढ़कर निरे यन्त्रकी अनिवार्यता होती जा रही है: दौड़ इसलिए नहीं है कि दौड़ना चाहते हैं, इसलिए है कि रुक नहीं सकते! बढ़ती पूर्तिके लिए बनायी गयी मशीन ऐसी हावी हो गयी है कि वह व्यक्तिको ही कुचले दे रही है: वह अपनेको अधिकाधिक नगण्य पाता हुआ दौड़ रहा है, दौड़ रहा है और दौड़ता हुआ भी क्रमशः और नगण्य होता जा रहा है। अस्तित्ववादके नामपर यूरोपमें जो कुछ आया सब स्वस्थ नहीं था, पर जो स्वस्थ था उसके मूलमें इसी अकिंचनत्वका साहसपूर्ण साक्षात्कार था और मानवकी इस परिस्थितिसे उबरनेके मार्गकी खोज। सार्त्रका मतवादी दर्शन केवल 'न कुछ'के आतंककी छटपटाहट है जो ग्लानि उत्पन्न करती है; पर गेब्रिएल मार्सेल और कार्ल यास्पर्सका दर्शन आधुनिक यूरोपीय चिन्तनकी मौलिकता और साहसका प्रमाण है। यास्पर्ससे मेरी भेंट और मनोरंजक बातचीत भी हुई थी: उनसे हाथ मिलाते ही लगा था कि चारों ओर व्यापी अशान्तिके बीच यह व्यक्ति शान्त, स्थिर और अचंचल है—कि उसने कुछ पाया है। कहना न होगा कि यूरोपमें ऐसा अनुभव बार-बार नहीं हुआ।

किन्तु रोम! रोम और इटली और वहाँके लोग। अन्तर्विरोध सर्वत्र होते हैं, और पुराने देश और पुरानी सभ्यतामें कदाचित अधिक होते हैं। इटालियन बड़ा हँसोड़ प्राणी है। हँसता-हँसाता चलता है, हर समय हँसने को तैयार है। एक दिन किसीसे पूछा—आज क्या है—सोमवार है न? तो तपाकसे उत्तर मिला—जी हाँ, आज सारा दिन सोमवार रहेगा! लेकिन दूसरी ओर कभी यह भी लगता है कि उसमें विनोद मात्र बिल्कुल नहीं है। छोटी सी बातपर झगड़ा हो सकता है। शृंगारिकता इटालियन स्वभावका अविभाज्य अंग है और अश्लील कहानियाँ कहनेमें वह देवी-देवताओंको भी नहीं छोड़ता। फिर दूसरी ओर उसमें ऐसा दकियानूसीपन भी है कि प्राचीन मूर्तियोंकी नग्नता ढकनेके लिए उनपर पलस्तरके छोटे छोटे टुकड़े चिपकाये गये हैं। और इस अत्याचारसे मिकेलएंजेलोकी भव्य मूर्तियाँतक नहीं बचने पायी हैं। रोममें वाटिकानमें—पोपकी वह नगरी जो संसारका कदाचित सबसे छोटा राज्य और सबसे बड़े साम्राज्यका केन्द्र है, जो एक ओर सेंट पिएत्रोके विशाल गिरजाघरका पिछवाड़ा भर है और दूसरी ओर संसार भरमें बिखरे हुए श्रद्धालु कैथोलिकोंकी भक्ति पाता है—वाटिकानके संग्रहालयमें देखा कि देव शिशुओंकी मूर्तियोंतकको पलस्तरके बने हुए अंजीरके पत्तेकी लंगोटी पहनायी गयी है! सुनकर इस बातका विश्वास नहीं होता, पर देख आया हूँ कि ऐसी मूढ़तापूर्ण संकीर्णता वहाँ भी हो सकती है—और उनमें जो कला रुचिके संरक्षक और विधाता हैं। संग्रहालयसे जल्दी जल्दी निकलते हुए मन-ही-मन उन स्वदेशी बुजुर्गोंका स्मरण किया जो खजुराहोके मन्दिरोंको ध्वंस कर देना चाहते हैं। याद आया कि एक इटालियन मित्रने कहा था सारा इटली देखना पर वाटिकानके संग्रहालयमें न जाना। वह इस बातका स्मारक है कि कैसे धर्म, श्रद्धा और ग्राम्यता (वल्गैरिटी) शताब्दियोंतक साथ-साथ चल सकती हैं। इटली इस बातका साक्षी है कि महान कला धर्मके साथ-साथ ही चलती है—जैसे कि भारत भी इसका साक्षी है। पर रोमका एक संग्रहालय ही

सिद्ध कर सकता ह कि धमकी ओन्म क्लाकी कसी मिट्टी-पलीत हो सकती ह—वल्कि श्रद्धाके नामपर धम और क्ला दानाकी। वसे ही जसे बनारस के एक घाटकी साढियापर बिछे हुए चित्र ही न्खा सकते ह कि लेकिन इस वाक्यको अधूरा छाड देना ही श्रेयस्कर होगा। इतना ही कहू कि इटालियन लोग यूरापके हिन्दुस्तानी ह। उनके गुण-दोप दोनाका ही वणन इस वाक्यम आ जाता ह और इमस कोई अन्तर नही पडता कि जिसे म गुण मानता हूँ उसे आप दाप समझें, और जिसे म दोप समझता हू वह आपकी दृष्टिमें गुण हो।

रोमका नगर परम्परागत सात पहाड़ियापर बसा हुआ ह। सातकी सख्या अक्षरश न लेनी चाहिए, सारी बस्ती कुछ चोटियाक बीचकी लह रीली भूमिपर बसा हुई ह और कई स्थानासे आस-पासके प्रदशका अत्यन्त मनोरम दश्य देखा जा सकता ह। अपनी अपनी रुचिके अनुसार लोग अलग अलग स्थलासे दीखनेवाल दश्यका प्रशसा करते ह। प्राचीन रोमिक खण्डहराके आस-पासके प्रदेशम भटकना मुझे विशेष रुचिकर हुआ—ध्वस्त इतिहासके खण्डाके बीच पर रखत हुए चलनेके कारण ही नहा बल्कि चारा ओर बिखरी हुई शोभाके कारण। कोलोसियमका विशाल क्रीडामच और उसक निकट ईसा पूव देवी देवताके ध्वस्त मन्दिर दूरकी वे गुफाए जिनमें ईसा पूव रोमी आश्रय पात थे और फिर आरम्भिक ईसाई शरण लेते रह चारा ओर ढलती हुई दूर जाकर अगूरक उद्यानामें खो जाने वाली सडकें एक कब्रगाह जिसमें एक दूसर से थोडी दूरीपर एक ओर मित्रके एक सम्राट और दूसरी आर युवा कवि कीटसका समाधि ह इस्पानी चोक (पियात्सा डि इस्पाना) की सीढ़िया (स्कालिनाटा) जिनपर शेलीकी स्मृतियाँ माना दबे-पाँव चल्ती हुइ धूप सेंकती ह—मेरे लिए य सब दशनीय और स्मरणीय थे। लेकिन किसी भी शिखरसे देखे हुए परिदृश्यको पूरी तरह आत्मसात करनके लिए आवश्यक ह कि रोमके बीच सर्पिल गतिस बहत हुए टवरो (अग्रेजी टाइबर) नदके किनार

किनारे कुछ मीलोंतक चला जाय। नदियाँ एकसे एक सुन्दर मैंने देखी और बनारसके घाटोंका अपना अद्वितीय रूप है लेकिन टेवराके किनारे बसे हुए रोमका आनन्द अनिर्वचनीय है। असलमें नदी कहनेसे भारतवासीके सम्मुख जो चित्र आता है वह मानो फैली हुई रेता या जल-विस्तार (और दोनों किनारे नाना प्रकारकी गन्दगी!) का होता है। यूरोपकी नदियोंका पाट उतना चौड़ा नहीं होता टेवरा तो जाड़ोंकी गोमतीसे अधिक नहीं है। लेकिन दोनों ओरके पक्के किनारे उस एक बलखाती लहरका स्वरूप दे देते हैं और नये किनारेकी सैर घाटोंकी या कछारोंकी सैर न होकर नगरकी भी सैर हो जाती है। नहरसे भी लघु इस नदीको नदी उसके पुनामके कारण कहना होता है रोमिक लोग उसे पितवन मानते थे।

नया विस्तृत नयी दिल्ली भी शायद रोमकी सात पहाड़ियोंके समान सुन्दर हो सकती—यदि हमने सारी पहाड़ियोंको खोदकर सपाट न कर दिया होता और यदि स्थापत्यकी हमारी अपनी परम्परा होती। परम्पराके नामपर जो सहस्र वर्ष या उससे अधिक पुराना है उसीको हागिन करनेमें हम इतने अभ्यस्त हो गये हैं कि इस बातको भूल ही जाते हैं कि परम्परामें जो पूर्वापरत्व निहित है वह तभी सार्थक हो सकता है जब कि पूर्व के साथ अपर भी हो। हम पूर्वोंकी सभ्यताके नामोंमें अपनेसे यह पूछना ही भूल जाते हैं कि अपर क्या है। या रोममें रोमिककाल और मध्यकालका ही सब उल्लेखनीय नहीं है। उनकी परम्परा प्रथम महायुद्ध तक अक्षुण्ण चली आयी है। उसके बाद मुसोलिनीकी शैलीका स्थापत्य मुझे तो अच्छा नहीं लगा किन्तु वह अलग बात है। मेरी रुचिका भी दोष हो सकता है। सर्वसत्ताक शासनमें बड़प्पनपर बल देना अनिवार्य हो जाता है और चारित्रिक गहराईकी विशिष्टता गौण हो जाती है। रोममें

रामा   कोलोसियमके रोमिक खडहर

रामा   रेमिक चाक [फ़ोरम] पर सूर्यास्त

रामा इस्मानी चाक

रामा कवि काटसका समाधिपर

या इटलीमें, अयत्र, मुसोलिनी द्वारा बनवाय हुए चौगाना या उनक आस-पासकी इमारताम वन्यनके सिवा सौदयका काई गुण नही था। और ठीक यही बात मुझे पूर्वी बलिनकी स्टालिन आल्ला में भी जान पडी। बल्कि दानामें कुछ एसा असाधारण सौम्य था कि म स्वय चौक गया था।

अत्याधुनिक स्थापत्य भा रोमम ह रोमके नये रल्व स्टेशनका जो कि कांचका घर सा मालूम होता ह उल्लेख वहाके लाग गवपूवक करत ह। पर आधुनिक बहुत कुछके रहत भी इटलीको यूरोपकी माता माननके कारण हमारा ध्यान पुरावस्तुओकी ओर ही जाता ह—और मध्ययुगाकी गौरव-वस्तुओकी ओर सान पियेनीके अलावा निनिता दइ मोन्ती सान्ता मरिया मज्जोर और पन्थीआनके प्राचीनतर गिरजाघर मिकेल एजलो द्वारा मडित सिस्टीन पूजागार जिसक विशाल भित्तिचित्र मानव मात्रकी अपूव निधि ह क्विरिनाल और वार्वेरीनी महल रामिक कालके सभाभवन, (जूलियस, आगुस्टस और टायानके सभा भवन या व्यापार केन्द्र) रगशाला (कोलोसियम), स्नानघर (काराकाल्ला) और मन्दिर (वीनस और रोमा) और इन्हें एक दूसरसे मिलाने या पृथक करनेवाले निखर माग और पौर इन्हीस प्रेरित बायरनन गाया था।

"रोम! मेरा देश! आत्माकी नगरी!
सभी अनाथ हृदय तेरी ओर मुडते हैं।'

इन्हीमें वह परम्परा मोती ह जो स्थायी भा जीवनका स्पन्दन देती ह और जिसके कारण रोमरा नगरी आज भा अपना नाम सायक करता ह। चिविता एतर्ना—अमर नगरी

विद्रोहकी परम्परामें

मुसोलिनीका इटली। फासिस्ट सत्ताका आतंक, जिसमें ऊपरी प्रगति और समृद्धि और साम्राज्य प्रसारकी हलचलके नीचे जन मानसकी कुण्ठा और प्रबुद्ध वर्गका आक्रोश छिपा हुआ है। इस आक्रोशको रूप या शब्द न मिलते हों ऐसा नहीं है। किन्तु उसे वाणी अभी तक नहीं मिली। और फिर ऐसी वाणी जिसकी ललकार सबको विवश कर दे, वह तो न जाने कब कहाँ उठेगी।

सन् १९३१की तीसरी अक्टूबरका सायंकाल। ८ बजेका समय। निरभ्र शरद्‌का नीला आकाश। सहसा रोम नगरीके अनेक मीनारोंसे घिरे हुए क्षितिजपर एक विमान प्रकट होता है। बहुत नीचे उड़ता हुआ वह नगरीके एक मध्यमें एक मकानके ऊपर मण्डलाकार घूमता है—यह मकान एक युवक कविका है, क्या विमान उसीका अभिवादन कर रहा है? फिर वह आगे बढ़कर पियाज़्ज़ा दि स्पान्याके सुन्दर चौकपर मँडराता है जिसके छोरपर एक छोटे ऊँचे मकानमें रहते हुए कभी शेलीने मानव मात्रकी स्वतन्त्रताका स्वप्न देखा था। चौक पार करके विमान मानो स्कालिनाटाकी भव्य सीढ़ियोंके ऊपर आरोहण करता हुआ-सा मुड़ता है और पिंचिओ उद्यान तथा बागोंके महलोंका चक्कर काटता है।

आधे घण्टे तक रोमकी जनता कौतूहल और आश्चर्यसे भरी उस विमानकी मतवाली उड़ानको देखती है जो मानो रोमकी सड़कों, गलियों, भवन, उद्यानों, चौक-हवेलियों, कहवाघरों और रंगशालाओं और सबमें बसे हुए या जाने-आनेवाले व्यक्तियोंमेंसे प्रत्येकको अलग-अलग सम्बोधन

करके विशेष कुछ, अत्यन्त आवश्यक कुछ, तात्कालिक कुछ कहना चाहता है।

क्या कहना चाहता है? विमान यन्त्र है स्वयं इसका उत्तर नहीं दे सकता। और चालक उस यन्त्रके अनुशासनमें व्यस्त है। उसे बोलनेका समय नहीं है और न उसकी बोली ऐसी स्थितिमें सुनाई दे सकती है। किन्तु उसे जो कहना है वह मानो अजस्र धारामें विमानसे भर रहा है। जबसे विमान क्षितिजके ऊपर प्रकट हुआ है तबसे उससे पर्चियोंकी एक झरी बरसती रही है। इटलीके राजा और प्रजा दोनोंका आवाहन करती हुई ये चार लाख पर्चियाँ। अभिनव दासताकी शृंखलामें जकड़ी हुई जनताका स्वाधीनताका सन्देश दे रहा है। वह सन्देश एक अकेली अनम्य आत्माका नाटकीय आवाहन भर रह जायगा या कि जन-जनके अवचेतनमें डूबकर अन्धकारमें विद्रोहके बीज डाल सकेगा इससे उस अनासक्त व्यक्तिको इस समय कोई प्रयोजन नहीं है जिसने उन पर्चियोंका सन्देश लिखा छपाया और अब विमानमें भरकर उन्हें बाँटता हुआ रोमके आकाशपर उड़ रहा है। वह मानो आकाशमें बीज बो रहा है कब उनसे पौधा अंकुरित होगा, कब कैसा फलेगा, उसे क्या फल देगा इसकी आशासे वह परे है—जैसे कि सूर्यकी ओर उड़नेवाले सभी इकारस* परे होते हैं भले ही उनके पंख झुलसकर झर जायें और वे सागरमें खो जायें।

आधे घण्टेके बाद सभी पर्चियाँ चुकाकर विमान सागरकी ओर मुड़

---

* इकारस यन्त्रविद् डेडालसका पुत्र। क्रीट द्वीपमें राजा माइनोस द्वारा बन्दी किये जानेपर डेडालसने अपने और पुत्रके लिए पंख तयार किये थे उड़ते समय डेडालस नीचा उड़ता रहा किन्तु इकारसके सूर्यकी ओर उड़नेके कारण उसके पंख गल गये और वह सागरमें गिर गया। —लेखक

जाता ह। सागर अधिक दूर नहीं ह कुछ मिनटोंमें ही विमान नीचे ही उमी अथाह नालिमामें घिर जायगा जो उसके ऊपर छाई हुई ह।

और उसके अन्य हाल न होते क्षितिजपर दूसरे अनेक विमान प्रकट होते ह। ये सरकारी विमान ह या शिकारी विमान ह। स्वतन्त्रताका जो अनधिकृत हरकारा नगरके नियन्त्रित वातावरणमें कौंध गया ह झपटकर उसे मार डालना ही इनका उद्देश्य ह।

इसके आगे एक बहुत बड़ा प्रश्न विराम ह जिसमें वह पक्षियुक्त मुक्तिदूत खो गया ह। वह विमान अपने आपमें सागरमें खो गया या कि शिकारियों द्वारा मार गिराया गया इसका कोई पता नहीं ह। किन्तु युवा विमान चालक कवि लाउरो द बोसिसका सन्देश और अपनी अन्तिम विमान-यात्रासे पहले एक बन्धुके नाम भेजे गये पत्रका अन्तिम भाग। मरी मत्यका इतिहास अविस्मरणीय ह।

लाउरो द बासिसका जन्म सन १९०१में हुआ। उसके पिता एडालफो द बासिस इटलीके निवासी थ और स्वयं कवि थ माँ अमरीकी थी। लाउरोका बाल्यकाल शान्ति और स्वाधीनताके वातावरणमें बीता किशोर अवस्थामें उसको यूरोपकी अनेक भव्य प्रतिमाओंका प्रभाव ग्रहण करनेका अवसर भी मिलता रहा। पिता न केवल नाटकके नायक प्रेमी थे वरन उसके सब श्रेष्ठ इटालीय अनवाद्य भी। लाउराको दायमें न केवल लातीनी परम्पराके उत्तम गुण मिले बल्कि एंग्लोसक्सन परम्पराके भी। एक ओर नाटकीय आन्तरिक स्वतन्त्रता प्रेम था तो दूसरी ओर इटलीके पुनर्जागरण कालकी आन्तरिक रचना।

युवक लाउरोकी शिक्षा भी असाधारण रही। लैटिन और ग्रीकके साथ-साथ फ्रांसीसी और अंग्रेजी साहित्यमें भी उसकी गहरी पैठ थी साहित्य और कलाकी शिक्षाके साथ-साथ वह प्रसिद्ध रिसर्चों और तराक

भी था। विज्ञानका अध्ययन करके उसने रोम विश्वविद्यालयमें डाक्टरकी उपाधि प्राप्त की।

किन्तु लाउरोका मनोनीत क्षेत्र काव्य ही था। अल्पवयमें ही इस्काइलसके प्रामथियुस तथा जेम्स फ्रेज़रके वृहत् ग्रन्थ गोल्डन बाओका अनुवाद उसने कर लिया था। किन्तु उसकी मुख्य रचना इकारो नामकी गीति नाटय थी जिसके लिए उसे सन १९२७में एम्स्टरडामका ओलम्पिक पुरस्कार भी मिला।

कला और विज्ञान दोनोंके प्रति समर्पित आत्मोन्मुख कवि इकारस की गाथाके प्रति आकृष्ट हुआ हो यह स्वाभाविक ही है। यन्त्रविद् डेडाल्सके पंख लगाकर सूर्यकी ओर उड़ना चाहनेवाले पुत्र इकारसकी दुःखान्त ग्रीक गाथाने अनेक युगोंके कवियोंको आकृष्ट किया है। लाउरोके लिए उस गाथाका आकर्षण समकालीन सन्दर्भमें और भी तीव्र हो उठा था। उसका गीति नाटय इकारोका विषय था—विज्ञानके द्वारा भौतिक बन्धनसे मानवकी मुक्ति-चेष्टा। डेडाल्सका उड़ाकर आततायी शासककी दासता से मुक्ति चाहनेमें लाउरोके लिए एक समकालीन महत्त्व भी था। इस प्रयत्नमें इकारसने स्वयं अपना सर्वस्व खोकर डेडाल्स हठात् उस समस्या के सम्मुख खड़ा होता है जो कि आधुनिक युगकी एक मूल समस्या है। और जो आज हमारे सम्मुख और भी डरावने रूपमें आ खड़ी हुई है—विज्ञान और तात्कालिक यथार्थकी समस्या। डेडाल्स उड़नेवाले यन्त्रका आविष्कारक है किन्तु आततायी शासक उसीको उसके उपयोगसे वंचित करता है। उपयोगका अधिकार अगली पीढ़ीके दायमें मिलता है—और अगली पीढ़ी अपनी यातना और बलिदानके द्वारा उसका मूल्य चुकाती है। किन्तु यह दुःख-गाथा दुःखान्त-गाथा नहीं है विभ्रान्तिमेंसे फिर मानवकी अदम्य और अजेय आत्मा उठ खड़ी होती है।

जब हम स्मरण करते हैं कि इस गीति नाटयकी मूल प्रेरणा लाउरो को कहाँसे मिली तब यह और भी स्पष्ट हो जाता है कि इस कल्पनाका

उसके अपने जीवनपर कितना प्रभाव रहा। कल्पना-शासित आत्मोन्मुख जीवनका ऐसा उदाहरण आसानीसे नहीं मिलता। लाउरोने अपनी मांकी एक फ्रांसीसी कविकी इकारस-सम्बन्धी एक कविता पढ़ते हुए सुना था। जिसकी कुछ पंक्तियोंका आशय था—वह मर गया उच्च साहस कर्मके आह्वानका सामना करते हुए—आकाश उसकी आकांक्षाका लक्ष्य और सागर उसकी समाधि! है क्या इससे भी सुन्दर कोई चित्र, इससे सम्पन्नतर कोई निष्पत्ति!

यही सुन्दरतर चित्र, यही सम्पन्नतर लाउरोने अपने जीवनमें प्राप्त कर लिया—आकाश उसकी आकांक्षाओंकी सीमा, सागर उसकी समाधि!*

अपनी किशोरावस्थामें लाउरो डे बोसिसको फासिस्ट आंदोलन प्रगतिकी सम्भावनाओं और जीवनोत्साहसे भरा हुआ जान पड़ा था—यह भूल उसकी पार्टीके और भी मवकान की थी, लेकिन लाउरो अधिक दिन धोखेमें नहीं रहा। जहां कई दूसरे राजनीतिज्ञ और व्यवहारकुशल व्यापारी उन्नति और समृद्धिकी सम्भावनाएं देखकर व्यस्त हो रहे थे, वहां कवि लाउरोने दटिन भागके अंधकारको स्पष्ट देखा। तबतक उसने राजनीतिमें कोई क्रियात्मक भाग नहीं लिया था, लेकिन आनेवाली दासताकी सम्भावनाएं देखकर उसने अनुभव किया कि अब आत्मोन्मुख स्वप्न देखनेका समय नहीं है। उसने पहचाना कि आततायी सत्ताका आतंक क्रमशः बढ़ता जाता है और उसे शक्ति इस बातसे मिलती है कि उसकी

---

*शैलीने भी इटलीके पश्चिमी सागर तटपर—रोम और जनोआके बीच—नौका विहार करते समय जल-समाधि पायी थी। उसकी नौकाका नाम था एरियल—वायु-सन्तान, शेक्सपियरके नाटकमें एरियल एक वायवी जीव है, मिल्टनके महाकाव्यमें एक विद्रोही फरिश्ता। मृत्युके समय कीट्सकी कविता पुस्तक उसके पास थी। —लेखक

आरम्भिक अवस्थामें लोग उसकी गम्भीरता नहीं समझते या कि साहस पूर्वक उसका विरोध नहीं करते। सभी अत्याचारी शासक उदासीनता और शिथिलतामें पनपते हैं। कुछ विश्वासी बन्धुओंके साथ एक छोटेसे स्वतन्त्र संगठन करके लाउरोने इस आशयकी पतिया छापकर बाटना आरम्भ किया कि उसके देशवासियोंको फासिस्ट सरकारके पापका भया नक सच्चाईको समझना चाहिए और घोषित किया कि फासिस्टकी हार अनिवार्य है।

इन इश्तहारोंका जो परिणाम होना है वही हुआ। लाउरोको देश छोड़कर जाना पड़ा लेकिन विदेशमें भी उसने अपना कार्य नहीं छोड़ा। कुछ समय तक उसे पेरिसके होटलमें द्वारपालका काम भी करना पड़ा लेकिन वह हताश नहीं हुआ। किन्तु रोममें अपने दो बन्धुओंकी गिरफ्तारी और पुलिस द्वारा उत्पीड़नके समाचारसे उसका धैर्य टूट गया। अनेक बन्धुओंसे ऋण ले लेकर उसने एक छोटा हवाई जहाज खरीदा। विमान संचालनकी शिक्षा ली और अपने सात्त्विक अभियानके लिए तैयार हो गया। जिस समय वह अपने स्वप्न पक्षी और श्वेत घोड़वाले विमान पर, जिसका नाम उसने पेगास* रखा था, सवार होकर मार्सेसे रोमके लिए रवाना हुआ उस समय उसे अकेले विमान चलानेका कुल ५ घंटेका अनुभव था।

इस अंतिम उड़ानके लिए हवाई अड्डेकी ओर जाते समय उसने एक पत्रकार बन्धुको 'मेरी मृत्युका इतिहास' नामका एक अन्तिम सन्देश भेजा था। जिसके कुछ अंश इस प्रकार थे।

मेरी पक्की धारणा है कि फासिज्म तब तक परास्त नहीं होगा जब

---

* पेगासस एक पंखयुक्त घोड़ा था जिसपर कला देवताओंकी विशेष अनुकम्पा थी। ज्यूपितरकी मनोजात यावदेवी मिनर्वाने उसे पाला था। —लेखक

तक कि बीसियों युवक इटालीय जनताको मन गढ़िवे लिए अपने प्राणोंका बलिदान नहीं करेंगे। पुनरुत्थान युगमें सैकड़ों युवक अपने प्राण देनेके लिए तैयार थे। किन्तु आज ऐसे व्यक्ति बहुत कम हैं। क्यों ? ऐसा नहीं है कि उनमें अपने पुरखोंकी अपेक्षा कम साहस हो या कम विश्वास हो कारण यह है कि अभी तक किसीने फासिज्मको गम्भीर महत्त्व नहीं दिया है। क्या नेता और क्या साधारण युवक सभी समझते हैं कि फासिज्म अधिक दिन नहीं चल सकता और उन्हें ऐसा लगता है कि जो अपने आप मिट जाने वाला है उसके लिए प्राण देना व्यर्थ है।

लेकिन यह भूल है। हमें बलिदान देना ही होगा। मैं आशा करता हूँ कि मेरे बाद दूसरे भी होंगे और उन्हें जनमतको जगानेमें सफलता मिलेगी।

लाउरोको विश्वास था कि जीता रहनेकी अपेक्षा मरकर मैं अधिक उपयोगी हो सकूँगा। उसका यह विश्वास व्यर्थ नहीं गया। अपने गीति नाट्य इकारोमें उसने लिखा था—

> किन्तु मेरा स्वप्न वह सत्य होगा नया युक्त होगा
> और वह रणसङ्कुलके मध्यमें होगा।
> और आजका स्वप्न कविको उज्जावित करता है।
> नये प्राण नया सामर्थ्य गति एक नयी पार्थिव शक्ति !

लाउरो स्वयं सागर और आकाशके रहस्यमय नीलिमामें खो गया लेकिन यह सामर्थ्य गति यह पार्थिव शक्ति बराबर क्रियमाण रही।

और कौन कह सकता है कि आज भी कविका स्वप्न उतना ही यथार्थ और उतना ही शस्त्र सम्पन्न नहीं होता—नहीं है ?

⁂

यूरोपकी पुष्पावती : फिरेंजे

फिरेंजे—अंग्रेजी रूपान्तरमें फ्लोरेंस—फूलोंकी नगरी अथवा पुष्पावतीके रेलवे स्टेशनके बाहरका चौक, जहाँसे कई सड़कें अलग अलग दिशाओंमें जाती हैं। इस यायावरको अपने अनुकूल पर्यावरण खोज लेनेका कुछ ऐसा अभ्यास हो गया है कि वह मानो सूँघकर पहचान लेता है कि उसे किस दिशामें जाना चाहिए या कौन-सी सड़क पकड़नी चाहिए। इसीलिए उसने विया सान्ता कटरीनासे आगे बढ़नेका निश्चय कर लिया है। किन्तु मोड़पर एक मुसकराते हुए युवा सिपाहीको देखकर वह सोचता है कि रास्ता पूछ ही लिया जाय, क्योंकि दोनों हाथोंमें एक एक बेग उठाये हुए जितना कम चलना पड़े उतना ही अच्छा है। एक बार कमरा ठीक करके सामान रख देनेके बाद तो रास्तेसे भटक जाना भी प्रीतिकर और मनोरंजक हो सकता है। सिपाहीसे जो बात-चीत हुई उसे यह यायावर शायद कभी नहीं भूलेगा।

यायावर : "क्षमा कीजिए, महाशय, आप बता सकते हैं कि पुराना नगर किस तरफ है?"

सिपाही : 'पुराना नगर? (उदार भावसे दोनों हाथ फैलाते हुए) किन्तु महाशय, सारा इटली ही बहुत पुराना है!'

यायावर : 'जी हाँ, निस्सन्देह। किन्तु पुराने देशके इस पुराने सुन्दर नगरका कोई भाग अधिक पुराना भी तो होगा?'

सिपाही : 'जी हाँ, आप पुराना स्थापत्य और ऐतिहासिक गलियाँ देखना चाहें तो वे यहाँसे नज़दीक ही हैं।'

यायावर : 'तब उसीका रास्ता बता दीजिए। कृपा होगी।

बैग उठाकर सिपाहीके बताये हुए रास्तेपर मुड़ते हुए यायावर कन्धेके पीछेसे फिर सिपाहीका स्वर सुनता है, "महाशय, सुनिए!"

इससे आगेकी बातचीत उद्धृत करनेसे पहले यह बताना आवश्यक है कि सारी बात-चीत इटालियन भाषामें हुई है। यायावरको इस भाषाका ज्ञान नहीं है, लेकिन यात्रियोंके लिए तैयार की गयी काम-चलाऊ वार्तालापकी पुस्तकोंसे वह बहुत-कुछ रटता रहा है और अब तक परिचितोंसे सहायता भी लेता रहा है। भाषा न जाननेवालोंको कुछ सिखा देनेका उत्साह इटालीय जन-साधारणमें भी उतना ही है जितना औसत हिन्दुस्तानीमें होता है।

"महाशय, आप क्षमा करेंगे, सही उच्चारण 'उक्व' है, 'उक' नहीं।" (तब का पर्याय इटालीय भाषामें यही शब्द है।)

यायावर—"धन्यवाद। मेरा ज्ञान बहुत कम है और मुझे ऐसा ही सिखाया गया था।"

सिपाही—"वह जरूर रोममें सिखाया गया होगा। वहाँके लोग 'उक' ही कहते हैं। लेकिन सही उच्चारण 'उक्व' ही है, जैसा कि यहाँ होता है—आप जानते हैं कि फिरेंजेका उच्चारण ही हमारी भाषाका प्रामाणिक उच्चारण है।"

यायावर धन्यवाद देकर आगे बढ़ता है।

निस्सन्देह परायी भाषाके उच्चारणमें भूल होना या उस भाषाके जाननेवालों द्वारा सही उच्चारण बताया जाना या तो कोई असाधारण बात नहीं है। असाधारण बात यह है कि यह काम सड़कके मोड़पर पुलिसके एक सिपाही द्वारा किया जाय, और वह भी इतने शालीन ढंगसे। मेरे लिए यह आज भी उतने ही आश्चर्यकी बात है, लेकिन आज यह भी अनुभव करता हूँ कि फ़िरेंजेके साधारण नागरिककी संस्कारिताका सही प्रतिबिम्ब इस वातावरणमें मिल जाता है। अपनी प्राचीन परम्पराका अभिमान, अपनी भाषाके प्रति निष्ठा और उत्तरदायित्वका भाव समकालीन

सांस्कृतिक जीवनमें अपनी सुंदर नगरीका सम्मान राजधानी रोमसे ऊँचा बनाये रखनेका शिष्ट हठ, और एक अत्यंत आकर्षक और सहज हँसमुख भद्रता—फिरेंजेमें बिताये हुए एक मासके अवकाशमें बार-बार इसका अनुभव हुआ। यों तो उत्तर और दक्षिणके सम्बन्धमें यह बात समूचे यूरोपके बारेमें कही जा सकती है कि उत्तरके लोग सौम्य गम्भीर और आपसी व्यवहारमें खरे और नीतिवान् हैं जब कि दक्षिणी चंचल और चालाक हैं लेकिन इटलीमें, जहाँ कि मिलनसार और विनोदशील तो सभी हैं, व्यवहारका अन्तर विशेष लक्षित होता है। स्वयं इटलीके लोग इसका अनुभव करते हैं और विदेशियोंको चेतावनी दे देते हैं। फिरेंजेमें मुझे बताया गया था कि मध्य इटली तो ठीक है किन्तु रोमके लोग बहुत धूर्त होते हैं और उनसे सावधान रहना चाहिए। रोममें यह बताया गया कि रोम तक तो ठीक है और उत्तरके लोग भी अच्छे हैं किन्तु दक्षिणमें नेपोली (अंग्रेजी नेपल्स) के लोग सभी ठग होते हैं और राह-चलते आदमियोंके कपड़े उतार ले सकते हैं उनसे और भी सावधान रहना चाहिए।* जहाँ तक मेरा अनुभव है मुझे रोममें भी धूर्तताका एक उदाहरण मिला और नेपोली तो बन्दरगाह है ही इस लिए वहाँ उन उचक्कों और उठाईगीरोंकी कोई कमी नहीं थी जो सभी बन्दरगाहोंपर मिल जाते हैं। इतना ही है कि जहाँ तक बन्दरगाहोंका सवाल है नेपोलीसे प्रतियोगिता कर सकनेवाले और भी बन्दरगाह अवश्य हैं और दो एकका मेरा अनुभव भी है। किन्तु अभी हम इटलीकी पुष्पावतीमें हैं, और उसका विस्मय दूसरे शहरोंकी इन छिट-फुट त्रुटियोंसे किसी प्रकार कम नहीं होता।

---

* अमेरिकाके प्रसिद्ध गुण्डे—गैंगस्टर अस्सी प्रतिशत मूल इटालीय हैं और उनमें भी अधिकसंख्य नेपोलीके, यह जानी हुई बात है। कहाँ तक उनकी गुण्डागीरी उनकी इटालीय व्युत्पत्तिका परिणाम है और कहाँ तक अमेरिकी वातावरणका, यह दूसरा प्रश्न है। —लेखक

फ़िरेंज़े नगरी आर्नो नदीके तटपर बसी है। मुख्य भाग और पुराना नगर दाहिने तटपर है। किन्तु यह समझना भूल होगी कि बायाँ तट कम ऐतिहासिक या महत्त्वपूर्ण या कम सुन्दर है। अनेक पुल नदीके दोनों भागोंको एक दूसरेसे मिलाते हैं किन्तु पोन्ते वेक्यो (पुराना पुल) सबसे विशिष्ट है। कहा जा सकता है कि यही फ़िरेंज़ेका हृदय है। एक ओर पलात्सो वेक्यो (पुराना महल) और उसमें संलग्न उफ़ित्सीके संग्रहालय और दूसरी ओर पालात्सो महल और पित्ती संग्रहालयको यही पुल मिलाता है।

पुलसे उस पार जानेवाली सड़क आगे चलकर विया रोमाना हो जाती है। पित्ती संग्रहालयके पीछे ही बोबोलीका प्रसिद्ध उद्यान है। पुराना पुल अपने स्थापत्यके कारण भी उतना ही उल्लेख्य है जितना कि अपनी ऐतिहासिकताके कारण—इसके अलावा वह फ़िरेंज़ेके नवीन और प्राचीन कला शिल्पकी मानो जीती जागती प्रदर्शनी भी है। पुलपर दोनों ओर दुकानोंकी पंक्तियाँ हैं जिनमें फ़िरेंज़ेकी विशिष्ट शैलीके रत्नाभूषण उत्कीर्ण प्रवाल और विभिन्न प्रकारके मूल्यवान पत्थर सोने और चाँदीकी मीनाकारी इत्यादिके उत्कृष्ट नमूने देखनेको मिल सकते हैं। केवल इसी पुलपर विभिन्न वस्तुएँ देखते हुए घण्टों बिताये जा सकते हैं। यहाँसे नदीका दृश्य सुन्दर है और नदीके किनारेकी सैर भी रोचक। आजकल तो मोटरोंके कारण किनारोंकी सड़ककी सैर इतनी प्रीतिकर नहीं रही है जितनी कभी रही होगी लेकिन कुछ पुलोंपर खड़े रहनेका आकर्षण आज भी उतना ही जितना दान्तेके ज़मानेमें रहा होगा। यहींपर महाकविका पहले-पहल किशोरिका बियात्रिचेसे वह दर्शमिलन हुआ था जो इटालीय चित्र और काव्यकला दोनोंकी एक अपूर्व निधि हो गया है। यों फ़िरेंज़ेकी रूपश्री आज भी कम नहीं है और अनेक अलक्षित बियात्रिचे उसकी गलियोंमें घूमती हैं किन्तु दान्ते ही दुर्लभ हो गये हैं क्योंकि वैसी श्रद्धा आजके युगमें नहीं मिलती जिसके सहारे कविकी कल्पना जीवन और मरणको

स्वग और नरकका अतिक्रमण कर सको आज हम इतना तो (सक्ते ह कि यही वही दान्तको उस अलौकिक प्रेमकी उपलब्धि हुई होगी और मान सक्ते ह कि वसा होना अवश्य सम्भव रहा होगा लेकिन स्वय उस उपलब्धिसे वचित हो गये ह तो फिरेंजेकी किसी कमीके कारण नही बल्कि स्वय अपनी आन्तरिक अपूणताके कारण

यो तो इटलीके अनेक नगर दशनीय और उल्लेखनीय ह, और प्रत्येक में इटलीकी सास्कृतिक परम्परा बोलती ह, प्रत्येकके अलग अलग प्रशसक ह। जो लोग अमर नगरी रोमको प्रथम स्थान देते ह उनका तक भी समझम आता ह और जो मानते ह कि जिसन वेनेत्सिया—वनीस—नही देखा उसने इटली नही देखा उनका भी खण्डन करना कठिन ह क्योकि वह अपने ढगसे अद्वितीय ह। किन्तु मेरी समझमें तो फिरेंजेम कुछ ह जिसे न दखना मानव सस्कृतिकी एक महत्त्वपूण उपलब्धिसे वचित रह जाना ह। क्लासिकल परम्पराके मुख्य प्रेरणा-स्रोतोम फिरजेका स्थान अब भी अद्वितीय ह। यह अकारण नही ह कि इतने कवि और कलाकार फिरेंजेकी ओर आकृष्ट होत रह और नगरीकी अथवा उसके अतिक प्रदेशकी यश गाथा गाते रहे। फिरेंजेके महान् कवि फोस्कोलाने ठीक ही कहा ह कि 'फिरेंजेमें सान्ता क्रोचे गिरजाघरमें इटलीका सम्पूण गौरव सचित ह। यह भी उल्लख ह कि इसी साता क्रोचम मिकेलाजलोकी समाधि ह और उसीके सम्मुख गलिलेओकी। मिकेलाजेलोन जिसकी कास्य मूर्तिया आज भी फिरेंजेकी शोभा ह देवताओके लिए एक नये ओलिम्पसका निर्माण किया था। और गलिलेओने प्राणाका जोखम उठाकर घोषणा की थी कि पथ्वी और अय ग्रह सूयके आस पास परिक्रमण करते ह। इस प्रकार कला और विज्ञान दोनाके क्षेत्रामें फिरेंजेकी देन अद्वितीय रही। और उसका प्रतिबिम्ब दान्त और लेयोनार्दो दा विंचीके कृतित्वमें देखा जा सक्ता ह। कोलरिजन यह लिखा था

ओ फ्लोरेंस विथ दाई टस्कन फील्डस एण्ड हिल्स
दाई फमस आर्नो फड विथ आल द रिल्स
दाउ ब्राइटेस्ट स्टार आफ स्टार-ब्राइट इटली !

(ओ फ्लोरेंस टस्कनीकी अपनी पहाड़ियाँ और खेतोंके और अनेक झरनोंसे पोषित अपनी प्रसिद्ध नदी आर्नोके कारण इटलीके तारामण्डित आकाशकी सर्वाधिक दीप्तिमान तारिका !)

और शैलेने कहा था

ओ फास्टर नर्स आफ मर्स एवडण्ड ग्लोरी
सिंस एथेंस इटस ग्रेट मदर सक इन स्प्लेंडर
दाउ शडोएस्ट फोथ बट माइटी शेप इन स्टोरी,
एज ओशन इटस रेवड फॅस सिवीयर ग्रेट टेंडर
द लाइट-इ वस्टड एजल पोएज़ी
वाज ड्रा न फ्राम द ड्रिम वहड टु वेल्कम दी ।

(जबसे संस्कृतिकी माता एथिंसकी कीर्तिका ह्रास हुआ तबसे तू ही मानवके खोये हुए गौरवकी धात्री रही इतिहासमें उसके महान आकारको तू प्रतिष्ठापित कर रही है जैसे कि उसके ध्वस्त मन्दिरोंको सागर प्रतिबिम्बित करता है। निर्मम किन्तु कोमल काव्यकी आभावेष्टित देवी तेरे अभिनन्दनके लिए अवतरित हुई है।)

एलिजाबेथ बारेट ब्राउनिंग तो हारकर कह दिया फ्लोरेंस क्या है इसका वर्णन करनेमें मनुष्यकी या कविकी वाणी सहज ही असमर्थ हो सकती है। कवियित्रीका यह कथन और भी सार्थक जान पड़ने लगता है जब हम इसे उनके और ब्राउनिंगके प्रेम और प्रेम-काव्यके सन्दर्भमें देखते हैं। मन मिरन्डोला और मिल्टनका घर तो देखा ही वह स्थान भी देखा जहाँ ब्राउनिंग-दम्पति रहते थे और वह दृश्य भी देखा जो कि इटलीकी सुन्दर धूपके अलावा दूसरा कारण था जिसने उन्हें मोह लिया था। धूप उन्हें

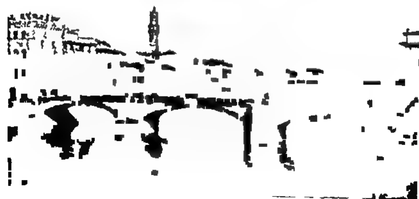
स्वास्थ्य देती थी किन्तु फिरेंज़ेका वह दृश्य उनकी आत्माको पुष्ट करता था

वास्तवमें फिरेंज़े और एथेंसका नाम एक साथ लेना ऐतिहासिक अभिप्राय रखना है। दोनों नगर अपने उत्कर्ष कालमें गण राज्य थे और उनकी सांस्कृतिक देनमें इस बातका विशेष महत्त्व रहा। निस्सन्देह दोनोंका समय अलग-अलग था और इसके अलावा एथेंसके गण राज्यमें अभिजातोंकी सत्ता थी, जब कि फिरेंज़ेके गणराज्यमें सत्ता नागर अथवा व्यापारी वर्गकी थी। और इसीसे अनुरूप दोनोंकी देनमें भी अन्तर रहा। किन्तु एक स्वाधीन चिन्तन एक निशङ्क कौतूहल और शिल्पकी साधनामें एक निश्चित सुघरपन और उदार विस्तारका भाव दोनोंमें रहा। मानसिक स्वातन्त्र्यकी इस परम्पराके और व्यापारिक समृद्धिके कारण फिरेंज़े मध्यकालीन पुनरुज्जीवनका केन्द्र रहा। १४वीं शतीका उत्तरार्ध और १५वीं शतीका समय फिरेंज़ेका उत्कर्षका समय रहा। यह समय सुप्रसिद्ध मेडिची परिवारकी उन्नति और समृद्धिका समय रहा उसी वंशके लोरेंज़ो 'लारेंज़ो द मग्नीफिमेंट' के विरुदसे प्रसिद्ध है। सन १८६० में जन मत द्वारा फिरेंज़े इटलीके राज्यसे सम्बद्ध हो गया और कुछ वर्षों तक उसकी राजधानी भी रहा।

सभी पुराने नगरोंका असली जीवन उसकी नयी और चौड़ी सड़कोंमें नहीं बल्कि पुरानी और सँकरी गलियोंमें पाया जाता है। जिन नगरोंमें लोक-जीवनकी परम्पराके साथ-साथ शिल्प और स्थापत्यकी परम्परा भी महत्त्व रखती है—और सच बात यह है कि किसी भी एकीभूत और संश्लिष्ट समाज जीवनमें रहन सहन और कला शिल्पकी परम्पराओंको अलग नहीं किया जा सकता जैसे कि किसी भी वृक्षके फल फूल पत्तोंको उसकी जड़से अलग नहीं किया जा सकता—उनके बारेमें ये बातें और भी सच है। भारतमें हम इसकी सच्चाईका इतना तीखा अनुभव नहीं करते क्योंकि हमारे अधिकतर नगर नये हैं और उनकी जड़ें वहाँ हैं ही

नहीं— न ही उनका रहन-सहन ही मिट्टीसे उगा हुआ और उसमें सम्बद्ध है, न उनके स्थापत्य और शिल्प इत्यादि। कुछ एक पुराने शहर हैं जिनकी जीवन विधि अपनी परम्परासे जुड़ी चली आ रही है, उनमें परम्परागत स्थापत्य और शिल्प भी देखनेको मिल जायगा—पुरानी हवेलियाँ और अटारियाँ, परम्परागत बैठक-खाने और अन्तःपुर इत्यादि। लेकिन ये अब शेष भी हमारे देखते-देखते मिटते जा रहे हैं और जो नये शहर बन रहे हैं वे तो हैं ही फूहड़ और अपरूप! किन्तु इटलीके लगभग हर शहरमें एक छोटा-बड़ा अंश ऐसा मिल जायगा जो कि पुराना है या कि जिसमें पुरानेका परम्परागत विकास देखा जा सकता है। इटलीके नगर इनमें भी विशेष उल्लेखनीय हैं जैसे पेरूजिया, सिएना, असीसी इत्यादि और फिरेंज़े तो प्रमुख हैं ही। जिस पान्सियानमें (यह सराय और होटलके बीचकी चीज़ होती है) मैं ठहरा था, वह अपने-आपमें एक छोटा मोटा संग्रहालय थी। किन्तु फिरेंज़ेकी हर गली मानो एक चित्र-वीथी है, पत्थरके गवाक्ष हर खण्ड मानो शिल्प इतिहासका एक खण्ड है। और स्थापत्यकी परम्परा गलियोंमें भी उतनी ही जीवन्त है जितनी बड़े बड़े चौकोंपर बने हुए प्राचीन महलों या हवेलियोंमें। किसी भी गलीमें चले जाइए, यह जाना जा सकता है कि कौन-सा मकान किस स्थपतिके आदेशसे बना, स्थापत्यकी दृष्टिसे किस महराब और किस खिड़कीमें क्या विशेषता है, और शिल्पियों या कलाकारोंकी वंश-परम्परामें क्रमागत जो-जो परिवर्तन हुए उनका क्या कारण रहा। भारतमें शायद किसी भी नये-पुराने शहरके बारेमें ऐसा नहीं कहा जा सकता। बहुत भावनापर बनारसके घाट ही कदाचित् इस दृष्टिसे उल्लेखनीय हैं, लेकिन और अनेक प्रकारकी जानकारी उपलब्ध होनेपर भी उनके स्थापत्य और स्थपतियोंकी शिक्षा-दीक्षा या युक्तियोंका इतिहास अधूरा ही रह जाने देना होगा।

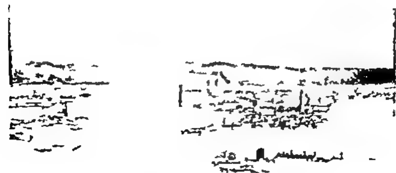
निस्सन्देह यह तो कहा ही जा सकता है कि यहाँपर कमसे-कम हमारी शान परम्परामें हमारे वास्तु शिल्पी वास्तवमें केवल दस्तकार होते



फिरेंज़े ऊपर–उफिसा मप्रहालय और पुराना महल नीच–आर्नो नदी पर पुल

फिरेंचेका बड़ा गिरजाघर [फोटा शुनर]





फिरेंज नलासगार्दोंसे एक कुसुम नगरका परिदृश्य



असीसी [बायेंको सन्त फ्रांसिसका गिरजाघर शिखरपर पुराना दुर्ग]



असीसी मस्की कब्रगाह

सुबासियोका गुफा विहार



ईसा मन प्रतिम



फरिश्तोंवाला मरियमका गिरजाघर

दृष्टिसे वस्तुका रूप ज्योंका-त्यों बना हुआ है, नया पुरानेको काटता नहीं बल्कि और विस्तीर्ण करता है।

अनेक उल्लेखनीय महलोंमें दो-चारका उल्लेख अनिवार्य है। पुराना महल (पलात्सो वेक्कियो) १३ वीं शतीके अन्त और १४ वींके आरम्भमें कम्बियो द्वारा निर्मित हुआ था, अनन्तर उसमें कई परिवर्तन हुए। १६ वीं शतीमें वासारीने उसके भीतर अनेक परिवर्तन किये और मेदिची परिवारके वैभवके अनुकूल बड़े बड़े कक्ष प्रस्तुत किये। भीतर आँगनमें वेरोक्कियो द्वारा निर्मित पंखों वाले बालककी प्रसिद्ध मूर्ति है।

इसी महलके चौकके पार्श्वमें एक और उल्लेखनीय इमारत है। एक समय इसीमें गणराज्यके प्रमुखका निर्वाचन घोषित होता था। उसीके सामने इटलीके मूर्ति शिल्पके कुछ श्रेष्ठ उदाहरण देखे जा सकते हैं, जिनमें चेल्लीनीका पर्सियुस और ज्याम्बोलोन्या द्वारा निर्मित साबीन स्त्रियोंका अपहरण तथा हरकुलीज और दानव उल्लेखनीय हैं।

पित्ती महल १५ वीं शतीके मध्यमें पित्ती परिवारके लिए ब्रुनलेस्कीने आरम्भ किया था। किन्तु अनेक परिवर्तनोंके बाद उसे रगरीने पूरा किया। अब इसी भवनमें सुप्रसिद्ध आधुनिक कला संग्रहालय है।

रुचेल्लाई महल अल्बर्तीकी वास्तुकलाका नमूना है। इसके शिल्पकी विशेष उल्लेखनीय बात प्रकाश और छायाका उपयोग है जिसके द्वारा भवनके कोण और रेखाओंको विशेष उभार दिया गया है।

फ्लोरेंसके महलोंसे अधिक प्रभावशाली धर्मके गिरजाघर हैं। यद्यपि [illegible] (और संसारका) सबसे बड़ा गिरजाघर रोमका सान पिएत्रो है जो कि पोपका विशिष्ट गिरजाघर है, तथापि मान्यताकी दृष्टिसे और वास्तु शिल्पकी दृष्टिसे फ्लोरेंसके अनेक गिरजाघर अपना महत्त्व रखते हैं। फ्लोरेंसका कथीड्रल सानपियेत्रोके बाद संसारका सबसे बड़ा गिरजाघर

है। इसको कम्बियोने सन १२९६ में आरम्भ किया था। किन्तु निर्माण का काय सन १४३६ में पूरा हुआ। इसके गुम्बन्का श्रय ब्रुनल्स्कीका है। गिरजाघरके निकटकी मीनार (कम्पानाले) जियातान सन १३३४ में आरम्भ की थी। उसे तलेन्तीन लगभग पचास वर्ष बाद पूरा किया।

कथिड्रलके सम्मुख सान् जियोवानीका बपतिस्मा घर भी उल्लेखनीय है। इसके तीन कांस्य निर्मित द्वारोंमें एक जो कथिड्रलकी ओर खुलता है स्वर्गका द्वार' कहलाता है। यह नाम मिकेलाजलोने दिया था।

सान्ताक्रोचकी चर्चा ऊपर आ चुकी है। सान्ता मरिया नोवेलाका गिरजाघर गिर्लान्दायोके भित्ति चित्रोंके कारण दर्शनीय है। सान लारेंजोका गिरजाघर और उससे सम्बद्ध पुस्तकालय भी दर्शनीय है। इन इमारतोंके निर्माणमें मिकेलाजलोका विशेष हाथ रहा।

नगरसे कुछ दूर पहाड़ीपर सान् मिनियात्पोका गिरजाघर सन १०१३ में बनाया गया था। अनन्तर इसमें कई परिवर्तन होते रहे। इस गिरजा घरके सामनेके चौकसे फिरेंजेका सुन्दर परिदृश्य दीखता है। यह चौक मिकेलाजलोके नामसे प्रसिद्ध है और यहाँ उस कलाकारकी बनायी हुई विशाल कांस्य मूर्तियाँ भी है।*

सान मार्को बाडिया और आयीमान्तार गिरजाघर भीतर संगृहीत कला-वस्तु और भित्ति चित्रोंके लिए दर्शनीय है। लिप्पि लिप्पी देल्ल रोबिया बातिचल्ली गिर्लान्दायो और सान् जियावानीके अनेक चित्र इन गिरजाघरोंमें हैं।

पुराने महलोंमें लगे हुए उफित्ती संग्रहालय तथा पित्ती महलमें स्थित पालातीन तथा आधुनिक कला संग्रहालयोंके नाम पहले लिए जा चुके

* यहाँ प्रदर्शित डविड वास्तवमें प्रतिकृति है असली मूर्ति सान् मार्कोके निकट एक संग्रहालयमें है जहाँ दूसरी मूर्तियाँ भी हैं।
—लेखक

ह । उफित्सी संग्रहालय विश्व भरके सबसे विख्यात संग्रहालयोंमें अपना स्थान रखता है । आरम्भमें मेदिची परिवारके निजी संग्रहकी रक्षाके लिए इसका निर्माण हुआ था । किन्तु शतियोंसे इसका विकास होता रहा है । मूर्तिशिल्पके लिए बार्जेलो राष्ट्रीय संग्रहालय अवश्य देखना चाहिए ।

किन्तु गिरजाघरों महलों और संग्रहालयोंका वर्णन नगरका वर्णन नहीं है । वर्णन मात्र अभीष्ट भी नहीं है पर फिरेंजके अपने रसका आस्वादन करा देनेके लिए—उससे जो रागानुभूति मिली उसकी एक अनुगूंज ही दूसरेके चित्ताकाशमें व्याप्त करा देनेके लिए—इससे अधिक कुछ चाहिए । संग्रहालयोंमें जो चित्र हैं, उनके प्रतिचित्र योरप और आगे ले जाते हैं—पर सारभूत फिरेंजे उसकी कला शोभा भी नहीं है । न उसके सुन्दर सजीले बाजार और हंसमुख युवतियां उसके रहस्य तक पहुंचाती हैं यद्यपि उन्हें देखना कुछ और बनावें जीवनके निकट जाना है । ब्राउनिंगने फ्लोरेंसके प्राचीन चित्र आदि कितनी ही कविताओंमें उस अलग कुछको कह देना चाहा है जो इस नगरीका अपना है सभी कुछ और आगे ले जाती है पर उससे आगे कुछ और है जो रह जाता है

फिर नगरीके आस-पासके प्रदेशोंकी सैर—बड़ोमगालोंसे तीसरे पहर देखा हुआ नगरीका परिदृश्य—(कितना अचूक परख थी ब्राउनिंगकी जो उस पहाड़पर आकर रुका तो टिक गया और वहींसे जीवन पाता रहा !) या उत्तरी अल्पिनकी पहाड़ियोंमें बिखरे हुए छोटे-छोटे दर्शनीय गांवोंके गढ़ या फिर गांव घर अंगूरके खेत जैतूनके बाग इटालीय देवदारुके वन, त्रिप्रलम्बके पुराने विहार (मोनास्टेरी) को चिन्तन और आत्मशुद्धिके लिए बनाई गई कोठरियां (और कुछ दूरकी रोमिक रंगशाला) या गिरजाघरके बाहर पहाड़ीका शाखर सेट होकर देखा हुआ फ्रिरेंज और आर्नो नदीकी घाटीके पारकी गिरि शृङ्खलाके पीठका सूर्यास्त सौन्दर्यबोधसे होनेवाले अकारण दर्दको कालिदासने भी पहचाना था पर फिरेंजका

परिदृश्य उसे मानो हृदयपर गहरा उकेर जाता है। फिरेंजे म अपने शब्दों द्वारा लिखा सका, यह मानना मुझे तभी साधार जान पडेगा जब म उसी ददका तीखा जगा दे सकू ! संस्पर्श वहतका उतरा सुर-मरिमा—हम वह न सके ' रूपका प्रतिचित्र कोई उपलब्धि नहीं है उसमेंमे यदि विराटकी कल्पना तक पहुँचा जा सके तभी उपलब्धि है।

हृदयके भीतरसे
सहसा कुछ उमडकर बोला
सुन्दरके सम्मुख यह तुम्हारी जो उदासी है—
वह क्या केवल रूप रूप रूपकी प्यासी है ?
जिसने बस रूप देखा है
उसने बस—
भले हो कितनी भी उत्कट लालसासे
केवल कुछ चाहा है
जिसने पर दिया अपना है दान
उसने अपनेको, अपने साथ सबको,
अपनी सबमयताको निबाहा है

हाँ विराटकी इस वदनाको प्रेषित कर सकनेके लिए—अपना सब मयताको निबाहने के लिए—छटपटानेवाला मैं ही अकेला नहीं हू कहीं अधिक प्रतिभाशाली इसीके लिए इसी प्रकार छटपटाये—इसीसे मैं सान्त्वना पा लूँ तो पा लू ! अपने सामर्थ्यसे न सही उन्हींकी प्रतिभाके सहारे म अपने ध्येय तक पहुच जाऊँ, तो भी कुण्ठित नहीं हूँ

खुदाके मसखरेके घर : असीसी

स्टेफानस वन्कर मारिया देल्या आञ्जली (फरिश्तोंवाली मरियम) के गिरजाघरके पाससे — जिसमें वसन्तमें कण्टकहीन गुलाब खिलते हैं और असीसीके सन्त फ्रांसिसको असीसी लोगों तक पहुँचाते हैं — होती हुई सड़क असीसीकी उपत्यका पार करती हुई शिखरपर बने हुए प्राचीन दुर्गकी सीढ़ियोंसे कतराती हुई पगडण्डी बनकर जैतूनके उद्यानोंमें खो गयी है। थोड़े अन्तरपर बने हुए दो दुर्ग असीसीकी बस्तीके ऊपर छाये हुए हैं और चारों ओर दूर तक लहराते प्रदेशकी मानो आज भी रखवाली कर रहे हैं। बस्तीके दूसरे छोरपर बना हुआ सन्त फ्रांसिसका गिरजाघर और विहार इस दुर्गसे देखनेपर बहुत छोटा जान पड़ता है और नीचे स्टेशनके निकट बना हुआ देल्यी आञ्जली गिरजाघर तो और भी छोटा। पार्थिव सत्ताके प्रतीक सर्वदा पारलौकिक सत्ताके प्रतीकोंसे बड़े होते हैं या होना चाहते हैं। यहाँ तक कि धर्म-सत्ता भी — जिसे पारलौकिक ही होना चाहिए — जब इहलौकिक सत्ताके लोभमें पड़ती है तब उसे भी बड़प्पनका चस्का लग जाता है। रोमका सान पियेत्रो (सन्त पीटर) गिरजाघर जो कि पोपका विशिष्ट गिरजाघर होता है संसारका सबसे बड़ा गिरजाघर है और गिरजेके लिए उससे बड़ी इमारतकी योजनाको रोमकी स्वीकृति नहीं मिल सकती यद्यपि बड़प्पनके पार्थिव लक्षणका महत्त्व अब बहुत हो गया है। सान पियेत्रोके फ़र्शपर निशान लगाकर संसारके अन्य बड़े गिरजाघरोंकी आनुपातिक लघुता प्रत्येक आगन्तुकके लिए मानो पट्टियोंपर लिखकर रख दी गयी है। श्रद्धालु लोग आकर पाते हैं कि इनको सजाकर और फ़र्शपर लिखे हुए पैमाइशी आँकड़ोंके नापसे नापकर उनकी श्रद्धा मानो बहुत छोटी हो गयी है या

और भी अधिक सकुचाती जा रहा ह ! भारतमें भी सम्पन्नतर मन्दिरामें जानेपर लोगोंका ध्यान ठाकुरकी ओर नहा बल्कि ठाकुरकी पनकी आखा या मानिकके तिलककी आर आकृष्ट किया जाता ह क्याकि मूल्यवान तो रत्न ह ठाकुरका क्या मूल्य हा सकता ह !

किन्तु यह जो पगडण्डी बस्तीको पार करती हुई और दुगसे कतराती हुई जतूनके उद्यानाके पार निरतर वनाच्छादित शिखरकी ओर बढ़ती गयी ह उसे किसी भी सत्तासे सरोकार नहीं ह। वह वास्तवमें पवत शिखरकी ओर भी नहीं बढ़ती। सुवासिया शिखरके एक पाश्वपर छाये हुए घने जगलके भीतर एक गह्वरमें चट्टान काटकर बनाया गयी गुफा रूपी कुटिया ही उसका लक्ष्य ह। बनडिक्ट सम्प्रदायके उदासियाने यह गुफा सत फ्रासिसको एकान्त वासके लिए भेंट की थी। अब यद्यपि गुफाके साथ कुछ और कोठरियाँ भी बन गयी हं और एरेमो दल्ले कार्चेरी दशनीय स्थान माना जाकर सलानियाके लिए प्रस्तुत की गयी सूचना पुस्तकामें स्थान पान लगा ह तथापि उसका एक कम्प अब भी वसो ही अयमपृक्त तन्मयता लिये हुए ह। वहाँ पहुचकर सलानीको भी हठात अवाक हो जाना पड़ता ह जो सत फ्रासिसके जीवन और साधनासे परिचित ह उनका तो कहना ही क्या—वे तो गुफा-द्वारके निकट बन हुए छाटे-से उपासनागृहमें प्रवश करते न करत विभार हो जाते हैं। एक गहरा मन्त्रपूत मौन उनके अन्त करणमें भर जाता ह और मन नीरव निष्कम्प लयमें गा उठता ह। सुवासियो शिखरके पथपर ही सन्त फ्रासिसको क्रूसपर टग हुए ईसाका वह स्वप्न दीखा था जिसके सम्मोहनमें वह ईसासे इतन एकात्म हो गय ■ कि उनकी हथेलिया पर कीलाके घाव बन गये थ। साधना-गुफाका यात्री श्रद्धा भरा होकर भी एसी एकात्मता तो नहीं प्राप्त कर सकता लेकिन सन्त फ्रासिसका स्नहस्पश मानो उसे छू जाता ह उनका वह विश्व-प्रेम जो कि गधेको भी भाई गधा और शरीरको दागनवाली आगको भी भाई आग बना देता था मानो उसक लिए भी सुलभ हो आता ह

मध्य इटलीका उम्ब्रिया प्रदेश मानो इटलीका वक्ष है, असीसी मानो उम्ब्रियाका और इसलिए इटलीका हृदय है। इटलीमें नगर राज्य और छोटे बड़े देश राज्य अनेक होते रहे और प्रत्येक राजधानीका अपना अपना सौन्दर्य है। रोम, फिरेंज, वनत्सिया—तीनोंका सौन्दर्य जगद्विख्यात है। मिलानो, नपाली और जनोआ इतने प्रसिद्ध या प्रिय नहीं हैं पर अपने अपने समर्थक रखते हैं। अनेक छोटे-छोटे नगर भी हैं जिनके अलग अलग हिमायती हैं। ऐसे भी हैं जो कहते हैं कि अगर उन्हें अपने रहनेके लिए संसारमें कोई स्थान चुन लेनेकी छूट हो तो वे पेरुजियामें रहेंगे या असीसीमें रहेंगे। किन्तु मैं अपने सम्मुख जब यह विकल्प रखता हूँ तो भारतके बाहर जो दो-तीन स्थान मेरे सम्मुख आते हैं उनमें असीसी कदाचित् पहला है। या यों कहूँ कि यूरोप भरमें जो दो स्थान इस दृष्टिसे मन रखते हैं, असीसी और फ़िरेंज़े हैं। फिरेंज़ नगर है, नगरकी सब सुविधाएँ वहाँ मिलती हैं, असीसी छोटी जगह है। किन्तु असीसीमें जो है वह मध्य इटलीमें या उम्ब्रियामें भी और कहीं नहीं है। और इसका श्रेय जितना उसकी भौगोलिक स्थितिको है उतना ही सन्त फ्रांसिसकी छायाको जो आज भी असीसीके रूपमें स्वच्छन्द जीवनको और संवेदनाको मानो अनुच्छायित किये हैं।

यों असीसी पेरुजिया प्रान्तमें ही है, पेरुजियासे पन्द्रह मील दक्षिण पूर्व। सागर-तलसे उसकी ऊँचाई लगभग १४०० फुट है, दुर्ग प्रायः तीन सौ फुट और ऊँचा है और कार्चेरीकी गुफा बस्तीसे प्रायः एक हज़ार फुट ऊँची है। असीसीसे टवरा (टाइबर) और टापिनो नदियोंकी घाटियाँ दीखती हैं। सारी बस्ती पहाड़की ढालपर बसी हुई है। बारहवीं शतीसे लेकर आधुनिक काल तकके आठ सौ वर्षोंमें बने हुए मकानोंमें ऐसी आश्चर्यजनक एकरूपता है कि उसका दूसरा उदाहरण कदाचित् संसारमें न होगा। ऐसा जान पड़ता है कि सारी बस्ती एक ही समयमें एक ही वास्तुकारके निर्देशनमें बनायी गयी होगी और वह वास्तुकार भी अनोखा रहा होगा।

क्योंकि सभी इमारतें एक ही सन्दली रंगके पत्थरकी बनी हुई हैं। आधुनिक नगर निर्माणमें तरह तरहके द्रव्योंका और रंगोंका जमा उपयोग सौन्दर्य और विविधताके लिए अनिवार्य माना जाता है, उसका यहां कोई लक्षण नहीं है। वह मानो किसीकी कल्पनामें ही नहीं आया। वास्तवमें विविधताके द्वारा सामञ्जस्य लानेका उद्योग वहां अपेक्षित है जहां बहुत-सी चीजें अलग-अलग हों और बमेल हों, जहां अधिक-से अधिक उनके बमेलपनसे चित्र विचित्र पटनमें गूंथा जा सके। किन्तु जहां है ही इकाई वहां विविधताका प्रश्न कैसे उठ सकता है? और असीसी वास्तवमें इकाई है। आज भी उसमें एक विस्मयकारी एक रूपता और एक प्राणता है। इसी एक और अखण्ड असीसीकी सड़कों और गलियोंमें सन्त फ्रांसिस अपने रंगीले और मनचले सहचरोंके साथ रंगरेलियाँ करते रहे यहींपर उन्होंने अपने दिव्य स्वप्न देखे यहींपर वह कोढीसे गले मिले, यहींपर उन्होंने ईंट-पत्थरों और कीच-कादोंकी बौछारें सहीं, यहीं उन्होंने नाम-गान किया यहीं डाकुओं द्वारा पकड़े जानेपर अपनेको एक 'राजाधिराजका दूत' बताया और यहीं नगरवासियोंकी ठिठोलियोंके जवाबमें अपनेको खुदाका मसखरा या भांड घोषित किया। यहींपर उन्होंने निर्धनताकी प्रशस्ति की और अन्तमें मृत्युके समय यहीं स्वयं अपने जीर्ण शरीरसे यह कहकर क्षमा मांगी कि मेरे गधे भाई मेरे शरीर, तू मुझे इसके लिए क्षमा कर देना कि मैं इतनी निर्ममता से तुझे हांकता रहा हूँ। सब कुछ बीत जाता है, धार्मिक उत्साह और आवेश भी क्षीण हो जाता है सेवा धर्म लुप्त हो जाता है और सेवादारोंके संगठनके रूपमें अपना कंकाल छोड़ जाता है। लेकिन विचार वास्तवमें कभी नहीं मरते वे समाजों जातियों और युगोंको नया संस्कार दे जाते हैं। असीसीमें अलग-अलग युगोंके और धर्म-संस्कारोंके आवेश अभी हैं रोमन कालके सभा भवन और देवी मन्दिर भी हैं, लेकिन असीसीका संस्कार ईसाई संस्कार है ईसाईमें फ्रांसिसकन संस्कार और फ्रांसिस्कन संस्कारोंमें समूचे जीवनकी एकताका संस्कार।

फ्रांसिसका जन्म असीसीमें सन ११८२ में हुआ। मृत्यु भी यहींपर सन १२२६में हुई। सन १२२८में उन्हें पोप द्वारा सन्त का पद प्रदान किया गया और उसी वर्ष फ्रांसिस्कन सम्प्रदायके विहारका निर्माण आरम्भ हुआ। सन १२५३ में यह पूरा हुआ। सन १८१८ में इसका तलघर बनाया गया और उस समय सन्त फ्रांसिसका कफ़न भी वहां मिला जिसे अब तलघरमें ही समाधि दी गयी है। विहारके साथका निचला गिरजाघर जिओत्तो सिमाबुए आदिके बनाये हुए भित्ति चित्रोंसे अलंकृत है।

फ्रांसिसका जन्म उच्च मध्यवर्गमें एक सम्पन्न व्यापारीके परिवारमें हुआ। उनका यौवन रंगरलियों और साहस-कर्मोंमें बीता। आमोद-प्रमोदमें वह असीसी भरके युवकोंके नेता थे। इक्कीस वर्षकी आयुमें वह असीसीकी रक्षाके लिए युद्धमें गये और बन्दी हुए। एक वर्ष बाद पुनः असीसी लौटनेपर वह सख्त बीमार हुए। इस बीमारीसे उठनेपर यद्यपि उन्होंने फिर आमोद-प्रमोदका जीवन आरम्भ कर दिया तथापि यहींसे कदाचित् वह आध्यात्मिक परिवर्तन आरम्भ हुआ जिसने शीघ्र ही बड़े नाटकीय ढंगसे उनके जीवनका ढांचा बदल दिया। फ्रांसिसने एक दिन यार-दोस्तोंको दावत दी। खा-पीकर सब लोग मशालें लेकर जलूस बनाकर शहरकी सैरके लिए निकले—फ्रांसिसको रसिकराज की उपाधि देकर उसका अभिषेक किया गया था और मालाएं पहनायी गयी थीं और वास्तवमें मशालोंका जलूस इसी अभिषेकका शोभा-यात्रा था। चलते चलते अचानक लोगोंने लक्ष्य किया कि फ्रांसिस उनके मध्यमें नहीं है। खोज हुई लेकिन कोई पता नहीं मिला। चकित और क्षुब्ध जलूस उसी पथसे वापिस लौटा। फ्रांसिस रास्तेमें निश्चल पड़े हुए थे—उस निश्चल अवस्थाको मूर्च्छा कहा जाय या समाधि या योगनिद्रा। जब वह जागे तब वह फ्रांसिस नहीं थे। न उनके साथी उन्हें पहचान सकते थे और न वह साथियोंको। किसी भीतरी आघातसे मानो इनका जीवन-ध्यान हटकर किसी दूसरे आयाममें चला गया था और नयी डगरपर चलने लगा था। फ्रांसिसने घर छोड़कर एकान्त अपनाया।

फिर रोमकी तीर्थयात्रा की जहाँ संत पियेत्रोके बाहर एक भिखमंगेके साथ उन्होंने पोशाक बदल ली और चिथड़ोंमें वापिस असीसी लौटे। घर लौटते समय राहमें एक कोढ़ीको देखकर वह ग्लानिसे पीछे हट गये फिर इस ग्लानिपर भी उन्हें इतनी आत्म-ग्लानि हुई कि लौटकर उन्होंने कोढ़ीका हाथ चूमा और उससे गले मिले।

इस परिवर्तनको फ्रांसिसके संगी-साथी न पहचानें, यह स्वाभाविक ही था। उनकी वे अवज्ञा करें, यह भी अप्रत्याशित नहीं था। उन्होंने राह चलते फ्रांसिसका ढेलों और कीचड़से सत्कार किया। अपमानित और और विरक्त पिताने फ्रांसिसको उत्तराधिकारसे वंचित करनेका निश्चय किया और बेटेको लेकर असीसीके बिशपके सम्मुख पहुँचे। जब सब समझाना-बुझाना व्यर्थ हुआ और फ्रांसिसको सम्पत्ति-च्युत करनेका दस्तावेज तैयार किया जाने लगा तब फ्रांसिसने अपने शरीरके सब कपड़े उतार कर पिताके सामने रख दिये और कहा, 'अब मैं अधिक सच्चाईसे प्रार्थनाका यह पद दोहरा सकता हूँ कि ' हे मेरे स्वर्गमें रहनेवाले पिता!' बिशपकी दी हुई पोशाक पहनकर वह गाते हुए सुबासियो पर्वतके जंगलकी ओर चल गये। वनमें उन्हें डाकुओंने पकड़ लिया तो वह खिलखिलाकर हँसे अपना परिचय उन्होंने यह दिया कि 'मैं एक बहुत बड़े राजाधिराज का दूत और सन्देशवाहक हूँ।

तीन वर्ष बाद मारिया देल्ली आंजली गिरजाघरमें एक पाठपर उपदेश देते हुए उन्होंने अपने अकिंचनताके सिद्धान्त की प्रतिष्ठा की। "अपने पथपर सर्वत्र उपदेश दो और कहो कि ईश्वरके राज्यकी प्रतिष्ठा होने वाली है। रोगियोंकी सेवा करो, कोढ़ियोंके घाव धोओ। तुम्हें मुफ्ते हाथों जो मिला है उसे खुले हाथों लौटाओ। सोना-चाँदी मत रखो, अंटीमें पैसा न रखो, न झोला, न दूसरी पोशाक, न जूता, न लाठी। जो श्रमिक वह उतनेका ही अधिकारी है जितना वह श्रमसे कमाता है।'

असीसीके सोयका का यह सम्प्रदाय सन १२०६ अथवा १२१० में स्थापित हुआ। असीसीके नीचेकी समतल भूमिमें बना हुआ फरिश्तों वाली माता मरियम का गिरजाघर उपदेशके लिए उन्हें मिल गया। फ्रांसिस और उनके शिष्यान इसीके आसपास डालें और पत्तियां बीनकर छप्पर बना लिये। किन्तु उनके रहनेका कोई निश्चित स्थान नहीं था। किसान मजदूरकी भांति व मटमैले रंगका एक झोला पहनते रोज मजदूरी करके गुजर करते और गिरजाघरके छज्जा या खलिहानोंमें रात काट देते। गरीबों अपाहिजों मजदूरों कोढ़ियों और बहिष्कृतोंके बीच उनका ... और हमेशा वे प्रसन्न भावसे गाते रहते। खुदाके मसखरे ... — अपने लिए इसी नाम और चरित्रका सन्धान करण किया था। ... निर्धनताका सिद्धान्त उनका धर्म है ... व्यवहार करते हुए ... रखना उनके लिए निषिद्ध था। ... करके वे
भोजन कमानेको मजदूरी ... हो ... थी। कुछ
भी बचाना कुछ भी जेवम ... लेना
भविष्यत् या आगामी दि- ... जुटाना
उनके लिए निषिद्ध था। ... है किया
जाय उसीको प्रसन्न मनस
नि स्वता आन-
य तीन बीज-मन्त्र थे। ...
जहाँ मानान मा तुम छार
तरे साथ ... पर चर
प्याला तैयार किया। उमा
उमन तरा साथ न छोना
दूसरा ठौर न मिना
नि स्वताको यह निधि तू मुप
आनन्दका सिद्धान्त ..

निर्जीव वस्तुएँ भी उनके लिए भाई और बहन थी। अन्तिम बीमारीमें रोगी आँखको दागनेके लिए लाहकी सलाख गर्म की गयी तब उन्होंने उसका भी उसी मुदित भावसे स्वागत किया—' भाई आग मेरे साथ दयाका ही व्यवहार करना।" राह-चलते वह रुककर पक्षियोंको भी उपदेश देते थे और उनके भक्त मानते हैं कि पक्षी चुपचाप उनकी बात सुनते थे।

शरीरके साथ उनका जैसा अनासक्त सम्बन्ध था वह सच्चे जितेंद्रिय का ही हो सकता है। मृत्युके समय करुणा विगलित भावसे उन्होंने स्वयं अपनी देहसे क्षमा माँगी थी। अन्तिम दिनोंमें वह अन्धप्राय हो गये थे लेकिन इससे उनके आनन्द विभोर भावको या स्तवगानको कोई आघात नहीं पहुँचा। खुदाका यह मसखरा हँसता-गाता हुआ ही अन्तमें स्वयं अपने आनन्द और अपनी आस्थामें विलीन हो गया।

सुबासियो शिखरके नीचे वन प्रदेशमें छाया हुआ कार्चेरीका गुफा विहार अब भी ज्योंका त्यों खड़ा है। सायं प्रातः गन्ध द्रव्योंका धुआँ उसके पूजागृहसे उठना और वन-गन्धोंमें विलीन हो जाता है। जिन पक्षियोंको सन्त फ्रांसिस उपदेश देते थे उनके वंशधर गुफाके आसपास कूजन करते हैं और चुप हो जाते हैं। यह एक परम्परा है—असम्पृक्त आत्मस्थ और किसी अलौकिक स्वरके साथ एक-तान।

दूसरी ओर असीसीकी बस्तीकी चहल-पहल है रोमिक कालके मन्दिर के अवशेषसे सटा हुआ नया नगर भवन है रोमिक कालकी वापीके निकट सड़क बनाते हुए आधुनिक इंजन हैं और बस्तीके सिरेपर वस्तीस विमुख फ्रांसिस्कन सम्प्रदायका विहार और गिरजाघर है। बीचमें ऊँचाईपर उजड़ा हुआ दुर्ग है अब बिलकुल निर्जन किन्तु फिर भी अपनी अतीत सत्ताकी सूचना देता हुआ। ये सब भी एक परम्परामें बंधे हैं। किन्तु यह परम्परा असम्पृक्त नहीं है ऐतिहासिक होनेके नाते देश-कालसे और मानवीय राग विरागोंसे निविड़ताके साथ बंधी है। यह परम्परा आत्मस्थ भी नहीं है

असीसीके शौंचका का यह सम्प्रदाय सन १२०६ अथवा १२१० में स्थापित हुआ। असीसीके नीचकी समतल भूमिमें बना हुआ फरिश्तों वाली माता मरियम का गिरजाघर उपदेशक लिए उन्हें मिल गया। फ्रांसिस और उनके शिष्यान ग्मीके आसपास डालें और पत्तियां बीनकर छप्पर बना लिए। किन्तु उनके रहनका कोई निश्चित स्थान नहीं था। निधन मजदूरकी भाँति व मटमल रंगका एक झोला पहनते रोज मजदूरी करके गुजर करते और गिरजाघरके छज्जा या खलिहानमें रात काट देते। गरीबों अपाहिजों मजदूरों कोढ़ियों और बहिष्कृतोंके बीच उनका समय कटता और हमेशा व प्रसन्न भावसे गाते रहते। सदाके मसखरे ईश्वरके भाँड—अपने लिए इसी नाम और चरित्रका उन्होंने वरण किया था। ईसाका निधनताका सिद्धान्त उनका धर्म था उसका व्यवहार करते हुए सम्पत्ति रखना उनके लिए निषिद्ध था। प्रतिदिन मजदूरी करके वे भोजन कमाते थे मजदूरी न मिलनेपर ही भिक्षाकी अनुमति थी। कुछ भी बचाना कुछ भी जेबमें रखना धन ग्रहण करना या भीखमें लेना भविष्यके या आगामी दिनके लिए भी किसी तरहका सामान जुटाना उनके लिए निषिद्ध था। खान पानका कोई निषेध नहीं था जो दे दिया जाय उसीको प्रसन्न मनसे ग्रहण किया जाय इतना ही अपेक्षित था।

निःस्वता आनन्द और रहस्यमय समर्पण—सन्त फ्रांसिसके जीवनके ये तीन बीज-मन्त्र थे। निधनताकी स्तुतिमें उन्होंने गाया था (क्रूसपर) जहाँ माताने भी तुम्हें छोड़ दिया वहाँ भी तेरी निःस्वताने तुम्हें नहीं छोड़ा तेरे साथ सूलीपर चढ़ गयी। तू जब प्यासा था तब तेरे लिए उसने सिरकेका प्याला तैयार किया। उसी निःस्वताके आलिंगनमें तू मरा। मरनेपर भी उसने तेरा साथ न छोड़ा क्योंकि तेरी देहको मंगनीकी कब्रके सिवाय दूसरा ठौर न मिला। ओ निःस्वतम, ओ निःस्वतम यीशु चरम निःस्वताकी यह निधि तू मुझे प्रदान कर।

आनन्दका सिद्धान्त सबको उनका आत्मीय और सुहृद् बनाता था

निर्जीव वस्तुएँ भी उनके लिए भाई और बहन थी। अन्तिम बीमारीमें रोगी अगका दागनके लिए लाहेकी सलाख गम की गयी तब उन्होने उसका भी उसी मुदित भावसे स्वागत किया— 'भाई आग मेरे साथ दयाका ही व्यवहार करना !' राह चलत वह रुककर पक्षियाको भी उपदेश देते थे और उनके भक्त मानत ह कि पक्षी चुपचाप उनकी बात सुनत थे।

शरीरक साथ उनका जसा अनासक्त सम्बन्ध था वह सच्च जितेन्द्रिय का ही हो सकता ह। मत्युके समय करुणा विगलित भावसे उन्होन स्वय अपनी दहसे क्षमा मागी थी। अंतिम दिनामें वह अन्धप्राय हो गये थ, लेकिन इसस उनके आनन्द विभोर भावको या स्तवगानको कोई आघात नही पहुचा। खुदाका यह मसखरा हसता-गाता हुआ ही अन्तम स्वय अपने आनन्द और अपनी आस्थामें विलीन हो गया।

सुवासियो शिखरके नीचे वन प्रदेशम छाया हुआ कार्चेरीका गुफा विहार अब भी ज्याका त्या खडा ह। साय प्रात गन्ध द्रव्याका धुआ उसके पूजागृहसे उठता और वन-गन्धामें विलीन हो जाता ह। जिन पक्षियाको सन्त फ्रासिस उपदेश देते थ उनके वशधर गुफाक आसपास कूजन करत ह और चुप हो जाते ह। यह एक परम्परा ह—असम्पक्त आत्मस्थ और किसी अलौकिक स्वरके साथ एक-तान।

दूसरी ओर असीसीकी बस्तीकी चहल-पहल ह रोमिक कालके मन्दिर के अवशेषमें सटा हुआ नया नगर भवन ह रोमिक कालकी मापीके निकट सडक बनात हुए आधुनिक इजन ह और बस्तीके सिरेपर बस्तीसे विमुख फ्रासिस्कन सम्प्रदायका विहार और गिरजाघर ह। बीचमें ऊचाईपर उजडा हुआ दुग ह अब बिल्कुल निजन किन्तु फिर भी अपनी अतीत सत्ताकी सूचना देता हुआ। ये सब भी एक परम्परामें बघ ह। किन्तु यह परम्परा असम्पृक्त नही ह एतिहासिक होनके नाते देश-कालसे और मानवीय राग विरागासे निविडताके साथ बँधी ह। यह परम्परा आत्मस्थ भी नहा ह

क्योंकि बहिर्मुख और सामाजिक और कर्म रत है। और उसमें अलौकिक भाव भी नहीं है। हम कृतज्ञ हो सकते हैं तो इसीके लिए कि लौकिक होते हुए भी उसने ऐसी एकतानताका निर्वाह किया है कि असीसी अपने ढंगका एक-मात्र नगर हो गया है। स्टेशनसे ही देखनेपर वह जिस सम्पुंजित एकताका प्रभाव देता है वह घूमने फिरनेके बाद भी ज्यों-का-त्यों बना रहता है और यात्री वहाँसे जो प्रसन्न और रसपूरित भाव लेकर लौटता है उसमें जितना योग सन्त फ्रांसिसकी आनन्दपूर्ण तन्मयताका होगा उतना ही असीसीके सस्मित मर्यादा निर्वाहका भी। अगर लोग सन्त फ्रांसिसको दूसरा ईसा कहते हैं अथवा असीसीको समूचे इटलीके सरदार सन्त का नगर मानते हैं तो उचित ही करते हैं। यूनान यूरोपीय सभ्यताका पिता है तो इटली उसकी माता है, असीसी उस माताके चेहरेका स्मित भाव है—मुदित करुणामय और सबको एक-सा वात्सल्य भरा।

यूरोपकी छतपर : स्विट्जरलैण्ड

दुनियाकी नहीं तो यूरोपकी छत अपने पर्वतीय प्रदेशके कारण स्विटजरलैण्डको प्राय यह नाम दिया जाता था—किन्तु हिमालयको घरके किसी बडेकी तरह सहज भावसे जाननेवाले हम भारतवासियोको यह नाम पहले भी प्रभावित न करता, और अब तो यूरोपके लोगोको भी नही करता क्योकि इधर उनका भी हिमालयसे परिचय काफी बढ गया है। अनेक यूरोपीय देशोने पर्वतारोही विभिन्न शिखरोकी चढाईके सफल और असफल आयोजन कर चुके है। इसीलिए इगलैण्डके स्नोडन शिखरकी चढाईकी चर्चा करते समय एक अग्रेज अध्यापकने अपनी बात हठात अधूरी छोडकर मुझसे कहा था—अरे आपसे क्या इसकी बात करें। हिमालयके सामने तो हमारे पहाड एक फुसीके बराबर होगे।

पहाडकी ऊचाईकी तुलनामें भी स्विटजरलैण्डके पहाड उतने नगण्य तो नहीं है। और पहाडी समाजमें जो एक सहज आत्म-सन्तोष और स्वत सम्पूर्णता होती है वह जितनी हमारे देशके पहाडी समाजमें पाया जा सकती है उतनी ही स्विटजरलैण्डमें भी मिलेगी। फिर भी भारतमे प्राय जो तुलना की जाती सुनी थी उसे जब-जब मन दुहराया तब-तब कुछ दुविधा हुई–यह कहनेको मन नही हुआ कि स्विटजरलैण्ड यूरोपका कश्मीर है या कि कश्मीर भारतका स्विटजरलैण्ड है। एक बार इतना कहा था कि कश्मीरके कुछ प्रदेशोको साबुनसे खूब धो लें तो कुछ-कुछ स्विटजर लैण्ड-से लगने लगेंगे। यह बात किसी हद तक ठीक है पर इसका भी पूरा अभिप्राय उसीको समझमें आ सकता है जिसने दोनो देशोको देखा हो। क्योकि बात केवल इतनी नही है कि स्विटजरलैण्ड बडा साफ-सुथरा देश

है या कि वहाके जीवनका स्तर यूरोपकी भी दृष्टिसे बहुत ऊंचा है। बात इससे कुछ अधिक है। स्विस दृश्यको देखकर उसका अतिशय सौन्दर्य मनमें सजीव-सा जमता नही है कुछ एसा जान पडता है कि एक रंगीन चित्र देख रहे है। मै नही जानता कि एसा मेरा ही अनुभव रहा था कि और भारतीयोंको भी ऐसा होता है या कुछ एसे अति उत्साही भारतीय भी मुझे मिले जो स्विटजरलैण्डके सौन्दर्यके सामने दुनिया भरके पहाडोंको फूकसे उडा देते हैं भारतके हिमालयकी तो बात ही क्या ? किन्तु एसे तो एक भारतीय राजदूतकी भी बात सुनी थी जिन्होने समूचे भारतको ही यूरोपके एक पहाडी बगलेके सामने तुच्छ ठहरा दिया था। जिन यूरोपीय महिलाने यह बात मुझे सुनायी थी—उन्हीसे यह कहा गया था—उन्होने यह टिप्पणी भी की थी हमारे देशमें भी एसे लोग होते है जो अपने देशकी बुराई करते रहते है—पर हम उन्हें राजदूत बनाकर नही भेजते। पर एसे शब्द धनियाको छोड। मुझे तो जगह जगह बार-बार एसा लगा मानो सामनेके दृश्यका सौन्दर्य तो स्पष्ट हो मगर उसकी यथार्थता ही मानो सन्दिग्ध हो। एसा क्या ? सब कुछ मजा धुला उजला है हरी घास मानो सचमुचकी घाससे कुछ ज्यादा हरी है आकाश सचमुचके आकाशसे कुछ अधिक नीला शुभ्र मेघखण्ड कुछ अधिक चमकीले फूल कुछ अधिक रगीन और इसलिए जैसे उनपर विश्वास नही होता उनसे अपनापा नही जुडता। जैसे किसी घरकी बैठकेका बहुत अधिक झाड-पोछकर और तरतीबसे रखा जाता है उसमें जाकर प्रभावित होनेपर भी एसा नही लगता कि यहां कोई रहता है जिसका सम्भ्रान्त कमरेका वातावरण आश्रित है—कुछ एसा ही भाव स्विट्जरलैण्ड बराबर मेरे मनमे रहा। हो सकता है कि मैं ही उनका सबका शिकार रहा हूं पर स्विट्जरलैण्डकी बाल्य श्रेणीसे बिल्कुल सलग्न इटालियन आल्पोंमें या आस्ट्रियाके पवनाम एसा नहीं लगा—इनका परिदृश्य सदा प्रवहमान जीवनसे स्पन्दनशील जान पडा।

वैसे एक अर्थमें जरूर स्विस पर्वत-श्रेणी यूरोपकी छत है। वहाँसे बहा हुआ पानी नदियोंके रूपमें यूरोपके विभिन्न भागोंसे गुजरता है। राइन, रोन, पो और इन नदियाँ सब इसी श्रेणीसे प्रकट होती हैं। इनमें शीघ्र ही डैन्यूबमें जा मिलती है, बाकी तीनों आस्ट्रिया, जर्मनी, फ्रांस और इटलीके प्रदेशोंको सींचती हुई विभिन्न दिशाओंमें जाती हैं। उनके तट प्रदेशोंका अपना अलग-अलग सौन्दर्य है। प्रत्येकके तटकी मुख्य सत्ता, अनूठे अलग-अलग नाम और प्रासाद। स्विटजरलैण्डके प्रदेशोंमें भी नदियाँ हैं, और नदी तटपर बसी हुई राजधानी बर्नका सौन्दर्य दर्शनीय है। मुझे वही वहाँका सबसे सुन्दर शहर लगा और उसके बाद बाजल या बाल जिसके नदी-तटकी शोभा निराली है। ज्यूरिख (जुरिक) अपने अन्तर्राष्ट्रीय हवाई अड्डे और उद्योगोंके कारण, और जेनोवा अपने अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनोंके कारण अधिक प्रसिद्ध है। जेनोवाकी विशाल झील लेमाना उसके सौन्दर्यकी वृद्धि करती है, पर उस झीलका भी वास्तवमें दूसरा अर्थात् लोजानकी ओरका तट अधिक सुन्दर है।

नदियोंके रहते भी स्विटजरलैण्ड नदियोंका नहीं, झीलोंका ही देश है—झीलोंका और पर्वत शिखरोंका। जेनोवा और लोजान दोनों विशाल लेमान झीलपर बसे हुए अलग-अलग नगर हैं जिनके बीचमें छोटे छोटे गाँव कस्बे अलग हैं। लोग अपनी अपनी रुचिके अनुसार इन छोटे छोटे पड़ावोंमेंसे कोई एकको कोई दूसरेको पसन्द करते हैं। किन्तु पूरी झीलकी दृष्टिसे लूसर्नकी झील छोटी होनेपर भी सबसे सुन्दर है। या लेमान झीलपर लोजानके आस-पाससे दीखनेवाला सूर्यास्त बड़ा सुन्दर हो सकता है और शियोंकी पुरानी गढ़ी भी—जिसे बायरनकी कविता 'द प्रिज़नर आफ़ शियों' ने प्रसिद्ध कर दिया—बड़ा सुन्दर है। पर लूसर्नके कोने-कोनेपर इतना सौन्दर्य बिखरा पड़ा है और झीलकी ओरसे आँख हटायें तो गिरि शिखरकी आवाज इतने मधुर आकर्षक स्वरमें बुला लेती है, कि लूसर्न देखे बिना स्विटज़रलैण्ड देखना पूरा नहीं माना जा सकता। पर जैसे व्यक्तिका कभी

कभी यह जरूर अनुभव होता कि सवत्र टूरिस्टोंकी इतनी भरमार न होती तो कुछ बुरा न होता—पर टूरिस्ट तो आधुनिक जीवनका जुकाम है—जो कभी भी कहीं भी हो सकता है और जिसका कोई इलाज नहीं है। और स्विट्जरलैंडके उद्योगोंमें तो टूरिस्ट उद्योगका बड़ा महत्त्वपूर्ण स्थान है। वहाँकी घड़ियाँ, कैमरे और अनेक प्रकारकी छोटी मशीनें और उपकरण तो प्रसिद्ध हैं ही, वहाँके डिब्बेके दूध, पनीर, चाकलेट आदिका निर्यात भी दुनिया भरको होता है और उत्तम कोटिकी दवाइयाँ भी वहाँसे आती हैं, पर इस छोटेसे देशकी सम्पन्नता जितनी इन उद्योगों पर निर्भर है उतनी है टूरिस्टोंपर। वहाँ इसके लिए जो नाम प्रचलित है वह है 'परदेशी उद्योग'। गर्मियोंमें धूप और खुली हवा, पहाड़ी सैर और पाल-चरलोंके स्नानका आकर्षण और जाड़ोंमें बर्फके खेलोंका आकर्षण—इनके कारण प्रतिवर्ष दो लम्बे 'टूरिस्ट सीजन' हो जाते हैं। इसके अलावा विश्राम या प्राकृतिक चिकित्सा, दूध मट्ठा कल्प या जड़ी-बूटियोंकी खोजमें भी लोग आते ही रहते हैं। और यूरोपीय राजनीतिमें अपनी विशेष तटस्थता-नीतिके कारण स्विट्जरलैंड अनेक प्रकारके राजनीतिक सम्पर्क और आदान प्रदानका भी केन्द्र है। सालमें कम ही दिन ऐसे होते होंगे जब वहाँ कोई-न-कोई कान्फ्रेंस न हो रही हो। जनीवाका तो नाम ही मानो अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनका पर्याय हो गया है, पर लाजान लोकार्नो आदि भी अपने ऐतिहासिक सन्धियों और सम्मेलनोंके कारण प्रसिद्ध हो गये हैं।

स्विट्जरलैंड बहुभाषी देश है। जर्मन, फ्रांसीसी और इतालवी उसके सरकारी भाषाएँ हैं। उत्तर और पश्चिमोत्तर जर्मन भाषी है, पश्चिम और दक्षिण-पश्चिम फ्रेंच भाषी, दक्षिण पूर्व इतालियन भाषी। भाषा अपने आपमें अलग कुछ खास नहीं होती। उसके साथ संस्कृति, विचार धाराएँ और प्रवृत्तियाँ और जातिगत मानसिकताएँ भी बनी होती हैं और यह विभिन्नता स्वभावतः यहाँ भी देखी जा सकती है। उदाहरणतया रोमन पादरी

विशेष सनाका प्रत्येक सिपाही स्विट्ज़रलैण्डके पर्वतीय प्रदेशसे आता है। ये स्विस प्रहरी अपने लम्बे कद और रंगीन वर्दियोंके लिए भी उतने ही प्रसिद्ध हैं जितने अपने शिष्ट व्यवहारके लिए। स्विटज़रलैण्डमें तीनों भाषाओंको समान राजकीय प्रतिष्ठा दी गयी है पर वास्तवमें किसी भी प्रदेशमें मुख्य रूपसे एक भाषाका चलन है और गौण रूपसे एक दूसरीका समान रूपसे द्विभाषी प्रदेश या समुदाय कहीं नहीं मिलेगा। हमारे जैसे बहुभाषी देशके लिए इसमें कई संकेत हैं। भाषाओंके परस्पर विद्वेषसे मुक्त रहना देशकी उन्नतिके और देशमें एक देशीय भावनाके विकासके लिए आवश्यक है और स्विटज़रलैण्ड इस भाषा मसलेका उत्तम दृष्टान्त है। लेकिन दूसरी ओर मेरी समझमें यह भी बात सिखाता है कि बिना एक भाषामें पूरी तरह डूबे रचनात्मक साहित्यिक कार्य नहीं हो सकता। क्योंकि भाषा संस्कृतिका जीवन रस है जीवनके जड़ोंमें सोखा जाकर और रेशे रेशेमें बहकर वह रस पौधको पुष्टि न दे तबतक पौधेपर रंग बिरंगी कागज़ी फूल बाँध देनेसे कुछ नहीं हो सकता। स्विटज़रलैण्डमें बड़े साहित्यकार अधिक नहीं हुए हैं जो हुए हैं वे उसकी द्विभाषिकताके उदाहरण नहीं हैं बल्कि स्पष्टतया एक भाषाके और भाषिक संस्कृतिक वातावरणमें पले हैं—जर्मनके या फ्रेंचके। या फिर ऐसा हुआ है कि बाहरसे आकर जर्मन या फ्रेंच भाषा साहित्यकार वहाँ बस गये हैं। बिना एक भाषाकी संस्कृतिमें पूरी तरह डूबे हुए बिना उस भाषाको आत्मसात किये हुए कोई बड़ा साहित्य नहीं रचा जा सकता। यह जान लेना हमारे लिए बड़ा जरूरी है—जो कि कई एक परीक्षा पास कर लेनेपर अपनेको भाषाके अधिकारी समझने लगते हैं या कभी एसा भी करते हैं कि किसी भी भारतीय भाषापर अधिकार न होनेके कारण अपनेको बड़े अंग्रेजीदाँ मान बैठते हैं। दूसरी भाषाएं जानना बुरा नहीं है और हम लोग दूसरोंकी अपेक्षा ज्यादा ही दूसरी भाषा सीख लेते हैं पर भाषापर वह अधिकार जो सृष्टिका साधन बन सके—वह और चीज़ होती है। वैसा अधिकार एक ही भाषामें मिल सकता है—और

कभी यह जरूर अनुभव होता कि सर्वत्र टूरिस्टोंकी इतनी भरमार न होती तो कुछ बुरा न होता—पर टूरिस्ट तो आधुनिक जीवनका जुकाम है—जो कभी भी किसी को भी हो सकता है और जिसका कोई इलाज नहीं है। और स्विटज़रलैण्डके उद्योगोंमें तो टूरिस्ट उद्योगका बड़ा महत्त्वपूर्ण स्थान है। यहाँकी घड़ियाँ, कैमरे और अनेक प्रकारकी छोटी मशीनें और उपकरण तो प्रसिद्ध हैं ही, यहाँके डिब्बेके दूध, पनीर, चाकलेट आदिका निर्यात भी दुनिया भरको होता है और उत्तम कोटिकी दवाइयाँ भी यहाँसे आती हैं, पर इस छोटेसे देशकी सम्पन्नता जितनी इन उद्योगों पर निर्भर है उतनी ही टूरिस्टोंपर, यहाँ इसके लिए जो नाम प्रचलित है वह है 'परदेशी उद्योग'। गर्मियोंमें धूप और सर्द हवा, पहाड़ी सैर और झील झरनोंके स्नानका आकर्षण और जाड़ोंमें बर्फके खेलोंका आकर्षण—इनके कारण प्रतिवर्ष दो लम्बे टूरिस्ट सीज़न हो जाते हैं। इसके अलावा विश्राम या प्राकृतिक चिकित्सा, दूध मट्ठेके कल्प या जड़ी-बूटियोंकी खोजमें भी लोग आते ही रहते हैं। और यूरोपीय राजनीतिमें अपनी विशेष तटस्थता-नीतिके कारण स्विटज़रलैण्ड अनेक प्रकारके राजनीतिक सम्पर्क और आदान प्रदानका भी केन्द्र है। सालमें कम ही दिन ऐसे होते होंगे जब कहीं कोई न कोई कानफरेंस न हो रही हो। जनेवाका तो नाम ही मानो अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनका पर्याय हो गया है, पर लोज़ान, लोकार्नो, बाज़ल सभी इतिहासमें सन्धियों और सम्मेलनोंके कारण प्रसिद्ध हो गये हैं।

स्विटज़रलैण्ड बहुभाषी देश है। जर्मन, फ्रांसीसी और इतालवी—उसके तीन स्पष्ट क्षेत्र हैं, उत्तर और पश्चिमोत्तर जर्मन भाषी है, पश्चिम और दक्षिण-पश्चिम फ्रेंच भाषी, दक्षिण-पूर्व इतालियन भाषी। भाषा अपने आपमें अलग कुछ बात नहीं होती। उसके साथ संस्कृति, विचार धाराएँ और प्रवृत्तियाँ और जातिगत सहानुभूतियाँ भी बनी होती हैं और यह विभिन्नता सम्बन्ध यहाँ भी देखा जा सकता है। उदाहरणतया [illegible]

एक यूरोपीय चिन्तकसे भेंट

न कोई घण्टी बजी, न गार्ड या इंजनने सीटी दी। समय होते ही गाड़ी धीरे-से चल पड़ी और मैं लपक कर सवार होते-होते उसकी गति काफ़ी तेज़ हो गयी। बिजलीकी गाड़ियोंको गति पकड़ते देर नहीं लगती। बैठकर सोचा, ठीक ही तो है, स्विट्ज़रलैण्ड घड़ियोंका देश है और यहाँ सब काम अपने आप समयसे होना चाहिए। समय हुआ और गाड़ी चल पड़ी—सीटीकी क्या ज़रूरत? और जो प्लेटफ़ार्मसे कुछ दूर पर है, उसे भी सीटी सुनकर दौड़नेकी कोई ज़रूरत नहीं है। वह तो जहाँ है वहीं अपनी घड़ी देखकर जान सकता है कि गाड़ी उसे मिलेगी या नहीं मिलेगी।

जेनीवासे निकलते ही दाहिनी ओर लमान झील दीखने लगा। फिर गाड़ी और झीलके बीचकी ढालू ज़मीनपर अंगूरकी कटी छँटी लताओंके खेत। आध घण्टे बाद लोज़ान पहुँचकर हमने झीलका किनारा छोड़ दिया और थोड़ा बायेंको मुड़कर यूरा पर्वत श्रेणीकी उपत्यकामें पहुँच गये।

मैं जेनीवासे बाज़ल (अथवा फ्रांसीसी उच्चारणसे बाल) जा रहा था जहाँ मुझे कार्ल यास्पर्ससे मिलना था।

अस्तित्ववादमें मेरी दिलचस्पी क्या रही, इसके कारणोंमें जाना आवश्यक नहीं है। हिन्दीके जो परिश्रम विरोधी सहजवादी आलोचक मुझको ही अस्तित्ववादी और सार्त्रका अनुयायी कह देते हैं उनके सम्मुख तो यह निवेदन करना भी निष्प्रयोजन है कि सार्त्रका साहित्यिक अस्तित्ववाद मेरे लिए विशेष आकर्षक कभी नहीं रहा है, यद्यपि मैंने पढ़ना और समझना उसे भी चाहा जैसे कि अन्य साहित्यिक सिद्धान्तोंको समझना चाहता रहा हूँ। लेकिन उन दो प्रवृत्तियोंमें, जिन्हें ईसाई अस्तित्ववाद और नास्तिक

अधिकतर अपनी ही भाषामें मिल सकता है। जिन ढूंढा तिन पाइयां गहरे पानी पैठ —भाषाके सागरके लिए भी उतना ही सच है जितना ज्ञानके। ज्ञानके द्वारा हम सत्यकी वास्तविकताको पहचानते हैं तो भाषाके द्वारा *उसकी सुंदरताको।*

ऊपर स्विस नागरिकोंकी चर्चा की गयी है। यह सेना स्वेच्छासेवी है यह कहनेकी तो जरूरत नहीं। स्विट्जरलैण्डकी अपनी छोटी-सी सेनाका संगठन भी उल्लेखनीय है। देशके सभी वयस्कोंको थोड़े दिनकी अनिवार्य सैनिक सेवा देनी पड़ती है—पहली बार पैंतालीस दिन, उसके बाद हर आठवें वर्ष सोलह दिन और फिर हर चौथे वर्ष नौ दिनके लिए। किन्तु वर्दी और हथियार बराबर लोगोंके पास ही रहते हैं और समय समयपर उनका निरीक्षण हो जाता है। और सेनामें सम्पूर्ण लोकतन्त्री व्यवहार होता है—छोटे बड़ेका भेद नहीं माना जाता है और बहुधा साधारण जीवनके स्वामी और सेवक सेनामें एक साथ और बराबर होकर रहते हैं। ऐसा ही व्यवहार स्कूलोंमें होता है, शिक्षा अनिवार्य है और निरक्षर कोई नहीं है। प्रदेशोंमें कहीं-कहीं तो पुराने ढंगकी गणतन्त्र प्रथाएं अभीतक चली आती हैं जैसे कहीं-कहीं पूरे समाज अथवा गणकी सभा होती है जिसमें हर वयस्कको अनिवार्य रूपसे आना पड़ता है और सभाके काममें भाग लेना पड़ता है।

स्विस लोग अपनी लोकतन्त्र प्रवृत्तिका, अपने स्वाधीनता प्रेम और अपनी शान्ति प्रियताका बड़ा गर्व करते हैं और उचित ही करते हैं। *उन्होंने संसारको कोई महान कवि या चित्रकार नहीं दिया* पर एक सभ्य और आधुनिक जीवन-परम्परा तो दी है जिसकी बुनियाद है सत्य, दया और स्वतन्त्रता —और कौन कहेगा कि मानव संस्कृतिके लिए इस देनका कम महत्त्व है?

एक यूरोपीय चिन्तकसे भेंट

न कोई घण्टी बजी, न गार्डने या इंजनने सीटी दी। समय होते ही गाड़ी धीरेसे चल पड़ी और मेरे लपक कर सवार होते होते उसकी गति काफी तेज हो गयी। बिजलीकी गाड़ियोंको गति पकड़ते देर नहीं लगती। बैठकर सोचा, ठीक ही तो है, स्विटजरलैण्ड घड़ियोंका देश है और यहाँ सब काम अपने आप समयसे होना चाहिए! समय हुआ और गाड़ी चल पड़ी—सीटीकी क्या जरूरत? और जो प्लेटफार्मसे कुछ दूर पर है उसे भी सीटी सुनकर दौड़नेकी कोई जरूरत नहीं है। वह तो जहाँ है वहीं अपनी घड़ी देखकर जान सकता है कि गाड़ी उसे मिलेगी या नहीं मिलेगी।

जेनीवासे निकलते ही दाहिनी ओर लमान झील दीखने लगी, फिर गाड़ी और झीलके बीचकी ढालू जमीनपर अंगूरकी कटी छटी लताओंके खेत। आध घण्टे बाद लोज़ान पहुँचकर हमने झीलका किनारा छोड़ दिया और थोड़ा बायेंको मुड़कर यूरा पर्वत-श्रेणीकी उपत्यकामें पहुँच गये।

मैं जेनीवासे बाज़ल (अथवा फ्रांसीसी उच्चारणसे बाल) जा रहा था जहाँ मुझे कार्ल यास्पर्ससे मिलना था।

अस्तित्ववादमें मेरी दिलचस्पी क्या रही, इसके कारणोंमें जाना आवश्यक नहीं है। हिन्दीके जो परिश्रम विरोधी सहजवादी आलोचक मुझको ही अस्तित्ववादी और सार्त्रका अनुयायी कह देते हैं उनके सम्मुख तो यह निवेदन करना भी निष्प्रयोजन है कि सार्त्रका साहित्यिक अस्तित्ववाद मेरे लिए विशेष आकर्षक कभी नहीं रहा है, यद्यपि मैंने पढ़ना और समझना उसे भी चाहा जैसे कि अन्य साहित्यिक सिद्धान्तोंको समझना चाहता रहा हूँ। लेकिन उन दो प्रवृत्तियोंमें, जिन्हें 'ईसाई अस्तित्ववाद' और 'वैज्ञानिक

अस्तित्ववाद' कहा जाता है मेरी विशेष रुचि रही क्योंकि मैं समझता था और अब भी मानता हूँ कि यूरोपकी वर्तमान मनःस्थिति और उसके संकट को समझनेके लिए इन प्रवृत्तियोंका अध्ययन आवश्यक है। इसीलिए यूनस्कोके निमित्तसे जब यूरोप जानेका संयोग हुआ तब मैंने भेंट करनेके लिए जिन व्यक्तियोंकी सूची बनायी उसमें गब्रियल मार्सेल और कार्ल यास्पर्स भी थे। दोनों ही प्रतिष्ठित चिन्तक हैं किन्तु एकके पीछे क्योलिक ईसाई नैतिक चिन्तन है और दूसरेके (यद्यपि दूसरा भी क्योलिक ईसाई है) विज्ञान और मनस्तत्त्वका गहरा अध्ययन। भारतसे प्रस्थानसे पहले दोनोंकी कुछ कृतियाँ मैं पढ़ गया था और दोनों ही मुझे अच्छी लगी थी पर यास्पर्सकी स्पष्ट और सतर्क विचार-पद्धतिने विशेष आकृष्ट किया था।

यूनस्कोकी मध्यस्थतासे भेंटकी व्यवस्था हो गयी थी और दिन तथा समय निश्चित हो गया था और इसीलिए मैं उस विशेष गाड़ीसे बाज़ल जा रहा था जहाँ यास्पर्सका निवास है।

मेरे साथ दुभाषियेके रूपमें फ़ाउलीन क्रिस्टल स्पर्ल्स थीं। कुमारी स्पर्ल्ससे मेरा परिचय भारतीय दूतावासके अधिकारीने कराया था जिनसे मैंने दुभाषियेकी खोजमें सहायता चाही थी। यास्पर्स यद्यपि अंग्रेजी जानते हैं तथापि बोलनेमें उन्हें संकोच था। सम्भव है कि उसका कारण यही रहा हो कि कोई भी चिन्तक भाषाके सूक्ष्म-सूक्ष्म प्रयोगपर अधिक आग्रह करता है और दार्शनिक चिन्तक तो और भी अधिक और इसलिए यास्पर्स अपने विचारोंका अनवाद स्वयं करना न चाहते रहे हों।

कुमारी स्पर्ल्स मेरे पास भेजी गयी तो जर्मन-भाषिणी दुभाषियेके नाते किन्तु भेंट होनेपर पता हुआ कि वह हिन्दी भी जानती हैं बल्कि हाइडेलबर्ग युनिवर्सिटी विद्यालयमें उन्होंने अंग्रेजीके साथ हिन्दीकी भी डिप्लोमा लिया है। उनकी आकांक्षा यह थी कि दुभाषियेके नाते एशियामें स्थित किसी दूतावासमें उनकी नियुक्ति हो—भारतमें अथवा इण्डोनेशियामें हो

जाय तो कहना चाहिए। यास्पर्ससे मिलनेका उनका उत्साह मुझसे कुछ कम न था। जर्मन स्वभावकी कल्पनाशीलता उनमें पर्याप्त मात्रामें थी, भारतीय चिन्ता धाराका आकर्षण भी और यास्पर्सके प्रति सम्मानका भाव। इसी लिए जनीवाके अपने कामसे उन्होंने एक दिनकी छुट्टी ले ली थी और मेरे साथ आ रही थीं।

बाज़ल पहुँचकर हम लोगोंने अपने-अपने झोले इत्यादि स्टेशनपर ही जमा करा दिये और मुँह-हाथ धोकर बाहर निकल पड़े। यास्पर्सके पतेके अलावा बाज़ल शहरका एक नक्शा भी हमारे पास था। टैक्सी हमने नहीं ली। एक ट्राममें बैठकर बाडिन ल्यामें चल पड़े। जिस सड़कपर हमें जाना था वह ट्रामके रास्तेसे कुछ हटकर था लेकिन हमारा अनुमान था कि ट्रामके ठियेसे यास्पर्सके घर तक पहुँचनेमें हमें दस मिनट लगेंगे, और इतनी गुंजाइश हमारे पास थी।

लगभग एक-से मकानोंकी कतारमें नम्बर देखकर हम लोगोंने द्वार खटखटाया। एक सेविकाने आकर द्वार खोला और नाम बतानेपर पीछे आनेका संकेत किया। मकान दोमंज़िला था और यास्पर्सका अध्ययन-कक्ष ऊपरकी मंज़िलमें था।

परिचय और उपचारके बाद हम लोग आमने-सामने बैठ गये। औपचारिक बातचीतके दौरानमें भी और बैठनेके बाद कुछ क्षण तक भी मैं यास्पर्सके चेहरेका अध्ययन और कमरेकी व्यवस्थाका पर्यवेक्षण करता रहा था। मोटी दीवारोंके कारण कमरेका धुँधला प्रकाश और भी मद्धिम हो गया था और यास्पर्सका स्वर भी बहुत मृदु और धीमा था। यह सब अच्छा था, लेकिन इससे भी अच्छा था वह भाव जो कि यास्पर्ससे साक्षात होते ही मेरे मनमें उदित हुआ था।

चेहरेके भावके अलावा हर एक व्यक्तित्वका अपना एक पर्यावरण रहता है जो मानो एक अदृश्य प्रभा-मण्डलकी तरह व्यक्तिको घेरे रहता है और उसके साथ-साथ चलता है। पहली भेंटमें ही कभी-कभी जो तीव्र अनुकूल

या प्रतिकूल भाव मनमें उत्पन्न होते हैं, उनका कारण कदाचित् इन प्रभा-मण्डलोंका संस्पर्श या टकराहट ही होता है। यास्पर्ससे मिलते ही एक स्निग्ध अनुकूल भाव मेरे भीतर उदित हुआ जो बातचीतके अन्त तक बना रहा। अन्तःसंघर्ष यूरोपीय चरित्रका अनिवार्य अंग जान पड़ता है और उसकी प्रतिच्छाया प्रत्येक यूरोपीय चेहरेपर दीख जाती है—बल्कि जबसे यूरोपमें उतरा था तबसे बराबर यह प्रश्न मेरे मनमें उठता रहा था कि ये सब लोग ऐसे संत्रस्त क्यों दीखते हैं, कौन-सा भीतरी संघर्ष इन्हें खाये जा रहा है—किस समस्याने इनके चित्तको ऐसा विभाजित कर दिया है कि दोनों खण्ड बराबर एक दूसरेसे तने रहते हैं और किसी स्तर पर भी उनका मेल नहीं होता? यास्पर्सका चेहरा देखते ही पहली बात जो मेरे मनमें आयी वह यही थी कि यह चेहरा दोहरा नहीं है, यह व्यक्तित्व विभाजित नहीं है। जैसा कि मैंने भेंटके बाद बाहर निकल कर अपनी दुभाषियासे कहा था, "दिस मैन इज़ एट पीस विद हिमसेल्फ।"

पहला प्रश्न यास्पर्सने ही पूछा। आप यूरोप क्यों आये? यूरोपमें आपको क्या और क्या दिलचस्पी है?

मैंने कहा, मेरी दिलचस्पी दोहरी है। एक तो मैं समानताएँ पहचानने आया हूँ। यूरोपके और हमारे सांस्कृतिक रूपमें बहुत-सा बीजों का साझा है, इतिहास कहाँ हममें साझीदारीके भावको पुष्ट करता आया है वहाँ ऐसा विचार भी उत्पन्न करता रहा है कि हम उस सम्बन्धको भूल जावें या उच्छिन्न कर देना चाहें। मेरी समझमें अपने दायरेमें निरन्तर नये सम्बन्ध आरम्भ रखना लाभदायक दिशामें है, और उस परिस्थितिमें और भी अधिक जिसमें व्यापक यन्त्रीकरण लगातार बाहरी जीवनको अधिक एक-रूप बनाता जा रहा है और उसको उसके आभ्यन्तर आधारोंसे अलग करता जा रहा है। दूसरी ओर मेरी उतनी ही दिलचस्पी यूरोपकी और हमारी असमानताओंमें भी है। वे असमानताएँ हैं, इतना मैं जानता

हूँ, लेकिन उसका ठीक-ठीक निरूपण नहीं कर सकता न उसको उसके मूल स्रोतों तक ले जा सकता हूँ क्योंकि यूरोपसे मेरा परिचय दूरका ही रहा है।

वाम्सन मेरी बातको स्वीकार करते हुए-से स्वरमें फिर पूछा, 'वह असमानता क्या है?'

मैंने कहा 'मेरी समझमें इस समय संसारमें तीन सांस्कृतिक प्रणालियाँ जीवित हैं। एक पश्चिमकी है जो धर्म विश्वास प्रधान है। (यूरोपकी यन्त्र-संस्कृतिको छोड़ दीजिए क्योंकि यन्त्र-संस्कृति हर जगह एक है। वास्तवमें वह संस्कृति नहीं है।) दूसरे छोरपर चीनी सांस्कृतिक परम्परा है जिसमें धर्म विश्वासका कोई महत्व ही नहीं है और चर्या ही मुख्य है। यों भी कह लीजिए कि पश्चिमकी संस्कृति ईश्वरपरक है और चीनकी संस्कृति लौकिक। इन दोनोंके बीचमें कहीं हम हैं—भौगोलिक दृष्टिसे भी हम बीचमें हैं। भारतकी ही संस्कृति ऐसी है कि उसे धर्म विश्वास मूलक भी कहा जा सकता है और लौकिक भी। हमारे लिए धर्म विश्वास रहित होकर संस्कृति रह ही नहीं सकती किन्तु दूसरी ओर संस्कारकी पहचान हम लौकिक आचरणसे ही करते हैं। ईसाईके लिए जैसा कि मुस्लिमके लिए धर्म विश्वासकी एकता और एकरूपता आवश्यक है, वह प्रमाणित हो जाने पर आचरणकी छूट हो जाती है। चीनी परम्परामें आचरणकी एकरूपता अपेक्षित है क्योंकि उससे अलग कोई धर्म विश्वास है ही नहीं। भारतीय परम्परामें आचरणकी एकता या एकरूपता अपेक्षित है उसकी प्रतिष्ठा हो जानेपर धर्म विश्वासमें विविधताकी छूट है—केवल विविधताकी अनुपस्थितिकी नहीं। यूरोपीय कहते हैं तुम अमुकमें विश्वास करो फिर आचरण तुम्हारा चाहे ऐसा हो चाहे वैसा हो। भारतीय कहते हैं, तुम्हारे आचरणका नियम अमुक है उसके बाद तुम विश्वास इसमें भी कर सकते हो और उसमें भी कर सकते हो और दोनोंमें एक साथ भी कर सकते हो।'

सहसा रुककर मैंने कहा — लेकिन प्रश्न करने तो मैं आया हूँ। उत्तर आपसे अपेक्षित है!

यास्पर्स मुसकरा दिये। अंग्रेज़ी वह समझते थे, इसलिए मेरी बातकी प्रतिक्रिया उनमें तुरत प्रकट हो जाती थी, किन्तु उनके जर्मनमें दिये गये उत्तरके अनुवादकी मुझे प्रतीक्षा करनी होती थी।

उन्होंने पूछा — तो भारतके दार्शनिक पश्चिमकी नकल क्या करते हैं?

इस प्रश्नका अनुवाद मुझे बताया ही जा रहा था कि उन्होंने और भी कहा — क्या हम लोग भारतवर्षमें राधाकृष्णनको बहुत बड़ा दार्शनिक मानते हैं? क्या आनन्दकुमारस्वामीने भी बहुत-सी बातोंमें पश्चिमी चिन्तनके साथ ऐसी रियायत नहीं की है जो उन्हें नहीं करनी चाहिए थी, या कि जिसकी अनुमति उन्हें अपना चिन्तन नहीं देता था?

मेरे लिए ये प्रश्न कुछ असमंजसकारी थे। मेरा क्षेत्र दर्शन नहीं है। दार्शनिकोंके विचारोंका मैं अपनी ओरसे मूल्यांकन कर सकूँ इसकी योग्यता मैं नहीं रखता और अनिवार्यतः दूसरोंके मतामतपर निर्भर करता हूँ।

मैंने कहा — राधाकृष्णन पश्चिमके लिए पूर्वके भाष्यकार और व्याख्याता हैं। हर किसीका मौलिक चिन्तक होना आवश्यक नहीं है, एकके मौलिक चिन्तनसे दूसरेको अवगत कराना भी महत्त्वका काम है।

यास्पर्स हँसे। मुसकराहटके साथ कहा — निःसन्देह, निःसन्देह!

उन्होंने भारतमें कम्यूनिज़्म और भारतकी तटस्थ नीतिके विषयमें जिज्ञासा प्रकट की। मैंने संक्षेपमें बताया कि भारत संघर्षमें नहीं पड़ना चाहता किन्तु नैतिक मूल्योंके बारेमें उसकी नीति तटस्थताकी नहीं है। मैंने कहा कि यद्यपि व्यक्तिगत रूपसे मेरा स्वभाव ऐसा है कि मैं मनसा जो ठीक समझता हूँ कर्मणा उससे उलटा जाना भी चाहता हूँ, फिर भी मेरी समझमें भारतने जो नीति अपनायी है उससे भिन्न कोई नीति सम्भवतः उसके लिए श्रेयस्कर न होती। और यह भी हो सकता है कि प्रजातन्त्र [illegible] लिए भारतका वर्तमान रवैया ही अधिक हितकर सिद्ध हो।

यास्पसने कुछ सोचते हुए स सिर हिलाया। फिर सहसा मुसकराकर कहा, 'लीजिए अब आपकी बारी है।

मैं समझा कि उनके प्रश्नोंका उद्देश्य यह भी रहा होगा कि मेरे प्रश्नों का उत्तर देनसे पहले स्वय यह जान लें कि मेरी वचारिक पष्ठभूमि क्या है और मेरे राजनीतिक विचारोंकी प्रवत्ति किधर है।

मने कहा प्रश्न पूछनसे पहले म एक बात स्पष्ट करना चाहता हू। मैं दार्शनिक नहा हू। दशनका विधिवत अध्ययन भी मन नहीं किया है। मैं केवल लेखक हू और मेरी दार्शनिक जिज्ञासाएँ भी लेखककी ही जिज्ञासाए है। म उस दुनियाको समझना चाहता हू जिसमें म रहता हू और लिखता हूँ, जिससे कहानी उपन्यासके पात्र पाता हू जिसमें उनके चरित्र बनते ह उनकी कम पद्धति प्रकट होती ह और उनका प्ररित करनेवाली चिंतन और भाव प्रवृत्तियाँ रूप लेती हैं। जो सच ह वह म जानू इस शुद्ध दार्शनिक जिज्ञासासे मेरी जिज्ञासा कुछ भिन्न है कि म जो लिखूँ वह सच हो। मैं मान लेता हू कि यह जिज्ञासा शुद्ध दार्शनिक जिज्ञासासे कुछ घटिया दर्जेकी ह।

यास्पसने धीरसे सिर हिलाया।

भेंटकी तयारी करते समय मने कुछ प्रश्न लिख लिये थे तो केवल इसलिए कि बातचीतका क्षेत्र और दिशा अपने सामने स्पष्ट कर रखू। उस प्रश्नावलीको देखना या तद्वत् सामने रखना आवश्यक नहो था। मन समय विभाजित यूरोपीय चेतनासे ही आरम्भ किया। 'यूरोपीय व्यक्ति बंटे क्या हैं ?

यास्पसने नपे-तुले शब्दोंमें उत्तर दिया। पश्चिमी जीवन ईसाइयतसे कट गया है, यही उसक आन्तरिक तनाव और सघषका कारण है। अन्त संघष और अनिश्चय-जन्य आशकासे उसे मुक्त कर सके ऐसी किसी आस्थासे उसका सम्बन्ध टूट गया है। मध्य कालके धर्म और कलाकार धमके साथ—बल्कि उसके अनुगत थे। मध्य कालमें सगठित धम अर्थात

मैंने हँसकर मन बना लेकिन प्रश्न करने तो मैं आया हूँ। उत्तर आपसे अपेक्षित है।

दोस्त मुस्करा दिये। अदेखा यह प्रसंग दुर्भाग्य मेरा बातकी प्रतिक्रिया उनमें तुरन्त प्रकट हो जाती थी किन्तु उनके जाननेके लिए उत्तरके अनुपातमें मुझे प्रतीक्षा करनी होती थी।

उन्होंने पूछा तो भारतके दार्शनिक पश्चिमको महत्त्व क्यों देते हैं?

इस प्रश्नका अनपेक्षित मुझे ध्यान हो रहा था कि उन्होंने और भी कहा, क्या हम लोग भारतवर्षमें राधाकृष्णन्‌को बड़ा दार्शनिक मानते हैं? क्या आनन्दकुमारस्वामीने या अन्य भारतीयोंमें पश्चिमी चिन्तनके साथ ऐसा समझौता नहीं की है जो उन्हें नहीं करना चाहिए था कि जिसकी अनुमति उन्हें अपना चिन्तन नहीं देता था?

मेरे लिए ये प्रश्न कुछ असमंजसकारी थे। मेरा क्षेत्र दर्शन नहीं है। दार्शनिकोंके विचारोंका मैं अपनी ओरसे मूल्यांकन कर सकूँ इसकी योग्यता मैं नहीं रखता और अनिवार्यतः दूसरोंके मतामतपर निर्भर करता हूँ।

मैंने कहा राधाकृष्णन् पश्चिमके लिए एक व्याख्याकार और प्रचारक हैं। हर किसीका मौलिक चिन्तक होना आवश्यक नहीं है। एकके मौलिक चिन्तनसे दूसरेको अवगत करना भी महत्त्वका काम है।

दोस्तमनने एक मुस्कराहटके साथ कहा, निःसन्देह, निःसन्देह!

उन्होंने भारतमें कम्युनिज्म और भारतकी तटस्थ नीतिके विषयमें जिज्ञासा प्रकट की। मैंने संक्षेपमें बताया कि भारत सम्बन्धमें तटस्थ रहना चाहता किन्तु नैतिक मूल्योंके बारेमें उसकी नीति तटस्थताकी नहीं है। मैंने कहा कि यद्यपि व्यक्तिगत रूपसे मेरा स्वभाव ऐसा है कि मैं मनताको ठीक समझता हूँ कम्युनिज्म उससे दूर जाना भी चाहता हूँ फिर भी मेरी समझमें भारतने जो नीति अपनायी है उससे भिन्न कोई नीति कदाचित उसके लिए सम्भव न होता। और यह भी हो सकता है कि प्रजातन्त्र वादके भविष्यके लिए भारतका वर्तमान रवैया ही अधिक हितकर सिद्ध हो।

यास्पसने कुछ सोचते हुए सिर हिलाया। फिर सहसा मुसकराकर कहा, 'लीजिए, अब आपकी बारी है।'

मैं समझा कि उनके प्रश्नोंका उद्देश्य यह भी रहा होगा कि मेरे प्रश्नों का उत्तर देनेसे पहले स्वयं यह जान लें कि मेरी वैचारिक पृष्ठभूमि क्या है और मेरे राजनीतिक विचारोंकी प्रवृत्ति किधर है।

मैंने कहा, प्रश्न पूछनेसे पहले मैं एक बात स्पष्ट करना चाहता हूँ। मैं दार्शनिक नहीं हूँ। दर्शनका विधिवत् अध्ययन भी मैंने नहीं किया है। मैं केवल लेखक हूँ और मेरी दार्शनिक जिज्ञासाएँ भी लेखककी ही जिज्ञासाएँ हैं। मैं उस दुनियाको समझना चाहता हूँ जिसमें मैं रहता हूँ और लिखता हूँ, जिसमें कहानी-उपन्यासके पात्र पाता हूँ, जिसमें उनके चरित्र बनते हैं, उनकी कर्म-पद्धति प्रकट होती है और उनको प्रेरित करनेवाली चिन्तन और भाव प्रणालियाँ रूप लेती हैं। जो सच है वह मैं जानूँ, इस शुद्ध दार्शनिक जिज्ञासासे मेरी जिज्ञासा कुछ भिन्न है, कि मैं जो लिखूँ वह सच हो। मैं मान लेता हूँ कि यह जिज्ञासा शुद्ध दार्शनिक जिज्ञासासे कुछ घटिया दर्जेकी है।

यास्पसने धीरेसे सिर हिलाया।

भेंटकी तैयारी करते समय मैंने कुछ प्रश्न लिख लिये थे तो केवल इसलिए कि बातचीतका क्षेत्र और दिशा अपने सामने स्पष्ट कर रखूँ। उस प्रश्नावलीको देखना या तद्वत् सामने रखना आवश्यक नहीं था। मैंने संघर्ष विभाजित यूरोपीय चेतनासे ही आरम्भ किया। 'यूरोपीय व्यक्ति कैसे क्या है?

यास्पसने नपे-तुले शब्दोंमें उत्तर दिया। 'पश्चिमी जीवन ईसाइयतसे कट गया है, यही उसके आन्तरिक तनाव और संघर्षका कारण है। अन्तः संघर्ष और अनिश्चय जन्य आशंकाओंसे उसे मुक्त कर सके, ऐसी किसी आस्थासे उसका सम्बन्ध टूट गया है। मध्य कालमें कला और कलाकार धर्मके साथ—बल्कि उसके अनुगत थे। मध्य कालमें संगठित धर्म दर्शन

पचार कलाओं और कलाकारोंको आत्मप्य बन्धि बहिष्कृत कर दिया। तब से धार्मिक प्रेरणाओंसे कलाका सम्बन्ध टूट गया और कलाकारोंका निराश्रित्व लौकिक स्वीकार होने लगा। साथ ही उसमें भी उपयुक्त प्रतिष्ठा तभासे हुई।

मैंने कहा, यह तो मध्य कालके बादकी बात हुई। मध्य कालमें तो ऐसी कोई दूरी या विरोध नहीं था। बल्कि और भी पीछे चलें—ईसा-पूर्व काल या ग्रीक कालमें—तब भी तो सबको प्रतिष्ठा था?

उन्होंने कहा, हाँ, ईसा-पूर्व कालमें भी एक अनिश्चय था—आस्थाका आधार उतना दृढ़ नहीं था। ईसाइयतका भाव आत्मवत्ता भाव रहा, इसीसे कलाकार आस्थावान् रहे। मध्य कालकी कलाकी बुनियादी स्वर अन्य सघन और अन्तर्मुखता नहीं है।

मैंने कहा, ऐतिहासिक बारीकियोंको छोड़ दें, तो क्या यह कहना ठीक नहीं होगा कि पश्चिमके और भारतके कला सम्बन्धी आदर्शमें सदा एक अन्तर रहा है? भारतका आदर्श है कि लिखना उसीको चाहिए जो समय की अवस्था पार करके वहाँ पहुँच चुका है जो समदर्शी और अनासक्त है। इसके विरुद्ध पश्चिमका आदर्श यह रहा है कि केवल समयमें डूबा हुआ और छटपटाता व्यक्ति ही कलाकार हो सकता है।

उन्होंने कहा, मोटे तौरपर यह बात ठीक है और यह अन्तर पूर्व और पश्चिमकी साहित्य दृष्टिमें रहा है। पर यूरोपमें मध्य कालके बाद जो नयी प्रवृत्तियाँ दीखीं, उनका कारण बहुत कुछ कला धारा और ईसाई चिन्ता धाराकी बढ़ती हुई दूरी ही था। रेनेसाँसका बौद्धिक उन्मेष भी और रोमाण्टिक आन्दोलन भी, उस दूरीके ही पहलू हैं।

यास्पर्स क्षण भर चुप रहे। फिर एक नटखट हँसी उनके चेहरेपर खेल आयी और उन्होंने पूछा, 'क्या भारतीय लेखक सचमुच वैसे ही होते हैं जैसा कि आपका आदर्श है—समदर्शी और अनासक्त?'

मैंने भी कुछ वैसे ही ढंगसे उत्तर दिया, जी नहीं, हमारे बहुत-से

रुखक पश्चिमी आदर्शोंकी ओर बढ़ना चाहते हैं—पश्चिमी धाराओंके साथ पश्चिमी चिंतनके रोगाणु भी वहाँ काफी फल गये हैं।'

हम दोनों हस पडे। फिर यास्पसन कहा 'समकालीन भारतीय साहित्यके बारेमें मेरा ज्ञान बहुत कम है। क्या वास्तवमें भारतीय साहित्यकी मूल प्रवृत्तियाँ पश्चिमसे उतनी भिन्न हैं? और भारत संघर्षका सिद्धांत नहीं मानता तो वहाँका रंगमंच कैसा है? नाटक कैसे होते हैं?

मैंने स्वीकार किया कि समकालीन नाटक पश्चिमसे बहुत अधिक प्रभावित हैं, बल्कि कहा जा सकता है कि समकालीन भारतीय नाटक पश्चिमी परम्परामें ही लिखे जाते हैं। इसका एक कारण यह भी है कि यहाँ रंगमंचकी परम्परा प्रायः नामशेष हो गया थी और अब जो हो रहा है वह जितना पुनरुज्जीवन है उससे अधिक रोपण है। रंगमंचपर जो कुछ जीवित बचा था या मुमूर्षु किन्तु सजीव था वह नाटक नहीं बल्कि दूसरे नाट्य प्रकार [redacted] जो नृत्य अथवा संगीतसे अधिक सम्बन्ध रखते हैं। किन्तु नाटकको छोड़कर दूसरे साहित्य प्रकारोंमें नया ऐसा बहुत कुछ मिलता जो कि पश्चिमी साहित्यसे मूलतः भिन्न है—प्रभावित होकर भी भिन्न है।

विषय बदलते हुए मैंने अस्तित्ववादियोंकी इस अवधारणाका उल्लेख किया कि मनुष्य अनुभूतियोंको ही प्राथमिकता देने लगा है क्योंकि वह मानता है या पाता है कि यह अस्तित्व ही सब कुछ है। मैंने पूछा यह दिशा-परिवर्तन या प्रत्यावर्तन क्या इस कारण है कि मानवने आधुनिक भौतिकवादी विज्ञान दर्शनको वन्ध्य पाया है या अधिकतर इस कारण कि उसने नये विचारवादोंको वन्ध्य पाया है? विज्ञान और भौतिक प्रगतिने जो आशाएँ बँधायी थीं वे उन्नीसवीं सदीकी बात है पर विचारवादोंने जो आशाएँ उत्पन्न की थीं उनका विकास और विनाश दोनों ही इसी सदीमें हुए और अस्तित्ववादका प्रचार भी लगभग समकालीन रहा।

"नहीं", यास्पस बोले 'उसका कारण यह है कि मानव अनुभव करता

मन कहा अगर एक व्यक्ति वरणका अधिकार वरतता है—अगर यह प्रमाणित हो सकता है कि एक व्यक्तिने उसका उपयोग किया तो उससे यह सिद्ध होता है कि संसारका कोई भी व्यक्ति वैसा कर सकता है। इस लिए एक व्यक्तिका कम मानव मात्रकी सम्भाव्य शक्तिका प्रमाण बन जाता है। क्या इस प्रकार हर व्यक्तिके नैतिक विकल्पका महत्त्व मानव जाति मात्रके लिए नहीं है?

मैंने कहा नहीं मेरे लिए नहीं सम्पूर्ण मानव जातिके लिए।

उन्होंने असहमति प्रकट की।

मैंने कहा, अगर एक व्यक्ति वरणका अधिकार बरतता है—अगर यह प्रमाणित हो सकता है कि एक व्यक्तिने उसका उपयोग किया तो उससे यह सिद्ध होता है कि संसारका कोई भी व्यक्ति वैसा कर सकता है। इसलिए एक व्यक्तिका कम मानव-मात्रकी सम्भाव्य शक्तिका प्रमाण बन जाता है। क्या इस प्रकार हर व्यक्तिके नैतिक विकल्पका महत्त्व मानव जाति मात्रके लिए नहीं है?

उन्होंने इस निष्पक्ष सहमति प्रकट करते हुए संकेत किया कि यह प्रश्न वास्तवमें पहले प्रश्नसे भिन्न है। मेरे विकल्पका महत्त्व इसलिए है कि उससे सिद्ध होता है कि विकल्प सम्भव है यह एक बात है और विकल्पका अपना महत्त्व दूसरी बात है।

मेरे प्रश्न अभी चुके नहीं थे। लेकिन कुछ मिनट पहलेसे मुझे यह अनुभव होने लगा था कि मेरा समय चुक गया है। इस अनुभवका आधार केवल मेरा घड़ी नहीं था यद्यपि उसके अनुसार भी प्रायः डेढ़ घण्टा हो गया था। कुछ देर पहले श्रीमती टाम्पसन भी बगलके कमरेका दरवाजा धीरे-से खोलकर झाँककर लौट गयी थीं और उसके बाद दूसरे कमरेसे प्यालों-चायके साथ-साथ काँटे-चम्मच लगाये जानेकी हल्की-सी ध्वनि भी आने लगी थी। ये भी संकेत काफ़ी होते। लेकिन वास्तवमें बातचीतमें ही अलक्ष्य स्पष्ट कुछ ऐसा भाव आ गया था कि वह पूरी होती जा रही है।

मैंने कहा, "मेरे प्रश्न अभी चुके नहीं हैं, बल्कि बातचीतमें कई नये प्रश्न भी उठते हैं। लेकिन मैंने आपका बहुत समय लिया है और आपके अनुग्रहका दुरुपयोग नहीं करना चाहता। आपकी अनुमति हो तो हम मरणकी समस्याके बारेमें केवल एक प्रश्न और पूछना चाहता हूँ।"

उन्होंने अनुमति दी। मैंने पूछा, 'पृथ्वीपर हम आये तो अपनी इच्छासे नहीं आये। पार्थिव जीवनका हमने वरण नहीं किया। तब वरणपर आधारित हमारे नीतिशास्त्रका प्रमाण क्या है?'

वह हँस दिये। बोले, 'ऐसे कई बिन्दु होते हैं जहाँसे लेखककी खोज का रास्ता दार्शनिकके रास्तेसे अलग हो जाता है।'

स्पष्ट ही मेरा प्रश्न टाल दिया गया था। कदाचित् जल्दीमें उसका कोई उत्तर हो भी नहीं सकता था।

मैंने विदा माँगी और उठ खड़ा हुआ। साथ ही यह भी पूछ लिया कि क्या मैं भविष्यमें लिखकर या दोबारा भेंट करके और प्रश्न पूछ सकता हूँ?

उन्होंने सहर्ष अनुमति दी, पर साथ ही संकेत किया कि वह दो-चार दिन बाद [illegible] सप्ताहके लिए एक दूसरे विश्वविद्यालयमें भाषण देने जाने वाले हैं, भेंट या पत्र-व्यवहार उसके बाद ही हो सकेगा। कुमारी स्टेफन्स को उन्होंने धन्यवाद दिया और फिर मेरी ओर उन्मुख होकर उनके विषयमें कुछ कहा। अनुवाद करनेमें द्विभाषियाको कुछ झिझकते पाकर मैंने हँसकर कहा, 'मैं समझ गया, आप अनुवाद चाहें न भी करें। मार्सल मुझे बधाई दे रहे थे कि मैं बहुत योग्य और निष्ठावान दुभाषिया साथ लेकर आया हूँ।'

नमस्कार करके हम लोग बाहर सड़कपर आ गये और थोड़ी देर बाद ही ट्राम और रेलके शोर भरे वातावरण में।

× × ×

कुमारी स्फलरन पूछा क्या म अपनी बात-चीनको लिख डाल गा ? क्याकि उम दशामें उसकी एक प्रति वह भी चाहेंगी।

मन कहा मेर आध प्रश्न तो विना पछ ही रह गय हैं !

वह बोली हा और मरी समझमें वरण वाले प्रश्न का ठीक उत्तर उन्होन नहा दिया—म उनसे इससे कुछ अधिककी आशा करती था।

म भी करता था। लेकिन यह भी समझ रहा था कि य प्रश्न एसे नहीं थे कि उनका सीधा साधा सक्षिप्त उत्तर दिया जा सके। यह म मानता ह कि बडी बात छोटमें कही जा सकती ह बल्कि छोटेम ही कही जा सकती ह पर वह इसलिए कि सूत्रका अथ केवल उसके शब्दोंम नहीं होता उसके पीछेके सस्कारम होता ह। और अथके साझीदार होनके लिए पहले सस्कारका साझीदार होना होता ह।

लौटनस पहले हम लोग वाजल नगरका सर करन गय। नदी तटपर बस हुए नगर यूरोपमें अनक ह लेकिन उनमें बाज़ल वसा ही विलक्षण ह जसा भारतके नगराम बनारस। हमलोग नदीके उसपार जाकर (उस पार अधिकतर बगले ह जो छोटे ह, जबकि स्टेशनवाली ओरका नदी-तट विशाल भवना और अट्टालिकाआम छाया हुआ ह) तटकी गोलाईपरम मरता हुआ प्रकाश और नदी-स्नानपर उसकी झलमलाती प्रतिछवियाँ देखत रह।

मैं मन-ही मन यास्पसंसे हुई बातोका प्रतिस्मरण करता हुआ नय प्रश्न सोचता रहा।

हमार अनभवका मूल्य क्या ह ? प्रमाण क्या ह ?—केवल गोचर अनुभूति ?

—या दुःख ?

दुःख वरणका प्रमाण ह इसलिए स्वातन्त्र्यका प्रमाण ह।

—लेकिन जो दुःख वरा नहा गया ह वह ?

—लेकिन दुःख तो माया ह। ससार भी माया ह।

—तब वरण भी भ्रम है और स्वातन्त्र्य भी धोखा है।

—तब कुछ नहीं है। कुछ-नहीं का डर —अच्छी बात है डर भी मिथ्या है, किन्तु वह है।

क्या जड़वादके बिना भी यह स्थिति आती? यह डर होता?

ईसाई परलोक मानते हैं, जीवनोत्तर दूसरा जीवन मानते हैं। हिन्दू भी परलोक मानते हैं, जन्मान्तर दूसरा जन्म मानते हैं। बौद्ध अन्तमें जीवन मरणके क्रमसे छुटकारा मानते हैं—निर्वाणको न-होनेकी एक अवस्था।—पुनर्जन्म या परजन्म मैं नहीं मान पाता क्योंकि वह, और इस जीवनमें वरणका अधिकार मेल नहीं खाते। अगर इस जीवनमें वरण होता है तो किसी दूसरे जीवनकी कोई जरूरत नहीं है बल्कि दूसरे जीवनकी कल्पना वरणको अर्थहीन कर देती है

—लेकिन न-कुछकी अनस्तित्वकी कल्पना हमें तो आतंकित नहीं करती? बौद्धोंका निर्वाण आतंककारी नहीं है। फिर पश्चिममें यह आतंक क्या है?

अनस्तित्वका अर्थ क्या है यदि सभी काल समवर्ती हैं? भूत और भविष्यत भी यदि साथ वर्तमान हैं तो होना और न-होना भी समवर्ती हैं। फिर डर क्या?—मैं इस डरको नहीं जानता। तो क्या मैं जीवनको नहीं जानता?

जिनमें आस्था थी या है उन्हें यह डर नहीं था न होता है।—पर अपनेको आस्तिक कहते मुझे संकोच होता है, यद्यपि मैं जानता हूँ कि मैं नास्तिक भी नहीं हूँ। किसी भविष्यत जीवनमें मेरा विश्वास नहीं है, लेकिन उससे इस जीवनके बाद जो न-कुछकी स्थिति सिद्ध होती है उसका मुझे डर भी नहीं है। आशा मुझमें नहीं है लेकिन आतंक भी मुझमें नहीं है।

× × ×

बाजन्म नदीके उस पार काई बाधिवक्ष नही ह । म अपन प्रश्नाक साथ ही वहास लौट आया हू । म यास्पससे बहुत-से प्रश्न पूछना चाहता हू । यास्पससे ही नही बहुत से दार्शनिका वैज्ञानिका चिन्तका लेखका चित्तामवन सन्ता आवारा और पागलास भी बहुत-से प्रश्न पूछना चाहता हू । सबस मुझ अनुमति नही मिली ह पर जिनस मिली भी ह उनसे भी अभी पूछ नहा पाया हू—क्याकि अभी ठीक ठीक प्रश्नाका निरूपण ही नही कर पाया हू । अल्लाहके निन्यानवे नाम ह क्याकि सौवें नामम य सब नाम समा जात ह और जो उसका उच्चारण कर सकता ह वह अल्लाहको पा लेता ह । इसी तरह निन्यानवे प्रश्न ह क्योकि सौवें एक प्रश्नमें य सभी समा जाते ह और जो उस सौवें प्रश्नका निरूपण कर लेता ह वह सब जिज्ञासाआका उत्तर पा लेता ह ।

इस प्रकार हम फिर जनवा लौट आय जहासे गाडिया बिना सीटी दिय छूटती ह सब काम ठीक ठीक घडीकी मशीनकी तरह चलता ह और प्रश्न कोई सतहपर नहा आत ।

'तो यह पेरिस है!'

जिस प्रकार आगरेका प्रतीक ताजमहल है या दिल्लीका कुतुबकी लाट उसी प्रकार पेरिसका विश्वविज्ञापित प्रतीक नोत्रदामके भव्य गिरजाघरके ऊपरसे झाँकता हुआ एक अपरूप कान्तिमुख है—एक शैतानका चेहरा जो हाथपर ठोडी टेके एक विचित्र अवहेलनासे भरी हुई विकृत मुसकानके साथ नीचे फैले विशाल नगरको देख रहा है। प्रायः यह चित्र जिस शीर्षकके साथ छपता है वह मानो उस मुसकानकी—उसे मुसकान कहना भी चाहिए या केवल मुँहकी बिचकाहट यह चिन्त्य है—व्याख्या करता है तो यह पेरिस है।

जी हाँ, तो यह पेरिस है। पत्थरके बने हुए कान्तिमुखकी लार नहीं टपकती नहीं तो यह वास्तवमें सम्पूर्ण प्रतीक हो जाता क्योंकि और जगह चाहे जो होता या हो सकता हो, पेरिसके मामलेमें आकर्षणकी विकृति और विकर्षक आकर्षणको पृथक करना सम्भव नहीं है। पेरिसका प्रेमी अनिवार्य रूपसे एक प्रबल आकर्षणमें बँधा और उस बन्धनको माननेपर अपने प्रति ग्लानिसे भरा हुआ होता है इस आकर्षणको वह मादक मानता है किन्तु साथ ही जानता है कि वह उसके बिना जी नहीं सकता। ऐसा मादक है वह विष जिसके बिना कोई जी न सके! दिल्लीके लड्डू तो सुनते आये हैं पर उनके साथ दोनों तरफ जो पछतावा बँधा हुआ है वह भी उतना ही फीका है जितना कि लड्डू पर पेरिस—पेरिसका काटा पानी नहीं माँगता—क्योंकि वह माँगता है और वही विष जिससे वह डसा गया है हाँ, उसमें थोड़ी शराब भी मिली हो तो कोई मुजायका नहीं उससे आत्म प्रतारणाकी चरपराहट थोड़ी मीठी भी हो जायगी।

या परिस यूरोपके सु न्दरतम नगरोंमेंसे एक है इसमें सन्देह नहीं। किन्तु जैसा कि मुझसे एक फ्रेंच भाषिणी किन्तु मूलत इतालवीय महिलाने परिस की सफाई देते हुए कहा था परिस बहुत सुन्दर है—परिसियन लोगोंके बावजूद। अगर नगरका सौन्दर्य उसके वास्तविक नागरिकोंका प्रतिबिम्ब होता है तब तो इन खण्डोंको बिना साथ पछताना ही श्रेयस्कर है। लेकिन अगर सुन्दर सजे हुए बाजार अच्छा नाटकका पाण्डाल बाग बगीचे कोने-कोनेपर फूलोंकी दुकान रंग बिरंग चन्दोवे और उनके नीचे सुरुचि से बिठायी हुई मेज कुर्सियां जिनपर आप खुली हवामें बैठकर कहवा या वारुणीका सेवन करते हों जगमगाते बाजार के सकते हैं विशालकाय पेड सुन्दर स्थापत्यके बड़े बड़े भवन सुदीर्घ नदी तट कुञ्ज और चौराहों पर खड़ी भव्य कला मूर्तियां खिड़कियां चौबारोंसे झूलते हुए फूल भरे गमले चौबारों घरका जगमगाहट विराट नाट्य और नृत्यशालाएं बढ़ियासे-बढ़िया सुगन्ध द्रव्य और शृंगार साधन नागरिकोंका पाठ कक्ष दर्शनीय कला संग्रहालय वीथिया पुस्तकालय पवासों रंगशालाएं सब प्रमाद-गृह जहां आप करतब दिखाने वाली मक्खियोंसे लेकर आवरणहीनताकी विभिन्न श्रेणियोंपर अभिनेत्रियोंके विभिन्न स्तरोंके हाव दिखाती हुई नर्तकियां तक सभी तरहके कौतुक देख सकते हैं—अगर इन सब चीजोंसे नगरका सौन्दर्य बनता है तब निस्सन्देह परिस सरीखा सुन्दर दूसरा नगर खोजे नहीं मिलेगा। और यह सौन्दर्य भी अपनी पराकाष्ठापर होता है वसन्त ऋतुमें या शरद ऋतुमें—अप्रेल मईमें और अक्तूबर-नवम्बरमें। मुझे इन दोनों ही ऋतुओंमें वहां जानेका सुयोग मिला इसके अतिरिक्त अगस्त और दिसम्बरमें भी परिसको देख सका इसलिए अपने कथनकी पुष्टि कर सकता हूं। विशेष कर अक्तूबर नवम्बरका समय ही परिसके लिए सर्वाधिक उपयुक्त है शरदकालके विविध रंगोंकी कल्पना भी कठिन है और उन दिनों परिसके किसी उपवनमें—यथा सुप्रसिद्ध बोआ द बूलोन्य में बरबस घटा पत्तियों पत्तोंको देखा जा सकता है और एक एक करके

झर हुए पत्तोंकी गद्दीपर परिसके अगस्त्य इन और सँटोंका निछावर किया जा सकता है। परिसके आसपासके सुरक्षित वन भी अक्तूबरमें दर्शनीय होते हैं यथा परिससे बाहर होते (जहाका गिर्जाघर यूरोप भरका एक अमूल्य निधि है) मानमें फ्रन वाला स जर्मनका वन। यह दूसरी बात है कि परिसवासी इन स्थानोंपर वन विहार आदिके लिए इसस कुछ पहलेकी ऋतुमें ही जाता है जब आट घना हो पत्तोंके नीचे पत्तोंकी खड़खड़ाहट कम हो और दर रात तक भी बठनेके लिए ठड अधिक न हो। किन्तु बाहरसे लोग परिस प्रकृतिका आनन्द उठाने नहीं जाते और प्रकृति मामलेमें परिसवासीका मान स्पष्ट मानना सा भूलना होगी। वह जिस सौंदर्य-सुषमाका पारखी है वह दूसरी ही होती है।

यह दूसरा सुषमा भी शरत्कालमें परिसपर छा जाती है। अगस्त का उजाड सन्नाटा दूर हो जाता है ऑपरा और नाटक घर नये सीजन के लिए खुल जाते हैं सड़कें विदेशी सैलानियोंसे भर ही भर जाती हैं अस काँच मढ़ी दुकान नया मालोंका और नये ढगसे सजायी हुई सँटकी बानलोंमें कहवाघरोंमें फ्रांसीसी भाषाकी नकियाहटके ऊपर अमरीकी अग्रेजीकी और भी बकबक्ड नकियाहट सुनाई पड़ने लगती है। और रातको राह चलना कठिन हो जाता है हर भाग चौराहेपर तीखी सुगधोंसे महकती हुई अपरिचिताए 'बा-स्वार क मासीओ' अभिवादनके साथ 'गुड टाइम डीयरी ?' का अग्रेजी प्रश्न देती निकल आती हैं। और बढ़ती रातके साथ-साथ उनका आग्रह और उनकी उद्दण्डता भी बढ़ती जाती है यद्यपि इस सबका भी अधिकाश विदेशी सैलानीके लिए ही है जैसे कि दिनमें शहरके कुछ इलाकोंमें प्रत्येक यात्रा-एजेंसीके बाहर घूमनेवाले व विनीत लोग जो केंडकी तरफ एक ओरको चलते हुए पास आकर हाथमें ताशके पत्ते-सा छिपा हुआ कुछ दिखाते हुए कानमें कह जाते हैं डर्टी पिक्चर्स ? तथापि इसमें सन्देह नहीं कि परिसवासी भी जीवनका आरम्भ साँझसे ही मानता है—यह दूसरी बात है कि उस जीवनका भोग करनेका

अवसर हर किसीको न मिले या प्रतिनिधि न मिले जीविकोपाजनकी और घर गिरस्तीकी चिंताएं उसे सिर न उठाने दें।

परिसके रातके जीवनकी बातें तो सारी दुनिया सुन रखी है। किन्तु उससे आकृष्ट होकर आनेवालेको सुविधाएं भी तो मिलनी चाहिए? और सुविधाके लिए वह अतिरिक्त व्यय भी तो करनेको तयार है। आपेरा सिनेमा नाटक आदिके टिकट स्वयं खरीद सकना परिसमें आसान नहीं है अतः इसके लिए एजेंसियां हैं जो टिकट प्राप्त करनेके लिए पच्चीस पचीस प्रतिशत तक कमीशन लेती है। यात्री अनिवार्यतया इनकी शरण जाता है। कहवाघरों-होटलोंमें बिलपर १५ प्रतिशत बख्शीशके रूपमें स्वयं जोड़ दिया जाता है यात्री प्राय इसके ऊपर भी कुछ देनेको अपनेको लाचार समझता है। साधारण होटलों तकमें मेज लगानेका चार्ज इससे अलग होता है और हाथ पोंछनेके लिए जो नपकिन दिया जाता है उसका अलग। एजेंसियाँ आपको सैर करानेके लिए गाइड भी दे सकती हैं इसके लिए एजेंसियाँ जो लेती हैं उसके अतिरिक्त गाइडको भी कुछ देना ही होता है। गाइड प्राय स्त्री होती है—यही सैलानी पसन्द भी करते हैं—और इस अवस्थामें उसके प्रमन चित्त कहवा पानी भोजन मनोरंजन आदिका व्यय भी सब देना ही होता है। ऐसी गाइड स्त्रियां एजेंसियोंसे अलग भी सहज ही मिल जाती हैं। बहुधा ऐसी मार्ग-दर्शिकाएं उन होटलों या रातके कहवाघरोंसे भी कुछ प्राप्त करती हैं जहां वे यात्रियोंको ले जाती हैं। लेकिन वह जो हो इनकी जानकारीके विषयमें सन्देहकी गुंजाइश नहीं सैलानी कितनी भी अद्भुत चीजकी फरमाइश क्यों न करे वह कहां प्राप्य होगी ये मार्गदर्शिकाएं बता सकेंगी। फिर वह परिसका प्राचीनतम गिरजाघर हो या कि चौबीस घण्टे खुला रहनेवाला होटल या कि वह रेस्तरां जहाँ मुर्गेपर आपका नम्बर लगाकर उसे पकाया जाता है या जहाँ आप अपना पसन्दका मेंढक चुनकर उसकी टांगोंकी तरकारी खा सकते हैं या वह बाजार जहां मक्खियाँ बिकती हैं या वह नाचघर जहां सुप्रसिद्ध

साहित्यकार और कलाकार लड़कोंके गलेमें हाथ डालकर नाचते हैं। ये सब चीज़ें तो केवल कौतूहलकी वस्तुएँ भी हो सकती हैं लेकिन टूरिस्टकी रुचि निरे कौतूहलसे अधिक भी हो सकती है तो उसकी जिज्ञासाके शमन या वासनाकी तृप्तिके उपाय भी पेरिसमें सुलभ हैं और उनके भी गाइड मिल जायेंगे। कोई व्यसन या विकृति ऐसी न होगी जिसकी मानव कल्पना कर सका हो जिसके उपकरण पेरिसमें न मिल सकते हों और यह भी नहीं है कि वे सब बहुत महँगे ही मिलते हों, जानकारोंका ही जमघट है। या सैलानीके पास पैसेका बोझ अधिक हो तो उसे हल्का करनेके कर्तव्यमें पेरिसका विक्रेता या दलाल या गाइड या कोई भी सेवा सम्भव चूक नहीं होने देता। पेरिस यूरोपका कदाचित् सबसे महँगा शहर है और अनजानके लिए तो वह शायद लन्दनसे कुछ कम नहीं है फिर भी लालसाकी पूर्ति वहाँ और दूसरे शहरोंसे कहीं कम खर्चमें हो सकती है—ऐसी लालसाकी भी जिनकी अन्यत्र चर्चा भी खतरनाक हो, पसन्द मारे पूर्तिकी बात तो दूर।

संयोग कहिए कि भाग्यकी कृपा कहिए इन सब बातोंमें मेरी रुचि सतही जानकारीसे अधिक कभी नहीं रही। कलाकारकी प्रतिभाकी विकृतियों के मनोवैज्ञानिक अध्ययनकी प्रवृत्ति रही है अवश्य पर जहाँ तक पेरिसका प्रश्न है, यह प्रवृत्ति निरा किताबीपन है और उसे लेकर जानकारी किसी सस्ती उद्योगके लिए निरा बेकार पेरिसमें बकवाद। बल्कि रहनेमें मुझे ग्लानि नहीं थी क्योंकि इस प्रकारकी जिज्ञासासे परे और अच्छी तरह उस विशाल सुन्दर कलाप्रदर्शनको देख सका जो कि पेरिस वास्तवमें है। उन कलाकृतियोंमेंसे कुछ अत्यन्त मूल्यवान् हैं और संग्रहालयोंमें संगृहीत हैं कुछ और एक दूसरी दृष्टिसे उतना ही मूल्यवान भले ही हो पर केवल शानके नाते गली-गलीकी ठोकरें खाता फिरता है यह दूसरी बात है। सचमुच पेरिस जैसे सौंदर्य और सौन्दर्य प्रसाधनका केन्द्र है वैसे ही जीवित मानवोंकी कलाप्रदर्शनी भी है, साहित्य और कलाकी नयी सूझका केन्द्र है वैसे ही इनकी विकृतियोंका घूरा भी वह है।

बृन्तागी किन्तु तरल चपल सेन नदी पेरिस नगरको दो भागोंमें बाँटती है और नदीके दर्जनों महराबदार पुल उन्हें फिर मिलाते हैं। नदी-तटकी सैर पेरिसका एक मुख्य आकर्षण है अपने सहज सौंदर्यके लिए भी और इसलिए भी कि इसी पटरीपर आस-पास शहरके प्रेम-जीवनका अपेक्षया प्रीतिकर अंश घूमता है। दूसरा और कम प्रीतिकर अंश जिसे कदाचित् प्रेम-जीवनका अंश न कहकर विदग्ध रमित जीवन ही कहना चाहिए शहरकी गलियोंमें बिखरा हुआ है—बहुत बिखरा हुआ भी नहीं क्योंकि उसके भी दो अलग अलग घर हैं। दक्षिण तटपर मोमार्त जो सक्रे क्वेके गिरजाघरके नीचे फैला हुआ एक पुराना मुहल्ला है और पिछले शताधिक वर्षोंसे यूरोपके कला-जीवनका केन्द्र रहा है—कलाके उत्कृष्ट और निकृष्ट दोनों अर्थोंमें। आज भी यहाँकी कौतुक भरी गलियोंकी पिचपिचमें अनेक चित्रकार, शिल्पी और लेखक अपनी समस्याओंके लिए हल, अपनी वेदनाओंके लिए हाला और अपनी आत्म-विनाशिनी कुण्ठाके लिए हालाहल ढूँढ़ते हुए रहते हैं। एक महराबके नीचे आपको किसी महान कलाकारका स्टूडियो मिल सकता है जिसके अगले ही महराबके साथ कोई बदनाम नाचघर या शराबखाना हो सकता है, गलीके नुक्कड़पर एक छोटा-सा देवालय और उसीकी ओटमें रासायनिक नशोंका गैर-कानूनी अड्डा या कि शव-परीक्षा-की दीक्षा केन्द्र। सेन नदीके दूसरे तटपर—जो वाम तट ही प्रसिद्ध है—सां मिशेल और सां जर्मेनके आस-पासका प्रदेश दूसरा केन्द्र है किन्तु यहाँ मोमार्त जैसा सकरापन नहीं है और यह वास्तवमें स्वच्छन्दता-प्रेमी बुद्धिजीवियोंका (और हाँ, उनके नकलचियोंका!) प्रदेश है। यहाँ आपको अनेक प्रकारके आत्मपरक और अनात्मपरक दार्शनिक मिलेंगे, फक्कड़ किन्तु निष्ठावान कलाकार, निर्धन किन्तु लगनवाले विद्यार्थी, निम्नाश्रित वैज्ञानिक, रोगी अथवा पंगु शिल्पी, अन्धप्राय बहुभाषाविद्, बधिरप्राय संगीत-स्रष्टा, बंगाल और तंत्र और हठयोगके दुर्दान्त साधक, बिना शब्दोंके केवल विराम-चिह्नों और अक्षरोंकी कविता और

बिना तूली या रंगके बिंदिया और चरियास चित्र बनानेवाले प्रयोगवादी या दिन भर कहवा घरमें बैठकर दूसरोंको डांट फटकार और गालियां सुना कर प्रतिष्ठापूर्वक (या उसके बिना भी) जीवन यापन कर देना चाहनेवाले प्रगतिवादी—सब मिल जायेंगे। प्रतिभाकी विकृतियां प्रतिभाकी प्रखर ज्योति किरणोंसे टकराती और घुल मिलती दीखती मिलेंगी। किसी कहवा घरमें बैठ जाइये—हर कला या साहित्य सम्प्रदायका अपना अपना कहवाघर है। एक ओर दाढ़ी बढ़ाये और उनींदी-से आँखें लाल किये निठल्ले दीखेंगे तो दूसरी ओर कोई कवि तल्लीन भावसे कविता लिखता भी दीख जायगा बेला बजाकर पैसे मांगती हुई हँसमुख यायावर (जिप्सी) के पास छेड़खानी करते मनचले दीखेंगे, तो जाते जाते उसके हाथोंकी मुद्राओं उसके नासामूलपर थकानकी सूक्ष्मतम रेखाओं उसकी स्थिर मुसकराहटमें छिपे नाना विरोधी भावोंकी सतुलनाओंको दबाना द्रुत स्केच बना लेनेवाले सजग चित्र शिल्पी भी दीख जायेंगे और गोरे काले भूरे पीले सभी वर्णोंकी त्वचाएं, काली लम्बी कंजी भूरी नीली काली सभी प्रकारकी आँखें वर्ण भेद और जाति भेदका जितना कम प्रभाव परिसमें दीखता है उतना किसी दूसरे यूरोपीय शहरमें नहीं। इस अर्थमें परिस सचमुच स्वतन्त्र नगर है और यह सहज ही समझमें आता है कि क्या स्वातन्त्र्य प्रेमी कलाकार सहज ही परिसकी ओर उन्मुख होता है और परिसमें एक बार जम जाये तो लौटनेकी बात नहीं सोचता हटता है तो बाध्य होकर ही और निरंतर वहीं लौटनेके स्वप्न देखते हुए। परिसकी स्मृति एक टीस-सी हमेशाके लिए उनके साथ रह जाती है।

लेकिन इस स्वतन्त्रताकी थोड़ी और गहरी पड़ताल करें तो धीरे धीरे कई बातें प्रतीत होने लगती हैं। वर्ण भेद और रंग भेद परिसमें बहुत कम है इसके कारण जहाँ एक ओर उदारता है वहाँ दूसरी ओर उपेक्षा भी है। कोई क्या करता है क्या पहनता है क्या खाता-पीता है इसपर परिसवासी टीका टिप्पणी नहीं करते उनकी तरफसे सबको खुली छूट है

कि जो जैसा चाहे खाये पहने कहे सोचे करे। एक ओर इसकी जड़में यह विश्वास है कि मानव व्यक्तिको इस मामलेमें आत्म निर्णयका अधिकार होना चाहिए और उसपर टीका टिप्पणी करना या उसको बदलना चाहना अनधिकृत हस्तक्षेप है। दूसरी ओर इसकी जड़में दूसरे मानवोंके प्रति एक गहरी उदासीनता है। कोई क्या करता है इसमें हमें क्या? कौन जीता मरता है इससे हमें क्या? जो जिसके मनमें आये करे या न करे हमें क्या? हमने सबका ठेका थोड़े ही लिया है। इसलिए जहाँ पेरिस संसारका सबसे स्वतन्त्र नगर है वहाँ यह भी कहना शायद अन्याय नहीं होगा कि वह संसारका सबसे हृदयहीन शहर है। यह तो है ही कि मानव प्राचीन समाजमें कभी उतना अकेला नहीं हुआ जितना आजके यन्त्र समाजमें हो गया है—आज हर व्यक्ति भीड़में अकेला है और हर भीड़ अकेलोंकी भीड़ है—किन्तु इसके आगे भी ऐसा लगता है कि अकेला व्यक्ति पेरिसमें जितना अकेला हो सकता है उतना संसारमें कहीं नहीं।

समीक्षाका एक पहलू और भी है। पेरिसवासीको अपनी भाषा और संस्कृतिका अभिमान है। अभिमान अपने आपमें अनिवार्यतया बुरा नहीं है और भाषा या संस्कृतिका अभिमान तो एक हदतक अच्छा ही है। लेकिन फ्रांसमें यह परस्पर व्यवहारमें बाधक हो जाता है। इटलीमें आप वहाँकी भाषा न जानें तो आपको इसके लिए पूरा प्रोत्साहन मिलेगा कि आप टूटी-फूटी भाषामें ही अपनेको अभिव्यक्त कर सकें। और इसके लिए इटालियन व्यक्ति स्वयं टूटी-फूटी इंगलिश या कोई भी और भाषा बोलनेको तैयार होगा। उसके साथ उसका हृदयगत भाव यह कहता जान पड़ता है कि—हम लोग एक भाषा नहीं बोलते तो हुआ क्या फिर? भाषा इन्सानकी ईजाद है। एक ईजाद काम न देती तो हम जैसे-तैसे दूसरा साधन पा लेंगे—अभी अभी। जरा और सब्र कीजिए जरा और जोर लगाइए इधर मैं भी कोशिश करके देखता हूँ। मैं जो कभी जल्दी थोड़ी-बहुत इटालियन बोलने लग गया था (भूल भी गया हूँ) लेकिन उसमें

क्या ? फिर मौका मिलते ही स्मृति संस्कार जाग जायेगा) उसका कारण यहाँ महज प्रोत्साहन था। इसके विपरीत फ्रांसीसी आपको फ्रांसीसी भाषामें लड़खड़ाता हुआ देखता रहेगा और आपका काम आसान करनेका जरा भी प्रयास नहीं करेगा। आपकी भाषा जानता भी होगा तो भी फ्रांसीसी बोलना पसन्द करेगा—आप न समझें तो दोष आपका। यह उपेक्षाका एक दूसरा स्तर है जो एक प्रकारका स्वातन्त्र्य देता है या देता जान पड़ता है।

या कि ऐसा भी है कि फ्रांसीसी व्यक्ति किसी हद तक अकेलेपनसे डरता है? सभी फ्रांसीसी बातचीतमें कुशल और सभी चतुर होते हैं। खासकर वहाँके इण्टलेक्चुअल व्यक्तिसे बात करना तो एक स्मरणीय अनुभव होता है—उनकी बौद्धिक कलाबाजियों और शाब्दिक बाजीगरीपर अनभ्यस्त श्रोता चमत्कृत होकर रह जाता है। ऐसा जान पड़ता है कि सरकसका खेल या किसी अच्छे नाटकका प्रभावशाली अभिनय देखा हो। उस समय श्रोता यह पूछना ही भूल जा सकता है कि यह कुशल बाजीगर या अभिनेता जो रूप दिखा रहा है क्या वह सचमुच उसका रूप है? क्या उसे स्वयं अपने इस रूपपर प्रत्यय है? क्या जो मत या विचार वह प्रकट कर रहा है उनपर सचमुच उसका विश्वास है?

जो श्रोता ऐसे प्रश्न पूछता है वह कभी भी अपना मत स्थिर नहीं कर सकता। न यह मान सकता है कि वह सब सच है न इस निष्कर्षपर पहुँच सकता है कि सब झूठ है निरी एक मुद्रा (पोज) है। उसे जर्मन या अन्य उत्तरी देशोंके प्रबुद्ध व्यक्तियोंसे बातचीत करनेपर फ्रांसीसी बुद्धिजीवीकी यह विशेषता और भी तीव्रतासे लक्षित होने लगती है। (यहाँ मैं मानो फ्रांसीसीको यह पूछते सुन सकता हूँ कि क्या फ्रांसके बाहर भी कहीं प्रबुद्ध व्यक्ति होते हैं?)

एक भाषा जिसमें सब डूबे हुए हैं
क्योंकि एक सत्य जिससे सब ऊब गए हैं

कि जो जैसा चाहे खाय पहने कहे सोच कर। एक ओर इसकी जन्म यह विश्वास है कि मानव व्यक्तिको इस मामलेमें आत्म निर्णयका अधिकार होना चाहिए और उसपर टीका टिप्पणी करना या उसको बदलना चाहना अनधिकृत हस्तक्षेप है। दूसरी ओर इसकी जन्म दूसरे मानवोंके प्रति एक गहरी उदासीनता है। कोई क्या करता है इसमें हम क्या? कौन जीता मरता है इससे हम क्या? जो जिसके मनमें आय करे या न करे हमें क्या? हमने सबका ठेका थोड़े ही लिया है। इसलिए जहां पेरिस संसारका सबसे स्वतन्त्र नगर है वहां यह भी कहना न्याय अन्याय यही होगा कि वह संसारका सबसे हृदयहीन शहर है। यह तो है ही कि मानव प्राचीन समाजमें कभी उतना अकेला नहीं हुआ जितना आधुनिक यन्त्र समाजमें हो गया है—आज हर व्यक्ति भीड़में अकेला है और हर भीड़ अकेलोंकी भीड़ है—किन्तु इसके आगे भी ऐसा लगता है कि अकेला व्यक्ति पेरिसमें जितना अकेला हो सकता है उतना संसारमें कहीं नहीं।

इसीका एक पहलू और भी है। पेरिसवासीको अपनी भाषा और संस्कृतिका अभिमान है। अभिमान अपने आपमें अनिवार्यतया बुरा नहीं है और भाषा या संस्कृतिका अभिमान तो बहुत हदतक अच्छा ही है। लेकिन फ्रांसमें यह परस्पर व्यवहारमें बाधक हो जाता है। इटलीमें आप वहांकी भाषा न जानें तो आपको इसके लिए पूरा प्रोत्साहन मिलेगा कि आप टूटी-फूटी भाषामें ही अपनेको अभिव्यक्त कर सकें। और इसके लिए इटालियन व्यक्ति स्वयं टूटी फूटी इटालियन या कोई भी और भाषा बोलनेको तैयार होगा। उसके साथ उसका हंसमुख भाव यह कहता जान पड़ता है कि—हम लोग एक भाषा नहीं बोलते तो हुआ क्या फिर? भाषा इनमानकी ज़बान है। एक ज़बान काम नहीं देती तो हम जैसे-तैसे दूसरा साधन पा लेंगे—अभी अभी। ज़रा और सब्र कीजिए ज़रा और ज़ोर लगाइए इधर मैं भी कोशिश करके देखता हूँ। मैं जो कभी जल्दी यात्री-वश इटालियन बोलने लग गया था (भूल भी गया हूं लेकिन उससे

क्या ? फिर मौका मिलते ही स्मृति-संस्कार जाग जायगा) उसका कारण यही सहज प्रोत्साहन था। इसके विपरीत फ्रांसीसी आपको फ्रांसीसी भाषामें लड़खड़ाता हुआ देखता रहेगा और आपका काम आसान करनेका ज़रा भी प्रयास नहीं करेगा। आपको भाषा जानना भी होगा तो भी फ्रांसीसी बोलना पसन्द करेगा—आप न समझें तो दोष आपका। यह उपेक्षाका एक दूसरा स्तर है जो एक प्रकारका स्वातन्त्र्य देता है या देता जान पड़ता है।

या कि ऐसा भी है कि फ्रांसीसी व्यक्ति किसी हदतक अकेलेपनसे डरता है ? सभी फ्रांसीसी बातचीतमें कुशल और सभी चतुर होते हैं। खासकर यहाँके कुछ-एक चतुर व्यक्तियोंसे बात करना तो एक स्मरणीय अनुभव होता है—उनकी बौद्धिक कलाबाजियों और शाब्दिक आतिशबाजीपर अनभ्यस्त श्रोता चमत्कृत होकर रह जाता है। ऐसा जान पड़ता है कि सर्कसका खेल या किसी अच्छे नाटकका प्रभावशाली अभिनय देखा हो। उस समय श्रोता यह पूछना ही भूल जा सकता है कि यह कुशल वाग्जाल या अभिनय जो रूप दिखा रहा है क्या वह सचमुच उसका रूप है ? क्या स्वयं अपने इस रूपपर प्रत्यय है ? क्या जो मत या विचार वह प्रकट कर रहा है उनपर सचमुच उसका विश्वास है ?

जो श्रोता ऐसे प्रश्न पूछता है वह कभी भी अपना मत स्थिर नहीं कर सकेगा। न यह मान सकता है कि वह सब रूप है, न इस निष्कर्षपर पहुँच सकता है कि सब झूठ है, निरा एक भंगी (पोज़) है। इस जर्मन या अन्य उत्तरी देशोंके प्रबुद्ध व्यक्तियोंसे बातचीत करनेपर फ्रांसीसी बुद्धिजीवीकी यह विशेषता और भी तीव्रतासे लक्षित होने लगती है। (यहाँ मैं मानता फ्रांसीसीको यह पूछनेका हक है कि क्या फ्रांसके बाहर भी कहीं प्रबुद्ध व्यक्ति होते हैं ?)

एक मृषा जिसमें सब डूबे हुए हैं
क्योंकि एक सत्य जिसमें सब रुके हैं

कि जो जैसा चाहे खाये, पहने, कहे, सोचे, करे। एक ओर इसकी जड़में यह विश्वास है कि मानव व्यक्तिको इस मामलेमें आत्म निर्णयका अधिकार होना चाहिए और उसपर टीका टिप्पणी करना या उसको बदलना चाहना अनधिकृत हस्तक्षेप है। दूसरी ओर इसकी जड़में दूसरे मानवोंके प्रति एक गहरी उदासीनता है। कोई क्या करता है इसमें हमें क्या? कौन जीता मरता है इससे हमें क्या? जो जिसके मनमें आये करे या न करे, हमें क्या? हमने सबका ठेका थोड़े ही लिया है। इसलिए जहाँ पेरिस संसारका सबसे स्वतन्त्र नगर है वहाँ यह भी कहना शायद अन्याय नहीं होगा कि वह संसारका सबसे हृदयहीन शहर है। यह तो है ही कि मानव प्राचीन समाजमें कभी उतना अकेला नहीं हुआ जितना आजके यन्त्र-समाजमें हो गया है—आज हर व्यक्ति भीड़में अकेला है और हर भीड़ अकेलोंकी भीड़ है—किन्तु इसके आगे भी ऐसा लगता है कि अकेला व्यक्ति पेरिसमें जितना अकेला हो सकता है उतना संसारमें कहीं नहीं।

इसीका एक पहलू और भी है। पेरिसवासीको अपनी भाषा और संस्कृतिका अभिमान है। अभिमान अपने आपमें अनिवार्यतया बुरा नहीं है और भाषा या संस्कृतिका अभिमान तो बहुत हदतक अच्छा ही है। लेकिन फ्रांसमें यह परस्पर व्यवहारमें बाधक हो जाता है। इटलीमें आप वहाँकी भाषा न जानें तो आपको इसके लिए पूरा प्रोत्साहन मिलेगा कि आप टूटी-फूटी भाषामें ही अपनेको अभिव्यक्त कर सकें। और इसके लिए इटालियन व्यक्ति स्वयं टूटी फूटी इटालियन या कोई भी और भाषा बोलनेको तैयार होगा। उसके साथ उसका हँसमुख भाव यह कहता जान पड़ता है कि—हम लोग एक भाषा नहीं बोलते तो हुआ क्या फिर? भाषा इनसानकी ईजाद है। एक ईजाद काम नहीं देती तो हम जैसे-तैसे दूसरा साधन पा लेंगे—अभी अभी। ज़रा और सब्र कीजिए ज़रा और ज़ोर लगाइए... स्वयं मैं भी कोशिश करके देखता हूँ। मैं जो बड़ी जल्दी थोड़ा-बहुत इटालियन बोलने लग गया था (भूल भी गया हूँ लेकिन उससे

क्या ? फिर मौका मिलते ही स्मृति-संस्कार जाग जायगा) उसका कारण यही सहज प्रोत्साहन था। इसके विपरीत फ्रांसीसी आपको फ्रांसीसी भाषामें लड़खड़ाता हुआ देखता रहेगा और आपका काम आसान करनेका ज़रा भी प्रयास नहीं करेगा। आपकी भाषा जानता भी होगा तो भी फ्रांसीसी बोलना पसन्द करेगा—आप न समझें तो दोष आपका। यह उपेक्षाका एक दूसरा स्तर है जो एक प्रकारका स्वातन्त्र्य देता है या देता जान पड़ता है।

या कि ऐसा भी है कि फ्रांसीसी व्यक्ति किसी हदतक अकेलेपनसे डरता है ? सभी फ्रांसीसी बातचीतमें कुशल और सभी चतुर होते हैं। खासकर वहाँके इण्टलेक्चुअल व्यक्तिसे बात करना तो एक स्मरणीय अनुभव होता है—उनकी बौद्धिक कलाबाज़ियों और शाब्दिक बाज़ीगरीपर अनभ्यस्त श्रोता चमत्कृत होकर रह जाता है। ऐसा जान पड़ता है कि सरकसका खेल या किसी अच्छे नाटकका प्रभावशाली अभिनय देखा हो। उस समय श्रोता यह पूछना ही भूल जा सकता है कि यह कुशल बाज़ीगर या अभिनेता जो रूप दिखा रहा है क्या वह सचमुच उसका रूप है ? क्या उसे स्वयं अपने इस रूपपर प्रत्यय है ? क्या जो मत या विचार वह प्रकट कर रहा है उनपर सचमुच उसका विश्वास है ?

जो श्रोता ऐसे प्रश्न पूछता है वह कभी भी अपना मत स्थिर नहीं कर सकता। न यह मान सकता है कि वह सब सच है न इस निष्कर्षपर पहुँच सकता है कि सब झूठ है निरी एक मुद्रा (पोज़) है। उस जमन या अन्य उत्तरी देशोंके प्रबुद्ध व्यक्तियोंसे बातचीत करनेपर फ्रांसीसी बुद्धिजीवीकी यह विशेषता और भी तीव्रतासे उभरित होने लगती है। (यहाँ मैं मानो फ्रांसीसीको यह पूछते सुन सकता हूँ कि क्या फ्रांसके बाहर भी कहीं प्रबुद्ध व्यक्ति होते हैं ?)

एक मृषा जिसमें सब डूबे हुए हैं
क्योंकि एक सत्य जिससे सब ऊबे हुए हैं

मारते हैं मरते हैं
क्योंकि जीवनसे डरते हैं।

तो यह परिस है। लेकिन क्या सचमुच यही परिस है? राग ध्वनिया प्रभावोका यह मकुर जो सतही और पक्षग्रस्त युक्त भी हो सकता है जो केवल हल्की ग्लानि या हल्की उत्तेजना देकर मनको वास्तविकताकी खोजसे विमल कर दे सकता है?

सतही वह हो सकता है लेकिन वह केवल इसलिए कि गहरे जानेके लिए अधिक समय अपेक्षित है इसलिए नहीं कि वह झूठा है। यह भी कहा जा सकता है कि वह परिसवासीसे विच्छिन्न परिसका चित्र है। इस लिए अधूरा और एकांगी है। ऐसा कहना ठीक भी हो सकता है क्योंकि अन्ततोगत्वा दर्शकवाली दृष्टि परिसकी नहीं है और यह मानकर चली है कि परिसका सौन्दर्य वहाँके निवासियोंके बावजूद है उनके कारण नहीं। डार्ड-तीन महीनेमें एक जातिको या संस्कृतिको कितना जाना जा सकता है? और सम्पूर्ण न जानना दोष क्या है अगर उसका कोई दावा नहीं किया गया है?

यो ऐसा भी नहीं है कि फ्रांसीसी संस्कृति या साहित्यसे उतना ही परिचय हो जितना परिसमें रहकर प्राप्त किया बल्कि उस सन्दर्भमें तो नया वहाँ बहुत अधिक नहीं सीखा। (इसका एक कारण यह भी हुआ कि अधिक समय दस्तावेजी फ़िल्म बनानेके प्रशिक्षणमें लगाया—कमराके उप योगके भी और निर्माणके भी। जिस उद्देश्यसे यह शिक्षा पायी थी वह अधूरा रह गया—पर कौन विद्या कब काम आ जाती है क्या ठिकाना।) अपना साहित्यका अध्ययन अनिवार्यतया फ्रांसीसी साहित्य और चिन्तनसे परिचयकी अपेक्षा करता है और यूरोपियन कलाका अध्ययन तो बिना फ्रांसीसी बल्कि खास परिसकी कलाके अध्ययनके हो ही नहीं सकता। पिछले लगभग एक वर्षोंमें यूरोपीय कला प्रवृत्तियोंका इतिहास मुख्यतया

परिस स्कूल का इतिहास है, और अब भी उसका प्रभाव क्षीण हो गया हो ऐसा नहीं है यद्यपि कोई बहुत बडी नयी या उदीयमान प्रतिभा इस समय नहीं दीख रही है। मुझे तो यही लगा कि परिसका प्रभाव अब भी जीवित होते हुए भी अब उतारपर है—यूरोपके सांस्कृतिक जीवनमें फ्रांसीसी संस्कृतिके प्रभावकी भांति ही। किसी भी क्षेत्रमें आशापूर्ण जीवनोन्मुखता वहाँ नहीं दीखी। सांस्कृतिक क्षीणता और अवसादक लक्षण प्रत्येक क्षेत्रमें प्रकट थे और उनके प्रति एसा एक उदासीन स्वीकृति भाव था कि मेरी समझमें सक्रिय दुष्टतासे अधिक घातक—या साघातिकताका चिह्न—होता है। मैं मर रहा हूँ मैं जानता हूँ कि मैं मर रहा हूँ, 'मन स्वीकार कर लिया है कि मैं मर जाऊँ'—मृत्यूमुखताकी मानो तीनों सीढ़ियाँ फ्रांसीसी संस्कृति—कमसे कम फ्रांसीसी साहित्य—पार कर चुका है। परमावसाद की इस अवस्थामें जिसका एक विस्फोट युद्धकालमें और उसके तत्काल बादके युगमें हुआ अपनी जीवन परिस्थिति—अपनी अर्थात व्यक्तिगत अपनी नहीं मानव मात्रकी जीवन-परिस्थिति—उसे घृण्य, अर्थहीन उबाने वाली ही नहीं बल्कि उबकाई लानेवाली जान पड़ने लगी है। अस्तित्ववादके साहित्यिक पक्षके अर्थात सार्त्रके साहित्यिक मतवादके मूलमें यह निर्वेद ऽथवा व्यथ है उसका दर्शन मतलीका दर्शन है जिसे उपन्यासोंमें गूथनेमें उसने अपनी असाधारण प्रतिभा और अविश्रान्त प्रयवसाय शक्ति लगा दी है। कम्यू और आनुईल भी इसी सम्प्रदायमें हैं। धार्मिक अथवा ईसाई अस्तित्ववाद इससे अलग है अनस्तित्वसे साक्षात्कारके उस दर्शनमें चिन्तनका जो निर्मम साहस है उसका अपना भी महत्त्व है और वह आधुनिक जीवनके आधुनिक परिस्थितिमें इस अभूतपूर्व और अद्वितीय अस्तित्वके बारेमें एक नयी दृष्टि भी देता है। खिडकी खुलनेपर उसके बाहर जो दीखा उसके बारेमें एकमत होना ही सब-कुछ नहीं है सार परस्पर विरोध के बावजूद इस बातका महत्त्व अक्षुण्ण रहता है कि खिडकी खुली है

मारते हैं, मरते हैं
क्योंकि जीवनसे डरते हैं।

तो यह पेरिस है। लेकिन क्या सचमुच यही पेरिस है? रंगों ध्वनियों प्रभावोंका यह संकुल जो सतही और पूर्वग्रहयुक्त भी हो सकता है, जो केवल हल्की ग्लानि या हल्की उत्तेजना देकर मनको वास्तविकताकी खोजसे विमुख कर दे सकता है?

सतही वह हो सकता है लेकिन वह केवल इसलिए कि गहरे जाननेके लिए अधिक समय अपेक्षित है, इसलिए नहीं कि वह झूठा है। यह भी कहा जा सकता है कि वह पेरिसवासीसे विच्छिन्न पेरिसका चित्र है। इसलिए अधूरा और एकांगी है। ऐसा कहना ठीक भी हो सकता है क्योंकि अन्ततोगत्वा देखनेवाली दृष्टि पेरिसकी नहीं है, और यह मानकर चली है कि पेरिसका सौन्दर्य वहाँके निवासियोंके बावजूद है, उनके कारण नहीं। ढाई-तीन महीनेमें एक जातिको या संस्कृतिको कितना जाना जा सकता है? और सम्पूर्ण न जानना दोष क्या है अगर उसका कोई दावा नहीं किया गया है?

यों ऐसा भी नहीं है कि फ्रांसीसी संस्कृति या साहित्यसे उतना ही परिचय हो जितना पेरिसमें रहकर प्राप्त किया, बल्कि उस सन्दर्भमें तो नया कुछ बहुत अधिक नहीं सीखा। (इसका एक कारण यह भी हुआ कि अधिक समय स्ट्रासबर्गके ग्रीष्मकालीन प्रशिक्षणमें लगाया—जो मेरे उपयोगका था और निर्णायक भी। जिस उद्देश्यसे यह शिक्षा पायी थी वह अधूरा रह गया—पर कौन विद्या कब काम आ जाती है क्या ठिकाना।) अथवा साहित्यका अध्ययन अनिवार्यतया फ्रांसीसी साहित्य और चिन्तनसे परिचयकी अपेक्षा करता है, और यूरोपियन कलाका अध्ययन तो बिना फ्रांसीसी बल्कि खास पेरिसकी कलाके अध्ययनके हो ही नहीं सकता। पिछले अस्सी एक वर्षोंकी यूरोपीय कला-प्रवृत्तियोंका इतिहास मुख्यतया

परिस स्कूल का इतिहास है, और अब भी उसका प्रभाव क्षीण हो गया हो ऐसा नहीं है यद्यपि कोई बहुत बड़ी नयी या उदीयमान प्रतिभा इस समय नहीं दीख रही है। मुझे तो यही लगा कि परिसका प्रभाव अब भी जीवित होते हुए भी अब उतारपर है—यूरोपके सांस्कृतिक जीवनमें फ्रांसीसी संस्कृतिके प्रभावकी भाँति ही। किसी भी क्षेत्रमें आशापूर्ण जीवनोन्मुखता वहाँ नहीं दीखती। सांस्कृतिक जीर्णता और अवसादके लक्षण प्रत्येक क्षेत्रमें प्रकट थे और उनके प्रति एक उदासीन स्वीकृति भाव जो कि मेरी समझमें सक्रिय दुष्टतासे अधिक घातक—या सांघातिकताका चिह्न—होता है। मैं मर रहा हूँ 'मैं जानता हूँ कि मैं मर रहा हूँ', 'मैंने स्वीकार कर लिया है कि मैं मर जाऊँ'—मृत्यूमुखताकी मानो तीनों सीढ़ियाँ फ्रांसीसी संस्कृति—सबसे कम फ्रांसीसी साहित्य—पार कर चुका है। परमाणवास्त्र की इस अवस्थामें जिसका एक विस्फोट युद्धकालमें और उसके तत्काल बादके युगमें हुआ अपनी जीवन-परिस्थिति—अपनी अर्थात् व्यक्तिगत अपनी नहीं मानव-मात्रकी जीवन-परिस्थिति—उस धण्य, अर्थहीन उबाने वाली ही नहीं बल्कि उबकाई लानेवाली जान पड़ने लगी है। अस्तित्ववादके साहित्यिक पक्षमें, अर्थात् सात्रके साहित्यिक मतवादके मूलमें यह विशेष रूपसे लक्ष्य है उसका दर्शन मतलीका दर्शन है जिसे उपन्यासोंमें गूथनमें उसने अपनी असाधारण प्रतिभा और अविश्रान्त पर्यवेक्षण शक्ति लगा दी है। कम्यू और आनोज भी इसी सम्प्रदायमें है। धार्मिक अथवा ईसाई अस्तित्ववाद इससे अलग है अनस्तित्वके साक्षात्कारके उस दर्शनमें चिन्तनका जो निर्मम साहस है उसका अपना भी महत्त्व है और वह आधुनिक जीवनके आधुनिक परिस्थितिमें इस भूतपूर्व और अद्वितीय अस्तित्वके बारेमें एक नयी दृष्टि भी देता है। खिड़की खुलनेपर उसके बाहर जो दीखा उसके बारेमें एकमत होना ही सब-कुछ नहीं है सारे परस्पर विरोधके बावजूद इस बातका महत्त्व अक्षुण्ण रहता है कि खिड़की खुली है

मारते हैं मरते हैं
क्योंकि जीवनसे डरते हैं।

तो यह परिस है। लेकिन क्या सचमुच यही परिस है? रंगा ध्वनिया प्रभावोंवाला यह मुकुल जो सतही और पक्षग्रह मुक्त भी हो सकता है जो केवल हल्की ग्लानि या हल्की उत्तेजना देकर मनको वास्तविकताकी खोजसे विमुख कर दे सकता है?

सतही वह हो सकता है लेकिन वह केवल इसलिए कि गहरे जानेके लिए अधिक समय अपेक्षित है इसलिए नहीं कि वह झूठा है। यह भी कहा जा सकता है कि वह परिसवासीसे विच्छिन्न परिसका चित्र है। इस लिए अधूरा और एकांगी है। ऐसा कहना ठीक भी हो सकता है क्योंकि अन्ततोगत्वा देखनवाली दृष्टि परिसकी नहीं है और यह मानकर चली है कि परिसका सौंदर्य वहाँके निवासियोंके बावजूद है उनके कारण नहीं। ढाई-तीन महीनेमें एक जातिको या संस्कृतिको कितना जाना जा सकता है? और सम्पूर्ण न जानना दोष क्या है अगर उसका कोई दावा नहीं किया गया है?

यों ऐसा भी नहीं है कि फ्रांसीसी संस्कृति या साहित्यसे उतना ही परिचय हो जितना परिसमें रहकर प्राप्त किया बल्कि उस संदर्भमें तो नया वहाँ बहुत अधिक नहीं सीखा। (इसका एक कारण यह भी हुआ कि अधिक समय दस्तावेजी फ़िल्म बनानेके प्रशिक्षणमें लगाया—कमरेके उपयोगके भी और निर्देशनके भी। जिस उद्देश्यसे यह शिक्षा पायी थी वह अधूरा रह गया—पर कौन विद्या कब काम आ जाती है क्या ठिकाना।) अंग्रेजी साहित्यका अध्ययन अनिवार्यतया फ्रांसीसी साहित्य और चिन्तनसे परिचयको अपेक्षा करता है और यूरोपियन कलाका अध्ययन तो बिना फ्रांसीसी वरिक खास परिसकी कलाके अध्ययनके हो ही नहीं सकता। पिछले अस्सी एक वर्षोंसे यूरोपीय कला-प्रवृत्तियोंका इतिहास मुख्यतया

परिस स्कूल का इतिहास है, और अब भी उसका प्रभाव क्षीण हो गया हो ऐसा नहीं है यद्यपि कोई बहुत बड़ी नयी या उदीयमान प्रतिभा इस समय नहीं दीख रही है। मुझे तो यही लगा कि पेरिसका प्रभाव अब भी जाग्रत होते हुए भी अब उतारपर है—यूरोपके सांस्कृतिक जीवनमें फ्रांसीसी संस्कृतिके प्रभावकी भांति ही। किसी भी क्षेत्रमें आशापूर्ण जीवनी शक्ति वहाँ नहीं दीखी। सांस्कृतिक जीर्णता और अवसादके लक्षण प्रत्येक क्षेत्रमें प्रकट थे और उनके प्रति ऐसा एक उदासीन स्वीकृति भाव जो कि मेरी समझमें सक्रिय दुष्टतासे अधिक घातक—या साघातिकताका चिह्न—होता है। 'मैं मर रहा हूँ मैं जानता हूँ कि मैं मर रहा हूँ, 'मैंने स्वीकार कर लिया है कि मैं मर जाऊं'—यह भुक्तभोगी यानी जीता मरा सा फ्रांसीसी संस्कृति—कमसे कम फ्रांसीसी साहित्य—पार कर चुका है। परमावसाद की इस अवस्थामें जिसका एक विस्फोट युद्धकालमें और उसके तत्काल बादके युगमें हुआ अपनी जीवन-परिस्थिति—अपनी अर्थात व्यक्तिगत अपनी नहीं मानव मात्रकी जीवन-परिस्थिति—उस घण्य अर्थहीन उबाने वाली ही नहीं बल्कि उबकाई लानेवाली जान पड़ने लगी है। अस्तित्ववादके साहित्यिक पक्षमें, अर्थात सार्त्रके साहित्यिक मतवादके मूलमें यह विषाद स्पष्ट रूपसे है उसका दर्शन मतलीका दर्शन है जिसे उपन्यासोंमें गूँथनेमें उसने अपनी असाधारण प्रतिभा और अविश्रान्त पर्यवेक्षण शक्ति लगा दी है। कामू और आन्वील भी इसी सम्प्रदायमें हैं। धार्मिक अथवा ईसाई अस्तित्ववाद इससे अलग है अनस्तित्वके साक्षात्कारके उस दर्शनमें चिन्तनका जो निर्मम साहस है उसका अपना भी महत्त्व है और वह आधुनिक जीवनके आधुनिक परिस्थितिमें इस भूतपूर्व और अद्वितीय अस्तित्वके बारेमें एक नयी दृष्टि भी देता है। खिड़की खुलनेपर उसके बाहर जो दीखा उसके बारेमें एकमत होना या सब-कुछ नहीं है सारे परस्पर विरोध के बावजूद इस बातका महत्त्व अक्षुण्ण रहता है कि खिड़की खुली है

एक दूसरा फ्रांस

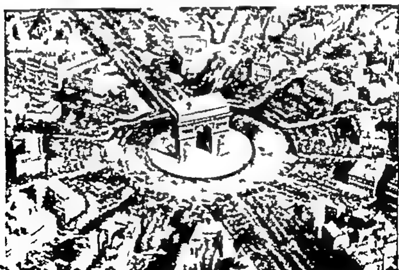
नहीं, निश्चय ही एक दूसरा भी परिस होना चाहिए, क्योंकि निस्सन्देह एक दूसरा भी फ्रांस है जिसकी ओर शताब्दियोंसे यूरोप देखता आया, जिसकी संस्कृतिसे उसने प्रेरणा पायी और जिसके मुकुरमें उसने बाकी दुनियाको भी देखा। संस्कृतियाँ देशकी होती हैं, पर मुख्यतया राजधानीसे फैलती हैं, जो कि वह देशका प्रतिनिधित्व करती है—तब फ्रांसकी देन प्रधानतया परिसकी ही देन होनी चाहिए। क्या यूरोपीय जब भारतमें गोपन भारत की खोजमें आते हैं, वैसे ही हम गोपन फ्रांस की खोजमें नहीं जा सकते?

(राजधानी दिल्ली भी है, पर एक तो वह नयी राजधानी है—दिल्ली भी नयी है—दूसरे वहाँसे भी जो फैलता है उसे हम अपनी गँवारू बोली में भारतीय संस्कृति न भी कह सकें तो इंडियन कल्चर कहनेको तो बाध्य हैं ही। और दिल्लीके कल्चर अधिकारी के लिए भी क्या बाहरका संस्कारी भारत उतना ही गोपन भारत नहीं है जितना कि विदेशीके लिए, बल्कि कुछ अधिक ही, क्योंकि विदेशी शायद भारतीय शास्त्र पुराण योग बहुत पढ़कर आया है!

गोपन फ्रांस। गोपन परिस। निस्सन्देह वह परिस भी है। और एक गोपन भी नहीं है—खोजने वाले ही ऐसे आते हैं कि गोपन और जुगुप्स्य का भेद भूलकर उसीके अन्वेषणमें रम जाते हैं जो जुगुप्साजनक हो; इसमें तो एक-मात्र खोज वही होती है। और ऐसे अनेक भारतीयोंको भी मैंने परिसमें देखा है जो उसकी गलियोंमें भटकते फिरते हैं और अपना देशवासी देखकर कतराकर निकल जाते हैं। यह नहीं कि मैं विश्वास

र्हैनमें सूर्योदय





—ऊपर—आकाशगामी आइफल मीनार । नीचे—विजय स्मारक ('एताल')

[सरकारी फ़ोटो]

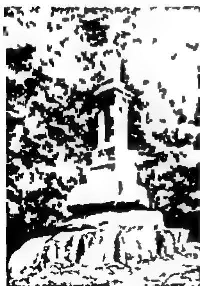


पेरिस—ऊपर–नोत्रदामका गिरजाघर। नीचे–नोत्रदाम और सेन नदी

[फ्रेंच टूरिंग इन्फर्मेशन]



पिएरनेस्व नीरका मठ



पिएर निर वारका मन्दिम



पिएर स्तिन्नीर मठका द्वार

[फोटो सर शाह प्राप्त]

जाकर अपने ही देशवालोंके समाज तक सीमित रहना अच्छा समझता हूँ लेकिन कतरानेका कारण जब यह हो कि अपनी तरफसे किसीके मनमें जुगुप्साका भाव है तो वह कतराना दूसरेपर भी एक ग्लानिकी छाप छोड़ जाता है। अस्तु, भिन्नरुचिर्हि लोकः कहकर इस वर्गसे तो बिल्कुल छुट्टी पायी जा सकती है। एक अधिक संस्कारी वर्ग है जो कला, साहित्य, स्थापत्य, संगीत और दर्शन आदिमें रुचि रखता है, किन्तु उस वर्गके लोग भी जब पेरिस जाते हैं तो उनके मनमें इन सब विषयोंके 'माडर्न' कहलाने वाले अंगका ही आग्रह विशेष होता । लूव्रका संग्रहालय, वर्साईके महल, नोत्र दाम तथा अन्य गिरजाघर आदि भी वे देखते हैं, पर उनका उत्साह विशेष तथा 'माडर्न' कलाकी ओर ही होता है। शायद इसीलिए कि लौटकर अभिनवतम प्रवृत्तियोंकी चर्चा करना अधिक प्रभावशाली हो सकता है और साथ ही उस क्षेत्रमें कम पूँजी लेकर भी अधिक दूर जाया जा सकता है—दस-पाँच नये नाम ले देनेसे ही लोग रोबमें आ सकते हैं और मतभेदके लिए तो इतनी गुंजाइश है कि आप कोई भी राय दे दीजिए, उसे अन्तिम राय नहीं कहा जा सकता! और तो और, भारतसे कितने चित्रकार ऐसे गये हैं जो जब गये तब अच्छे-खासे कलाकार थे किन्तु जब लौटे तब केवल माडर्न रह गये।

माडर्नके प्रति ऐसा भाव प्रकट करना जिसे अवज्ञा समझा जा सकता है अपनेको जोखममें डालना है। इसलिए इस पचड़ेको छोड़ अपनी ही बात कहूँ। मुझे उस दूसरे पेरिसमें जानेका अवसर भी मिला जो एक दूसरे फ्रांसकी राजधानी और वहाँसे परिचय-पत्र लेकर मैं इस दूसरे फ्रांसमें जहाँ-तहाँ प्रवेश पा सका।

१ कई दिनकी तपन और उमसके बाद भूमध्य-सागरमें प्रवेश करके ठंडी हवाके झोंकोंसे मर्माहत होकर और फेनोच्छ्वसित प्रगाढ़ नीलिमाको देखकर

रोमांचित होता हुआ मारसेल्स उतरा तो अप्रत्याशित ठंड थी। ज्ञात हुआ कि पास ही के प्रदेशमें असाधारण शीतकी लहर आनेसे बर्फ पड़ी है और इसीलिए वहां भी इतनी ठण्ड है। क्या ठण्ड है इसका कारण जान लेनेसे ही तो वह कम नहीं हो जाती पर दक्षिणी फ्रांसका सागर-तट और उसके निकटवर्ती चैनाली द्वीप इतने सुन्दर हैं कि उन्हें देखते रहनेके लिए सुनसान डेकपर कटखनी हवामें ठिठुरते खड़े रहना भी स्वीकार था। यों भूमध्य सागरके पानीको ही घण्टों खड़े-खड़े देखा जा सकता है किन्तु मेरा जहाज जिस राहसे गया था उसपर और भी कई भव्य दृश्य देखनेको मिल गये। भोरके समय क्रीटी द्वीपका चट्टानी अन्तरीप लियोनोस जिसके आस-पास छायी हुई धुंधमें सूर्योदयकी किरणें मानो सोनेके जालमें खो गयी थीं। मसीनाके जलडमरूमध्य दोनों ओर इटली और सिसलीके तट रखाए और दूर एटना ज्वालामुखीके हिम-मण्डित शिखरकी आकाशमें निराधार टंगी हुई रेखा। सिल्ला और करिब्डिसकी चट्टानें और भंवर जिनके लुभावने आकर्षणसे यूलिसीज़के बच निकलनेकी कथा अनेक बार पढ़ी है। लिपारी और उसके आस-पासका द्वीप-समूह और सागरमें छितराये हुए शिला खण्ड जिनमेंसे प्रत्येकसे सम्बद्ध पुराण-गाथाका स्मरण उन्हें नया आकर्षण देता रहा।[1] स्ट्राम्बोलीका ज्वालामुखी पर्वत-शीर्ष जो अनवरत धुआं उगल रहा था और जिसका एक पार्श्व शिखरसे सागर-तल तक लावा और राखसे ढका था तो दूसरी ओर हरे भरे उद्यान और समृद्धिशील गांव चमक रहे

१—वल्कन द्वीपमें विश्वकर्मा वल्कनकी भट्ठी थी जिसमें ज्यूपिटरके वज्र ढलते थे। इयोलियन द्वीपमें इयोलसने हवाओंको बन्दी कर रखा था। तूफानी हवाओंका यह राजा बहुत बड़ा ज्योतिर्विद् था और नाविकोंके पालका आविष्कारक भी। थैलेमें बन्द करके रखी हुई हवाएं उसने यूलिसीज़को भेंट दे दीं थीं जिससे उसकी यात्रा निर्विघ्न समाप्त हो सके। यूलिसीज़के साथियोंने मनमानी कर उन्हें मुक्त कर दिया।

थे फिर मारसेल्सके बिल्कुल निकटके तटवर्ती द्वीप जिनमें कुछका तो नाम नहीं जान सका और कुछ पहलेसे परिचित थे—जिनमें मुख्य था इफ द्वीप जिसपर स्थित दुर्गमें ड्यमाकी कथाके नायक काउण्ट माण्टक्रिस्टोको बन्दी करके रखा गया था। फिर स्वय मारसेल्स बन्दरगाहकी सरक्षिका देवी मरियमकी प्रतिमा दूरसे ही दीख रही थी

दक्षिणी लोगोंके स्वभावमें शायद सूर्यका अश अधिक होता है इसी लिए वे प्राय परिहास प्रिय होते हैं। इसीलिए शायद उनके परिहासमें क्षार या चरपराहट अधिक होती है। मारसेल्सकी परिहासकी विशिष्ट परम्परा है जिसके कुछ उदाहरण जहाजसे उतरकर बन्दरगाहके कस्टम आदिके नाना उपचार पूरे करके स्टेशन पहुँचने तक ही मिल गये।

मारसेल्ससे कई तेज गाडियाँ परिससे और दौडती हैं और लगभग आठ घण्टेमें वहाँ पहुँचा देती है। रेलकी पटरी लियों तक रोन नदीके साथ साथ जाती है। रोन मानो दक्षिणी फ्रासके अत्यन्त सुन्दर प्रदेशकी मेखला है—जनेवाकी झीलसे निकलकर ही वह फ्रासीसी प्रदेशमें प्रवेश करता है और यहाँसे बहुविध प्राकृतिक सौन्दर्यका मुजरा लेती हुई चलती है। रोन का तट अपने अगूरके बगीचोंके लिए भी प्रसिद्ध है—अर्थात अपनी शराबों के लिए भी। घूमन्ती साझमें उत्तरसे आनेवालोंका ताता रोनके किनारे किनारे उतरता हुआ दक्षिणी फ्रासके सागरकी ओर चला जाता है या फ्रासीसी आल्प-श्रेणीके छोटे-छोटे गाँवोंकी ओर मुड जाता है कुछ लोग किसी ओर भी न मुडकर रोनके किनारे ही कोई मनचीता कोना ढूढ लेते है। इम्प्रेशनिस्ट चित्रकारोंने इस प्रदेशके सौन्दर्य और वर्णछटाकी ख्याति दूर-दूर तक फैला दी है। आर्ल प्रदेशके खेतों और वाटिकाओंके आस-पास फलोंके बगीचोंके वान गोग्र द्वारा बनाये गये चित्र मेरे वर्षोंके परिचित हैं और उनका स्मरण भी धूप-नहाये प्रसन्न वर्णोंको आँखोंके सामने ले आता है

लियोंका प्राचीन ऐतिहासिक नगर भी सुन्दर है। यह रोन और

साओन नदियोंका संगम भी है। यहाँसे प्राकृतिक दृश्य कुछ बदलने लगते हैं, किन्तु अंगूरकी बेलका महत्त्व इस प्रदेशमें भी कम नहीं होता—बोजोले और बरगण्डीकी शराबें अपने अपने प्रशंसक हैं।

मैं यद्यपि लियोंसे सीधा पेरिस ही गया था, तथापि जो स्थल—या जैसे स्थल—मेरी इस यात्राके लक्ष्य थे, वे पेरिससे दक्षिणमें ही पड़ते हैं और पेरिससे आवश्यक सूचनाएँ तथा परिचय-पत्र लेकर मैं फिर इसी दक्षिणी प्रदेशमें लौट आया। इसलिए इस यात्रा-वर्णनको पेरिस तक ले जाना आवश्यक नहीं है। आसेयरसे शाखा-पटरीपर एक ट्रामनुमा गाड़ीमें बैठकर योन नदीके किनारे किनारे एवलोन गया, फिर एक छोटी-सी देहाती बसमें फलोंकी पेटियों, मछलीकी डलियों और कीट-नाशक दवाके कनस्तरोंके साथ लदकर, लुढ़कता-पुढ़कता और अन्य सवारियोंके साथ ड्राइवरकी बिलकुल स्वरहीन ठिठोली सुनता हुआ दोपहरको सड़कके किनारे एक छोटे गिरजाघरके पास उतर गया। गन्तव्य यहाँसे लगभग चार किलोमीटर (ढाई मील) की दूरी पर था। सामानका झोला कन्धेपर उठाया और हल्की-सी फुहारकी परवाह न करता हुआ चल पड़ा।

प्रायः डेढ़ सौ साल पहले एक स्वप्न द्वारा प्रेरित पेयर मुआर इस वन प्रदेशमें बढ़ते हुए एक छोटे-से झरनेके किनारे पहुँचे थे और अपने हाथोंसे पत्थर बीन कर उन्होंने एक छोटी-सी कुटिया बनायी थी। यह कुटिया अब 'पेयर मुआरकी कुटिया' नामसे प्रसिद्ध है; शायद अति विश्वासी लोग यह भी मानते हों कि वह एकान्त साधक इसी कुटियामें निवास भी करता था। किन्तु वास्तवमें उस कुटियामें उन्होंने कभी दिनमें विश्राम भले ही कर लिया हो, रहनेका स्थान उसमें नहीं है। जो हो, इसी कुटियाके आस-पास और झरनेके किनारे क्रमशः एक-एक पत्थर जोड़कर एक छोटा मठ

बनाया गया, जिसमें बनडिक्टी सम्प्रदायके कुछ ईसाई संन्यासी (मंक) रहने लगे। अनन्तर उसके साथ और इमारतें जुड़ती गयीं और कुछ वर्ष पहले एक नया मठ तथा अतिथिशाला, एक मुद्रणालय और कुछ वर्करूम भी बन गये। नये मठके कलापूर्ण प्रवेश-द्वारके किवाड़पर मानो मौनका सूचन करती हुई ईसाकी काष्ठ-मूर्ति है। इसी मूर्तिका आदेश चुपचाप प्रविष्ट होकर मैंने एक खिड़कीसे अपना परिचय-पत्र भीतर बैठे हुए संन्यासीकी ओर बढ़ा दिया। थोड़ी देर बाद एक और संन्यासी ड्योढ़ीमें आ गये और उनके पीछे उनका अनुसरण करता हुआ, दो लम्बे गलियारे पार करके और एक सीढ़ी उतरकर, मैं नये मठकी उस एकान्त कोठरीमें पहुँच गया जो अब इस प्रवासकी अवधि-पर्यन्त मेरी होगी।

कोठरीमें एक ओर बिछौना है, दूसरी ओर एक बहुत छोटी मेज़पर बाइबिल और दो एक प्रार्थना ग्रन्थ रखे हैं, कुर्सी इतनी छोटी है कि उसे स्टूल भी कहूँ तो अवज्ञा न होगी। खिड़कीके पास छोटी बेसिनी और पानीका कलश है। खिड़कीसे बाहर मठका भीतरी आँगन दीखता है, जिसके पार इसी खिड़की जैसी और खिड़कियोंसे अनुमान हो सकता है कि उधर भी कोठरियोंकी पंक्ति होगी। तीसरी ओर कुछ बड़ी खिड़कियाँ हैं, वह गलियारा है जिसमें एक रास्ता बाहर होकर गिरजाघरको और उसमें आगे पाठशालाको जाता है और दूसरा भण्डारघर, पुस्तकालय तथा प्रार्थना-कक्ष (चैपेल) के पाससे होता हुआ नीचे पाकशाला और भोजनालयको।

आँगनका चौथा पार्श्व दूर होनेके कारण पूरा नहीं दीखता, जितना दीखता है उसमें एक सपाट दीवारका अंश और एक बिना फाटककी मेहराब है, उसके आगे कुछ पेड़ दीखते हैं। यों उस तरफ मुद्रणालय और शिल्पकक्ष है।

अलग-अलग कमरोंको अलग-अलग नाम दिये गये हैं, लेकिन वास्तवमें सारी इमारत एक विशाल प्रार्थनागार है। कुल मिलाकर पाँच-छः घण्टे तो विधिवत् आह्निक-आरात्रिकमें बीत जाते हैं, किन्तु गिरजाघरमें बिताये हुए

इस समयके अलावा बाकी समयको भी भरसक आराधनाका ही रूप दिया जाता है। सम्भाषण सम्भाषण न्यूनतम होता है बल्कि लगभग नहीं होता शरीर-श्रम भी देवार्पित माना जाता है और भोजनके समय भी एक संन्यासी किसी धर्म ग्रन्थ अथवा उपदेश ग्रन्थसे पढ़कर कोई अंश सुनाता रहता है।

ईसाई-संन्यासियोंके अनेक सम्प्रदाय हैं। उनमेंसे कुछसे भारतका परिचय सदियोंसे रहा है। किन्तु जैसा वह परिचय रहा है उसका यह अनिवार्य परिणाम है कि इन सम्प्रदायोंका संन्यस्त पक्ष हमारे सामने नहीं आता बल्कि केवल प्रचार अथवा सामाजिक कर्मका पक्ष सामने आता है। हम मिशनरी ही जानते हैं संन्यासी नहीं जानते—यहाँ तक कि एक पढ़े लिखे और यूरोप घूमकर लौटे हुए भारतवासीने मुझसे अचम्भेसे पूछा था "अच्छा! यूरोपमें अब भी क्या मठ होते हैं?" मैं तो समझता था कि ये मध्य-युगकी बातें हैं!"

अन्य सम्प्रदायोंके संन्यासियोंकी भाँति ईसाई संन्यासियोंमें भी कुछ सम्प्रदाय सामाजिक कर्म अथवा समाज सेवापर बल देते हैं और कुछ दूसरे एकान्त साधनापर चिन्तनपर प्रार्थना अथवा स्तवनपर। सत्कर्म (गुड वर्क्स) ईसाई-मतका एक महत्त्वपूर्ण अंग है। हमारा सम्पर्क जिन सम्प्रदायोंसे रहा है उनका आग्रह सेवा-कर्म अथवा शिक्षा-वितरणपर ही रहा है। मिशन शब्दके अन्तर्गत ये दोनों आ जाते हैं यही भारतमें ईसाई मिशनों और मिशनरियोंकी मर्यादा है—उनके सम्प्रदायकी भी और उनके संगठन-जन्य दूषणोंकी भी।

बेनेडिक्टी सम्प्रदायमें आग्रह प्रार्थनापर है। एक प्रकारसे वह भारतीय चिन्ता धाराके अधिक निकट है वह सेवा द्वारा दूसरेके कल्याणकी अपेक्षा साधना द्वारा आत्मा-मुक्ति नहीं तो क्रमसे कम भगवत्कृपाकी आशा करता है। बेनेडिक्टी संन्यासी एक मिशनसे दूसरे मिशनमें नहीं भेजे जाते जो

जिस मठ अथवा संघमें दीक्षा लेता है वहींका हो जाता है और उसी समुदायमें जीवन बिता देता है।

पेयर मुबारकने क्यों यह स्थल चुना इसका इतिहास है। बल्कि स्थलका इतिहास पेयर मुबारकसे कहीं अधिक पुराना है। स्थानके नामसे मठका नाम 'पीएर क़िच वीर' है जिसका अर्थ है 'घूमनेवाला पत्थर'। यह नाम एक बहुत प्राचीन चट्टानका था जो ईसाइयतके प्रवेशके पहलेसे पवित्र समझी जाती थी। एक प्रस्तर-खण्डपर संतुलित यह शिला प्रकृतिका एक आश्चर्य तो थी ही, साथ ही धर्मके आनेसे पहले स्थानीय सर्वेश्वरवादी धर्मकी बलि-पीठिका भी थी। अब तो इस ऊपरली शिलाको सीमेंटसे पुष्ट करके इसके ऊपर मरियमकी मूर्ति स्थापित कर दी गयी है, किन्तु चट्टानपर अब भी छोटे छोटे कुण्ड और प्रणालियोंके अवशेष दीखते हैं जिनके बारेमें कहा जाता है कि बलि-पशुओंका रक्त इन्हींमें एकत्र होता या बहता था। इस बातकी सच्चाई जो भी हो, इसमें सन्देह नहीं कि यह स्थल और इसके आस-पासका वन प्रदेश पुराकालसे ही पवित्र माना जाता था। आज भी वनमें प्रवेश करते ही जो भय, विस्मय, शान्ति और श्रद्धाका भाव हठात् उन्मिल होता है, उसे आप चाहें तो पुराने संस्कारोंका प्रभाव कह लें, चाहे वातावरणमें बसे हुए देवोन्मुख भावोंका पुंज, चाहे केवल सभ्यताके बगुलेसे निकलकर प्रकृतिके क्रोडमें आनेका मुक्ति-बोध, पर इसमें सन्देह नहीं कि वनके बीच स्थित मठ तक पहुँचते-न-पहुँचते व्यक्तिका मन बरबस कुछ बदल जाता है। ईसाकी वह काष्ठ-मूर्ति उसमें केवल चौंकाती नहीं, बल्कि यात्राकी स्वाभाविक निष्पत्ति-सी लगती है—मानो उसके न होनेसे ही "चकित चौंक" जाता। या यह मूर्ति केवल एक प्रतीक है और मठके प्रवासका जो प्रभाव पड़ता है वह वहाँके जीवनकी सम्पूर्णताका ही है—उसके सम्पर्कमें आ जानेके बाद उस मूर्तिका प्रतीकत्व अपने स्वाभाविक स्तरपर आ जाता है—पर अन्ततोगत्वा द्वार है, देव-मन्दिर वह नहीं है। यों मन्दिर भी मन्दिर ही है, देवताका साक्षात् वहाँ नहीं हो सकता, अथवा

अगर यहाँ हो सकता है तो कहाँ नहीं हो सकता ? अनुकूलता यहाँ मिलती है पर अनुकूलता भी मूलतः अपने मनकी होती है।

प्राचीन सर्वेश्वरवादी इस भूमिपर ईसाई मठकी प्रतिष्ठा एक प्रकारसे बनडिक्टी सम्प्रदायके इतिहासका प्रतीक है। यूरोपमें मसीही धर्मके प्रसारका श्रेय मुख्यतया इसी सम्प्रदायको है। सन्त ग्रेगोरी और सन्त आगुस्टीन इसी सम्प्रदायके थे और बनडिक्टी मठोंसे ही धर्म प्रचार करनेके लिए बाहर गये थे। आगुस्टीनने इंग्लैण्डमें एक बनडिक्टी मठकी स्थापना की थी। सन्त बनडिक्टकी जन्मभूमि इटलीके बाहर यह पहला बनडिक्टी मठ था। बनडिक्टका जन्म पाँचवीं सदीके उत्तरार्द्धमें सन ४८०के लगभग मध्य इटलीके उम्ब्रिया प्रान्तके नुर्सियामें हुआ। उनके जीवन-वृत्तका जो कुछ पता लगता है सन्त ग्रेगोरीके लेखोंसे ही, किन्तु कोई कारण नहीं है कि उन्हें प्रामाणिक न माना जाय। पिताके द्वारा वह स्कूलमें पढ़नेके लिए भेजे गये किन्तु स्कूलके दुराचार-पूर्ण वातावरणसे खिन्न होकर वह किशोरावस्थामें—अथवा प्रारम्भिक युवावस्थामें—विद्यालय छोड़कर वनमें भटकने लगे। इसी प्रकार भटकते हुए वह आब्रुत्सी पर्वत-श्रेणीमें एक स्थलपर पहुँचे जहाँ एक छोटी झीलके एक किनारेपर सम्राट नीरोके महलोंके खण्डहर थे और दूसरे किनारेपर कुछ गुफाएँ। गुफाओंकी एक कन्दरामें तीन वर्ष रहकर वह एकान्त चिन्तन करते रहे। इस गुफामें उनके प्रवासका पता केवल उसी प्रदेशके एक मठके एक संन्यासीको था जिसने उन्हें एक पुराना चोगा दिया था और जो समय-समयपर कुछ खाद्य-सामग्री भी गुफामें रख जाता था।

क्रमशः उस एकान्त साधकका पता लोगोंको लगने लगा और उसका नाम जहाँ-तहाँ सम्मानपूर्वक लिया जाने लगा। प्रदेशके एक मठके संन्यासी बनडिक्टको आग्रहपूर्वक अपना मुखिया बनाकर ले गये किन्तु जब वन

डिक्टने मठके भ्रष्ट जीवनका सुधार करनेका प्रयत्न किया तब उन्हें विष दे दिया गया। वह फिर गुफामें लौट आये और यहीं रहते हुए उन्होंने आस पासकी पहाड़ियोंमें कई छोटे छोटे मठ स्थापित किये जिनका निर्देशन वह अपने स्थानसे ही करते रहे। यह स्थान रोमसे केवल चालीस मील दूर था। रोमके अच्छे घरानोंके बालक उनके निर्देशनमें शिक्षा पानेके लिए इन मठोंमें भेजे जाने लगे। दूसरे मठोंके विरोध और षड्यन्त्रोंसे विरक्त होकर बेनडिक्टने फिर वह स्थान छोड़ दिया और रोम तथा नेपोलीके अध-बीच कसीनो पर्वतके शिखरपर आसन जमाया। मांटे कसीनोका यह मठ ही सारे पश्चिमी यूरोपके लिए ईसाइयतका ही नहीं, उदार आध्यात्मिक जीवनका प्रेरणा-स्रोत रहा।[1]

बेनडिक्टी सम्प्रदायकी जीवन-चर्या पूर्वीय चर्याओंकी तुलनामें तो विशेष कड़ी नहीं ही थी, यों भी उसकी दृष्टि उदार थी और अनावश्यक आत्म-पीडनके लिए उसमें स्थान नहीं था यद्यपि सरल जीवनपर सच्चा आग्रह था। शरीर-श्रमके सिद्धान्तमें भी इसकी गुंजाइश रखी गयी थी कि मठके अथवा स्थानीय जीवनके संदर्भमें वह उपयोगी हो सके। उदाहरणके लिए पिएर कि-वीरके मठमें श्रम-दानके अधीन जहाँ खेतीका श्रम आता है वहीं काठ-खुदाई, चित्रकारी, मूर्तिकला और छपाई भी श्रम-दानके रूप हैं। मठका मुद्रणालय धार्मिक कलाका मुद्रण और प्रकाशन करता है। सोलेम्स मठने धार्मिक संगीतपर विशेष शोध-कार्य किया है। वास्तुकला और शिल्पको भी कई मठोंमें श्रमके कार्यक्रममें स्थान दिया गया है।

बेनडिक्टके अनुशासनमें दो और विशेषताएँ थीं। उनकी व्यवस्थामें इस बातका ध्यान रखा गया था कि एकान्त साधकोंमें आत्म-पीडनकी जो होड़

१—पिछले महायुद्धमें मोंट कसीनो घमासान लड़ाईका क्षेत्र रहा और लगभग ध्वस्त हो गया—नपोलीसे बढ़नेवाली मित्र राष्ट्र सेनाओंका मार्ग वहीं था। मठका पुनर्निर्माण हो गया है।

सी लग जाती है— जिसके कारण तपस्याका उद्देश्य तो ओझल हो जाता है और केवल कष्ट सहनकी प्रतिस्पर्द्धा ही गौरवकी बात बन जाती है—उसे प्रश्रय न दिया जावे। दूसरी ओर इस बातका भी ध्यान रखा गया था कि मठोंकी अथवा व्यक्तिगत संन्यासियोंकी, सत्ता ग्रहण करनेकी प्रवृत्तिको प्रोत्साहन न मिले। प्रत्येक मठ एक स्वायत्त समाज था। आगे चलकर जब ऐसे अनेक समाज हो गये तब भी उनके परस्पर सहयोगका स्वायत्त रखनेका ही आग्रह रहा और बीच-बीचमें केन्द्रीकरणकी जो चेष्टाएं हुई उन्हें पनपने नहीं दिया गया। मठके प्रधानके लिए बेनडिक्टने जो नियम बनाये थे उनकी उदार दृष्टि (जिसे आज कदाचित मानवधर्मी प्रवृत्ति कहा जायगा) उदाहरण है। प्रधान सब सम्मतिसे चुना जाता है और प्रत्येक महत्त्वपूर्ण प्रश्नपर सभीकी राय लेता है। उसका निर्णय अंतिम है और अनिवार्यतः सबको मानना होता है किन्तु वह ऐसा नहीं होना चाहिए कि किसीको भी उचित आपत्तिका अवसर मिले या अवसाद हो।

किन्तु ईसाई मठवादका इतिहासमें जाना यहाँ प्रयोजनीय नहीं है। विभिन्न युगोंमें मठोंकी विभिन्न प्रकारकी विकृतियों और सुधारकी चेष्टाओंका विवेचन भी यहाँ अप्रासंगिक होगा। एक समयमें विभिन्न प्रकारके दमन और क्रांतियोंके प्रभावने उन्हें लगभग निःशेष कर दिया था किन्तु उनकी मूल प्रेरणाओंको आन्तरिक शक्तिने समाज-जीवनमें फिर उनके लिए स्थान बना लिया। आज वे राजनीतिक जीवन और राष्ट्रीय सत्ताओंके संघर्षमें पहलेका स्थान नहीं रखते हैं और यह उचित ही है कि न रखें। सामाजिक जीवन में भी उनका वैसा स्थान नहीं है और यह भी स्वाभाविक ही है जब समाज-कल्याणको एक लौकिक उद्देश्य मानकर राजकीय नागरिक अथवा सार्वजनिक संस्थाओंको सौंप दिया गया है। किन्तु इन सब क्षेत्रोंमें हम जानते हैं कि मनुष्य यदि है कि वे अपने क्षेत्रमें मर्यादित हो गये हैं। यह क्षेत्र यदि स्थूलतर और गौण है तो किसी छिछले अर्थमें नहीं बल्कि इसी अर्थमें कि वह आभ्यन्तर है आध्यात्मिक है—उसी अर्थमें जिसमें कि धर्म

भी गोपन होता है और ईश्वर स्वयं धर्मका प्रकाशक न होकर गोप्ता हो जाता है—

त्वमव्ययः शाश्वतधर्मगोप्ता
सनातनस्त्वं पुरुषो मतो मे ।
—श्रीमद्भगवद्गीता

फिर चित्र-और । वह पत्थर जो घूमता है । चक्रमित शिला । चक्रान्त शिला । चक्रान्त जो संक्रमण करके फिर लौट लौटकर आता है वह कालके अतिरिक्त क्या है ? समयकी शिला

समय की शिला पर मधुर चित्र कितने,
किसी ने बनाये किसी ने मिटाये ।
—शम्भूनाथ सिंह

चक्रान्त शिला समयकी शिला युगोंके आवर्तनका क्रम जिसपर धर्म सिद्धान्तकी प्रतिमा अडिग खड़ी है । धर्म चालित है । इसीलिए बुद्धने धर्मके शाश्वत भाव और चक्रमणके काल-सापेक्ष भावको एक करके धर्म-चक्रकी उद्भावना की थी—जो घूमता भी है और स्थिर भी है यहाँ घूमती हुई शिलापर सनातन श्रद्धाकी प्रतिमा है—रूपक सांग है और प्रतीक अभिप्राय भरा सिंहत्रयीके ऊपर धर्म-चक्रकी प्रतिष्ठा की गयी तो उसका भी प्रतीकत्व सम्पूर्ण सार्थक था—ऐहिक सत्ताको धर्म सिद्धान्तके परतन्त्रमें ही आश्रय दिया गया था । (आज हम सिंहत्रयीके अधीन तो हैं पर सिंहत्रयीके ऊपरका वह धर्म चक्र कहाँ छिप गया है न जाने ! इस खण्डित प्रतीकसे शासित होकर हम क्या वस्तुतः कुछ सान्त्वना पा सकते हैं जिसकी भित्तिपर स्वयं सिंहत्रयी खड़ी है—कमसे कम जो कि ऋतका प्रतीक है ?)

इस प्रकार मनका नाम जो वास्तवमें वक्र स्थानका नाम है एक प्रतीकार्थ ग्रहण करके मेरे सम्मुख आता है और प्रतीककी सत्ता निरन्तर

नये-नये बिम्ब मूर्त करती रहती है। मठके आस-पासकी वन भूमिमें अकेला घूमता हूं तो ये बिम्ब उस अकेलेपनको मर्यादित किये रहते हैं। कोठरीमें अकेला बैठता हूं तो नीरव वायु मण्डलमें वे मंडराते रहते हैं। कुछ लिखता हूं तो उसमें उनका स्वर बोलने लगता है। उसे लिखे हुएको कभी झरने के पास बैठकर मानस आवृत्ति करता हूं तो उनके स्वर झरनेकी कल-कलमें उसे मुखर भावसे दोहरा जाते हैं। कभी 'गायन', यह लिखा हुआ भी एकाग्र भाव

स्थविरकी ओरसे एक अंग्रेजी भाषी संन्यासीको मुझसे बातचीत करने की अनुमति है। कोई जिज्ञासा होनेपर उन्हें सूचित किया जा सकता है और उसी दिन या अगले दिन उनसे बात चीत हो सकती है—अपराह्न तीनसे चार तकका समय बंधा हुआ है। लगभग प्रतिदिन उनसे बातें होती हैं—क्योंकि जिज्ञासाका अन्त कहां है? और उन बातोंका आधार प्रायः मानस आकाशमें मंडरानेवाले ये बिम्ब और प्रतीक होते हैं।

मसीही चर्च क्यों ईसाकी ऐतिहासिकतापर इतना बल देती है? ईसा ईश्वर-पुत्र है, स्वयं ईश्वर है—जो ये दो बातें मान सकते हैं उनको यह मनवाना क्यों जरूरी है कि वह एक वास्तविक ऐतिहासिक मानव पुरुष भी रहा? फिर यह भी कि वह ऐतिहासिक मानव भी उसी अर्थमें एक और अद्वितीय रहा जिसमें ईश्वर एक और अद्वितीय है—यानी वैसा पुरुष न कभी पहले हुआ और न दुबारा हो सकता है? क्या ऐतिहासिकता का यह आग्रह ही ईसाके सनातन अथवा व्यापक (कॉस्मिक) रूपका खण्डन नहीं करता?

क्या पश्चिमी मानस या भी काल्की भावनासे आक्रान्त नहीं है? जिसे वह अपना ऐतिहासिक चेतना कहता है—और जिसके निःसन्देह बहुत गुण भी हैं—और जिसकी अनुपस्थितिको वह पूर्वीय मानस विशेष तथा भारतीय मानसका बहुत बड़ा दोष बताता है—क्या वह ऐतिहासिक चेतना स्वयं एक व्यापकतर चेतनाका खण्डन नहीं है?

ऐतिहासिक चेतना पूर्वापरका अनिवार्य सम्बन्ध जोड़ती है, वर्तमानको अतीत और भविष्यत्‌के साथ जोड़कर जीवनको भय और आकांक्षाके साथ बाँध देती है, होनेको 'होना चाहिए' तथा 'न होना चाहिए' के अधीन कर देती है—और इस प्रकार जो अमर है उसे नश्वरताका बन्दी बना देती है। दौड़ता हुआ अंगुलिमाल क्यों नहीं निश्चल खड़े तथागतको पकड़ पा रहा था—केवल मात्र इसीलिए तो कि वह दौड़ रहा था, पीछा कर रहा था, कालके वश होकर उसे पाना चाह रहा था जो कालजित है।

पाप क्या है? सनातन पाप क्या है? क्या मानवका होना ही उसका मौलिक पाप है? एकके बलिदानसे दूसरेके पाप धुल सकते हैं यह मान सकना ऐसा कठिन नहीं है। किन्तु ईसाके बलिदानने अगर समूची मानव जातिके पाप अपने ऊपर ओढ़ लिये तो उनका क्या जो ईसासे पहले हुए? अगर इस बलिदानका प्रभाव न केवल परवर्ती अनन्त कालतकके लिए है बल्कि भिन्न धर्मी लोगोंके लिए भी ईश्वरकी कृपाका माध्यम बन सकता है और उसके साथ ही पूर्ववर्तियोंको भी पाप मुक्त कर सकता है तो फिर ऐतिहासिकताका सिद्धान्त क्या हुआ? यह नहीं कि अतीतकी ओर जानेवाले प्रभावको मानना अपने आपमें इतना कठिन है, किन्तु यह स्पष्ट है कि उसकी तर्क-संगति ऐतिहासिक तर्क-संगति नहीं है, बल्कि इन दोनोंमें अनिवार्य विरोध है। अगर कारण कार्य सम्बन्ध और पूर्वापर सम्बन्ध अलग नहीं किये जा सकते (और यही तो ऐतिहासिकताकी प्रतिज्ञा है) तो फिर यह उलटा प्रभाव कैसे माना जा सकता है? और अगर उसे मानना है तो ऐतिहासिकताका आग्रह क्या नहीं छोड़ा जा सकता है?

इन सब प्रश्नोंको लेकर बहुत बातें होती रहीं। किसी निश्चयात्मक परिणामपर कैसे पहुँचा जा सकता था—श्रद्धाके निश्चयात्मक परिणाम तर्कके निश्चयात्मक परिणामसे अलग होते हैं, इतना ही नहीं, अलग-अलग श्रद्धाओंके अपने अलग-अलग निश्चय भी होते हैं। बल्कि वास्तवमें सारी बहस ही यह नहीं थी कि श्रद्धाके निश्चयोंका क्या तर्कके निश्चय

माननेका आग्रह किया जाये ? किन्तु विचार विनिमय अत्यन्त सहज और निर्बाध भावसे होता रहा। मुझे उसमें एक भिन्न प्रकारकी आस्था और संस्कारकी अन्तरंग झांकी मिली और मैं समझता हूँ कि पेयर जवियरका मनोभाव भी कुछ ऐसा ही रहा होगा—नहीं तो विदा देते समय जिस भावसे उन्होंने कहा 'प्रे फार मी' (मेरे लिए प्रार्थना करना) वह शिष्टाचारके नाते आवश्यक नहीं था—वैसा और बहुत-कुछ, और सच्चे भावसे कहा जा चुका था। मैं स्थविर पेयर ल्गासीड्स ही उस ढंगमें भेंट होती और मेरी जिज्ञासा बढ़िको उनका आशीर्वाद मिलता।

वास्तवमें इस समूचे प्रसंगका स्थान एक यात्रा-वृत्तान्तमें नहीं है। न ऐसे विषयोंकी अधिक चर्चा करके मैं उस दिव्य मौनका अपमान करना चाहता हूँ जो पिएर क्रिवारमें मुझे मिला था—

पर सबसे अधिक मैं
घनके सन्नाटेके साथ मौन हूँ मौन हूँ—
क्योंकि वही मुझे बतलाता है कि मैं कौन हूँ
जोड़ता है मुझको विराटसे
जो मौन अपरिवर्त है अपौरुषेय है
जो सबको समोता है।

किन्तु परिणाम और इस प्रकार सामने एक चित्रको सही परिप्रेक्ष्य देनेके लिए विशालतर भूमिका एक दूसरा चित्र देना आवश्यक था। प्रचलित चित्र बहुत मनमौजी है और जो चित्र उसकी ओट हो गया है वह था भी बड़ी सूक्ष्म रेखाओंसे खिंचा हुआ है इसलिए उसकी ओर थोड़ी देर स्थिर भाव और एकाग्र दृष्टि रखना वांछित था।

पिएर क्रिवारसे लौटकर फिर पॉल मासिनियोंसे मिला—मेरे जानसे

पहले भी उनसे मिलकर गया था। यह ईसाई सूफी गेटी स्यामी अध्ययन तथा रहस्यवादी अभी वहका नवयुवक एक ऐसा आश्चर्यमय व्यक्ति है कि उसके बारेमें कोई भी बात बिना विरोधाभासके नहीं कही जा सकती—उपयुक्त वर्णनमें भी विरोधी विशेषणोंके जोड़ोंसे ही यह बात प्रकट हो जानी चाहिए। मासियो अरबीके विद्वान हैं और अरबके सन्तों तथा रहस्यवादी कवियोंपर उन्होंने विशेष काम किया है यह तो पहलेसे जानता था। यह भी जानता था कि सत्याग्रह सिद्धान्तमें उनका विश्वास है और वह उसका प्रयोग भी कर रहे हैं। (पहली बार मिला तब वह अभी जेलसे छूटकर आये थे दूसरी बार मिला तब तक वह और एक बार जेल हो आये थे। सत्याग्रहका लक्ष्य था नजरबन्दीके कानूनका विरोध। अल्जीरियाके स्वाधीनता आन्दोलन प्रश्नको विशेष महत्त्व दे दिया है।) किन्तु कौन क्या करता है यह जानना एक बात है और कौन क्या है यह जानना बिल्कुल दूसरी बात। मासियोके बारेमें यह कहना ठीक होगा कि वह व्यक्ति क्या है यह जाननेके लिए यह जानना अनिवार्य है कि उसने क्या क्या किया है पर ऐसा इसीलिए कि वह सब जाननेके बाद ही यह जाना जा सकता है कि जो कुछ उसने किया है (और वह कुछ कम रंगीन साहसिक और आश्चर्यमय नहीं है!) उससे उसका कुछ भी अनुमान नहीं हो सकता जो वह है—क्योंकि वह उससे अधिक रंगीन साहसिक और आश्चर्यमय है! यह भी उन विरोधमूलक बातोंमेंसे एक है जो मासियोके सन्दर्भमें अनिवार्य हो जाती हैं।

औरोंसे भी मिला जिनके बारेमें लिखा जा सकता है। किन्तु शायद इन सब बातोंके लिए भी यह उपयुक्त स्थान या अवसर नहीं है। अन्तमें उस आशीर्वादका उल्लेख कर देना चाहता हूँ जो चलते समय मासियोसे मिला—विशेषतया इसलिए कि पेरिस एक अर्थमें दुनियाका सबसे अकेला शहर है। मासियोने जब कहा मैं तुम्हारे लिए आत्माके इसी अकेलेपनकी कामना करता हूँ— तब उनका लक्ष्य उस अकेलेपनकी ओर नहीं

था जो पारस दे सकता है और जो मनुष्यको कंगाल बना देता है। मैं यह भी जानता हूँ कि उस समय उन्होंने अगर कंगालीकी भी बात की होती तो वह उस मोहताज अवस्थाकी बात न होती जो इनसानके वेश (ईश्वर-पुत्र) मनुष्यको मारती है बल्कि उस निःस्वताकी जिसका गान रहस्यवादियोंने किया है और जिसके बारेमें बाइबिलमें भी लिखा है "ब्लेसेड आर द पुअर इन स्पिरिट फार देयर्स इज द किंगडम आफ हेवन।" उनके आशीर्वादसे वह अकेलापन और वह कंगाली मुझे मिल जाय तब तो मैं धन्य हुआ, कृती हुआ।

हालैंड   एक पवन चक्की

[सरकारी फोटो]



हालैंड   राजधानी का सागर-तट—स्खेवनिङ्गेन्

या जो परिस दे सकता ह और जो मनुष्यको कगाल बना देता ह। मैं यह भी जानता हूँ कि उस समय उन्होंने अगर कंगालीकी भी बात की होती तो वह उस मोहताज अवस्थाकी बात न होती जो इनसानके बेटे (ईश्वर-पुत्र) मनुष्यको मारती ह बल्कि उस निःस्वनाको जिसका गान रहस्यवादियोंने किया ह और जिसके बारेमे बाइबिलमें भी लिखा ह ब्लेसेड आर द पुअर इन स्पिरिट फार देअर इज द किंगडम आफ हेवन। उनके आशीर्वादसे वह अकेलापन और वह कगाली मुझे मिल जाये तब तो मै धन्य हुआ कृती हुआ



था जो परिस दे सकता ह और जो मनुष्यको कगाल बना देता ह। मैं यह भी जानता हूँ कि उस समय उहान अगर कंगालीको भी बात की होनी तो वह उस मोहताज अवस्थाकी बात न होती जो इनसानके बेट (ईश्वर-पुत्र) मनुष्यको मारती ह बल्कि उस नि ष्कनाकी जिसका गान रहस्यवादियान किया ह और जिसके बारम बाइबिलमें भी लिखा ह ब्लेसेड आर द पअर इन स्पिरिट फार देअस इज द किंगडम आफ हवन। उनके आशीर्वादसे वह अकेलापन और वह कगाली मुझ मिल जाय तब तो मैं धन्य हुआ कृती हुआ



था जो परिस दे सकता है और जो मनुष्यको कंगाल बना देता है। मैं यह भी जानता हूँ कि उस समय उन्होंने अगर कंगालीकी भी बात की होती तो वह उस मोहताज अवस्थाकी बात न होती जो इनसानके बेटे (ईश्वर-पुत्र) मनुष्यको मारती है बल्कि उस निःस्वताकी जिसका गान रहस्यवादियोंने किया है और जिसके बारेमें बाइबिलमें भी लिखा है "ब्लेसेड आर द पुअर इन स्पिरिट फार देअर्स इज द किंगडम आफ हेवन।" उनके आशीर्वादसे वह अकेलापन और वह कंगाली मुझे मिल जाये तब तो मैं धन्य हुआ, कृती हुआ।

हालैंड एक पवन चक्की [सरकारी फोटो]





हालैंड राजधानीका सागर-तट—स्केवनिङेन्

एम्स्टर्डामकी एक नहर

हालैंड स्खेनिन्जनका 'स्वास्थ्य-भवन

बालूकी भीतपर

समुद्री मिट्टी, नदीकी मिट्टी और बालू और हाँ कुछ नरसलके गट्ठे—इनसे देश बनाया जा सकता है या नहीं, यह सवाल पूछा जानेपर बहुतसे लोग चकरा जायँगे। लेकिन हालैंड—या उसका उसका सही नाम दें तो नीदरलैंड्स (नीचा देश—अर्थात्)—इन्हीं पदार्थोंसे बनाया गया देश है। और बना हुआ नहीं, बनाया गया कहना ही सार्थक है, क्योंकि वास्तवमें उसका बहुत बड़ा अंश इन्हीं तत्त्वोंके उपयोगसे मानव द्वारा बनाया गया है, समुद्र-तलवर्ती या जलमग्न प्रदेशको बाँध-बाँधकर और पानी उलीचकर खेती-बारी और बसाईके योग्य बनाया गया है। और यह काम एक बार करके समाप्त कर लिया गया हो ऐसा नहीं है, जो बनाया गया है उसे बनाये रखनेके लिए इस जातिको अविराम परिश्रम करना पड़ता है और यह जाति-व्यापी उद्योग इस जीवन, इस समाज संगठन और इस व्यापार-व्यवसायकी बुनियाद है।

हालैंड बहुत बड़ा देश नहीं है—हमारे देशके एक जिलेके बराबर उसका प्रसार होगा—लेकिन समुद्रके साथ शताब्दियों लम्बे संघर्षमें उसकी भूमिको जो रूप और उसके निवासियोंको जो चरित्र मिला है दोनों ही उल्लेखनीय हैं और यूरोपके इतिहास और जीवनमें अपना विशिष्ट स्थान रखते हैं। हालैंडके प्रदेशका ** प्रतिशत भाग ऐसा है जिसकी समुद्र-तलसे ऊँचाई ५ मीटरसे कम है और इसका बहुत बड़ा भाग समुद्रकी सतहसे उतना ही नीचा है। उसके नगर ठोस जमीन पर नहीं, समुद्री बालूमें जमाये गये लकड़ीके खम्भोंकी बुनियादपर खड़े हैं जिसका उत्तम उदाहरण एम्स्टर्डामका सुन्दर और प्राचीन नगर है। और उसके हरे भरे वन भी बालूपर पोसकर

जमायी गयी मिट्टीकी उपज है। बालूकी भीत क्षण-भंगुरताके लिए प्रयोग है, लेकिन बालूकी भित्तिपर खड़ा यह देश आज भी दृढ़ विश्वासके साथ भविष्यकी ओर देख रहा है और उसका अतीत तो धैर्य, साहस और वीरताके उदाहरणोंसे भरा पड़ा है। यूरोपके अन्य देशोंकी भाँति इसने भी अनेक बार विजय और पराजयके दृश्य देखे, आक्रमणकारी सेनाओंके और आततायी विदेशियोंके अत्याचार सहे और स्वयं भी स्थल और जल सेनाएँ बाहर भेजीं, युद्ध किये, उपनिवेश जीते और साम्राज्य बसाये। ये सब बातें आयी-गयी हो गयीं, क्योंकि स्वातन्त्र्य प्रेम मानवके स्वभावमें निहित है और कोई भी अत्याचारी व्यवस्था वह चिर-कालके लिए नहीं स्वीकार कर सकता है, पर उसके नागरिकों और उसके नागरिकोंने धैर्य और साहस और चरित्र गठनकी जो परम्पराएँ गढ़ी हैं, वे स्मरणीय हैं। इस दृष्टिसे इंग्लैंड और हालैंडका जीवन-इतिहास प्रायः समान्तर चलता है। यह समानता आकस्मिक नहीं है। सागरसे दोनोंका सम्बन्ध एक-सा रहा है और इस सम्बन्धके सहारे ही उनके चरित्र, उनकी संस्कृति और उनके इतिहासको समझा जा सकता है।

मैंने हालैंडमें उत्तरकी ओरसे विमान मार्गसे प्रवेश किया था। डेनमार्ककी राजधानी कोपेनहागनसे उड़कर एम्स्टर्डमके हवाई बन्दर स्कीपोल पर उतरा था। हालैंड जानेका प्रवेश-पत्र (वीज़ा) मैंने बहुत पहले पेरिसमें लिया था और आते समय मुझे इस बातका ध्यान नहीं रहा था कि वीज़ाकी लेनेकी तिथिसे अवधि तो पूरी हो चुकी है। बाहर निकलते समय कस्टमवालोंने रोक लिया और बताया कि मेरा वीज़ा तो व्यर्थ हो चुका है। पता नहीं कि और देशोंमें ऐसी परिस्थितिमें क्या होता—या या कहूँ कि जानता हूँ कि कुछ देशोंमें या तो दो-चार दिन नज़रबन्दीमें या हवाई अड्डेपर रहना पड़ता अथवा अगले ही विमानसे वापिस चले जाना पड़ता। मेरे कस्टमवालोंसे यह कहनेपर, कि यह भूल अनजानमें हो गयी है और प्रवेश-पत्रकी अवधि क्या बढ़ायी नहीं जा सकती, उन्होंने उत्तर दिया कि यह

उनके वसकी बात नहीं क्योंकि यह तो केन्द्रीय विदेश मन्त्रालयका सम्बद्ध विभाग ही कर सकता था। किन्तु उन्होंने आश्वासन दिया कि वह प्रयत्न करके देखेंगे और भरसक जल्दी मुझे सूचित करेंगे। मुझे एक तरफ आराम कुर्सीपर बिठाकर कर्मचारी मेरा पासपोर्ट लेकर चला गया। मैं बैठकर सोचने लगा कि मैं तो एम्स्टर्डममें हूँ और मन्त्रालय राजधानी हेग (अथवा डच नामके अनुसार डेन हाग) में न जाने कितनी देर लगेगी

लगभग छ मिनट बाद कर्मचारी मेरा पासपोर्ट लेकर लौट आया। उसपर अवधि बढ़ानेका प्रमाण पत्र मुद्रित था जिसके साथ मन्त्रालयके सम्बन्धी फाइलका नम्बर इत्यादि भी लगा हुआ था। मैंने धन्यवाद देकर पासपोर्ट ले लिया और बाहर चलनेकी तैयारी करने लगा। कर्मचारीने कुछ आत्मतुष्ट भावसे मुसकराते हुए कहा इसे आप अत्यधिक विलम्ब तो नहीं कहेंगे न? मैंने एक बार फिर धन्यवादके साथ उसे और उसके मन्त्रालयको बधाई दी और आगे बढ़ गया।

उस समय मैं एम्स्टर्डममें अधिक न रुककर सीधे पूर्वोत्तर हालैंडके ख्रोनिंगन नगरको चला गया था, जहाँके विश्वविद्यालयमें तन्त्र-युग और आधुनिक सभ्यताकी प्रवृत्तियाँ विषयपर एक विचार-गोष्ठीमें मुझे भाग लेना था। ख्रोनिंगेनका विश्वविद्यालय हालैंडके उन प्राचीनतर विश्वविद्यालयोंमेंसे एक है जो मिलकर प्रतिवर्ष एक अन्तर्राष्ट्रीय विचार गोष्ठीका आयोजन किया करते हैं। इसमें प्रायः २५ ३० देशोंके अध्यापक और विद्यार्थी—और कभी-कभी मुझ जैसे घुमन्तू लेखक—भाग लिया करते हैं। इस बार गोष्ठी कुछ दिन ख्रोनिंगेनमें रही, कुछ दिन इल्सुम गयी, किन्तु इन दोनों विश्वविद्यालयोंके अलावा और केन्द्रोंसे भी आचार्य गण आये हुए थे।

ख्रोनिंगेनसे दक्षिण-पूर्वके इलाकेमें जाना हुआ। यह प्रदेश अपेक्षया कुछ ऊँचाईपर है और इसलिए इसीको विशेष रूपसे एक राष्ट्रीय उद्यान

की तरह सँवारकर रखा जाता है कि विदेशी यात्रियोंको आकृष्ट करे। यों तो सभी यूरोपीय देश बड़े पैमानेपर यात्रियोंका व्यवसाय करते हैं। पर कुछ देशोंकी अर्थ-व्यवस्थाका आधार ही इन टूरिस्ट सैलानियोंका आना-जाना है और ऐसे देश उन्हें आकृष्ट करनेके लिए विशेष प्रयत्न करते हैं। हालैंडकी समृद्धि मुख्यतया टूरिस्टोंके आगमनपर निर्भर हो ऐसा तो नहीं है। उसका दूध मक्खन पनीरका निर्यात और उसका समुद्री व्यापार दोनों विश्व विख्यात हैं। और हाँ, उसका फूलोंका निर्यात भी संसारका एक अचरज है। फिर भी सैलानियोंकी उपयोगिता उसके लिए काफी है। दक्षिण-पूर्व प्रदेशका सहज सौन्दर्य इन लोगोंको भी आकृष्ट करता है। आर्नहेममें राइन नदीकी तट रेखा देखने या गर्मियोंमें सासबकके राष्ट्रीय उद्यानमें घूमने कम लोग नहीं जाते। पर अपने देशमें कौन खुले हाथों खर्च करता है? और फिर इस रहस्य तो इतना प्रसिद्ध विज्ञापन सार है कि डच आतिथ्य का अर्थ ही अलग हो गया है। होटलमें दी गयी दावतमें अतिथि और आतिथेय सभी अपना-अपना हिसाब अलग बनायें या बिल आपसमें बाँटकर चुकता करें तो यह डच आतिथ्य कहलाता है। और इस नामपर हँस भी सकते हैं लेकिन ऐसी परिस्थितिमें सभी लोग परिचित हो गये हैं जब कि आत्म-सम्मान बनाये रखनेका यही एक मात्र उपाय रह जाता हो। इस विशेष प्रकारकी व्यावहारिकताका एक पहलू यह भी है कि हालैंडमें टिप देनेकी प्रथा लगभग नहीं है। न ही कुछ दूसरे देशोंकी भाँति बिलमें १० या १५ प्रतिशत जोड़ लिया जाता है। बल्कि ऐसा भी अनुभव हुआ कि टिप दिये जानेपर बैरा उसे ग्रहण करनेसे इनकार कर दे या पूछे यह किसलिए? विशेष रूपसे जब पेरिससे इसकी तुलना करें—जहाँ कि बिलमें अनिवार्य रूपमें १५ प्रतिशत जोड़ देनेके बाद भी स्वतन्त्र कुछ टिप दिये जानेकी आशा बैरा करता है—तब समझमें आता है कि हालैंडमें व्यावहारिकता और आत्माभिमानका कैसा ढंग उपस्थित किया गया है।

जो हा सामवेस्के राष्ट्रीय उद्यान या एसे अय दशनीय स्थलाको समुचित यवस्था और दनाको आर्थिक समद्धिके लिए हालडको भी टूरिस्टा की तलाश करना पडती ह। राष्ट्रीय उद्यानका सुरक्षित भूमिका सौन्य सचमुच दश आवषक ह और इसक बीचमें क्रोलर मूलर म्युजायम नामका आधुनिक कलाका जो सुदर सग्रहालय बना ह अकेले उसीको देखनेक लिए हालड आना सायक हो सकता ह।

राष्ट्रीय उद्यान वास्तवमें वनोद्यान अथवा सुरक्षित वनखण्डा ही ह लेकिन उसक एक छोरपर एक यत्नपूवक पोषित हरियाली भी ह जिसम जम हुए छायादार पुरान पेडोके नीच बच्च क्रीडाके और वयस्क युगल वायुसेवनके लिए आन रहत हैं। सामनेवक इसी उद्यानम खुलेमें मूर्ति कला का अन्तर्राष्ट्रीय प्रदशनी होती ह। मूर्तिकार मूर्तिकी कल्पना शू यमें नहीं करता ह एक परिवेशको घ्यानम रखकर ही करता ह यदि एसा ह तो स्पष्ट ह कि एक बन्द कमरेमें बहुत-सी मूर्तियाँ एक साथ जमा कर दनस [illegible] प्रदशनी नहीं हो जाती—क्योंकि इस प्रकार व सगठित इकाइ सामन आ ही नहीं सकती जो रचनाकार मनमें थी। सामवक्की मूर्तिकला प्रदशनीमें यह प्रयत्न किया जाता ह कि एसी मूर्तियाको यथासम्भव वसे ही परिवेश अथवा परिदृश्यमें उपस्थित किया जावे जिसक लिए वह रची गयी थी। यह भी घ्यान रखा जाता ह कि किसी एक मूर्तिको दखनेमें दूसरा मूर्ति बाधक न हो—दशक एकाग्र होकर मूर्ति मडित परिदृश्य देख सक। हा, जो छोटी मूर्तियाँ घरक भीतर या कमरेमें रखी जानक लिए बनी ह उनके प्रदशनके लिए एक आर छता हुआ स्थान भी ह। एसी प्रदशनी न कवल बहुत अधिक तप्तिकर होती ह वरन् दशकके लिए भी और स्वय मूर्तिकारोके लिए स्फूतिप्रद और शिक्षाप्रद भी। जिन दिनों मैं वहाँ गया उन दिना यह प्रदशनी हो रही थी और उसकी कुछ मूर्तियाँ अब भी ज्योंकी त्यों मेरी दृष्टिके सामन आ जाती ह—शू यमें नहीं पूरे परिदृश्यम जसी देखी जानके लिए व बनी था।

क्रोलर मूलर संग्रहालय एक निजी संग्रह था जो कि राष्ट्रको दान कर दिया गया। यूरोपके इम्प्रेशनिस्ट कालको—जो कि मेरी समझमें आधुनिक यूरोपीय चित्र-कलाका उत्कर्ष-काल था—चित्र-कलाके दो सुन्दर संग्रह हालैंडमें हैं जिनमेंसे एक क्रोलर-मूलर संग्रह है, दूसरा संग्रह एम्स्टर्डामके नगर संग्रहालयमें। क्रोलर मूलर दम्पति समकालीन चित्र-कलाके पारखी और संग्राहक तो थे ही, अपने समयके कई प्रसिद्ध कलाकारोंसे और विशेषतया वान गोगसे उनका सौहार्द भी था। वान गोगके चित्रोंकी अच्छीसे अच्छी प्रतिकृतियाँ मैंने देखी थीं, पर उन दोनों संग्रहालयोंमें उनके सैकड़ों चित्र देखकर समझमें आया कि यन्त्र-कौशल कभी कला-शिल्पको नहीं पा सकता, कुछ रह ही जाता है जिसे केवल कृतिकार कह सकता है—कुछ ऐसा जो एक ही हो सकता है और आवृत्तिसे परे रहता है। परम्परागत डच चित्र-कलाका मुख्य संग्रह एम्स्टर्डामके राजकीय संग्रहालयमें है, जहाँका रेम्ब्राँट संग्रह दर्शनीय है। यों संग्रहालय हालैंडमें कई हैं और टूरिस्ट लोग राजधानी हेगमें मोरिट्सहाउसका संग्रहालय देखने प्रायः जाते हैं। इस संग्रहालयमें भी कुछ चित्र जगत्प्रसिद्ध हैं, यथा योहानेस वर्मीयरका डेल्फ्टके घाट का चित्र। आज भी डेल्फ्टका यह व्यापार-केन्द्र उस चित्रसे बहुत बदला नहीं है—मैं जब डेल्फ्ट गया तब उस दृश्यके सामने पाकर भी तीन सौ वर्ष पहलेका वर्मीयरका चित्र ही मानो मेरी आँखोंके सम्मुख रहा। हालैंडके प्राकृतिक दृश्योंके सर्वाधिक प्रसिद्ध चित्रकार रोसडाल (१७वीं शती) के कुछ चित्र भी इस संग्रहालयमें हैं। उनमें कुछ विशेष प्रतिभा थी कि उनके दृश्य (लैण्डस्केप) यथार्थसे भी अधिक सच्चे हो जाते हैं। हालैंडमें भ्रमण करते हुए कई बार महसूस किया दृश्यको देखकर यह बोध होता कि जो सामने है उसे न देखकर मैं उसके रोसडाल द्वारा अंकित चित्रको ही देख रहा हूँ—कि प्रत्यक्षसे प्रतिभा पुनर्सृष्टिकी शक्ति अधिक है। किन्तु स्पेन जिस प्रकारके मेघाच्छन्न आकाशोंके बसे हुए आलोकके चित्र देखे थे वह वास्तविक दृश्य-आलोक हालैंडमें ही देखनेको मिला। इस सब बातें

है कि आखिर जिनका प्रकाश सर्वत्र एक-सा होता है तो यहाँ और वहाँके प्रकाशमें ऐसा क्या अन्तर होगा। लेकिन वास्तवमें ऐसा नहीं है। भारतका या साधारणतया भूमध्यवर्ती देशोंका प्रकाश कुछ ऐसा तीखा होता है कि दृश्यके रंगको मानो सोख लेता है—हमें वर्ण उतने नहीं दीखते जितनी कि वर्णोंकी एक प्रकारकी चौंध।* समशीतोष्ण देशोंका तिरछा प्रकाश बहुत भिन्न होता है—वह रंगोंको सोखता नहीं, सहलाता है, जिससे उनमें एक नये प्रकारकी कान्ति आ जाती है। पर इस प्रदेशके सागर-तटवर्ती या द्वीप प्रदेशोंमें यह तिरछा आलोक हल्की धुंधमें या नमकसे लदी हुई नम समुद्री हवामें छनकर और भी नया रूप ले लेता है—प्रकाश मानो सूर्यसे पृथ्वीकी ओर नहीं आता बल्कि प्रकाशित वस्तुओंके भीतरसे फूटता है। यह अद्भुत प्रकाश विशेष रूपसे हालैंडमें और कहीं-कहीं ब्रिटिश द्वीप समूहमें देखनेको मिला। फिर उत्तरमें प्रकाश और भी धीमा हो जाता है और रंग धुंधले पड़ने लगते हैं—ध्रुव मण्डलमें तो रंग प्रायः लुप्त ही हो जाते हैं।

पर संग्रहालय देखनेवाले टूरिस्ट कम ही होते हैं। इसलिए हालैंडके अनेक ग्रामोंको जीवित संग्रहालय-सा सजाकर भी रखा जाता है। एम्स्टर्डामसे उत्तर मार्केन नामका छोटा-सा द्वीप और वालडामका गाँव भी ऐसे ही प्रदेश थे। हमारे देशमें गाँव देखने जानेका विशेष उत्साह नहीं होता क्योंकि देश गाँवोंसे भरा पड़ा है। पर यूरोपमें जहाँ नागर अथवा औद्योगिक संस्कृतियोंने ग्राम-संस्कृतियोंका प्रायः नामशेष कर दिया है, परम्परा

---

* गर्म देशोंमें गहरे रंगोंका—लाल, गेरुआ, सिंदूरी, सोना, बासना, पक्का पीला, मूंगई, तोतापरी आदिका—चलन निस्सन्देह प्रकाशके इस गुणसे सम्बद्ध है।

गत ग्राम्य-जीवनकी परिपाटीपर चलनेवाले गाँव दुर्लभ हो गये हैं और जहाँ भी ऐसी परिपाटियाँ थोड़ी-बहुत भी अक्षुण्ण बनी हैं वहाँ उन्हें बनाये रखनेका संगठित प्रयत्न होता है। कुछ तो इसका सहज आकर्षण है ही पर जहाँ इसकी जड़में आर्थिक लाभकी प्रेरणा मुख्य होती है वहाँ कभी कभी हँसी भी आने लगती है। स्टौनिस्लेन विश्वविद्यालयके अपने कामसे एक रविवार छुट्टी निकालकर मैं बोलडाम देखने गया था। छोटा सा सुंदर गाँव था जिसमें हर गली-कूचेमें गुलाबकी बाड़ें फूलोंसे लदी झूम रही थीं और खिड़कियोंके भीतरसे लाल धारीके परदे उजले चमक रहे थे गाँवके चौकमें और सागर-तटकी सड़कपर परम्परागत पोशाकें पहने अनेक नर-नारी घूम रहे थे। प्यारा और हँसी-खुशीका वातावरण था। पहले तो मैं समझा कि गाँवके लोग सचमुच रविवारको स्वतः उत्साहसे छुट्टी मनाते और टूरिस्टोंसे मिलते जुलते हैं लेकिन थोड़ी ही देरमें जान गया कि इन पुरानी पोशाकोंमें मटरगश्ती करते हुए आधेसे अधिक लोग विदेशी टूरिस्ट हैं जो बन्दरके किनारेकी दूकानोंसे पोशाकें और लकड़ीके खड़ाऊँ किरायेपर लेकर फोटो खिंचवाते फिरते हैं और चल देते हैं! कुछ दूकानों पर विज्ञापन भी लगा था कि सवा रुपये घंटा किरायेपर पूरी पोशाक मिल सकती थी—केवल फ़ोटो खिंचानेके लिए दस आनेपर! परम्पराओंको बेच खानेकी यह प्रवृत्ति सारे पश्चिममें मिलती है और कुछ भिन्न रूपमें यहाँ भी है ही (और क्या भारतमें भी नगर-महानगरोंमें परम्पराका कम शोषण हो रहा है?) इसलिए वाणिज्यिक परिश्रमी मछुओंको दोष क्या दिया जाय पर चित्रलिखित परम्परागत गाँवों की बातको असलियत समझमें आ गयी।

लेकिन हालैण्डका और एक अद्वितीय स्मरणीय चीजका आधार इतना व्यावसायिक नहीं है। वह है यहाँके फूलोंकी मण्डी—विशेष रूपसे उन फूलोंकी जो गाँठोंसे होते हैं—जैसे नरगिस, ग्लाडियोलस, मूलचम्पक वगैरह वगैरह—अंग्रेजी नाम लें तो नार्सिसस, ट्यूलिप, आयरिस

लिली ओफ द वैली, क्रोकस, डफोडिल इत्यादि। इनमें गुल-लाला अथवा ट्यूलिप हॉलैंडकी विशेष चीज है। एमस्टर्डामसे हेगको जो सड़क जाती है, उसके दोनों ओरका प्रदेश इसकी खेतीका विशेष प्रदेश है। अप्रैलके अन्तिम दिनोंमें सड़क भर सड़कके आस-पास कोई बीस पचास मील लम्बी फूलोंकी क्यारी देखी जा सकती है, जिसे विभिन्न रंगों और जातियोंके ट्यूलिप फूलोंकी नियमित कतारें एक अलौकिक दुकूलका रूप दे देती हैं। यह दृश्य देखने भी टूरिस्ट आते हैं पर इसमें बनावट कुछ नहीं है न यह दावा है कि ये फूल जंगली या नैसर्गिक हैं या कि खेत न होकर उद्यान है। नहीं यह फूलोंकी खेती ही है, पर उसी रूपमें जगत्प्रसिद्ध है और प्रसिद्धिका पात्र है। डच नागरिक संसारकी सबसे बड़ी फूलोंकी क्यारी पर भी उतना ही गर्व कर सकता है जितना कि राटर्डामकी संसारकी दूसरी सबसे बड़ी बन्दरगाहपर और इसलिए और भी अधिक कि जिस भूमिपर वह फूल उगाता है वह भी उसने उसी प्रकार सागरसे छीना है जिस प्रकार उसने राटर्डामको अभी इस पिछले महायुद्धमें मटियामेट हो जानेके बाद फिरसे बना लिया है। युद्धसे पूर्व कारबारकी दृष्टिसे राटर्डाम बन्दरगाहका स्थान न्यूयार्क और हामबुर्गके बाद तीसरा था अब दूसरा रह गया है और अचरज नहीं कि सारे यूरोपके आयात निर्यातका वहन करता हुआ शीघ्र ही पहला हो जाय।

युद्धकालीन विध्वंसके लक्षण विशेष रूपसे जर्मनीमें बहुत देखनेको मिलेंगे और युद्धोत्तर पुनर्निर्माणकी दृष्टिसे पश्चिमी बर्लिनका पुनर्निर्माण कम आश्चर्यजनक नहीं है। किन्तु राटर्डामका पुनर्निर्माण न केवल डच जातिकी दुर्दम जिजीविषाका प्रमाण है बल्कि कलात्मक दृष्टिसे भी विशेष महत्त्व रखता है। राटर्डाम मुख्यतया समुद्री व्यापारका केन्द्र था—वहाँके व्यापारी वर्गके प्रतिनिधि अब भी सगर्व सारे यूरोपको राटर्डामका पिछवाड़ा कहते हैं क्योंकि वहाँका आयात निर्यात राटर्डाममें केन्द्रित है। इसलिए नगर और बन्दरगाहका पुनर्निर्माण केवल व्यापारिक सुविधाकी दृष्टिसे ही किया

लिली आफ द वैली क्रोकस डैफोडिल, इत्यादि। इनमें गुल-लाला अथवा ट्यूलिप हालैण्डकी विशेष चीज है। एम्स्टर्डमसे हेगको जो सड़क जाती है उसके दोनों ओरका प्रदेश इसकी खेतीका विशेष प्रदेश है। अप्रैलके अन्तिम दिनोंमें भर सड़कके आस-पास कोई बीस पचीस मील लम्बी फूलोंकी क्यारी देखी जा सकती है, जिसमें विभिन्न रंगों और जातियोंके ट्यूलिप फूलोंकी नियमित कतारें एक अलौकिक दृश्यका रूप दे देती हैं। यह दृश्य देखने भी सुन्दर स्थान है, पर इसमें बनावट कुछ नहीं है न मनुष्य दावा है कि यह फल जंगली या नैसर्गिक है, या कि केवल न होकर उद्यान है। नहीं, यह पुष्पोंकी खेती ही है पर उसी रूपमें जगत्प्रसिद्ध है और प्रसिद्धिका पात्र है। डच नागरिक 'मसारकी' सबसे बड़ी फूलोंकी क्यारी पर भी उतना ही गर्व कर सकता है जितना कि रॉटर्डमकी मसारकी दूसरी सबसे बड़ा बन्दरगाहपर, और इसलिए और भी अधिक कि जिस भूमिपर वह फूल उगाता है वह भी उसने उसी प्रकार सागरसे छीनी है जिस प्रकार उसने रॉटर्डमको अभी इस पिछले महायुद्धमें मटियामेट हो जानेके बाद फिरसे बना लिया है। युद्धसे पूर्व कारबारकी दृष्टिसे रॉटर्डम बन्दरगाहोंका स्थान न्यूयार्क और हामबुर्गके बाद तीसरा था अब दूसरा रह गया है और सम्भव नहीं कि सारे यूरोपके आयात निर्यातको वहन करता हुआ शीघ्र ही पहला हो जाय।

युद्धकालीन विध्वंसके लक्षण विशेष रूपसे जर्मनीमें बहुत देखनेको मिले और युद्धोत्तर पुनर्निमाणकी दृष्टिसे पश्चिमी बर्लिनका पुनर्निर्माण कम आश्चर्यजनक नहीं है। किन्तु रॉटर्डमका पुनर्निमाण न केवल डच जातिकी दुर्दम्य जिजीविषाका प्रमाण है बल्कि कलात्मक दृष्टिसे भी विशेष महत्त्व रखता है। रॉटर्डम अन्ततया समुद्री व्यापारका केन्द्र था—वहाँके व्यापारी वर्ग प्रतिनिधि अब भी प्रायः सारे यूरोपका रॉटर्डमको पिछवाड़ा कहते हैं क्योंकि यहींका आयात निर्यात रॉटर्डममें केन्द्रित है। इसलिए नगर और बन्दरगाहका पुनर्निर्माण केवल व्यापारिक सुविधाकी दृष्टिसे ही किया

गया होता तो भी अचम्भेकी बात होती किन्तु नगरके निर्माताओंने इतने ही से सन्तोष नहीं किया बराबर इसके लिए भी यत्नशील रहे कि उनका नगर स्थापत्यकी दृष्टिसे भी महत्त्व रखे। राटडामका नगर भव्य भी है और सुन्दर भी—और उपयोगी भी। मेयरने स्वयं कुछ समय निकालकर हमारी छोटी सी टोलीको उसके विभिन्न रूप दिखाये तो उसमें अभ्यागतके सत्कारकी उदार भावना जितनी थी उतना ही इस बातका गौरव भाव भी था कि उनका भवन आधुनिक यूरोपीय स्थापत्यमें अपना स्थान रखता है। राटडामके व्यापार मण्डलका भवन अत्यन्त प्रभावशाली था और आधुनिक स्थापत्यका एक उल्लेखनीय नमूना। विशाल भवनमें कामसे आनेवालोंकी सैकड़ों मोटरें खड़ी करनेके लिए स्थान भवनके बाहर नहीं बल्कि दूसरी मंज़िलमें रखा गया है और मोटरें सीधे दूसरी मंज़िलमें जाकर ही रुकती हैं। सबसे ऊपरकी मंज़िलमें काँचसे जड़े हुए विशाल बरामदेमें कैंटीनमें चाय पीते हुए पूरे नगरका विहंगम दृश्य देखनेको मिला।

स्थापत्यकी ओर डच जाति विशेष ध्यान दे रही है। राटडामका बाउ-सेंट्रम—स्थापत्य-केन्द्र—अपने-आपमें स्थापत्यका महाविद्यालय भी है और संग्रहालय भी। हेगका मदूरोडाम उद्यान भी अपने ढंगकी एक चीज़ है। यहाँपर हालैंडभरकी प्रसिद्ध इमारतोंकी छोटी प्रतिकृति स्थापित किये गये हैं और उन्होंका एक छोटा-सा नगर बनाया गया है। इसका क्षेत्रफल बहुत इमारतें भी इससे कम ऊँची ही होंगी किन्तु यह न समझा जाय कि यह केवल बच्चोंके मनोरंजनका एक नये ढंगका साधन मात्र है। बच्चे और स्कूलके विद्यार्थी वहाँ पर्याप्त संख्यामें जाते हैं और मनोरंजनके साथ-साथ शिक्षा पाते हैं। किन्तु उसका आकर्षण अथवा उपयोग वहीं तक सीमित नहीं है। स्थापत्यकला और भवन निर्माणमें सौन्दर्यकी ओर विशेष रुचिके प्रचारमें मदूरोडाम काफ़ी योग देता है क्योंकि इसके भवन सब

यन्त्रोंकी आनुपातिक प्रतिकृतियाँ (स्केल माडल) हैं। इससे होने वाली आय एक विद्यार्थी सहायकनिधिमें जाती है।

डच जातिका उसके पड़ोसी कभी मजाक भी उड़ाते हैं। कोई उसे कल्पना विहीन बताता है तो कोई उसमें विनोदकी कमीकी आलोचना करता है। पर अथक उद्यम, अदम्य साहस, उत्कट स्वातन्त्र्य प्रेम और अमुखर दया भाव यदि किसी जातिको श्रद्धाका पात्र बनाते हैं तो डच जाति निस्सन्देह श्रद्धेय है। और अधिकांशमें मानव निर्मित, नीचा और सपाट होकर भी स्वच्छ सुथर, और सजीला नीदरलैंड प्रदेश दर्शनीय भी है रमणीय भी।

संयुक्त राज्य : दो राजधानियाँ

लन्दन

हर नगरका अपना एक स्वाद होता है। किसी भी नगरके स्वादका बखान बेशक किया जा सकता है, लेकिन बखानसे किसी दूसरेको वह चखाया नहीं जा सकता। और ऐसे प्रयत्नसे स्वादका जो आभास होता है वह उससे अधिक सच्चा नहीं होता जितना कि वज़ीरकी शहदमें डूबी हुई दाढ़ी चूसकर ईरानके बादशाहको आमके स्वादका आभास हो सका था।

स्वाद-बोधकी यह समस्या और भी विकट तब हो जाती है जब कोई व्यक्ति ऐसे नगरमें पहुँचता है जिसे वह वर्णनसे बहुत अच्छी तरह जानता है, जिसकी चर्चा सुनते सुनते और जिसके महलों और रास्तोंका वर्णन उपन्यास-कहानियोंमें पढ़ते पढ़ते वह उससे इतना परिचित हो गया है मानो स्वयं वहाँ रह चुका है—पर जहाँ पहुँचकर वह पाता है कि इस किताबी परिचयके आधारपर कल्पना द्वारा रचे हुए नगर और वास्तविक नगरके रूपमें सम्पूर्ण एकता रहते भी दोनोंके स्वादमें आकाश-पातालका अन्तर है। (यह नहीं कि आकाश या पातालका स्वाद मैं जानता हूँ—कम-से-कम पातालका तो बिल्कुल नहीं जानता!—लेकिन आकाशके ही दो स्तरोंका स्वाद एक-दूसरेसे और भूतलके स्वादसे जितना भिन्न होता है उससे यह निश्चय ज़रूर निकाल सकता हूँ कि पातालका स्वाद बिल्कुल भिन्न होगा।)

फिर ऐसे नगरका स्वाद दूसरोंको बतानेमें अतिरिक्त समस्या होती है कि यद्यपि वर्णन तो उसीका करना चाहता हूँ जो पहलेसे सुपरिचित है

तथापि अनुभव उससे बिल्कुल भिन्न प्रकारका कराना चाहता हूँ। इस प्रकार मैं चाहता हूँ कि पुरानी पाटीपर नये रंगकी स्याहीसे नयी भाषामें कुछ लिख दूँ और यह मान लूँ कि उसके लिखनेसे ही न केवल वह नयी भाषा बोधगम्य हो जायगी बल्कि पुराना लिखा हुआ सब मिट भी जायगा!

जिन्होंने अंग्रेजी पद्धतिसे शिक्षा पायी है—और भारतके शिक्षितोंका अधिकांश वर्ग अभी तक ऐसा ही है—उन सभीके लिए लन्दन ऐसा ही नगर है। जिन्होंने देखा नहीं है वे भी उसे काफी जानते-पहचानते हैं। यह दूसरी बात है कि उनमेंसे बहुतोंका लन्दन वह हो जो कि सन १६६६ की आगमें जल गया और जिसका वर्णन डिकेंसने किया है; कुछका वह हो जिसका रूप अठारहवीं शतीके नाटककारोंने तत्कालीन नागर समाजके कृत्रिम जीवनके व्यंग्य नाटकोंमें किया है; और कुछका लन्दन वह हो जो गाल्सवर्दीके धनसेठोंके समाजका नगर है। कुछका अवश्य वह लन्दन भी होगा जो वोडहाउस द्वारा वर्णित कल्पित अभिजात परिवारोंकी हवेलियों या रियासतों, अनब्याहे 'शहरियाने' फ्लैट अथवा कमरों, चाची एगाथा जैसे सम्बन्धियों अथवा 'जीव्ज़' जैसे नौकरोंके वर्णनसे व्यक्त होता है!

क्या मेरे लिए यह सम्भव होगा कि इस जाने-पहचाने लन्दनके ऊपर उस दूसरे लन्दनका आरोप कर दूँ जिसे केवल मैंने देखा और जिसका स्वाद केवल मैं जानता हूँ—जिस स्वादमें परिचितके अपरिचयका अनिर्वचनीय स्वाद भी मिला हुआ है? विशेषतया जो लोग टेम्स नदीके पुलपर खड़े होकर उसे अपनी आँखोंसे नहीं, बल्कि स्मरण की हुई वर्ड्सवर्थकी पंक्तियोंसे*

---

* अर्थ हैज़ नाट एनीथिंग टु शो मोर फ़ेयर
डल वुड ही बी आफ़ सोल हू कुड पास बाइ
ए साइट सो टचिंग इन इट्स मेजस्टी
शिप्स टावर्स, डोम्स, थियेटर्स, एंड टेम्पल्स इत्यादि
—वर्ड्सवर्थ, 'अपान वेस्टमिंस्टर ब्रिज'

संयुक्त राज्य : दो राजधानियाँ

लन्दन

हर नगरका अपना एक स्वाद होता है। किसी भी नगरके स्वादका बखान बहुत किया जा सकता है लेकिन बखानसे किसी दूसरेको वह चखाया नहीं जा सकता। और ऐसे प्रयत्नसे स्वादका जो आभास होता है वह उससे अधिक सच्चा नहीं होता जितना कि वजीरकी शहदमें डूबी हुई दाढ़ी चूमकर ईरानके बादशाहको आमके स्वादका आभास हो सका था।

स्वाद-बोधकी यह समस्या और भी विकट तब हो जाती है जब कोई व्यक्ति ऐसे नगरमें पहुँचता है जिसे वह वर्णनसे बहुत अच्छी तरह जानता है, जिसकी चर्चा सुनते-सुनते और जिसके मुहल्लों और रास्तोंका वर्णन उपन्यास-कहानियोंमें पढ़ते-पढ़ते वह उससे इतना परिचित हो गया है मानो स्वयं वहाँ रह चुका है—पर जहाँ पहुँचकर वह पाता है कि इन किताबी परिचयके आधारपर कल्पना द्वारा रचे हुए नगर और वास्तविक नगरके रूपमें सम्पूर्ण एकता रहते भी दोनोंके स्वादमें आकाश-पातालका अन्तर है। (यह नहीं कि आकाश या पातालका स्वाद मैं जानता हूँ—कम-से-कम पातालका तो बिल्कुल नहीं जानता!—लेकिन आकाशके ही दो स्तरोंका स्वाद एक-दूसरेसे और भूतलके स्वादसे जितना भिन्न होता है उससे यह निश्चय ज़रूर निकाल सकता हूँ कि पातालका स्वाद बिल्कुल भिन्न होगा।)

फिर एक नगरका स्वाद दूसरोंको चखानेमें अतिरिक्त समस्या होती है कि यद्यपि वर्णन तो उसीका करना चाहता हूँ जो पहलेसे सुपरिचित है

तथापि अनुभव उससे बिल्कुल भिन्न प्रकारका कराना चाहता हूँ। इस प्रकार यह चाहता हूँ कि पुरानी पाटीपर नये रंगकी स्याहीसे नयी भाषामें कुछ लिख दूँ और यह मान लूँ कि उसके लिखनेसे न केवल वह नयी भाषा बोधगम्य हो जायगी बल्कि पुराना लिखा हुआ सब मिट भी जायगा।

जिन्होंने अंग्रेजी पद्धतिसे शिक्षा पायी है—और भारतके शिक्षितोंका अधिकांश वर्ग अभी तक ऐसा ही है—उन सभीके लिए लन्दन ऐसा ही नगर है। जिन्होंने देखा नहीं है वे भी उसे काफी जानते-पहचानते हैं। यह दूसरी बात है कि उनमेंसे बहुतोंका लन्दन वह हो जो कि सन् १६६६ की आगमें जल गया और जिसका वर्णन डिकेंसने किया है, कुछका वह हो जिसका रूप अठारहवीं शतीके नाटककारोंने तत्कालीन नागर समाजके कृत्रिम जीवनके व्यंग्य नाटकोंमें किया है और कुछका लन्दन वह हो जो गाल्सवर्दीके धनसेठोंके समाजका नगर है। कुछका अवश्य वह लन्दन भी होगा जो वोडहाउस द्वारा वर्णित कल्पित अभिजात परिवारोंकी हवेलियों या रियासतों अथवा शहरियोंके फ्लैट अथवा क्लब, 'चाचा एगाथा' जैसे सम्बन्धियों अथवा जीव्ज जैसे नौकरोंके वर्णनसे मूर्त होता है।

क्या मेरे लिए यह सम्भव होगा कि इस जान-पहचाने लन्दनके ऊपर उस दूसरे लन्दनका आरोप कर दूँ जिसे केवल मैंने देखा और जिसको स्वयं केवल मैं जानता हूँ—जिस स्वादमें परिचितके अपरिचयका अनिर्वचनीय स्वाद भी मिला हुआ है? विशेषतया जो लोग टेम्स नदीके पुलपर खड़े होकर उसे अपनी आँखोंसे नहीं बल्कि स्मरण की हुई वर्ड्सवर्थकी पंक्तियोंसे*

---

* अर्थ हैज़ नॉट एनीथिंग टु शो मोर फेयर
डल वुड ही बी ऑफ सोल हू कुड पास बाइ
ए साइट सो टचिंग इन इट्स मैजेस्टी
शिप्स, टावर्स, डोम्स, थिएटर्स एंड टेम्पल्स इत्यादि
—वर्ड्सवर्थ, 'अपॉन वेस्टमिंस्टर ब्रिज'

प्रत्यक्ष करते हैं या हैम्पस्टेड जाकर अपनी आँखोंके सामनेके मकानको न देखकर केवल कीट्सकी चली हुई भूमि देखते हैं। उनके लिए टेम्सके घाट आजके अन्तर्राष्ट्रीय व्यापारका एक केन्द्र-स्थल न होकर केवल वह रहस्यमय प्रदेश है जिसमें एडीसन और स्टील घूमते थे, जानसन और पेप्स अपनी पैनी उक्तियोंके लिए सामग्री ढूँढ़ते थे, मार्लो शराब पीकर मल्लाहोंकी तरह झगड़ते और फसाद करते थे, कोलरिज और डिक्विंसी नशा करके पिनकचियोंकी तरह रंगीन स्वप्न देखते थे। उनके लिए कैसे उस लन्दनको मूर्त किया जा सकता है जो आज है?

मैं अपने यूरोपीय प्रवासमें तीन चार बार लन्दन गया। प्रत्येक बार परिचय-अपरिचयका यह दोहरा भाव भर मनमें आया—इसके बावजूद कि पहली बारके बाद तो मैं यह नहीं कह सकता था कि अभी वहाँ नहीं गया हूँ।

पहली बार लन्दन मईके आरम्भमें गया था, रोम और पेरिस होता हुआ। इटली और फ्रांसके वसन्तके बाद लन्दनका नीरस और रूपश्री-विहीन लगना स्वाभाविक ही है। फिर लातीनी और अंग्रेजी स्वभावका अन्तर भी ऐसा है कि लन्दनकी सहज धूसरताको और भी मटमैला बल्कि कालिख-सना बना देता है। अंग्रेज मज़ाक करता है और हँसता नहीं है, या सख्य चाहता है पर बोलता नहीं है, वैसे ही लन्दन शहर जीना चाहता है पर निश्चेष्टताके तलके नीचे, मुस्काता है पर रातकी मानो पलकें नाथ छिपाकर!

रोम और पेरिसकी तुलनामें लन्दन कुरूप है, स्टाकहोम और कोपेनहागनकी तुलनामें गन्दा, बर्लिनकी तुलनामें शिथिल और निकम्मा। लेकिन कोई विचित्र कारण है कि लन्दन एक सहज घरेलूपनका भाव उत्पन्न करता है। उसमें कोई [illegible] नहीं है, लेकिन उसकी सड़कोंपर चलते हुए बार बार यह बोध मनपर छा जाता है कि यह एक महानगर है जो अपने

काममें डूबा हुआ है और जानता है कि अधिक शोर मचाने या हड़बड़ानेसे ही काम अधिक नहीं हो जाता।

दूसरी बार जब लन्दन गया था तब ग्रीष्म-काल था जिसमें सारा यूरोप मगन होकर छुट्टी मनाता है और लन्दनसे भी एक एक पखवारेके वार्षिक विश्रामके लिए जानेवाली टोलियाँ सब दिशाओंमें जा रही थीं फिर भी दूसरी राजधानियों और लन्दनका अन्तर स्पष्ट था।

पेरिस ग्रीष्ममें पेरिस सूना शहर होता है—ग्रीष्म भर यहाँ कोई हलचल नहीं होती। जहाँतक कामका सवाल है काम तो यों भी एक मुसीबत है जब करना पड़ता है तब करना ही पड़ता है—तब फिर अभी क्या उसकी बात सोचें?

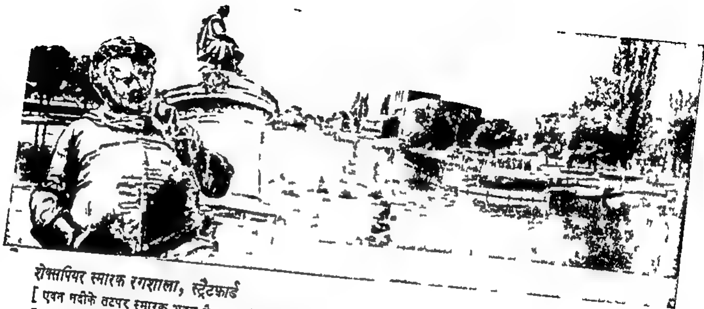
स्टाकहोम साफ सुथरा और स्निग्ध लेकिन जहाँतक किसीसे मिलने का प्रश्न है गर्मियोंमें सब लोग बाहर चले जाते हैं—शायद ही कोई मिल सके। और जहाँतक कामका सवाल है—थोड़ा-बहुत काम होता रहता है क्योंकि आखिर इनसानको कुछ न-कुछ तो करना ही चाहिए।

कोपेनहागेन स्टाकहोम-सा ही स्वच्छ उससे कुछ और गर्म, और इसलिए पोशाकके नामपर कुछ और भी कम पहने हुए। 'किसीसे मिलना है? तब किसी-न-किसी सागर-तटपर घूमने चले जाइए वहाँ-न-वहाँ कोई-न-कोई मिल ही जायगा जिससे आप मिलना चाहेंगे! यों सभी तो हँसमुख और मिलनसार हैं किसीसे भी मिल लीजिए! काम? हाँ-हाँ, जरूर काम भी करेंगे, जब उसका समय होगा। तब उसकी बात भी जरूर सोची जायगी।

किन्तु लन्दन यहाँ भी अवकाशका समय है लेकिन तब भी वातावरण कामका है लगनसे और परिश्रमपूर्वक किये जानेवाले कामका। उनके लिए अधीर बच्चोंको दूर देहातमें सागर तटपर, झीलोंके प्रदेशमें उद्यानोंमें या चाहे कहीं भी भेज दिया गया है। जाओ बच्चो, बाहर जाकर खेलो—मुझे काम करना है।'

सचमुच काम करनेके लिए शहरोंमें लन्दन अच्छा शहर है। पेरिसमें मौज बहुत हो सकती है और उसके लिए साथियोंकी कमी नहीं है, लेकिन जो अकेला पड़ जाय वह पेरिसमें इतना अकेला हो जा सकता है कि दुनियामें और कहीं उस निर्जनताकी बराबरी नहीं हो सकती। किसी हद तक ऐसा अकेलापन किसी भी बड़े शहरमें हो सकता है, लेकिन पेरिस शायद दुनियाका सबसे अकेला शहर होगा। लन्दनमें भी अकेलापन सम्भव है लेकिन वैसा नहीं। दूसरी ओर सांस्कृतिक आयोजनोंकी दृष्टिसे लन्दन संसारके किसी दूसरे शहरसे कम तत्पर नहीं है और उसके सांस्कृतिक जीवनकी सम्पूर्णता अनिन्दनीय है। लेकिन जहाँ जो मनोरंजन और कला विनोद चाहता है उसके लिए लन्दन वही प्रस्तुत करता है, वहाँ डाहमडाह सड़कोंपर ढौंडी पीटता हुआ चलकर काम करना चाहनेवालोंको बाधा नहीं देता। अन्य सभी राजधानियोंमें कोई महीना ऐसा अवश्य होता है जब कि सांस्कृतिक आयोजन बन्द रहते हैं, लेकिन लन्दनमें ऐसा कभी नहीं होता—बल्कि अवकाशके दिनोंमें आश्चर्यजनक क्रियाशीलता लक्षित होती है। सप्ताहोंमें नयी प्रदर्शनियाँ, रायल ऑपेरा हाउसमें नये ऑपेरा, आलबर्ट हाल और फ़ेस्टिवल हालमें संगीत और नृत्य-नाट्य, ड्रूरी लेन, एम्बेसी, फ़ीनिक्स, ग्लोब, लिरिक और अपोलो थिएटरोंमें नाटक और ओल्ड विकमें शेक्सपियरके नाटक—ये सभी स्थान छुट्टीके मौसममें भी कार्यक्रम प्रस्तुत करते रहते हैं।

अंग्रेज़ी शिक्षित भारतवासियोंका कल्पना-चित्रित लन्दन एक हिन्दुस्तानी लन्दन है। इसके अलावा चाहें तो दूसरा हिन्दुस्तानी लन्दन भी मूर्त किया जा सकता है—लन्दनमें रहनेवाले भारतीयोंका लन्दन। क्योंकि यहाँके भारतीय विद्यार्थियोंकी संख्या चार हज़ारसे ऊपर होगी, इसके अतिरिक्त यहाँ बस जानेवाले भारतीयोंकी संख्या बढ़ती ही जा रही है। निःसन्देह



शेक्सपियर स्मारक रंगशाला, स्ट्रैटफार्ड

[एवन नदीके तटपर स्मारक भवन है, पास ही उद्यानमें स्मारक मूर्ति जिसके कोणोंमें नाटकोंके प्रमुख पात्र। चित्रमें फाल्स्टाफ़ दीख रहा है]

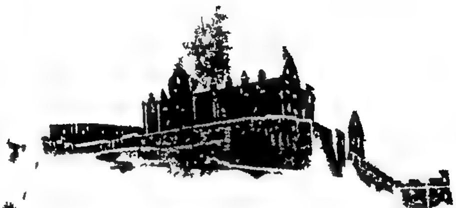
सचमुच काम करनेके लिए शहरोंमें लन्दन अच्छा शहर है। पेरिसमें मौज बहुत हो सकती है और उसके लिए साथियोंकी कमी नहीं है लेकिन जो अकेला पड़ जाय वह पेरिसमें इतना अकेला हो जा सकता है कि दुनियामें और कहीं उस निर्जनताकी बराबरी नहीं हो सकती। किसी हद तक ऐसा अकेलापन किसी भी बड़े शहरमें हो सकता है लेकिन पेरिस शायद दुनियाका सबसे अकेला शहर होगा। लन्दनमें भी अकेलापन सम्भव है लेकिन वैसा नहीं। दूसरी ओर सांस्कृतिक आयोजनोंकी दृष्टिसे लन्दन संसारके किसी दूसरे शहरसे कम तत्पर नहीं है और उसके सांस्कृतिक जीवनकी सम्पूर्णता अद्वितीय है। लेकिन जहाँ जो मनोरंजन और क्रीड़ा-विनोद चाहता है उसके लिए लन्दन वही प्रस्तुत करता है वहाँ खामखाह सड़कोंपर ढोंडी पीटता हुआ चलकर काम करनेवालोंको बाधा नहीं देता। अन्य सभी राजधानियोंमें कोई महीना ऐसा अवश्य होता है जब कि सांस्कृतिक आयोजन बन्द रहते हैं लेकिन लन्दनमें ऐसा कभी नहीं होता—बल्कि अवकाशके दिनोंमें आश्चर्यजनक क्रियाशीलता लक्षित होती है। सप्ताहान्तमें नयी प्रदर्शनियाँ, रायल ऑपरा हाउसमें नये ऑपरा, आल्बर्ट हॉल और फ़ेस्टिवल हॉलमें संगीत और नृत्य-नाट्य, द री ग्न एरफा फ़ौनिवस ग्गान लिरिक और अपालो थिएटरोंमें नाटक और ओल्ड विकमें शेक्सपियरके नाटक—ये सभी स्थान ग्रीष्मके मौसममें भी कार्यक्रम प्रस्तुत करते रहते हैं।

अथवा भिन्न-भिन्न भारतवासियोंका कल्पना-चित्रित लन्दन एक हिन्दुस्तानी लन्दन है। इसके अलावा चाहें तो दूसरा हिन्दुस्तानी लन्दन भी मूर्त किया जा सकता है—लन्दनमें रहनेवाले भारतीयोंका लन्दन। क्योंकि वहाँ के भारतीय विद्यार्थियोंकी संख्या चार हजारसे ऊपर होगी, इसके अतिरिक्त वहाँ बसे नागरिक भारतीयोंकी संख्या बड़ी हो जा रही है। निःसन्देह



शेक्सपियर स्मारक रंगशाला, स्ट्रैटफोर्ड

[एवन नदीके तटपर स्मारक भवन है, पास ही उद्यानमें स्मारक मूर्ति जिसके कोणोंमें नाटकोंके प्रमुख पात्र।
जिनमें फाल्स्टाफ दीख रहा है]



एडिनबरा दुर्ग [रातमें]

इन भारतीयोंमें अनेक ऐसे भी है जो केवल वंश-परम्परासे भारतीय हैं और जिनका भारतसे कोई निजी सम्पर्क नहीं है—जैसे मारीशस दक्षिणी या पूर्वी अफ्रीका, वेस्ट इण्डीज या गियाना या फीजीमें बसनेवाले भारतीयोंकी सन्तान, जो उच्च शिक्षाके लिए वहाँ जाकर वहींपर नौकरी या व्यवसाय करने लगती है। लेकिन लन्दनके भारतीयोंमें सब पढ़े लिखे या विद्याकर्मी नहीं है विद्यार्थियों, डाक्टरों, वणिकों, बरिस्टरों और पत्रकारोंके अलावा प्रायः अनपढ़ व्यवसायी मजदूर और जहाजी भी वहाँ काफी है।

एक तीसरे भारतीय लन्दनको भी निरूपित किया जा सकता है। यह भारतीय संस्कृतिके अध्येताओं और खोजियोंका लन्दन है। भारतीय कला और पुरातत्वकी अपूर्व सामग्री प्रचुर मात्रामें लन्दनमें पायी जा सकती है। निःसन्देह औपनिवेशिक इतिहासका स्मरण करके इसको आक्रोशका कारण बनाया जा सकता है कि इतनी मूल्यवान वस्तुएँ क्या यहाँसे ले जायी गयीं या ले जाने दी गयीं बहुत सी वस्तुओंपर भारतका दावा है और आशा की जा सकती है कि अनतिदूर भविष्यमें वे फिर यहाँ लौट आवेंगी। लेकिन ऐसा भी बहुत कुछ लन्दनमें संगृहीत है जिसका मूल औपनिवेशिक शोषणमें नहीं बल्कि शुद्ध कला-प्रेममें या एक प्राचीन संस्कृतिके सम्मानमें है। जैसे जर्मनोंने स्वयं हमारी रुचि जगासे हमारे साहित्यका उद्धार किया वैसे ही अनेक दृष्टि-सम्पन्न अंग्रेजोंने हमारी कला-वस्तुओं और पुरातत्त्व सामग्रीको हमारी अपनी उदासीनतासे बचाकर रखा और नये सिरसे हमें उसका सम्मान करना सिखाया। भारत विद्याकी सेवा और रक्षा करनेवाले इन अंग्रेजोंमें कई ऐसे भी थे जिन्हें राजनीतिक दृष्टिसे हमारा कट्टर शत्रु गिना जा सकता—बल्कि भारतके अंग्रेज शासकोंमें साधारणतया जिनकी कला-दृष्टि जितनी ही उदार और संवेदनशील थी उनकी राजनीतिक प्रवृत्तियाँ उतनी ही सकीर्ण और अदूरदर्शी रही जिसका एक कारण यह भी था कि हमें अपनी संस्कृतिके प्रति इतना उदासीन देख

कर उनके मनमें हमारे प्रति अवहेलनाका भाव उमड़ता था। जो हो इन कला-संग्रहोंके लिए हम कृतज्ञ ही हो सकते हैं और इनका लन्दन भी एक अलग भारतीय लन्दन है जिसमें प्रवेश करके हम भारतका ही एक अधिक प्रभामय रूप देख सकते हैं जो भारतके वर्तमान देश-कालका अतिक्रमण कर जाता है।

ब्रिटिश म्यूज़ीयम तथा विक्टोरिया एण्ड आल्बर्ट म्यूज़ीयमके भारतीय कला-संग्रह और ब्रिटिश म्यूज़ीयम तथा इण्डिया लायब्रेरीके ग्रन्थ-संग्रह संसार प्रसिद्ध हैं। लेकिन लन्दनसे बाहरके छोटे भारतीय संग्रह भी कम मूल्यवान नहीं हैं। आक्सफ़ोर्ड और केम्ब्रिजके संग्रहालय भी उल्लेखनीय हैं और बर्मिंघम संग्रहालयकी बुद्धकी कांस्य प्रतिमा तो अनुपम है।

लन्दनके दृश्योंका अलग अलग वर्णन इस सन्दर्भमें कोई प्रयोजन नहीं रखता। बकिंघम महल और उसके सामने (अथवा सेण्ट जेम्स महलके सामने) सन्तरियोंकी रंगीन वर्दियाँ और सुनियन्त्रित परेड पार्लमेंट भवन और वेस्टमिंस्टर एबे लन्दन टावर और उसके सामनेका टावरब्रिज पुल सेण्ट पालका गिरजाघर—ये सभी दूसर यात्रियोंके वर्णनोंसे या चित्रोंसे हमारे अतिपरिचित हो गये हैं। हाइड पार्क और उससे लगा हुआ केंसिंग्टन उद्यान हाइड पार्कमें कहीं भी कभी भी एक पेटीपर खड़े होकर व्याख्यान झाड़ने लगनेवाले तरह-तरहके सनकी आन्दोलनी पागल और पाखण्डी और सवालों या व्यंग्य-बाणोंसे उनकी बोलती बन्द करनेवाले मनचले श्रोता—अंग्रेजी साहित्यसे थोड़ा-बहुत परिचय रखनेवाले भी इनसे परिचित हैं। बल्कि यह हरफ़न-मौला व्याख्यानदाता तो हाइड पार्कके मनोबहार फूलोंमें गिना जाता है। पिकाडिली और ट्राफ़ल्गर चौक भी प्रायः उतने ही परिचित हैं। अगर ट्राफ़ल्गर स्क्वायरके फ़व्वारेके आस पास हर समय मँडराने और गुटरगूँ करते अण्डज-संघ कबूतर कौतूहली

दगाओंकी उपमा करते हैं और आसपासकी विशाल ऐतिहासिक भव्य मूर्तियोंपर एक-सी उत्पातकी बातें करते रहते हैं तो यह भी कोई विशेष उल्लेखनीय बात नहीं है—ऐसे ही दृश्य भारतके शहरोंमें आसिया जगह देख जा सकते हैं और दिल्लीके चाँदनी चौकमें भी देख जा सकते हैं। यह दूसरी बात है कि ट्रफल्गार चौकके एक तरफ राष्ट्रीय चित्र-संग्रहालय है जो कि संसारके प्रथम कोटिके संग्रहालयोंमें गिना जाता है और दूसरी ओर संत मार्टिनका गिरजाघर है जब कि चाँदनी चौकमें विक्टोरिया महारानीके बुतके पीछे टाउनहाल है और सामने नयी सड़ककी बनारसी साड़ियोंकी दुकानें। पिकाडिली और उसके आस-पासके रंगीन रात्रि जीवनकी चर्चा हो सकती है लेकिन जिनकी उसीमें दिलचस्पी हो उनके लिए पेरिस या रोम अधिक आकर्षक होगा। या पिकाडिली लन्दनके गुण्डोंका भी केन्द्र है और अन्य बड़े नगरोंकी भाँति इनमें भी इटालीय गुण्डोंका प्राधान्य है यद्यपि उनके अलावा इंग्लैण्डके सभी उपनिवेशोंके गुण्डे यहाँ पाये जा सकते हैं। इटालियन और वेस्ट इण्डीजके लोग यहाँ अधिक संख्यामें दीखते हैं, और इटालियन भोजनालयों और कहवाघरोंसे पिकाडिली भरा हुआ है। इधर इंग्लैण्डमें युवा अंग्रेज गुण्डोंका जो नया सम्प्रदाय बढ़ने लगा है—टेडी बॉयज़का—उनकी वेशभूषा पागल भी पिकाडिलीमें काफी दीख जाता है पर उनका कार्य-क्षेत्र दूर दूर तक फैला हुआ है और पिकाडिलीको उनका विशेष केन्द्र नहीं कहा जा सकता।

वेस्टमिंस्टरमें ही पार्लमेण्ट भवनसे अथवा वेस्टमिंस्टर एबेसे कुछ हटकर सन्त मार्गारेटका छोटा गिरजाघर है जिसे हाउस ऑफ कामन्सका गिरजाघर माना जाता है। मुझे यह गिरजाघर बहुत सुन्दर लगा और यह सोचकर अब भी आश्चर्य होता है कि इसका उल्लेख इतना कम क्यों होता है।

लन्दनका परिवेश सुन्दर है। बल्कि बड़े शहरोंसे बाहर निकलकर इंग्लैण्डका सारा देहात ही बहुत सुन्दर है। और उसमें इतना विविधता

ह कि एक एक जिलेके वणनमें एक एक पस्तक लिखी जा सकती ह। मैं लन्दनमें अपने कायमें इतना व्यस्त रहा कि आसपास अधिक नहीं घूमा और निकला तो लन्दन छोडकर दूसरी जगह जानेके लिए ही फिर भी क्यूका वनस्पति-उद्यान जिसमे लगभग सत्तर हजार भिन्न जातियाके पौध और वग ह मन दो-तीन बार देखा। हम्पटन कोट भी देखा जिसे कार्डिनल वूलसान हनरी अष्टमको भेंट किया था—और जो अब भी हनरीकी दो पत्नियो और छठे एडवडके प्रेतोका आवास ह।* आठ सौ वष पुराना विण्डसरका महल और उद्यान और उसके निकट ईटनका विद्यालय देख आया टम्सके किनारे हनले जहाँ प्रतिवष पाल्गर नावोकी प्रतियोगिता होती ह रिचमण्ड और वहाके हम हाउसका सग्रह भी देखा और य सभी दशनीय हैं।

लेकिन तीसरी बार जाडोंमें लन्दन जाकर वहाँके कोहरेका और ठण्डी वर्षाके साथ हाड भेदनेवाली हवाका अनुभव कर लेनेके बाद भी मेरी वहा धारणा रही जो कि आरम्भमें बनी थी लन्दन रहने और काम करनेके लिए अच्छा नगर ह। अतमें इतना उसमें और जोड सका हू कि यह इसके लिए भी अच्छा ह कि व्यक्ति बराबर वहासे बाहर आना-जाना रह सके—दक्षिणमें डवन और कानवाल तो उत्तरमें एडिनबरा और स्काटलण्डकी झीलों तथा उत्तर-पश्चिममें कम्बरलण्ड और वस्टमोरलण्डकी यात्रा या वनके पहाडी अथवा देहाती प्रदेश तक और हाँ जब-तब जहाँ तहाँ सागरतट तक।

---

* इंगलण्डमें अनेक भवन हैं जो भुतहे प्रसिद्ध हैं भवनकी रक्षाके साथ भूतकी और उससे सम्बद्ध साहित्यका भी रक्षा की जाती है क्योंकि बहुधा भूतोंक विज्ञापनसे आकृष्ट सलानी हा उस प्रायके साधन होते हैं जिससे भवनकी मरम्मत प्राप्ति होता रहे।

एडिनबरा

देश विदेश घूमे हुए किसी व्यक्तिसे पूछा जाय कि संसारका सबसे सुन्दर नगर कौन सा है तो इसकी सम्भावना कम है कि वह एडिनबराका नाम लेगा। रोमा, पेरिस फिरेंजे वनेतिसया (वेनिस) स्टाकहोम, सानफ्रान्सिस्को—ये नाम इस प्रसंगमें बहुधा सुने जाते हैं। पिछले दिनों लाड पथिक लारससे भेंट हुई थी तो उन्होंने कहा था कि बुडापेस्ट अवश्य देखूं क्योंकि वह संसारका सबसे सुन्दर शहर है। कॉलेजमें अपने चेकोस्लोवाकिया जानेकी तैयारीकी बात प्राउटीन प्राउटमट्रके की थी तो वह कुछ क्षणोंके लिए स्मृति विभोर हो गयी थीं फिर उन्होंने कहा था 'प्राग संसारका सबसे सुन्दर शहर है—वहाँ जाओगे तो सन्त सोफ्रियाके गिरजा घरसे नगरको देखना और उस समय मेरी ओरसे सारी नगरीको नमस्कार करना।'

किन्तु कोई अगर यह दावा कर रहा है कि एडिनबरा सबसे सुन्दर है तो मैं समझता हूँ कि उसका खण्डन करनेसे पहले थोड़ी देर सोचना पड़ेगा। क्योंकि एडिनबरामें अवश्य बहुत कुछ ऐसा है जो सुन्दर और आकर्षक है और जिसकी बराबरीका कुछ अन्यत्र आसानीसे नहीं मिलेगा। सम्भव है कि सौन्दर्यके जो तत्त्व यहाँ मिलते हैं अलग-अलग उनमेंसे कोई भी अन्यत्र और अधिक मात्रामें मिल सकते हों, किन्तु प्रश्न उनके एक साथ और ठीक उसी अनुपातमें पाये जानेका है। क्योंकि जादू अलग-अलग तत्त्वोंमें नहीं बल्कि उनके योगमें होता है कोई भी रसविद् इसकी पुष्टि करेगा।

या तत्त्वोंमेंसे मुख्य कुछ गिनाये जा सकते हैं। सबसे पहला नगरके बीचकी पहाड़ी और उसके शिखरपर बना हुआ दुर्ग है। नगरमें कहीं भी चले जावें, यह दुर्ग ऊपर छाया रहता है और इसके कारण दृश्यकी क्षिति रेखा सदैव सुन्दर रहती है। रातको जब दुर्ग आलोकित हो जाता है और शिखरसे हटकर पहाड़ीकी पीठपर बनी हुई इमारतें जगमगा उठती हैं तब

क्षिति रेखाका रूप भी निखर आता है। एडिनबराकी मुख्य सड़क प्रिंसेज़ स्ट्रीट इसी पहाड़ीसे लगी हुई चलती है। सड़कके पहाड़ीवाले पार्श्वपर कोई इमारतें नहीं हैं जिससे सड़कके दूसरे किनारेपर बनी हुई इमारतें और भी उभर आती हैं और उनके दृश्यमें कभी व्याघात नहीं पड़ता।

दूसरा तत्त्व नगरके भूतलकी असमता है। सीधी सपाट भूमिपर न बने हुए होनेके कारण एडिनबरामें जगह जगह ऐसे स्थल मिलते हैं जहाँसे नगरके एक बड़े अंशका विहंगम दृश्य मिल जाय और दर्शकको मोह ले।

मेरी धारणा है कि सुन्दरताकी गणनामें जिन शहरोंके नाम लिये जाते हैं उनमें प्रायः यह तत्त्व पाया जायगा। असमतल भूमि या पानीका विस्तार, या दोनोंका योग नगर-सौन्दर्यका एक बहुत बड़ा अंग है। यह बात इटलीके शहरोंके बारेमें कही जा सकती है, यही पेरिसके, यही बुडापेस्ट और सानफ्रांसिस्कोके। और यही कदाचित नयी दिल्लीके बारेमें भी कही जा सकी होती यदि नया बसानेमें उसकी सब पहाड़ियोंको छील और काटकर सपाट न कर दिया गया होता। अब भी लोग राष्ट्रपति भवनके पीछेकी पहाड़ियोंपरसे न केवल पूर्वके दृश्यकी प्रशंसा करते हैं बल्कि पश्चिमको बनी हुई वास्तु शिल्पकी दृष्टिसे अत्यन्त कुरूप करौलबागकी बस्तीको भी सुन्दर पाते हैं—केवल इसलिए कि असम भूतलका तत्त्व अब भी कुछ बचा रह गया है। निःसन्देह प्राकृतिक पहाड़ियोंको रहने देनेसे शहरकी गन्दगीकी निकासीकी समस्या कुछ कठिनतर होती—लेकिन नये नगर केवल गन्दगीकी निकासीके आधारपर तो नहीं बसाये जाते! लेकिन हमें बात दिल्लीकी नहीं एडिनबराकी करनी है।

एडिनबराके सौन्दर्यका तीसरा तत्त्व है उत्तरी प्रदेशोंकी विशेष जलवायु और स्वाभाविक प्रकाश। यों तो पृथ्वीकी उष्ण मेखलामें उत्तरकी ओर जाते हुए जब हम यूरोपके उत्तरी प्रदेशमें पहुँचते हैं तो सर्वत्र यह लक्षित होता है कि वहाँका प्रकाश कुछ और ढंगका है—धूप भी भिन्न है और छाँह भी। और वहाँ धूप भी प्राकृतिक रंगोंको और निखारती ही है, एकदम मारती नहीं

ऐसी जैसा कि भूमध्यके निकटके प्रदेशोंमें होता है जहाँ रंग उतने नहीं दीखते जितनी रंगोंकी चौंध। लेकिन सूर्यकी किरणोंके सीधे न बरसकर तिरछे बरसनेसे जो अन्तर आता है उसकी अपेक्षा कहीं बड़ा अन्तर सागरकी निकटता, पर्वतकी निकटता, सागर और पर्वत दोनोंकी निकटता और वायुकी दिशा या गतिसे हो जाता है। वायु-मण्डलकी नमी प्रकाशको बदल देती है, फिर नम वायु-मण्डलमें तापमान और वायविक दबावके भेद उसे और बदलते रहते हैं। धूप और उड़ती हुई बदली और धूप-छाँहके खेल जो चमत्कार लाते हैं वे इसके ऊपर हैं। कहनेमें जान पड़ता है कि यह सब पानी-सी बातको बहुत अधिक तूल देना है, लेकिन वास्तवमें प्रकाशका यह भेद न केवल दृश्यको बदल देता है बल्कि उसपर आधारित चित्र कलाको भी बदल देता है, पहनावेके रंग-ढंगको बदलकर सामाजिक जीवन को ही बदल देता है। दृश्य-स्थलकी चित्र-कला अगर ब्रितानी द्वीप-समूहमें या हालैण्डमें ही विशेष रूपसे विकसित हुई तो यह अकारण नहीं था— प्रकाशकी रंगतके बारेमें जो कुछ कहा गया है वह हालैण्डपर भी लगभग उतना ही घटित होता है। फिर भर आँकनेवाले चित्रकारोंकी प्रतिभा ब्रिटेनमें जल-रंगोंकी और हालैण्ड अथवा बेल्जियममें तैल-रंगोंकी ओर झुकी तो इसका कारण भी मुख्यतः आलोकके इसी भेदमें है—ब्रिटेन और स्काटलैण्डका नम आकाश अधिक अन्तरालोकित होता है और पारदर्शी जल-रंग उसके अधिक अनुकूल होते हैं। गहरे पक स्पेन या इटालियाकी ढालपर दहकते हुए पौधोंके फूल या गिलास और मखमलका 'गाढ़ा ब्रिटेनमें भी होता है और हालैण्ड या बेल्जियम या तटवर्ती फ्रांसमें भी लेकिन महाद्वीपके चित्रकार इन चीजोंको देखते हैं और इन्हींके निमित्तसे उस प्रकाशको जो आकाशसे झरकर इनपर गिरा है, जब कि ब्रिटेनका चित्रकार स्वयं आकाशमें बसे हुए प्रकाशको देखता है और उसीके निमित्त से भूतलके रंगोंको देखता है जो उस प्रकाशकी गहराईपर बल देते हैं। परिच्छिन्न चित्रणकी दोनों परम्पराओंका समान्तर अध्ययन बड़ा रोचक हो

सकता है और आन्दोलनकी उर्वर भूमि परिसके प्रभाववादी (इम्प्रेशनिस्ट) सम्प्रदाय या आलोक-कणवादी (प्वाइंटिलिस्ट) शैलीको नया सन्दर्भ देता है। सेज़ान, मोने, माने, सर्रा, रेनवार और वानगोगके चित्र और उनके कला-सम्बन्धी वाद-विवाद इसी सन्दर्भमें सार्थक होते हैं।

एडिनबराके सौन्दर्यको अद्वितीय माना जाय या न जाय, एक नगरके रूपमें उसका चरित्र विशिष्ट है। वास्तवमें वह अब भी एक राजधानी है, यद्यपि स्काटलैंड अब अलग राष्ट्र नहीं है।

राष्ट्रीयताके बोधके दो तत्त्व होते हैं — राजनीतिक एकताका भान और एक जातीयताकी भावना। स्काटलैंडमें पहलेके जीवित प्रतीक अब नहीं रह गये हैं, किन्तु जहाँ तक अलग जाति अथवा जनकी भावना है उसमें अब भी कोई अन्तर नहीं आया है। प्रायः तीन सौ वर्ष पहले इंग्लैंडसे संयुक्त न होकर भी स्काटिश जाति जैसी होती आज भी वैसी ही है, इसके बावजूद कि अंग्रेज़ों द्वारा दमनके एक कालमें स्काटिश पहाड़ी इलाक़ोंके वासियोंसे दबंग, उद्धत और आज़ाद-तबीयत बाँकोंको देश निकाला दे दिया गया था, देशान्तर—मुख्यतया कनाडा—भेज दिया गया। सत्रहवीं शतीके आरम्भमें स्काटलैंडने अपना राजा जेम्स षष्ठ इंग्लैंडको दे दिया—सन् १६०३में स्काटलैंडका जेम्स इंग्लैंडके सिंहासनपर आरूढ़ हुआ। अठारहवीं शतीके आरम्भमें स्काटलैंड ग्रेट ब्रिटेन और आयरलैंडके संयुक्त राज्यका अंग बन गया। इस प्रकार अपना राजा और राजतन्त्र इंग्लैंडको देकर स्काटलैंडने अपना स्वतन्त्र राज्यतन्त्र तो छोड़ दिया, लेकिन अपने स्वतन्त्र जातित्वको बनाये रखनेकी और भी अच्छी व्यवस्था कर ली। उस जातीय चरित्रकी विशेषता चार सौ वर्ष पहले उस संघर्षमें प्रकट हो गयी थी जो उन्होंने अंग्रेज़ोंसे अपनी स्वतन्त्रताकी रक्षाके लिए किया था। सन् १३१४ में बैनकबर्नकी जो लड़ाई हुई वह इतिहास प्रसिद्ध है, लेकिन

अंग्रेज या फ्रांसीसी इतिहासकारोंने उसका सही वर्णन नहीं किया है। बनक्बर्नमें स्कॉटियोंकी विजय हुई और इस प्रकार इनका देश कुछ शतियोंके लिए सुरक्षित हो गया, यह तो सही है पर इस एक परिणामको स्वीकार कर लेनेसे ही युद्धका वास्तविक रूप स्पष्ट नहीं होता। अंग्रेज और फ्रांसीसी इतिहासकारोंने फ्रांसीसी सूरमाई परम्परा का अनुसरण किया है जिसके अनुसार युद्ध दोनों पक्षोंके गिने-चुने सूरमाओं अथवा महारथियोंका शौर्य प्रदर्शन हो जाता है। निःसन्देह मध्यकालीन युद्ध ऐसे ही होते थे, लेकिन बनक्बर्नकी लड़ाई स्वयं भी ऐसी नहीं थी और जिस युद्धका वह अंग थी वह तो कदापि ऐसा नहीं था। वास्तवमें रॉबर्ट ब्रूस और उसके अनुयायियोंका संघर्ष थोड़ेसे उल्लेखनीय सूरमाओं और बहुतसे नगण्य अनुचरोंका युद्ध नहीं था, बल्कि एक जन-युद्ध था जिसमें अनेक स्वाधीनताप्रेमी और स्वाधीन-चेता जन-योद्धा स्वतन्त्र रूपसे भाग ले रहे थे। रॉबर्टके लिए एक दुर्ग एक किसानने जीता, दूसरा एक नौकरने; ब्रूस अपने थके हुए सहयोगियोंको कहानियाँ सुनाकर सहलाते या बहलाते थे, रातको स्वयं सिपाहियोंके झोपड़ेमें सोते। वह वास्तवमें सैनिक अधिनायक उतने नहीं थे जितने एक ऐसे बड़े सम्प्रदायके अग्रज जिसके सभी सदस्य अग्रजमें श्रद्धा रखते हुए भी मनचले, अक्खड़ और स्वतन्त्र थे और मनमाने ढंगसे बिना नेताकी अनुमति माँगे मौका देखकर युद्ध करते धावा बोलते या घात लगाते, और शत्रुके गढ़ या टीले छीन लेते।

स्कॉटी कवि बारबरने अपने काव्यमें इस युद्धका जो वर्णन किया है उससे स्कॉटी जातिका चरित्र उभरकर सामने आता है। स्वाधीनताके साथ एक बुनियादी ढंगकी समताका भाव (जिसे आज शायद प्रजातान्त्रिक प्रवृत्ति कहा जाएगा) स्कॉटी स्वभावका मूल गुण है। स्वाधीनता कभी निरंकुशताका रूप भी लेती है, तब स्कॉटी लोग ह्विस्की पीते हैं (ह्विस्की आखिर उन्हींकी ईजाद है!) और दंगा मचाते हैं या लड़ते हैं। समताकी भावना कभी कभी दूसरोंके मामलोंमें उचितसे अधिक दिलचस्पी या अक्ख-

रण आलोचना करनेकी ओर प्रवृत्त करती है, लेकिन उनकी प्रखर सहज बुद्धि उन्हें सब अतिसे बचा लेती है। बुद्धि, तर्क और स्पष्ट अथवा प्रमाण-युक्त कथनका उनमें बड़ा सम्मान है। प्रोटेस्टेंट ईसाई मतके अन्तर्गत स्काटिशोंका जो विशिष्ट सम्प्रदाय बना, उसके मूलमें भी यह मांग थी कि धर्म विश्वास भी स्पष्ट और बुद्धि-संगत और समताकी भावनापर आधारित होने चाहिए।

स्काटिश जातिकी चरित्रगत विशेषताओंका प्रतिबिम्ब एडिनबरा है। उसकी भौगोलिक अथवा भौमिक स्थितिने उसे जो सौन्दर्य दिया है, उसे ये चारित्रिक विशेषताएं पुष्ट करती हैं। दक्षिणमें इंग्लैंडसे पृथक करनेवाली सामान्तर गिरि शृंखलाओं और उत्तरमें दुर्गम पर्वतीय प्रदेशके बीच तल-हटीमें बसे हुए एडिनबराके लिए कभी यह सम्भव नहीं हुआ कि वह स्काट-लैंडमें उस प्रकारका सत्तामूलक शासन स्थापित कर सके जैसा इंग्लैंडमें था और जैसा आज किसी भी सुव्यवस्थित देशमें आवश्यक माना जायगा। किन्तु इसी विशेष स्थितिने उसे उस समानीकरणसे भी बचा रखा है जो उस प्रकारकी व्यवस्थाके साथ आता है। स्काटलैंडका धर्म-संगठन अलग है, शिक्षा-पद्धति और न्याय-व्यवस्था भी अलग है। सभीका केन्द्र एडिनबरा है, जो इनके अतिरिक्त चिकित्सा विज्ञानका विश्व विख्यात केन्द्र है। पर उद्योग स्काटलैंडके दूसरे बड़े नगर ग्लासगोमें केन्द्रित है। जहाजोंके निर्माणमें क्लाइडके महानगर केन्द्र ब्रिटेनमें सबसे अधिक समर्थ हैं। ग्लासगो और उसके आसपासका क्षेत्र उद्योगकी बस्तियां कुरूपताकी होड़में [illegible] पश्चिममें आयेंगी, जिसका कारण यह है कि औद्योगिक क्रान्ति ब्रिटेनमें ही आरम्भ हुई और उसके प्रथम दुष्परिणाम यहां प्रकट हुए। उनसे शिक्षा ग्रहण कर दूसरे देशोंने यन्त्र विकासको एक व्यवस्थित ढंगसे नियन्त्रित किया, पर ब्रिटेनमें—उत्तरी इंग्लैंड और दक्षिणी स्काटलैंडमें—जो हो चुका था वह हो चुका था। उसमें एक उपारम्भमें अबाध कारखाने और मजदूर बस्तियां बन गया था और धुआं और गन्दगी उगलने लगा

थीं। आसपासके देहाती प्रदेशोंसे किसान मन्त्र मुग्धसे खिंचे चले आये थे और मज़दूर बन गये थे। सकड़ों वर्षोंकी परम्पराएँ मिट गयी थीं और दो ही पीढ़ियोंमें प्रतिष्ठित जीवन परिपाटीका स्थान अव्यवस्थाने ले लिया था। अनन्तर कानून बने सुधार हुए, जीवन-व्यवस्था कुछ सम्हली, लेकिन ये कुरूप बस्तियाँ हठपूर्वक कुरूप ही बनी रहीं।

उधर उत्तरमें अठारहवीं शतीमें चार्ल्स एडवर्ड स्टुअर्ट (प्रिंस चार्ली) के नेतृत्वमें ब्रिटेनके विरुद्ध जो विद्रोह हुआ था उसके कुचले जानेपर अंग्रेजोंने जो कठोरता बरती उसके कारण उत्तरका जीवन भी बदल गया। अंग्रेज सेनापति कम्बरलैण्डकी गतिविधि ऐसी थी मानो वह विद्रोह भावके साथ-साथ हाइलैण्डर जातिको ही मिटा देना चाहता हो—बल्कि उसका बस चले तो पर्वत-वासियोंके साथ-साथ पर्वतीय प्रदेशोंको ही मिटा दे। इस विनाश-लीलाके बाद सदरलैण्डको यह सूझी कि पर्वतीय प्रदेश मानवों की अपेक्षा भेड़ें पालनेके लिए अधिक उपयोगी हो सकता है बहुत बड़े प्रदेशकी कुल जन-संख्याको वहाँसे हटाकर कनाडा भेज दिया गया या भूखा मरनेके लिए छोड़ दिया गया। भेड़ें पालनेकी नयी योजनाएँ सफल नहीं हुईं और आजतक उजाड़ पर्वतीय प्रदेश ग्रीष्ममें आनेवाले सैलानियों और शिकारियोंकी क्रीड़ा भूमि रह गयी। इस प्रदेशका निर्जन बीहड़ और कुछ कुछ डरावना सौन्दर्य अब भी अपना आकर्षण रखता है और अभिमानी स्काटके आत्म-गौरवको पुष्ट करता है। जहाँ तहाँ किसानों भेड़ पालने वालों ऊन कातने और बुननेवालों और मछेरोंको फिरसे बसानेके प्रयत्न भी हो रहे हैं। बीहड़ प्रदेशोंमें बसनेवाले इन परिवारोंमें—जैसा कि ऐसी परिस्थितिमें प्रायः होता है—एक आश्चर्यजनक विनय और सौजन्य सूक्ष्म संवेदना और शान्त और सन्तोषपूर्ण जीवन-दृष्टि मिलेगी। पर जो सफलता वादी आधुनिक यान्त्रिक जीवनके मूल्योंको मानते हैं उन्हें इस सादे और कठिन जीवनके मूल्य अथवा परितुष्टियोंको समझनेमें कठिनाई होगी।

इन्हीं विरोधोंके बीच एडिनबरा नगर बसा हुआ है। वह इन विरोधोंको प्रतिबिम्बित भी करता है लेकिन इन्हींके कारण इनसे अलग बना भी रह गया है। उत्तरके दुर्गों, महलों और शिकारगाहोंमें प्रतिवर्ष इंग्लैण्डका अभिजात-वर्ग जाता है और वन प्रदेशोंमें इंग्लैण्डके अलावा अनेक देशोंके सैलानी घूमते हैं। इंग्लैण्डके राज-परिवारके एकाधिक महल वहाँ हैं और ब्रिटेनके राजा या रानी प्रतिवर्ष विधिपूर्वक वहाँ जाते हैं और निवास करते हैं। लेकिन उस संयुक्त राष्ट्रीय जीवनके, जिसका केन्द्र और राजधानी लन्दन है, एक भीतरी मण्डलमें एक अलग जाति-जीवनकी राजधानीके रूपमें एडिनबरा अपना स्थान अक्षुण्ण बनाये हुए है। इसी अक्षुण्णताके नातेमें सुरक्षित स्काटी अपनी पीठ भी ठोक लेता है और अपनेपर हँस भी लेता है। स्काटी कंजूस प्रसिद्ध है, किन्तु स्वयं अपने इस गुणके बारेमें जितने चुटकुले वह आपको सुनायेगा उतने आपको कहीं और नहीं मिलेंगे इस प्रकार अपनी मितव्ययिताके बारेमें आश्वस्त होकर वह जितनी उदारता बरतेगा वह भी कम-से-कम ब्रिटेनमें अन्यत्र नहीं मिलेगी। अपनी ह्विस्कीका वह दूर दूर तक निर्यात करता है, इधर उस ओर ध्यानके लिए वह स्वयं बाहरसे आयी ई घटिया ह्विस्कियाँ भी पीने लगा है—सचमुच !—और यन्त्र-उद्योगोंके साथ उसके कुटीर उद्योग भी उन्नति करने लगे हैं। और आर्थिक स्तरपर आश्वस्त होकर उसने जो विशाल सांस्कृतिक आयोजन आरम्भ किया है—एडिनबरा फेस्टिवल—वह सारे संसारमें विख्यात हो गया है, उसके आकर्षणसे दूर दूरके लोग वहाँ पहुँचने लगे हैं। मन हो तो एक दिन उसमें इटली नृत्य-नाट्य, स्मरानी और अफ्रीकावन फ़िल्म, अमरीकी नाटक, जर्मन संगीत आदि। फ़िल्म प्रदर्शनीमें बीससे अधिक दर्शनीय चित्र थे। भारतीय नृत्य-नाट्य वहाँ हो चुका है, जापानी नाट्य और कठपुतली, चीनी ऑपेरा। इस प्रकार वह सांस्कृतिक प्रगतिके साथ चलता है पर हृदयसे वह वन-मुग्ध ग्राम जीवन-पुष्ट आत्म-गौरवमय मानस लिये रहता है जो उसके राष्ट्रीय कवि राबर्ट बर्न्सके गीतोंमें प्रतिबिम्बित होता है।

'ओ माइ लव'ज लाइक ए रेड रेड रोज
दट'स न्यूली स्प्रग इन जून
ओ माइ लव'ज लाइक द मेलोडी
दट स स्वीटली प्लेड इन टयून !'*

× ×

टु सी हर इज टु लव हर
एण्ड ल्व बट हर फार एवर
फार नचर मेड हर ह्वाट शी इज
एण्ड न र मेड सिक एनिदर ! †

---

* रावट बन्स 'ए रेड रड रोज'। †विहो वानी लेस्ली ।

ताल-तलहटी, स्रोत और स्रष्टा

[तीन पत्र]

प्रिय—

आज रात बारह बजेसे रेल-हड़ताल हो जायगी। मैं आशा करता हूँ कि यह पत्र इससे पहले यहाँसे निकलकर लन्दन तक पहुँच जायगा क्योंकि वहाँसे आगे तो तुम तक विमानसे जा ही सकेगा—हड़तालके बावजूद। या तो यह भी सम्भव है कि कल शुरू होकर हड़ताल परसों समाप्त भी हो जाय क्योंकि ऐसा नहीं जान पड़ता कि परिस्थिति उतनी विषम या तनाव उतना अधिक है जितना पिछली व्यापक हड़तालके समय था। लेकिन कुछ कहा नहीं जा सकता—दस-पन्द्रह दिन भी तो चल ही सकती है।

यह दिन मैंने यात्राके लिए पहलेसे नियत कर रखा था और उसी कार्यक्रमका पालन कर रहा हूँ—इतना ही है कि रेलके टिकट सब वापिस कर दिये हैं और बससे यात्रा करता रहूँगा।

कल बर्मिंगहम पहुँचा। जा तो रहा था स्ट्रैटफ़ोर्ड जो शेक्सपियरकी भूमि रही और जहाँ अब शेक्सपियर स्मारक थियेटर है—वहींसे पत्र लिख रहा हूँ—और उसके बाद आर्डेनके प्रदेशमें जो स्वयं आदि कवियोंको प्रेरणा देता रहा। लेकिन लन्दनमें जब कार्यक्रम तय कर रहा था तब मुझसे पूछा गया, बर्मिंगहम तो जाओगे ही—वहाँके संग्रहालयमें काँसेकी बुद्ध मूर्ति देखने? मैं संग्रहालय बराबर देखता रहा हूँ और उनके भारतीय संग्रह

विशेष रूपसे और इस विषयमें मेरी रुचि सभी जान गये हैं। इसलिए बर्मिंगहम होकर ही स्ट्रैटफोर्ड जानेका निश्चय हुआ और अब बहुत प्रसन्न हूँ कि क्या हुआ। गान्धार गलीकी कासेकी मानवाकार बुद्ध प्रतिमा मन दूसरी नहीं देखी और भारतके संग्रहालयोंमें कहीं भी इससे तुलनीय कोई मूर्त्ति नहीं है। बुद्धकी प्रस्तर मूर्त्तियाँ अवश्य इससे अच्छी हैं लेकिन कासे की ऐसी त्रुटि विहीन भव्य मूर्त्ति नहीं। काले पत्थरकी पद्म-पाणिकी भी एक सुन्दर मूर्त्ति देखी और कुछ अन्य मूर्त्तियाँ भी।

प्री राफेलाइट सम्प्रदायके चित्रोंका बहुत बड़ा संग्रह भी देखा। लन्दनमें भी राष्ट्रीय चित्र-संग्रहालयमें बर्न जोन्स और मिले और रोजेटीके कुछ चित्र देखे थे लेकिन यहाँ बड़े तैल चित्रोंके अलावा छोटे चित्र और रेखा चित्र बहुत बड़ा संख्यामें देखनेको मिले और मेरा वर्षोंकी एक कामना पूरी हुई। इस गलाके दिन बीत गये और अब ऐसे कला-समीक्षक बहुत हैं जो सारे सम्प्रदायके समूचे कृतित्वको एक 'उह!' के साथ उड़ा देना चाहते हैं लेकिन अंग्रेजी रोमाटिक कविताके साथ इसका जो अभिन्न सम्बन्ध है उसका अध्ययन रोमाटिक प्रवृत्तिको और रोमाटिक काव्यको समझनेके लिए आवश्यक है। प्राक्राफेल कलामें एक साथ ही प्रकट होनेवाले एक ओर दैहिक आग्रहके, और दूसरी ओर देहकी नश्वरताके तत्त्व रोमाटिक काव्य और भावनापर विशद प्रकाश डालते हैं।

बर्मिंगहमसे स्ट्रैटफोर्ड आकर ऐवन नदीके किनारे बना हुआ भव्य शेक्सपियर थियेटर देखा। आजकल शेक्सपियर उत्सव चल रहा है और प्रतिदिन नया नाटक खेला जाता है। इसके टिकट महीना पहले बिक चुकते हैं और यहाँ आकर हाथके हाथ टिकट पा लेनेकी आशा दुराशा ही होती है—या कोई बचा-खुचा या लौटाया हुआ टिकट मिलता भी है तो बहुत अधिक दामोंका। किन्तु ब्रिटिश कौंसिल विदेशी अध्यागतोंके लिए कुछ स्थान सुरक्षित रखती है और उनके टिकट क्रमानुसार उसके आमन्त्रित व्यक्तियोंको मिल सकते हैं। यूनेस्कोकी एजेंसीके रूपमें ब्रिटिश कौंसिल

मेरे ब्रिटेन प्रवासका प्रबन्ध कर रही है इसलिए दो दिनके टिकट मुझे भी मिल सके। एक सुखान्त नाटक रात देख लिया—ट्वेल्फ्थ नाइट जिसमें वायोलाका अभिनय विवियन ले ने किया और माल्वोलियोका लारेंस आलिवियर ने। इसके बाद एक दुखान्त भी देख सकूँगा—हैमलेट। सम्भव है कि दो एक और भी अभिनय देख सकूँ क्योंकि प्रत्येक खेलके लिए दो सौ टिकट उसी दिन खेलसे पहले बिकते हैं जिनके लिए पाँत लगाकर खड़ा होना पड़ता है। ये टिकट किसी सुरक्षित स्थानके लिए नहीं केवल खड़े होने भरकी जगहके लिए होते हैं जिसकी गुंजाइश हालमें रखी गयी है।

स्मारक थियेटर भवनके शेक्सपियरकी स्मृति रक्षा और प्रतिष्ठाके लिए किये जानेवाले आयोजनोंके और साधारणतया सारे ब्रिटेनमें रंगमंचको पुनरुज्जीवित करनेके लिए ब्रिटेनकी आर्ट्स कौंसिलके उद्योग सहयोग और अनुदानके बारेमें बहुत कुछ कहना चाहता हूँ किन्तु अभी नहीं। काश कि ऐसी कोई संस्था हमारे देशमें होती। आर्ट्स कौंसिलको पार्लमेंटसे अनुदान मिलता है—पार्लमेंटका अनुदान क्योंकि निर्वाचित प्रतिनिधियोंके अनुमतसे मिलता है इसलिए उसे सरकारी सहायता नहीं कहा जाता और ऐसा अनुदान पानेवाली संस्थाएँ इस भयसे बची रहती हैं। और उनका बचा रहना सार्थक है यह तब स्पष्ट हो जाता है जब हम ऐसी संस्थाओंकी कार्य विधिकी तुलना अपने देशकी अकादेमियोंसे करते हैं जिन्हें सरकारी अनुदान मिलता है और जिनकी अधीनता प्रति दिन बढ़ती ही जा रही है।

किन्तु स्ट्रैटफोर्डकी बात करें। अभिनय अच्छा था यद्यपि दर्शक मण्डलीमें मेरी स्थिति कुछ विचित्र थी। दोनों ओर अमरीकी टूरिस्ट बैठे थे—टूरिस्ट लोग शेक्सपियर स्मारक थियेटरका बहुत बड़ा सहारा हैं और आजकल उनका मौसम है। दाहिनी ओर टेक्सासका एक परिवार—मेरे सामनेकी कुर्सीपर मिस्टर टेक्सास सुडौल लम्बे और छातीपर जमे बगैरे

चेहरे वाले, उसके बाद उनकी दोनों सन्तान और पत्नी। इंग्लैण्ड आये हैं तो स्ट्रैटफोर्ड-आन-ऐवन जाये बिना लौटना कैसे हो सकता है? लेकिन यह शेक्सपियर कब हुआ और क्या सचमुच बड़ा लोकप्रिय नाटककार है? हमें तो कुछ कुछ पुराना जान पड़ता है... मगर दूसरी ओर एक मोटी आयरिश अमरिकी स्त्री जो तुतलाती थी और इन दो अमेरिकाओं के बीच बातचीत बराबर जारी थी। थोड़ी ऐसी मुलाकात में शेक्सपियर कैसे देखा जा सकता! इसमें तो ध्यान देना भी मुश्किल था।

नाटक देखकर बाहर निकला तो आकाश खुल गया था और चाँद निकल आया था। रंगशाला से कुछ दूर नदी के पुल पर जाकर बैठा रहा और वहाँ देर तक नदी का दृश्य देखता रहा और थियेटर भवन से आते हुए लोगों की बात सुनता रहा।

ये पश्चिमी भ्रमणार्थी लोग मेरी समझ में नहीं आते। सुन्दर के प्रति ये समर्पित नहीं होते, बकबक-बस छिछले और सतही बने रह जाते हैं। मैं सोचता हूँ जब ये स्वर्ग जाते होंगे तो नन्दन कानन में पहुँचकर कहते होंगे 'नाइस स्पॉट'—और झोले से सैण्डविच निकालकर खाने बैठ जाते होंगे—या रबड़ी के बुलबुलों की मिठाई—बबल-गम! नहीं तो 'ये ओल्ड इन'—'ये [illegible] मग' (पुरानी कलवारी—शराबघर और वधदण्ड) की तलाश में चल पड़ते होंगे, जहाँ एक एक मग सोमरस पान पान बारमेड-अप्सराओं द्वारा हल्की खुशी होती रहे! (मैं जानता हूँ कि यह अतिरंजना भी है और अनुदारता भी लेकिन अभी मुझे अपने मनोभाव के अलावा दिमाग कोई मतलब नहीं है।)

मन अभी गया नहीं और ग्रीष्म-कुहासा शुरू हो गयी है। स्नान सून पड़ गये हैं और शाम ठण्डा पड़ गया है। जो [illegible] एक गाड़ियाँ चलती भी हैं तो बिल्कुल खाली क्योंकि यह मौसम कोई नहीं उगना चाहता कि

गाड़ी कहीं रास्तेमें अटक जाये। ये छुट्टियोंके दिन हैं और कौन अंग्रेज अपनी छुट्टीको खटाईमें डालना चाहेगा! पर्व मैंने शुक्रवारको आरम्भ किया था, आज सोमवार है। कलसे ही यहाँ खचाखच भीड़ हो गयी थी और आज सोमवारको तो पूछो मत। सप्ताहान्त, व्हिट मनडे, बैंक हालिडे, रेल-हड़ताल और खुली चटक धूप—सब एक साथ हो गया है! तीन ग्रह भी एक घरमें आ जायें तो राजयोग हो जाता है, यहाँ तो पाँच ग्रह ये हो गये और ऊपरसे शेक्सपियर उत्सव तो है ही। स्ट्रैटफोर्डका चौक और छोटी-बड़ी सड़कें सब बसों और मोटरोंसे पट गया है। गली-गलियारोंमें और नदीके किनारेपर लोगोंकी ठसमठेल है। जो कुछ भी करना हो उसके लिए कतार लगाना पड़ रही है, खान-पीन तकके लिए लोग कहवा घरोंके बाहर कतार लगाये खड़े हैं।

मैं भी इस समय कतारमें हूँ—लेकिन खड़ा नहीं हूँ, अपने सूटकेसपर बैठा हूँ। एक हाथमें सूटकेस और दूसरेमें एक अटैची और एक झोला उठाये हुए मैं बर्मिंघमके बसके अड्डे तक पहुँचा हूँ और कतारमें अपना स्थान लेकर बैठ गया हूँ। बर्मिंघमसे आगे झीलोंके प्रदेश जानेके लिए ट्रेनोंके बदले टिकट तो पहलेसे रखे हैं, लेकिन स्ट्रैटफोर्डसे बर्मिंघमकी सर्विस शहरी सर्विस है, जिसका टिकट बसमें सवार होकर ही लिया जाता है। मेरे आगे लगभग छः सौकी कतार है और पीछे तो इस कतारका छोर मुझे दीखता ही नहीं है। दस-दस मिनटकी सर्विस है, बसमें थोड़ी-थोड़ी सवारियाँ भरती हैं। मेरी बारी कब आयेगी इसका हिसाब लगाना कठिन नहीं है, पर आवश्यक भी नहीं है—इतना सोच लेना काफ़ी है कि चिट्ठी लिखनेका पर्याप्त समय है। प्रत्येक दस मिनट बाद सामान उठाकर हम एक गज आगे बढ़ जाना होता है, बस।

इस बार शेक्सपियरसे सम्बद्ध सब स्थान देख आया था। अच्छा ही हुआ कि शनिवारको बस-सा घूम लिया, नहीं तो हर जगह कतार लगाकर देखने जाना पड़ता, और कतारमें एक-एक घण्टा [illegible] कम कुछ

देखा जा सकता है, मैं तो सोच नहीं सकता हूँ। शेक्सपियरकी पत्नी एन हथावेका बंगला (संसारका सबसे अधिक फोटोग्राफित घर!) हॉल्स क्रॉफ्ट जो शेक्सपियरकी बहन सूसन और उसके पति डाक्टर हॉलका घर था और जहाँ अब ब्रिटिश कौंसिलका कार्यालय और शेक्सपियर संग्रहालय है और मेरी आर्डेनका बंगला जिसमें कविका जन्म हुआ सभी देख लिये। इसके अलावा शेक्सपियर और उसके अभिनयके सम्बन्धमें विद्वानोंके भाषण भी सुन लिये। यहाँ पश्चिममें अभी और बड़ा रहना पड़ेगा, लेकिन रात तक किसी-न-किसी तरह बर्मिंघम पहुँच ही जाऊँगा। वहाँसे कल पीलके प्रदेशकी बस मिलेगी। बर्मिंघममें कुछ घण्टे शायद बिताये जा सकेंगे या फिर यदि वहाँके रेपर्टरी थियेटरमें कुछ हो रहा होगा और उसका टिकट मिल सकेगा तो वह देख लिया जायगा। रेपर्टरी थियेटर भी आर्ट्स कौंसिलकी सहायतासे चलता है, छोटा है पर प्रसिद्ध है और आधुनिक नाटक अच्छे प्रस्तुत करता रहता है। अभी शामको पहले यहीं जाँ आनुईका 'आर्डेल' देखकर आया हूँ।

हृदय अगली बार भरी हो चली है। शेक्सपियरका प्रणाम!

[२]

प्रिय—

दोस्तका बर्मिंघमसे बसके अड्डेपर पहुँचकर लगभग दो बजे वहाँसे प्रस्थान किया। आठ बजे केण्डल, साढ़े नौ बजे एम्बलसाइड और साढ़े दस बजे ग्रासमेयर पहुँच गया। केण्डलसे ही झीलोंका प्रदेश आरम्भ हो जाता है और एम्बलसाइड तकके रास्तेमें कई स्थलोंसे झीलोंकी सुन्दर झाँकियाँ मिल जाती हैं। लेकिन इन दोनों जगह बस बदलकर ग्रासमेयर आ टिकनेका कारण यह है कि यहाँका छोटा ताल, पासकी दूसरी झील राइडल और आसपासके पहाड़ी ढाल विशेष रूपसे वर्ड्सवर्थसे सम्बद्ध हैं।

वर्ड्सवर्थ मेरा विशेष प्रिय अंग्रेजी कवि रहा हो ऐसा तो नहीं है लेकिन इस प्रदेशका कल्पना-परिचय उसीकी कविताओंके द्वारा हुआ और अंग्रेज़ी पढ़नेवाले अन्य भारतीयोंकी तरह मेरे लिए भी इंग्लैण्डका आकर्षण पहले कविताका है।

ग्रासमियर झीलके उपरले छोरपर (मरे गेताल !) रोथे नदीके किनारे एक होटलमें आ टिका हूँ। यह होटल शाकाहारी है—और शाकाहारी होनेके साथ-साथ कुछ खद्दरका भी जान पड़ता है लेकिन स्वच्छ और सुन्दर है और झीलसे कुछ दूर होनेपर भी नदीके किनारेके अपने बगीचेके कारण बहुत सुन्दर। संचालिका न केवल शाकाहारका समर्थन करती हैं वरन् ब्रिटेनमें शाकाहार सभाकी उपाध्यक्षा हैं और शाकाहारी पाक विद्यापर उनकी पुस्तक प्रसिद्ध है। कई पाक प्रतियोगिताओंमें वह पुरस्कार पा चुकी हैं। यहाँका भोजन अच्छा और स्वादिष्ट भी होता है और पर्याप्त विविधता लिये हुए भी। नहीं तो अंग्रेजी खाना या भी अनाकर्षक होता है और शाकको तो उबालनेके अलावा वे बहुत कम कुछ करना जानते हैं! मेरे लिए यह भी आश्चर्यकी बात थी कि होटलके नियुक्त समयसे साढ़े तीन घण्टे देरसे पहुँचनेपर भी मुझे अपने लिए भोजन रखा हुआ मिला और वह भी गर्म और खानेके कमरेमें स्वयं संचालिका द्वारा प्रस्तुत किया गया! (पहलेकी सूचनाके अनुसार मेरे तीसरे पहर पहुँचनेकी बात थी किन्तु मैं रातको देरसे पहुँचा।) अन्यत्र ऐसी स्थितिमें खानेको कुछ मिलता भी तो ठण्डा कुछ और अपने कमरेमें। इंग्लैण्डमें ऐसा सत्कार पहली बार मिला। शाकाहारके गौरवके साथ आतिथ्यका मान भी संचालिकाको है!

लेकिन जहाँ तक झील प्रदेशके सौन्दर्यका सवाल है अपने भीतर झाँकता हूँ तो पाता हूँ कि पहली प्रतिक्रिया निराशाकी है। यह तो ठीक ही है कि वास्तविक अनुभूतियाँ दूसरी होती हैं और स्थूल प्रकृति दूसरी और कल्पना चित्रको वास्तविक दृष्टिसे मिलाकर सुधारना ही पड़ता है।

फिर वह स्वयं और दोनों कालरिज* और सदी† जिस कालके थे उस कालमें प्रकृति-वर्णनमें स्थूल रूप-वर्णनका सिद्धांत मानते भी नहीं थे, वैसा दावा करना तो दूरकी बात है।

हरियालीसे ऊब भी आ सकती है यह नहीं जानता था। अब भी निश्चयपूर्वक नहीं कह सकता कि यहां हरियालीसे ऊब आती है या कि उसकी अति नियंत्रित व्यवस्थासे। यह ठीक है कि हरियाली एक-रूप नहीं है और उसमें अनेक छायाएँ हैं—जमीनकी घासपर ही नहीं पेड़ों पत्तियोंमें भी। हरेपनका मानो निरा सन्देह भर लिये हुए धानियासे लेकर मूँगियासे भी अधिक कालौंस वाले हरे तक सभी तरहका हरा रंग दीखता है। किन्तु पेड़ तो बीच-बीचमें आते हैं और घासकी हरियाली सर्वव्यापी है। पेड़ोंमें कॉपर बीच नामका एक पेड़ है जिसका ताम्र-रञ्जित रंग अपनी अलग कांति और रम्यता रखता है। इसके नये गोटेदार किसलयमलून'के रूपमें कैसा हो अस्पष्ट सौकुमार्य है जिसने कालिदाससे यह कहलवाया था

किमिव हि मधुराणां मण्डनं नाकृतीनाम्।

और वयस्क होनेपर उसमें एक गाम्भीर्य भाव आ जाता है जो फिर उसे उतना ही अन्तरंग प्रिय रखता है। कभी-कभी फूले हुए लबर्नम भी दीख जाते हैं जिन्हें विलायती अमलतास कहा जा सकता है—वही रंग उसी तरहके लटके हुए गुच्छे। भारतमें अंग्रेज लोग अमलतासको देशी लबर्नम कहते भी थे।

ऊँचा-नीचा घाससे ढकी पहाड़ियाँ नीलगिरि शृंखलाके उदकमण्डल पासके प्रदेशकी अथवा शिवराय गिरि शृंखलाके यरकाडकी याद दिलाती हैं—विशेषतया शिवराय शिखरके आसपासके तरु-विहीन प्रदेशकी। कुछ कुछ

---

* पिता सैमुएल टेलर कोलरिज पुत्र हार्टले कालरिज।

† राबर्ट सदे जिनकी पत्नी और कोलरिजकी पत्नी बहनें थीं।

वर्ड्सवर्थ मेरा विशेष प्रिय अंग्रेज़ी कवि रहा हो ऐसा तो नहीं है, लेकिन इस प्रदेशका कल्पना-परिचय उन्हींकी कविताओंके द्वारा हुआ और अंग्रेज़ी पढ़नेवाले अन्य भारतीयोंकी तरह मेरे लिए भी इंग्लैण्डका आकर्षण पहले सिखाया है।

ग्रासमियर झीलके उपरले छोरपर (मल्लीताल!) राथे नदीके किनारे एक होटलमें आ टिका हूँ। यह होटल शाकाहारी है—और शाकाहारी होनेके साथ-साथ कुछ सहरका भी जान पड़ता है, लेकिन स्वच्छ और सुन्दर है और झीलसे कुछ दूर होनेपर भी नदीके किनारेके अपने बगीचेके कारण बहुत सुन्दर। संचालिका न केवल शाकाहारकी समर्थन करती है वरन् ब्रिटेनके शाकाहारी संघकी उपाध्यक्षा हैं और शाकाहारी पाक विद्या पर उनकी पुस्तक प्रसिद्ध है। कई पाक प्रतियोगिताओंमें वह पुरस्कार पा चुकी है। यहाँका भोजन अच्छा और स्वादिष्ट भी होता है और पर्याप्त विविधता लिये हुए भी। नहीं तो अंग्रेज़ी खाना यों भी अनाकर्षक होता है और शाकको तो उबालनेके अलावा वे बहुत कम कुछ करना जानते हैं। मेरे लिए यह भी आश्चर्यकी बात थी कि होटलके नियुक्त समयसे साढ़े तीन घण्टे देरसे पहुँचनेपर भी मुझे अपने लिए भोजन रखा हुआ मिला और वह भी गर्म और खानेके कमरेमें स्वयं संचालिका द्वारा प्रस्तुत किया गया। (पुरानी सूचनाके अनुसार मेरे तीसरे पहर पहुँचनेकी बात थी किन्तु मैं रातको देरसे पहुँचा।) अन्यत्र ऐसी स्थितिमें खानेको कुछ मिलता भी तो ठण्डा कुछ और अपने कमरेमें। इंग्लैण्डमें ऐसा सत्कार पहली बार मिला। शाकाहारके व्रतके साथ आतिथ्यका मान भी संचालिकाका है।

लेकिन जहाँ तक झील प्रदेशके सौन्दर्यका सवाल है अपने भीतर झाँकता हूँ तो पाता हूँ कि पहली प्रतिक्रिया निराशाकी है। यह तो ठीक ही है कि काव्यके प्रकृति रूप दूसरे होते हैं और स्थूल प्रकृतिके दूसरे और कल्पना चित्रको वास्तविक दृष्टिसे मिलाकर सुधारना ही पड़ता है।

फिर वह स्वयं और दोनों कोलरिज* और सदी† जिस कालके थे उस काल में प्रकृति-वर्णनमें स्थूल रूप-वर्णनका सिद्धान्त मानते हो नहीं थे वैसा दावा करना तो दूरकी बात है।

हरियालीसे ऊब भी आ सकती है यह नहीं जानता था। अब भी निश्चयपूर्वक नहीं कह सकता कि यहां हरियालीसे ऊब आती है या कि उसकी अति नियन्त्रित व्यवस्थासे। यह ठीक है कि हरियाली एक रूप नहीं है और उसमें अनेक छाइयाँ हैं—जमीनकी घासपर ही नहीं पेड़ों पत्तियोंमें भी। हरापनका मानो निरा सन्दूक भर लिये हुए मोतियासे लेकर मूंगियासे भी अधिक कलौंस वाले हरे तक सभी तरहका हरा रंग दीखता है। किन्तु पेड़ तो बीच-बीचमें आते हैं और घासकी हरियाली सर्वव्यापी है। पेड़ोंमें कॉपर बीच नामका एक पेड़ है जिसका ताम्र लोहित रंग अपनी अलग कान्ति और रम्यता रखता है। इसके नये गाँठके किसलयमसृण के रूपमें ही वैसा ही अस्पष्ट सौकुमार्य है जिसने कालिदाससे बरबस कहलवाया था

किमिव हि मधुराणां मण्डनं नाकृतीनाम्!

और वयस्क होनेपर उसमें एक राजसिक भाव आ जाता है जो फिर उसे उतना ही अन्याय प्रिय रहता है। कभी-कभी फूले हुए लबर्नम भी दीख जाते हैं जिन्हें विलायती अमलतास कहा जा सकता है—वही रंग उसी तरहके झूमते हुए गुच्छे। भारतमें अंग्रेज लोग अमलतासको देशी लबर्नम कहते भी थे।

ऊँची-नीची घाससे ढकी पहाड़ियाँ नीलगिरि शृंखलाके उदकमण्डलके पासके प्रदेशकी अथवा शिवराय गिरि शृंखलाके यरकाडकी याद दिलाती हैं—विशेषतया शिवराय शिखरके आसपासके वृक्षविहीन प्रदेशकी। कुछ कुछ

---

* पिता सैमुएल टेलर कोलरिज पुत्र हार्टले कोलरिज।

† रॉबर्ट सदे जिनकी पत्नी और कोलरिजकी पत्नी बहनें थीं।

ऐसी ही धाम भरी अधित्यकाएं मिलेंगी निकट वनापानी अथवा माउण्टइमें (जिस खसिया शब्दका व्युत्पत्यर्थ ही घासका मैदान अथवा दूबाचर है) मिलती है।

ग्रासमयरके आस-पासका दृश्य एक प्रसिद्ध सैर में नजर आया। ऊंचाई पर ईंग्लैण्डका सबसे मुख्यतया अपनी निर्जनताके कारण सुन्दर है लेकिन ऐसा कुछ नहीं है कि उसके लिए भारतसे दौड़े हुए जावें। ग्रासमयरकी झील और राइडाल्का पानी जिसे विनयबन्ध ही झील कहा जा सकता है वर्ड्स्वर्थकी ही मबारिक हो। हमारा काम मजेमें इनके बिना चल सकता है। बल्कि ग्रासमयरके आस पासका प्रदेश अधिक सुन्दर है—पेड़ों और बंगलोंके कारण।

इसी बगलमें एक वर्ड्स्वर्थका है—'डव काटेज' जो वैसा ही सुरक्षित है जैसा कविके समयमें था। इफोन्सिस और लूसी आदि प्रसिद्ध कविताएं यहीं लिखी गयी थीं। इसी बगलेसे राइडाल्की ओर कुछ दूरपर वह स्थान है जो वर्ड्स्वर्थका प्रिय स्थान बनाया जाता है और जहांसे राइडालके पानीका अच्छा दृश्य दीखता है। ठीक उसी स्थानसे एक फोटो भी ले लिया।

ग्रासमयरमें ही वह गिरजाघर है जो स्वयं और जिससे संलग्न उद्यान और कब्रगाह वर्ड्स्वर्थकी स्मृतिके साथ अभिन्न रूपसे बंधा हुआ है। स्थापत्यकी दृष्टिसे यह गिरजाघर रोचक है क्योंकि दो अंग अलग-अलग कालोंमें बने और विस्तार करते समय पहले निर्माणके मलबे बने रहने दिये गये। अनगढ़ काठका यह स्थापत्य लक्षणीय है। ऐसा ही एक छोटा गिरजाघर थलमयर झीलके किनारेपर है—विथबन गिरजाघर। अगर काठका नगीना हो सकता है तो यह गिरजाघर वैसा नगीना है—बहुत छोटा किन्तु बहुत सुन्दर और अपने स्थापत्यसे भी उस भावनाका प्रतिबिम्बित करता हुआ जो वास्तवमें ईसाई धर्म भावना है। ग्रासमयरके गिरजाघरका वर्णन वर्ड्स्वर्थने अपनी लम्बी कविता एक्सकर्शन में किया है। कब्रगाहमें

सड़कके जो पेड़ हैं उनमेंसे कई एक वर्ड्सवर्थके लगाये हुए हैं। इन्हींमें से एक की छायामें, नदीके किनारेपर वर्ड्सवर्थकी अपनी समाधि है। समाधि-लेख चरम सादगीपनके साथ केवल इतना कहता है : विलियम वर्ड्सवर्थ १८५०। मेरी वर्ड्सवर्थ १८५९। इसके पास ही वर्ड्सवर्थकी लड़की डोरा और बहुत-से सम्बन्धियोंकी कब्रें हैं। कुछ हटकर हार्टले कोलरिजकी कब्र है जिसके लिए स्थान स्वयं वर्ड्सवर्थने चुना था।

× × ×

आह यह उल्लास, यह आनन्द
वह जान रहा है
सनसनाता पवन जिसको लटोंसे छनकर!

आखिर एक ऐसा स्थान भी मिला जिसे मैं सुन्दर कह सकूँ जो रोमांचित कर सके, जो ज्ञानेन्द्रियों और भावनाओंको एक साथ उत्तेजित कर सके।

मैं डर्वेंटवाटर नामकी बड़ी झीलके किनारेपर संन्यासीके टील (फ्रायर्स क्रैग) पर बैठा हूँ। मेरे पीछे वह अनगढ़ चट्टान है जो 'रस्किनका पत्थर' कहलाती है। इसपर एक कुल्म रस्किनका चेहरा उकेरा हुआ है और उसके नीचे लिखा है : 'जीवनकी पहली घटना जिसकी स्मृति मुझे है—कि नर्स मुझे संन्यासी टील तक ले गयी।'

मेरे ऊपर फर जातिके विशाल देवदारुओंकी छाँह है और सामने झीलका खुला हुआ प्रसार जिसके ऊपरसे बहती हुई सनसनाती तेज हवा मेरे कपड़ोंको भेदती हुई चली जा रही है। झील सुन्दर है, हवासे मथी जाकर वह और भी सुन्दर हो जाती है। उसकी सफेद झालरदार लहरें अनवरत मेरी ओर दौड़ती आती हैं और मेरे पैरोंके नीचे झागमें

बिखर जाती है—अपने साथ उस पिघली हुई चाँदीको बिखरती हुई जो सामनेका दोपहरका सूर्य झीलपर बरसा रहा है।

इससे मेरा आनन्द कुछ कम तो नहीं होता, लेकिन कुछ विस्मय जरूर होता है कि यहाँ आनेवाले स्मर लोग उसमें साथी बनाना नहीं चाहते। पिछले आध घण्टेमें मेरे यहाँ बैठे-बैठे कोई बीस दल यहाँ तक आये हैं—कभी तीन चारका परिवार, लेकिन अधिकतर युगल जोड़े—स्त्री-पुरुष या नारियाँ और नारियाँ हैं तो साधारणतया इन्हीं उम्र की और प्रत्येककी ठीक एक-सी प्रतिक्रिया होती है। 'बहुत हवा है, चलो चलें यहाँसे!' कोई भी दस एक सेकंडसे अधिक यहाँ नहीं ठहरा है, वे भी नहीं जिन्होंने जाते ही मेरे सम्बोधन करके कहा था 'कैसा सुन्दर मौसम है!' अथवा 'यह तो बड़ा सुन्दर स्थल है!' (अंग्रेज अजनबीसे मौसमकी बातके अलावा और बात ही क्या कर सकता है! या इन बातोंका अर्थ कुछ नहीं होता—केवल यही कि खुली धूपका स्वागत किया जा रहा है।)

सभी टोलियाँ ढाल परसे उस ओर उतर गयी हैं जिसे टीन्टेन कोहनी का मोड़ सा बना कर घेर रखता है और जो हवाके थपेड़ोंसे बचा हुआ है। वहीं वे धूपमें पसर रही होंगी और बीच-बीचमें गलबहियाँ डाली हुई अपने-अपने सैण्डविच खा रही होंगी। सैण्डविच और दुआरका यह योग मेरी समझमें नहीं आता है, लेकिन अपने अपने मुल्कका रिवाज है! (इस वाक्यका जिस चुटकुलेसे सम्बन्ध है वह यहाँ लिखने लायक नहीं है।)

लेकिन सचमुच इंग्लैंडमें और सारे यूरोपमें ही मध्य वयकी टूरिस्ट नारियोंकी बहुलता आश्चर्यजनक है। इतनी प्रौढ़ाएँ, इनके स्मग गर्भित स्त्री मुख, इतनी ऊँची और कर्कश आवाजें और क्रिसमसके समय उपहारों से भर हुए जाल्वे बनीज माताओंकी याद दिलानेवाली इतनी थलथल टाँगें —मूर्तिकार एप्स्टाइन क्या कहना चाहता रहा होगा सहसा समझमें आ जाता है!

झील पार करके लाडोरका प्रसिद्ध प्रपात देखने आया। यह प्रसिद्ध अधिक है, प्रपात कम। निजी जमींदारीमें होनेके कारण प्रवेश निषिद्ध है, यात्री फाटकमें सिक्का डालकर भीतर जाते हैं। घनी छायादार गली और उसके दूसरे छोरपर बहुत-सी चट्टानोंके बीच सोया हुआ थोड़ा सा पानी। शायद बहुत सी वर्षाके बाद यहाँ आनेसे प्रपातका दृश्य अधिक आकर्षक होता है। लेकिन जैसा कि गाइड बुकमें लिखा था, कोई भी स्थल देखने उसे देखकर प्रसन्न होनेका दृढ़ निश्चय करके आना चाहिए। किसी स्थानकी किसी दूसरेसे तुलना करना घातक होता है।' अच्छा साहब, नहीं करते तुलना, नहीं तो हम अभी जून महीनेमें कम्पटी प्रपातकी याद करने वाले थे। मान लेते हैं कि हम प्रसन्न हैं कि लाडोरका प्रपात सुन्दर है। कमसे कम प्रपातका जो लम्बा चित्र लन्दनमें टेट संग्रहालयमें देखा था वह तो सुन्दर था ही। हम नहीं कहते कि चित्रकार झूठ बोल रहा था। वह जरूर बहुत भारी वर्षाके बाद आया होगा और उस समय जब कि सूर्य अभी अभी बादल फाड़कर निकला होगा और सभी पत्तियाँ अभी गीली होंगी और बूँद-बूँद जल टपका रही होंगी।

यहाँसे दूसरी दिशामें झील पार की लेकिन दिन ढलने लगा था इस लिए वापिस केजविक आकर बससे ग्रासमेयर लौट आया। दूसरे दिन सबेरे फिर केजविक पहुँच कर दूसरी दिशामें डर्वेंटवाटरकी झील पार की और ऊपरी चढ़ाई पर पहुँचकर मनस्टोका सुरक्षित वनोद्यान नया हू वाले धारा पर देखा। फिर कटबम शिखरपर चढ़कर डर्वेंटवाटर झीलका दृश्य देखा और चित्र लिया यहाँसे पालना और पार बस्ती और पगनाशा दृश्य बड़ा मनोरम है। लौटकर एक बार फिर मध्यमा टोल और दक्षिण दिशाकी ओरसे होता हुआ बसके अड्डे तक पहुँच गया। यहाँसे आधा रास्ता लौटकर पगमेयर झीलके किनारे विलवनके गिरजाघरके पास उतर

गया। यन्मयर सुरक्षित झील है क्योंकि इसका पानी पीनेके काम आता है झील तक जाना हो नहीं बल्कि सड़क और थोड़े बीचके वन प्रदेशमें भी प्रवेश निषिद्ध है। इसलिए थीड्का सौन्दर्य कुछ ऊंचाई परसे ही देखा जो मिला। झील प्रदेशीय थीलोंमें यह सबसे गहरी है।

गिरजाघरके पाससे ही हेल्वेल्लिन शिखरकी कड़ी चढ़ाई शुरू होती है। मैं चलने लगा तो हेल्वेल्लिन तक जानेका विचार नहीं था क्योंकि दोपहर दो बजके बाद ही मैंने चलना आरम्भ किया था। यही विचार था कि कुछ ऊंचाई परसे थीलके चित्र लूंगा क्योंकि सड़कके निकट ऊपर झरने और चीड़के ऊंचे ऊंचे पेड़ थे। (चीड़के पेड़ मांचेस्टर कार्पोरेशनने झीलकी रक्षार्थ लिए लगाये हैं क्योंकि मांचेस्टरके पीनेका पानीका स्रोत यही है। अंग्रेज लोग इससे बहुत नाराज हैं कि ये विदेशी वृक्ष यहां क्यों लगाये गये जहांकी स्वाभाविक वनस्पति फर है।) जो हो पेड़ोंकी सीमासे ऊपर घासके प्रसार तक पहुंच जानेपर लगने लगा कि थोड़ा और जानेपर पहाड़की दूसरी पीठ दीख जायगी और इसके मोहमें चलता ही गया। लगभग पांच बजे थे जब कि उतरते हुए एक यात्रीने बताया कि शिखर तक पहुंचनेके लिए घण्टे भर और कड़ी चढ़ाई चढ़नी होगी और तभी दूसरी ओरका दृश्य दीखेगा। फिर एक बार उसने तीखी दृष्टिसे मेरी ओर देखकर पूछा डू यू डू मच क्लाइम्बिंग? मैंने उत्तर दिया हाँ थोड़ा बहुत तो करता रहा हूं और आगे चलने लगा।

अंग्रेज अतिरंजना नहीं करता और संकोची भी है उसकी बातमें सदा कहे हुएसे अधिक कुछ अभिप्राय होता है। इस प्रश्नमें क्या अभिप्राय था थोड़ी देर बाद समझमें आया।

सहसा बड़े जोरसे हवा चलने लगी। मैं ओवरकोट पहने हुए था हवा से उससे विशेष रक्षा नहीं होती थी बल्कि इतना तेज हवामें वह गुब्बारे सा भरकर मुझे ऊपर अपने साथ उड़ाने लगा। मैंने उसे उतारकर उसको

पाटला पटीके साथ कसकर कमरमें बाँध ली और आगे चल दिया। स्कॉट की पंक्ति याद आयी

आइ क्लाइम्ब्ड द ब्राउ आफ द माइटी हेल्वेलिन

और उससे कुछ और उत्तेजना मिली।

शिखर तक पहुँचा तो। लेकिन 'मैं पहुँचा' यह कहना कुछ गर्वोक्ति-सी जान पड़ती है क्योंकि वास्तवमें हवाने ही मुझे वहाँ पहुँचाया। और हवाने पहुँचाया इसलिए वहाँ टिकने भी नहीं दिया और अपनी रौ आगे ले चलती गयी। रास्ता—जो था भी धुँधली-सी पगडण्डी था—छूट गया और आकाशमें घिर आनेसे दिशा-ज्ञान भी असम्भव हो गया। थोड़ी देर यों ही चलता हुआ या चलाया जाता हुआ, मैं पत्थरके एक ढूहसे जा टकराया। ध्यानसे देखा—वह ढेर नहीं था बल्कि मानव द्वारा बनाया हुआ ऊँचा चबूतरा था—पहाड़ोंमें स्मारकके रूपमें ऐसे चबूतरे या थान प्रायः बनाये जाते हैं। इसीके कारण हवासे कुछ रक्षा भी मिली और मैंने दुबककर कोट फिर पहन लिया। चबूतरेको ध्यानसे देखते हुए पाया कि उसपर लेख भी है। उसको पढ़कर सँभल-सँभलकर एक ओर बढ़कर नीचे झाँका—उसके पार ही बहुत गहरी खन्दक थी एक पहाड़ी ताल—लेखके अनुसार इसका नाम 'लाल ताल' (रेड टार्न) था। जहाँ चबूतरा बनाया गया था वहींसे जाड़ोंमें हवाके झोंकेसे तालमें गिरकर एक व्यक्ति मर गया था। उसकी कोई निशानी भी न मिली थी पर उसका कुत्ता उसी स्थानपर तीन महीने तक पहरा देता रहा जब तक कि बर्फ पिघलने पर स्वामीकी अस्थियाँ न पायी जावें। कुत्तेकी स्वामि-भक्तिकी यह सच्ची घटना वर्ड्सवर्थकी एक कविताका विषय है। यह कविता मैंने कोई तीस बरस पहले पढ़ी थी। 'कुत्ते और मानवकी मैत्रीके स्मारक रूपमें यह चबूतरा सन् १८९० में बनाया गया था।

मैं प्राय दो घण्टे वहीं बैठा ठिठुरता रहा। गर्मियोंमें यह अँधेरा दस बजे तक होता है इसलिए बहुत अधिक चिन्ता नहीं थी—इतना ही था

कि एक बार पगडण्डीकी लीक मिल जाय। लगभग आठ बजे वह सम्भव हुआ और फिर तो मैं दौड़ता हुआ नीचे उतरता हो आया और गिरजाघरमें बस पाकर रात ग्रासमेयर पहुंच गया। यहाँ आकर फिर गाइड-बुक देखी है उसमें सहसा उमड़नेवाली आँधी और धुंधके उल्लेख हैं और आरोहियोंको चेतावनी दी गयी है कि इनके खतरेको कभी अवज्ञा न करें—धुंध तो कभी ऐसी जम सकती है कि कई दिन तक स्वयं अपने हाथ पर भी न सूझें।

होटलमें अपने कमरेमें बैठकर ये सब आतंककारी बातें पढ़नेमें दुगना मजा आता है।

× × ×

ग्रासमेयरसे एम्बलसाइड जो विंडरमेयरके किनारेपर है। प्रदेशकी झीलोंमें यह सबसे बड़ी है—लम्बाईमें प्राय साढ़े-दस मील। सौन्दर्यके लिए शायद कुछ ज्यादा बड़ी है क्योंकि पूरी झील एक साथ नहीं देखी जा सकती। लेकिन इसके आस-पास कई सुन्दर स्थल हैं और यों प्राकृतिक दृश्योंके प्रेमियोंके लिए अनेक सरायें यहाँ केन्द्र भी हैं। जिस होटलमें ठहरा हूँ उसीमें ठहरे हुए एक स्काटी दम्पतिके सौजन्यसे उनके साथ मोटरमें बैठकर आसपासकी और दो-तीन झीलें भी देख आया हूँ—इस चक्करके अन्तमें हमलोग विंडरमेयरके पार बोनेस घाट पहुँचे जहाँसे मोटर भी नावमें लादकर झीलके पार लायी गयी।

सवेरे फिर झीलके पार रैडल और गिरजाघर देखने गये। रविवार था इसलिए हम सबके दूसरे सब यात्री गिरजाघरके अन्दर चले गये मुझे दुर्गकी और झीलके किनारा और जंगलकी सैर करनेका एकान्त सुयोग मिल गया। रैडल और उसका उद्यान भी बहुत सुन्दर हैं। वहाँसे गिरजाघरकी प्रार्थना समाप्त हो जानेके बाद दूसरे यात्रियोंके साथ एम्बलसाइड लौटकर

भाजन किया और फिर एक लम्बी पदरु सरकी ठानी। राइडाल्तक जाकर पहाडपर चढना शुरू किया दो एक जगह पत्थरकी पुरानी छदानोंके झाड़ियोंमें रुके हुए गढ्ढोंमें गिरते गिरते बचा दो एक जगह हरियालीके नीचे छिपी हुई दलदलमें पिण्डलिया तक धस गया लेकिन लावरिंग ताल लोखरिंग शिखरके रास्ते होता हुआ कम्पस गेट तक पहुंचा वहासे एल्म वाउ होता हुआ वापिस एम्बलसाइड।

झील प्रदेशका मेरा प्रवास पूरा होता है। लेखा मिलान करूँ तो सहसा नहीं कह सकता कि बहुत अधिक मुनाफा करके जा रहा हूं। कुछ साहित्यिक स्मृतिया फिर हरी हो गयी हैं कुछ कविताएं दुबारा पढने की प्रवृत्ति हुई है और यह भी हुआ है कि उनको दुबारा पढ़ूंगा तो नया अर्थ मिलेगा और अधिक वस्तु मगन चित्र सामने आवेंगे। लेकिन असल बात यह है कि झीलोंके प्रदेशका सौन्दर्य झील या पर्वत या प्रदेशमें ही उतना नहीं है जितना कि उसमें घूम फिर कर उसे आत्मसात करनेवालोंमें। शुद्ध प्राकृतिक रूपके ख्यालसे कहीं सुन्दरतर स्थल मैं स्वदेशमें देख चुका हूँ। सभी दुर्गम हों ऐसा भी नहीं है अनेकोंमें सैर-सपाटेके लिए उतने ही बहुमुख रास्ते और पगडण्डियाँ हैं, जैसे यहाँपर। अन्तर इतना ही है कि उनमें घूमनेवाले लोग नहीं हैं या कि उनमें घूमनेवाले दूसरे हैं और कविताएँ लिखनेवाले दूसरे। इस प्रकार प्रकृतिका यह बिखरा हुआ सौन्दर्य असंचित ही रह जाता है किसीके द्वारा स्वायत्त नहीं किया जाता। इसलिए कवि प्रतिभा उसे नये प्रभामय रूपमें ढाल कर हम तक नहीं देती वहां पड़ा रहने देती है। एक सौन्दर्य होता है जो पहाड़ों और झीलोंपर पड़ा रहता है एक सौन्दर्य होता है जो इस रूपश्री और कवि-दृष्टिके रागयोगके योगसे उत्पन्न होता है। यह दूसरा सौन्दर्य ही वास्तवमें रस है वल्कि रसायन है राज रसायन है।

मुनाफेके रूपमें यही उपलब्धि लेकर जा रहा हूँ। इसके लिए यहां आना आवश्यक नहीं था, लेकिन जो भी उसमें जर्म भी हो जाय क्योंकि

होता है। बोधि-वृक्षके लिए कोई बना-बनाया स्थान नहीं होता, पथ-तटका कोई भी वृक्ष वह पद प्राप्त कर सकता है अगर उसकी छायामें आँखें खुलें।

थैंक्स टु द ह्यूमन हार्ट बाई ह्विच वी लिव
थैंक्स टु इट्स टेंडरनेस, इट्स जॉयज़, एंड फीयर्स
टु मी द मीनेस्ट फ्लावर दैट ब्लोज़ कैन गिव
थॉट्स दैट डू ऑफ़न लाइ टू डीप फ़ॉर टीयर्स *

[२]

प्रिय—

कार्यक्रमके अनुसार मुझे लन्दनसे आयरलैण्ड और फिर उसके बाद स्काटलैण्ड जाना था, चाहे आयरलैण्डसे सीधे, चाहे लन्दन लौटकर। लेकिन ब्रिटेनमें कहीं भी जानेके लिए लन्दनसे जाना सुविधाजनक जान पड़ता है और इसलिए कहींसे कहीं और जानेके लिए भी लन्दन होते हुए जाना सुविधाका मार्ग है। अलग-अलग स्थानोंमें अलग-अलग प्रकारके सामानकी आवश्यकता होती है और सब एक साथ लादे फिरनेकी बजाय प्रत्येक अभियानके लिए आवश्यक सामान लेकर बाकी सब लन्दनमें छोड़ जा सकना भी एक सुविधा है, इसलिए भी लन्दन लौटना उपयोगी होता है।

डब्लिनसे विमानसे लन्दन लौटा। यहाँसे रेलसे एडिनबरा जाना था लेकिन बीचमें तीन दिनका अवकाश था। दक्षिणी इंग्लैंड अभी तक नहीं देखा था—लन्दनसे डोवर घाटकी यात्राकी बात छोड़ दूँ तो!—इसलिए उत्तरमें एडिनबराका रास्ता दक्षिण-पश्चिमके डेवनशायरकी ओरसे पाना कुछ बेठीक नहीं लगा।

---

* वर्ड्सवर्थ : ओड आन द इन्टिमेशन्स आफ इम्मार्टेलिटी

बाथ, जैसा कि नामसे ही स्पष्ट है स्नानोपचारका प्रसिद्ध स्थान है। यूरोपमें तो ऐसे अनेक स्थान हैं जहाँ लोग इलाज या विश्रामके लिए जाते हैं जर्मनी और फ्रांसके ऐसे स्थल बहुत प्रसिद्ध हैं। यद्यपि ऐसे स्थलोंका समकालीन समाजमें वह महत्त्व नहीं रहा है जो दो शताब्दी पहले था, जब कि वे न केवल स्वास्थ्यके केन्द्र थे बल्कि फैशनके भी और अभिजात वर्गके तथा धनिक-वर्गके आमोद-प्रमोद तथा चोरों और चतुरोंके अपने हुनर दिखानेके केन्द्र थे। इतना ही नहीं वह खानदानी गरीब और निकम्मे युवक धनवती बहूकी खोजमें यहाँ आते थे, रूपसी कन्याओंके लोभी या महत्त्वाकांक्षी माता पिता उपयुक्त वर ढूँढनेकी आशामें। स्पष्ट ही ऐसी परिस्थितिमें वहाँका जीवन अत्यन्त कृत्रिम भड़कीला दिखावटी और दम्भपूर्ण रहा होगा। ठीक ऐसे ही जीवनका चित्र बाथीय और बाइबलकि नाटकोंमें हमें मिलता है। स्वयं बाथके उल्लेख अठारहवीं-उन्नीसवीं शतीके अंग्रेजी साहित्यमें बहुत मिलेंगे स्मालेट फील्डिंग शेरिडन गोल्डस्मिथ जेन आस्टेन आदिकी रचनाओंमें। मिथ्यापर टिका खोखलापन और प्रत्यक्ष निरीक्षणपर खरी की गयी इस शालकी टट्टीके गिर जानेका दुःख किसे होगा? इतिहासपर उसकी जो छाप है उतनी काफ़ी है—वह दूरी इस सारी स्थलीलाको मनोरंजक बना देती है।

लेकिन बाथका उल्लेख मैं जो मिट गया या नष्ट हो गया उसके लिए नहीं, जो बचा या बना रह गया उसके लिए करना चाहता हूँ। या तो यहाँके रसायन मिश्रित गर्म पानीकी ऐतिहासिक प्रसिद्धि उसी समयसे है जबकि रोमनोंने ब्रिटेनपर आक्रमण करके उसे पराक्रान्त करना शुरू किया। रोमिक आक्रमण ईसाकी पहली शताब्दी में ही आरम्भ हो गये थे और तभीसे बाथसे रोम वालोंका उनका परिचय रहा। लगभग चार सौ वर्ष रोमिक उपनिवेश-कालमें यह स्थान आकर्षणका केन्द्र बना रहा। बाथके रोमिक स्नानागार अब भी इसका प्रमाण हैं। अब स्नानागारोंके ऊपर पाछेकी बनायी हुई इमारतें हैं लेकिन तलघरोंमें रोमिक स्नानागार और

उनकी जल प्रणालियाँ वही है जो प्राय दो हजार वर्ष पहले थीं। उस समयके बने हुए सीसेके नल अब भी काम दे रहे हैं। गोताखोरोंके कूदनेके लिए घाटका पत्थर अब भी है। उसके घिसे हुए सिर रोमिक स्नानार्थियोंके पैरोंकी छापकी साक्षी दे रहे हैं।

नये स्नानागार और नल घर अठारहवीं शतीके आरम्भके हैं। सन १७०५में पहले निर्माणके बाद उसमें समय समयपर कई परिवर्तन हुए किन्तु स्नानागारोंके और बाथके अधिकांशके स्थापत्यमें जो एकरूपता है वह अठारहवीं शतीकी ही है और उसी समयके जीवनकी साक्षी देती है। और मैं उल्लेख करना चाहता हूँ तो रोमिक कालके अवशेषोंका नहीं बल्कि इस दूसरी विशेषताका ही। रोमिक अवशेष न जाने कब ढँपे गिर होकर खो गये थे और अठारहवीं शतीमें जब नये स्नानागारोंका निर्माण हुआ तब उनका कोई पता नहीं था। उनका पता उन्नीसवीं शतीके उत्तरार्द्ध में लगा और सन १८७९–८० में उन्हें खोद कर उनका उद्धार किया गया। सन १९२३ में और खुदाई हुई और कुछ नये अवशेष पाये गये। रोमिक खण्डका पूरा ढाँचा बाथके संग्रहालयमें रखा हुआ है। कुछ और अमूल्य अवशेष भी हैं—मिनर्वा देवीका काँसेका एक मस्तक, कुछ मणिकाएं और उनके जड़ाऊ रत्न इत्यादि मिले हैं। एक मनोरंजक उपलब्धि रोमिक कालका पासा है जिसकी विशेषता यह है कि वह बेबात जुआ खेलनेके लिए नहीं बल्कि जुएमें धोखा देनेके लिए बनाया गया है। एक पार्श्व भारी कर दिया गया है जिससे वह उलटा पड़ ही नहीं सकता। इस प्रकार वह स्नानागारोंसे सम्बद्ध रोमिक विलासिताके एक विशेष युगका प्रतीक बन जाता है और इसी हीन परम्पराका मानो पुनर्जागरण आरम्भिक अठारहवीं शतीमें होता है।

रोमिक इमारतें थीं खो गयीं फिर उनके अवशेष द्वारा खोज निकाले गये। लेकिन अठारहवीं शतीका बाथ खोया या मिटा नहीं। जिस समाजने उसे जन्म और रूप दिया था उसके मिट जानेपर नगर-सभाने

वर्ड्स्वर्थका घर 'डव काटेज'

राइडाल वाटर



[डर्वेण्टवाटरक कि
सम्यामीटोल — माथ
ऊपर रस्किन स्मार
शिला]

रस्किन शिला

वालोंने वास्तु-रूपको बनाये रखनेका निश्चय किया और आज हम उसकी सड़कों और इमारतोंका जो रूप देखते हैं वह वही है जो अठारहवीं शतीमें था। मेरे निकट इस समय बाथ इसीलिए उल्लेख्य है कि उसमें हम अठारहवीं शतीके नगर-रूपको सम्पूर्ण देख सकते हैं। उसकी सड़कों और उसके मुहल्लों या चौकोंकी तुलना तत्कालीन चित्रों और वर्णनोंसे की जा सकती है और प्रत्येक चबूतरे, खम्भे, खिड़की और छज्जेको पहचाना जा सकता है। कई पुराने मकान जीर्णोद्धार या पुनर्निर्माणके समय भीतरसे उनमें रहने वालोंकी सुविधाके अनुसार बदले गये हैं, लेकिन बहिरूपमें कोई परिवर्तन करनेकी अनुमति नहीं मिली है और इसीलिए नगरके विभिन्न खण्ड देखनेमें ज्योंके-त्यों बने हुए हैं।

इसका अर्थ यह नहीं है कि मैं सर्वत्र सभी नगरोंमें ऐसा करनेका समर्थन कर रहा हूँ। निःसन्देह बदलती हुई दुनियाके साथ बहुत कुछ न केवल अनिवार्यतः बदलेगा बल्कि स्वेच्छया बदलना होगा। लेकिन कुछ ऐतिहासिक शहरोंके ऐतिहासिक रूपकी और अनेक नगरोंके कुछ ऐतिहासिक खण्डोंकी, रक्षा हो सकती है और होनी चाहिए—यह देशके जीवनको सम्पूर्णतर बनाती है और उसकी सांस्कृतिक गहराई बढ़ाती है। विशेष रूपसे ऐसे नगर, जो न केवल ऐतिहासिक महत्त्व रखते हैं बल्कि किसी विशेष स्थापत्य शैलीको उदाहृत करते हैं, जरूर सुरक्षित रहने चाहिए। और यह आवश्यक नहीं है कि इस तरहके ऐतिहासिक संरक्षणका काम केवल केन्द्रीय शासन या प्रादेशिक शासन ही करे। नागरिक शासन स्वयं इसका प्रबन्ध कर सकता है, और करेगा तो सरकारसे सहयोग भी पा सकेगा। जिस नगरके नागरिक अपने नगरकी विशेषतापर गर्व करना नहीं जानते क्योंकि उस विशेषताको पहचानते ही नहीं, उनके लिए दूर बसी हुई सरकारें क्या करेंगी? बनारसका बनिहाय सम्मान और उसके ऐतिहासिक घाटोंकी चिन्ता सबसे पहले बनारसियोंको होनी चाहिए, राज्य या केन्द्रकी सम्भावना बादकी बात है। और यह केवल संयोग है कि

रा्यत मस्य म्त्रीका बनारसम सम्बध ह—इतना पतली डारस सहार इतिहास नहीं टाँगा जा सकता—वनारसका भी नहा जो बहुधा तरगमें रहता ह और कभा उड भी सकता ह।

वायकी एक सस्या भा उल्लेखनाय ह—कोनाम काटकी बाय एक डमी आफ आ्ट जिसमें चित्र और मूत्ति-क्लाका विभिन्न शाखाआक अलावा रगमच और सगीतकी शिक्षाकी पूरी व्यवस्था ह। कोनाम काट एक समय सक्सन राजव्शकी जागीर था। उसस ल्गा हुआ बनोद्यान दसवा नायक ह। अब वह जिस परिवारकी सम्पत्ति ह क्ला-सग्रह उसका पस्तनी व्यसन रहा और यह उसकी उदारता ह कि वायकी कला एकडमाको वहा स्थान दिया गया ह। एतिहासिक अथवा स्थापत्य-क्लाका दष्टिस महत्व पण भवन —इस विषयक अध्ययनके लिए जो शावस समिति बनी थी उसन अपनी रिपोटम सौन्दय क्ला और प्रकृतिक सगम का उल्लेख किया था जा बहुधा शनियाक परिश्रमका परिणाम होता ह सभ्यताक इतिहासम जिसक दूसर उदाहरण कम ही मिलग और जिसकी क्षति कभी पूरी न का जा सकगी। वायकी पम्परागत सम्पत्तिकी र गापर आर दन हुए समितिन कोनाम कोटकी क्ला एक्डमीका उल्लेख किया था लगन हा और अनुकूल परिस्थितियाँ मिल जावें तो यह उद्दश्य कितन सुन्दर ढगस पूरा हा सकता ह।

इस समय एकडमीक अन्तगत दो सस्थाए ह दृश्य-क्लाआका विद्यालय और साधारण पाठशालाआक क्ला शिक्षकोका प्रशिक्षण महाविद्यालय। रगमच आर सगीतक विभाग दूसरी सस्थाक अग ह। दृश्य-क्लाआक अन्तगत चित्र-क्ला मूत्ति क्ला रगीन छपाई भाण्ड निमाण कपडकी बनाई बुनाई रगाई छपाई और सिलाई सिखाय जात ह। रगमचकी शिक्षाम नृत्य नाटय अभिनय और रगमचस सम्बद्ध सभी शिल्पोकी शिक्षा

दी जाती है। कठपुतली मंचकी शिक्षा भी दी जाती है। शिक्षा-क्रम साधारणतया चार वर्षका होता है, कला-शिक्षकोंके लिए कम समयके शिक्षा-क्रम भी होते हैं।

इस संस्थाके कृतित्वके उदाहरण शान्तिनिकेतनमें देखकर तो प्रभावित हुआ ही था, डार्टिंगटन पहुँचकर उनके चित्रोंकी प्रदर्शनी देखी तो और भी प्रभावित हुआ। इन चित्रोंमें कुछ बिकाऊ भी थे। बिक्रीसे होनेवाली आयका तलीयाग एकडमोका देशाटन छात्रवृत्तिके लिए लिया जाता है। एक-न-एक मौके सभी छात्र विभिन्न संग्रहालयों या कला-केन्द्रोंको देखने ले जाये और भेजे जाते हैं। ग्रीष्मावकाशमें अनेक यूरोपके विभिन्न कला-केन्द्रोंकी सैर करते हैं। विशेष प्रतिभा सम्पन्न विद्यार्थियोंको छात्रवृत्ति मिलती है।

डार्टिंगटनमें और भी बहुत कुछ देखा, लेकिन उसकी चर्चा करनेसे पहले यह बताना होगा कि डार्टिंगटन है क्या और वहाँ पहुँचा कैसे।

यथार्थतः जानेके लिए लन्दनसे सीधा ब्रिस्टल गया था, यद्यपि वहाँ जानेके लिए बाथ रास्तेमें पड़ता है। अब बाथसे पहुँचकर साथ दक्षिण और फिर दक्षिण-पश्चिम मुड़ते हुए ब्रिस्टलके दक्षिणी सागर-तटतक पहुँच गया। बीच बीचमें सड़कके सुन्दर दृश्य और तरह तरह या जलक्रीडा करते हुए अनेक प्रसन्न परिवारोंको देखता हुआ टोटनेस पहुँचा—बेनेट-जैसे नदीके मुहानेसे दक्षिणी पटरी फिर सागर-तटसे हट गयी थी। टाटनससे प्राय चार मील दक्षिणमें जाना होता है।

डार्टिंगटन हॉलको इंग्लैंडका शान्तिनिकेतन कहा जा सकता है। शान्तिनिकेतनका नाम मैं जान-बूझकर ले रहा हूँ यद्यपि उसके संस्थापक एल्महर्स्ट दम्पतिमें कोई कवि नहीं है। लेओनार्ड एल्महर्स्ट स्वयं उत्तरी इंग्लैंडके हैं और उनकी पत्नी डोरोथी अमेरिकन एक धनिक परिवारकी। दोनोंकी परम्पराएँ उन्हें तीव्र व्यवहार-बुद्धि देती हैं, लेकिन

दोनोंका जीवन विवाहसे पहले भी साहसिक और परिवर्तनमय रहा और व्यावहारिकताके साथ प्रयोग करनेकी प्रवृत्ति दोनोंमें है। अमरिकामें लिओनार्डने कृषि विज्ञानकी शिक्षाके साथ साथ कृषिके प्रयोगोंकी प्रवृत्ति भी पायी थी। शिक्षा पूरी करके वह भारत आये और संयोगसे रवीन्द्रनाथ ठाकुरसे उनका परिचय हुआ। कृषि और देहाती समाजके पुनर्गठनकी ओर रुचिके कारण एल्महर्स्टने शान्तिनिकेतनसे सम्बद्ध एक और प्रयोग करनेका उत्तरदायित्व स्वीकार किया और इस प्रकार श्रीनिकेतनका सूत्रपात हुआ। सन १९२४ में एल्महर्स्ट सारा काम अपने भारतीय सहयोगियोंको सौंपकर इंग्लैण्ड लौट गये, जहाँ उन्होंने विवाह किया और फिर दक्षिणी इंग्लैण्डमें डेवनशायरमें जमीन खरीदकर अपनी नयी संस्थाका निर्माण आरम्भ किया।

डार्टिंगटनमें उनके उद्योगोंका पहला ध्येय पुनर्निर्माण और पुनर्वासन ही था। अपनी योजनाको उन्होंने दो भागोंमें बाँटा था—आर्थिक और अनार्थिक—इस दूसरे शीर्षकके अन्तर्गत ऐसे सभी काम थे जिनका आधार व्यावसायिक नहीं था। लेकिन वास्तवमें इन दोनों भागोंको अलग करना कभी सम्भव नहीं हुआ। पर यह भेद और उसकी असम्भावना ही डार्टिंगटनके इतिहासका रहस्य है।

आर्थिक योजनाके प्रधान भूमिका उत्पादनकी वृद्धि और उसका समुचित प्रयोग था। खेती और वनभूमिके उपयोगके लिए क्रमशः गोधन और मुर्गियोंके पालन, फलोंकी खेती और रस निकालनेके यन्त्र, चिराईकी मशीन और कताई-बुनाईके विभाग जोड़ दिये गये। यह मान लिया गया कि ये सभी क्योंकि एक समय लाभकर देहाती उद्योग रहे, इसलिए उन्हें फिर बसा बनाया जा सकता है।

योजनाका दूसरा भाग कहीं अधिक जटिल था। उसमें मुख्यतया चार कार्यक्षेत्र थे। पहला तो शोधका था जिसमें कृषि और वनस्पतिसे सम्बन्ध रखनेवाले सभी तरहके प्रयोग शामिल थे और जिसके लिए एक प्रयोगशाला

भी बनाया गया। दूसरा शिक्षण जिसमें सहशिक्षणका विद्यालय, प्रशिक्षण केन्द्र और अन्य संस्थाएँ थीं। तीसरा कला-शिक्षा जिसके अन्तर्गत नृत्य, नाट्य, संगीत, चित्र और मूर्तिकलाका अभ्यास था। चौथा स्थानीय मध्यकालीन इमारतका एक ढंगसे पुनर्निर्माण करना कि वह संस्थाकी आवश्यकताओंकी पूर्ति भी कर सकें।

संस्थाके सामने जो विभिन्न समस्याएँ आयीं और उनका सामना करनेके लिए जो जो संगठन किये गये, उन सबका उल्लेख यहाँ अनावश्यक है। संक्षेपमें व्यवसाय पक्ष 'डार्टिंगटन हाल लिमिटेड' नामक संस्थाको सौंप दिया गया और सांस्कृतिक पुनर्निर्माणका कार्य डार्टिंगटन हाल ट्रस्टको। किन्तु इन दो नामोंसे यह न समझना चाहिए कि संगठनकी मूल एकता नष्ट हो गयी या कि एल्महर्स्ट दम्पतिने समूचे जीवनको एक ही भित्तिपर आधारित करनेकी अपनी आशा और अपना प्रयास छोड़ दिया।

डार्टिंगटन हाल पहुँचनेपर मुझे एक परिवारके साथ ठहराया गया। गृहस्वामी डार्टिंगटनकी पशुपालकी बिक्री करनेवाले संगठनसे सम्बद्ध थे और गृह-स्वामिनी प्राथमिक विद्यालयसे। रातको कला-केन्द्रमें अमेरिकी संगीतका वादन था—कला-केन्द्र बराबर विभिन्न क्षेत्रोंमें तरह तरहके आयोजन करता रहता है और कुछ ही दिन पहले श्रीमती शान्ता राव भरतनाट्यम और मोहिनीअट्टमका प्रदर्शन करके गयी थीं। अली अकबर खाँका सरोद-वादन भी यहाँ हो चुका था। विभिन्न संस्थाओंकी ओरसे शेक्सपियरके या दूसरे नाटकोंके अभिनय, आपेरा, चित्रोंके प्रदर्शन इत्यादि भी होते रहते हैं। अनन्तर केन्द्रकी ग्राम-नृत्यकी शिक्षिकासे भेंट हुई। दूसरे दिन प्रातःकाल ही उनके घर गया और उनकी कक्षाएँ भी देखीं जिसमें नाना प्रकारके लोक-वाद्योंके निर्माण और मरम्मतकी व्यवस्था था। कुछ रिकार्ड किया हुआ लोक-नृत्य संगीत भी सुना। टोटनेसकी कला-केन्द्र संचालक श्री

पीटर कावगस दुवारा भेंट हुई और उसके बाद सम्याके लोक-सम्पर्क अधिकारीके साथ डार्टिंगटनके वन प्रदेश और विभिन्न उद्योगोंके केन्द्र तथा विद्यालय भी देखे। फिर दोपहरमें हमें संगीतकी एक रिहर्सलमें बैठनेकी अनुमति मिल गयी—प्रसिद्ध जर्मन कण्डक्टर हमन नेसेन कला-केन्द्रसे सम्बद्ध हैं और उनके नेतृत्वमें कला केन्द्र निरन्तर यूरोपीय क्लासिकल संगीतके कार्यक्रम प्रस्तुत करता रहता है—बहुधा ऐसा संगीत भी जो सार्वजनिक रूपसे इंग्लैंडमें पहली बार डार्टिंगटन हालमें ही प्रस्तुत किया गया हो।

अनन्तर कला-केन्द्रके गायकवृन्दके कुछ सदस्योंके साथ भोजन करके फिल्मी संगीत लिखनेवालोंकी भी एक रिहर्सल देखी। फिल्मी अथवा पृष्ठभूमि संगीतकी शिक्षा भी यहाँ दी जाती है और विद्यार्थी-गण फिल्मोंके छोटे छोटे टुकड़े देखकर उसके लिए अलग अलग संगीतकी रचना करते हैं जो रिहर्सलोंमें सुनाया जाता है और परस्पर आलोचना और अध्यापक द्वारा निर्देशनका आधार बनाता है। फिल्मी संगीतसे केवल फिल्मी गाना नहीं समझ लेना चाहिए बल्कि दृश्यके प्रभावको और गहरा बनानेवाला सभी संगीत उसमें आ जाता है।

अभी थोड़ी देरमें फिर टोटनेसके लिए रवाना होना है वहाँसे 'यूस्टन एक्सप्रेस' गाड़ी पकड़कर रातको लन्दन पहुँच जाऊँगा जहाँसे तुरत दूसरे जंक्शन जाकर एडिनबराकी गाड़ी पकड़नी होगी।

बीस हजार राष्ट्रकवि

निर्धन किन्तु सुनहली धूप और सुनहले स्वप्नोंसे सम्पन्न सुन्दर प्रदेश। पहाड़ियोंसे लहराते हुए सागर-तट तथा क्रमशः उतरती तल्लियाँ जिनके पके गेहूँके कुञ्जमें जहाँ-तहाँ अप्रत्याशित ढंगसे वास्तवमें फूलकर लाल नगीने जड़े हैं। अप्रतिम भिन्न लय और स्वर-योजनावाली संगीतमयी बोली जिसका विशेष प्रकारका माधुर्य उसके बोलनेवालोंकी अंग्रेजीमें भी उतर आती है। मिलनसार परन्तु आत्म-श्लाघी, गम्भीर पर सहानुभूति-सम्पन्न फक्कड़ पर उदार, अभिमानी किन्तु परदुःख-कातर लोग।

कोई भारतीय अपने मनमें इंग्लैण्ड और अंग्रेजका जो भी चित्र लेकर आया हो इसकी सीमामें प्रवेश करते ही वह बदलने लगता है और कुल मिलाकर यह परिवर्तन प्रीतिकर ही होता है। लम्बी अवधि तक रह लेनेके बाद तो यह भी जान पड़ने लगता है कि जिस जाति-समूहको हम अज्ञान अथवा सुविधा-वश अंग्रेज जाति कहते हैं उसमें सम्मिलित दूसरी सभी जातियाँ वास्तविक अंग्रेज जातिसे अधिक आकर्षक हैं। तब अंग्रेजकी प्रभुताका आशय भी होने लगता है और धीरे धीरे सतहके नीचेके दुराव छिपाव भी समझमें आने लगते हैं जो समय-समयपर फूटकर बाहर निकल पड़ते हैं। अंग्रेज और आयरिशोंका विरोध तो आयरी स्वातन्त्र्य आन्दोलन हमारे सामने ला रखा, बल्कि आयरी विद्रोह-भावनासे एवं समर्थनसे भारतीय क्रान्तिकारियोंको बराबर प्रेरणा भी मिलती रही। लेकिन इस राजनीतिक द्वन्द्वके पीछे धार्मिक परम्पराओंका (एंग्लिकन और कैथोलिक सम्प्रदायोंका) जो द्वन्द्व था और उससे भी बढ़कर आन्तरिक संघर्ष और आकांक्षाओंका जो भेद था वह यहाँ

भारतमें रहते हुए उतना स्पष्ट नहीं होता। मुझे याद है, जिन दिनों मैं सेनामें था, उन दिनों अपने साथी एक ब्रिटिश अफसरको अंग्रेजोंकी बुराई करते पाकर ("द इंग्लिश आर वेरी मीन"—अंग्रेज बहुत कमीने होते हैं) मैंने जरा अचकचाकर कहा था कि "आप भी तो अंग्रेज हैं", तो उसने तिलमिलाकर उत्तर दिया था, "नहीं, मैं वेल्श हूँ!" अंग्रेज और आयरिशके विरोधके बावजूद ब्रिटिश सेनामें आयरिश सैनिकोंकी बड़ी संख्याको तो मैं आयरी स्वभावके अन्तर्विरोधका एक चिह्न मानकर स्वीकार कर चुका था, लेकिन इंग्लिश और वेल्शका यह विरोध मेरे लिए नयी बात थी। इसकी वास्तविक शक्ति यूरोप और इंग्लैंडकी यात्राके बाद ही ठीक-ठीक समझ सका। इंग्लिश और वेल्श, आयरिश और स्कॉट, एंग्लो-सैक्सन और केल्टिक अथवा गैलिक, इनके जातिगत संस्कार कितने गहरे और कितने भिन्न हैं इसका अनुमान भी उन लोगोंके लिए कठिन है जो कि सारे यूरोपको ही नहीं, सारे पश्चिमको एक मान लेते हैं। (या यह अधिक विस्मयकी बात तो नहीं है क्योंकि यूरोपके लोग भी सारे पूर्व अथवा ओरिएंटको एक मान लेते हैं और अनुभवके बाद ही अलग-अलग देशोंकी अलग-अलग प्रवृत्तियाँ पहचान पाते हैं। फिर इससे आगे बढ़कर पहाड़ी और देसवाल या पंजाबी और बंगाली या हिन्दुस्तानी और द्रविड़ या द्रविड़के अन्तर्गत तमिल और मलयालीके स्वभाव, संवेदना, रागात्मक प्रवृत्ति और जीवन-दृष्टिके अन्तरको पहचानना तो दूरकी बात है!)

इंग्लैंडमें भी—और भी अधिक रहनेसे अंग्रेजकी प्रभुतापर आश्चर्य नहीं रहता क्योंकि धीरे-धीरे उसके कारण भी समझमें आने लगते हैं। अंग्रेजके अपने गुण हैं जो उसे आकर्षक भले ही न बनावें, समय अवश्य बनाते हैं। किन्तु जाति-तत्त्वके विवेचनमें मुझे नहीं पड़ना है। एक बार वेल्सकी सीमामें प्रविष्ट हो जानेपर अपनेको उस प्रदेशके सौन्दर्यके प्रति समर्पित कर देना ही श्रेयस्कर है। फिर जल्दी भी है—आगे बढ़कर हमें वेल्सके वाम हजार राष्ट्र-कवियोंके दर्शन भी तो करने हैं।

हम वन-प्रदेश पार करते हुए उत्तरी वेल्सकी एक मुख्य बस्ती पुल्हेलीकी ओर जा रहे हैं जहाँपर इस वर्षका राष्ट्रीय उत्सव आइस्टढ्वद हो रहा है।

वेल्समें बड़े शहर नहीं हैं, शहर ही अभी हाल तक नहीं थे, ग्राम अथवा लोक-सभ्यताका वह उत्तम उदाहरण था। अब कोयलेकी खानोंके कारण कुछ शहर बन गये हैं और गर्मियोंमें सागर-स्नानके अभिलाषी सैलानियोंके वार्षिक आक्रमणके कारण तटवर्ती कस्बे तो बहुतेरे हो गये हैं फिर भी वेल्सकी परम्पराएँ सब ग्राम-जीवनकी परम्पराएँ हैं और उसके सामाजिक जीवनमें अभी ही सुगठित एकता है। औद्योगिक क्रान्तिके प्रवर्तक ब्रिटेनमें इतना ही वेल्सको विशिष्ट स्थान देता पर उसकी विशिष्ट सांस्कृतिक परम्पराएँ तो उसे और भी उल्लेख्य बना देती हैं। सारे यूरोपमें कदाचित् यही प्रदेश ऐसा है जहाँ काव्य-गायनकी परम्परा अक्षुण्ण बनी है, जहाँ किसान-मज़दूर स्वयं फ़ुरसतमें कविता करते और साथियोंके साथ गाकर सुनाते हैं, जहाँ गाँव-गाँव और ज़िले ज़िलेकी अपनी काव्य-गोष्ठियाँ और काव्य प्रतियोगिताएँ होती हैं और राष्ट्रीय काव्योत्सवमें सैकड़ों प्रतियोगी भाग लेते हैं और हज़ारों व्यक्ति सप्ताह भर तक कविता गान वादन आदि सुनते और प्रतियोगिताके निर्णयमें दिलचस्पी रखते हैं। कहते हैं कि संस्कृतिकी एक पहचान यह है कि लोग अपने फ़ुरसतके समयका क्या उपयोग करते हैं, दूसरी यह कि उनके सामूहिक मनोरंजन क्या रूप लेते हैं; इन दोनों कसौटियोंपर वेल्सकी संस्कृति बहुत ऊँचा स्थान पाती है और एक बार फिर हमें यह बात माननी पड़ती है जिसका एक उदाहरण हमारा अपना देश भी है—कि साक्षरता ही संस्कृति नहीं है; कि नगरमें बसकर हर शनिवारको रेस खेलनेवाला या रविवारको गुबगब नामी सिनेमा देखनेवाला अनिवार्यतया उस ग्रामवासी निरक्षरसे अधिक संस्कृत नहीं है जो आल्हा और चौपाई गाता है, किन्तु दंगलमें जाता है या मौन भरा भी गया समवेत-गान सामाजिक और

राजनतिक प्रवत्तियाकी व्यग्य आ॰ोचनाम रस ले॰ता ह । भौगोलि॰क विस्तार की असमानता बाधक न हो तो भारत और क॰सके जीवनकी कई स्तरापर तु॰ना हो सकती ह ।

पर्थ्लेलीम म एक क॰स परिवारके साथ ठहरा । गृ॰स्वामी कृषि विभागके अधिकारी थे और निरतर दौरपर र॰त थ पहाडक ऊार अपन छाट से बगलम दूसर-तीसर दि॰न शामको आन और क॰ सबर ही फिर निक॰ जात । घरम गह स्वामिना द॰ा वपका ल॰का मार्टिन और उनका कुत्ता ही रहत थ । बगल॰की छाटी सो बगीचीस नाच हा सागर-तटकी रता और उसके पास ही सलानियाकी नयी बस्तीसे ल॰गा हुआ आइस्लड्डका पण्डाल दीख प॰ता था । इस का॰योत्सवम जानके लि॰ए तो म आया ही था लेकिन पण्डा॰म जानसे पह॰ घर ही पर जो हुआ वह भी उल्लेखनीय जान प॰ता ह । जिस बगलमें म ठहरा था उसके सामन ही एक अवका॰ प्राप्त प्रोफेसर रहत थ जो भारतमें भी रह चुके थ—एक कालजमें इतिहासके अध्यापकके रूपमें—उनसे भेंट कर आया फिर दाहिनी आरके बगलके पडोसियासे भेंट हुई । इनकी क॰याए मा॰ग्निकी सहेलियाँ थी और गाती थी । उनसे कुछ क॰स लोक-गान और एक प्राथना गीत सुनकर मन उनकी माताकी अनुमतिसे उन गीताका रका॰ भर लिया और ल॰डकियाका कौतू॰ल शा॰त करनके लिए उन्हें सुना भी दिया । यह हाने न होन एक अत्यन्त वद्ध स॰जन व । प॰च गय और उन्हान भी रिकाड सुननकी इ॰छा प्रकट की । परिचय हुआ ज्ञात हुआ कि यह उन बालिकाआके दा॰ा ह । रका॰ सुनकर उन्हान पूछा कि क्या म कोई कविता भी रकाड करना चाहूगा ? मन कहा सम्भव हुआ तो अवश्य । उन्हान सहज भावस कहा मेरी कविता रिका॰ कर लीजिए ।

मै न उन स॰जनक बारमें कुछ जानता था न क॰स भाषाकी कविता

समझ सकता था। पर शिष्टाचार-वश जब मैं उनकी कविता रिकार्ड कर चुका तब उन्होंने उसका अर्थ भी मुझे समझाया और फिर आग्रहपूर्वक एक पुराना लोक गीत भी रिकार्ड करा दिया। लोक-गीतकी धुन अच्छी थी पर उसकी ऊंची तानके लायक बल उनकी बूढ़ी आवाज़में नहीं था। बल्कि गानेके आयासमें जब उनका चेहरा तमतमाकर टमाटर-सा लाल हो आया और स्वर भी लड़खड़ा गया तो मुझे चिन्ता भी हुई उनका उत्साह ही मेरी जबान न बन्द किये रहता तो मैं उन्हें रोक देता। गाना पूरा करके दो चार मिनट सांस लेकर जब वह चले गये, तब गृहस्वामिनीने बताया कि तीन वर्ष पहले राष्ट्रीय काव्योत्सवमें उन्हींको राष्ट्रकविका आसन दिया गया था। दस-ग्यारह वर्षकी बालिकाओंसे लेकर पच्चासी वर्षके वृद्ध तकमें अपनी भाषाके काव्यके प्रति समान उत्साह मेरे लिए स्फूर्तिप्रद अनुभव था पर अगले पांच-छः दिनोंमें इस उत्साहकी व्यापकताके और भी प्रमाण मिले और स्फूर्तिका स्थान एक आश्चर्य मिश्रित श्रद्धाने ले लिया।

आइस्तेडफ़ोडका कार्यक्रम छः दिनका होता है। प्रतिदिन सवेरे नौ बजेसे सायंकाल साढ़े-आठ तक—बीचमें दो घण्टेका अवकाश छोड़कर। इस अधिवेशन कार्यक्रमके अलावा रातको तीन घण्टे और ऐच्छिक कार्यक्रम भी होता था—अर्थात् प्रतियोगिताओंसे बाहर जो लोग कविता-पाठ काव्य-गान आदि करना चाहें उनका कार्य-क्रम। इस प्रकार कुल लगभग पचहत्तर घण्टे लगातार काव्य और गायन सुनने बल्कि करके लोग एकत्र होते हैं। पुल्हेलीके उत्सवमें आनेवालोंकी संख्या मुख्य बैठकोंमें बीस हजार थी। ध्यान रहे कि समूचे वेल्सकी कुल जन-संख्या बीस लाख है। अर्थात् वेल्स भाषी जनताका एक प्रतिशत इस उत्सवमें आया था। यदि यह ध्यानमें रखें कि इस राष्ट्रीय उत्सवकी तैयारीमें अनेक प्रादेशिक और स्थानिक प्रतियोगिताएं और उत्सव होते हैं तब जाकर इसमें भाग लेनेवालोंका निर्वाचन हो पाता है तो समझमें आ जायगा कि इसका वेल्शके जीवनमें क्या

स्थान है प्रत्येक सौमें अधिकसे अधिक दस एसे होंगे जिन्होंने किसी न किसी सोपानपर आइस्तेन्दवा काव्य-पाठ न सुना हो। अन्य जातियाँ राष्ट्र कहाँतक कहा जा सकता है यह विचारका विषय हो सकता है पर यह उत्सव सच्चे अर्थमें जातीय उत्सव है इसमें कोई सन्देह नहीं और इस दृष्टिसे यह एक अद्वितीय अनुष्ठान है। और (अपने देशके सन्दर्भको स्मरण रखते हुए) कदाचित् यह भी कहना चाहिए कि इस उत्सवको कोई सरकारी सहयोग या संरक्षण या प्रोत्साहन नहीं मिलता न उसका सरकारी प्रचार संस्थाओं द्वारा विज्ञापन होता है और न उसीके द्वारा सरकारका अनुमोदन या अभ्यर्थन होता है। स्थानीय शासनाधिकारी (अधीन!) उसकी स्वागत समितिका अध्यक्ष नहीं होता, न मन्त्री उसका उद्घाटन करता है न दानामंत्र किसीकी पत्नी पुरस्कार वितरण करती है। उत्सव वास्तवमें वल्श जातिका उत्सव है और सांस्कृतिक उत्सव है। और उसकी प्रातिनिधिकतामें प्रवासी वल्श लोगोंका कितना योग रहता है यह उसके अन्तर्गत वल्श प्रवासियोंके अभिनन्दन के समारोहसे प्रत्यक्ष हो जाता है। एक एक विदेशके वल्श प्रवासियोंको क्रमश मंचपर लाया जाता है और स्वागतके उपरान्त विशिष्ट स्थानपर बिठा दिया जाता है।

आइस्तेन्दवमें कई भिन्न भिन्न प्रतियोगिताएं सम्मिलित हैं। दो काव्य रचनाकी—अर्थात् एक प्राचीन रीतिकी कविता और एक मुक्त यद्यपि वल्शमें मुक्त का अर्थ है वह कविता जिसमें केवल छन्द और तुकका बन्धन है प्राचीन पद्धतिमें तो इसके अतिरिक्त और कई प्रकारके नियमोंका निर्वाह होता है। एक प्रतियोगिता गायकी एक काव्य गायनकी दो-तीन समवेत-गानकी जिसमें पुरुष वर्ग और स्त्री-पुरुष अलग अलग गाते हैं फिर विशिष्ट वल्श वाद्योंके वादनकी संगीत निर्देशनकी नाटक रचना और अभिनयकी इत्यादि। इधर उत्सवने जो अधिक व्यापक रूप ले लिया है उसमें इन सांस्कृतिक कार्योंके आस-पास और भी कई प्रतियोगिताओंका वृत्त बन गया है जिनमें विद्यार्थी-समुदाय भाग लेता है।

उत्सवका सबसे महत्त्वपूर्ण अंग होता है विजेता कवियोंका अभिषेक प्राचीन पद्धतिके कविको आसन दिया जाता है और नयी अथवा 'मुक्त' शैलीके कविको मुकुट। निर्णायक समिति पिछले पुरस्कार विजेताओं और सम्मानित कवि समुदायमेंसे चुनी जाती है समितिका प्रमुख निर्णय सुनाता है जिसमें कविताओंकी विशद समीक्षा भी रहती है। जिस स्तब्ध एकाग्रताके साथ पचपन-साठ हजार व्यक्ति इस समीक्षाको सुन रहे थे, और जिस दिलचस्पीके साथ बादमें उन्होंने स्वयं कविताओंकी विवेचना की और निर्णायकके निर्णयपर टीका टिप्पणी की वह मेरे लिए अपूर्व अनुभव था और कभी कभी साहित्य विवेचनमें वर्ग निर्विशिष्ट जनका ऐसा एकोन्मुख लगाव मैंने नहीं देखा। वर्ग निर्विशिष्ट मैं जान बूझकर कह रहा हूँ क्योंकि उस जमावमें खेतिहर किसानसे लेकर विश्वविद्यालयके आचार्यों और कोयला खदानके कमकरसे लेकर उच्च सरकारी अधिकारीतक सभी तरहके और स्कूलके छात्र छात्राओंसे लेकर चौथेपनको आधा पार कर चुकनेवाले सभी उम्रके लोग थे।

आइसलैण्डके इस रूपका ऐतिहासिक विकास बड़ा रोचक है। यह नहीं है कि उसमें शासन या अधिकारी वर्गका हस्तक्षेप कभी न रहा हो। बल्कि एक समय तो इसने लगभग सरकारी परीक्षाका ही रूप ले लिया था और बजाय जीवन-वृत्ति पानेका यत्न करनेवालोंमें पात्रोंको छाँट करके उन्हें लाइसेंस देना ही इसका उद्देश्य हो चला था। यही गति रहती तो कवि एक प्रकारका सम्मानित लाइसेंसधारी भर ही रह जाता— सम्मानित इस अर्थमें कि वह बड़े आदमियोंसे बड़ी रकमकी माँग करनेका प्रमाण युक्त अधिकारी होता!

आइसलैण्डका ज्ञात इतिहास हजार वर्षसे अधिक लम्बा है। प्रमुख कवि को कुर्सी देनेकी प्रथा तबसे चली आती है। यद्यपि तब कुर्सी देनेका अर्थ था दरबारमें एक विशिष्ट आसन देना, और अब कवि विशिष्ट कुर्सीको अपने साथ घर ले जाता है और बीचमें कुर्सी केवल एक चाँदीका

छोटा-सा प्रतीक होती थी जिसे वह घर ले आता—और मकुट भी ऐसा ही प्रतीक मकुट होता था। बारहवीं शतीमें पहले-पहल शासककी ओरसे एक वर्षकी पूर्व घोषणाके बाद काव्य प्रतियोगिताका प्रमाण मिलता है—और यह पूर्व घोषणा अब अनिवार्य है। आइस्तेड्फ नामका प्रथम उत्सव पन्द्रहवीं शतीमें हुआ यह भी स्थानिक शासक द्वारा आयोजित था और इसमें प्रमुख कवि प्रमुख वादक तथा प्रमुख गायकको अलग अलग पुरस्कार दिये गये। काव्य छन्दोंके विषयमें नये नियम भी इस समय बनाये गये। सोलहवीं शतीमें दो मुख्य आइस्तेड्फोंका एतिहासिक उल्लेख है। इनमें विजयी कविको एक प्रतीक रूप कुर्सी हार्प नामक तार-वाद्यके वादकको चाँदीका छोटा सा हार्प क्रूथ नामक गजसे बजाये जानेवाले तार-वाद्यके वादकको वैसा ही चाँदीका क्रूथ और सर्वश्रेष्ठ गायकको एक चाँदीकी जिह्वा भेंट की गयी थी। यह चाँदीका हार्प अभी तक सुरक्षित है।

सरकारी हस्तक्षेपका प्रमाण इनमेंसे दूसरे आइस्तेड्फमें मिलता है। रानी एलिज़ाबेथने उत्तर वेल्सके बीस अभिजात व्यक्तियोंको राज्यादेश दिया कि गायक अथवा कवि पद-प्रार्थी सभी व्यक्तियोंकी परीक्षा लेकर उन्हें लाइसेंस दें और अनधिकारी व्यक्तियोंका जहाँ-तहाँ जाना बन्द कर दें। इस प्रकारके लाइसेंसका कोई नमूना कहीं नहीं मिला है पर इससे कुछ पहले दिया गया एक लाइसेंस अभी सुरक्षित है जिससे पता चलता है कि उस पानेवालेको कवि-कर्मकी परीक्षामें उत्तीर्ण और अभिजात समाज तथा जन साधारणसे पुरस्कार चाहने और पानेका अधिकारी प्रमाणित किया गया था। इस प्रमाण पत्रपर दो अभिजात व्यक्तियोंके और एक कविके हस्ताक्षर हैं।

अठारहवीं शतीके ऐसे समारोहोंका उल्लेख तत्कालीन पत्रोंमें मिलता है। वहींसे यह भी पता चलता है कि इनमें पठित काव्यका स्तर सदा बहुत ऊँचा नहीं होता था। एकमें तो यहाँ तक लिखा है कि पिछले वर्ष हमने जिस कवि-सम्मेलनकी सूचना दी थी उसमें केवल एक योग्य कवि

आया था ऐसा कोई कविता नहीं पढ़ी गयी जो तत्त्विक या गम्भीर या मनोरंजक भी हो। फिर भी जिज्ञासु वर्गको लाभार्थ सूचनाके लिए जो भी कचरा धान्य वहाँ पढ़ा गया उसके नमूने हम यहाँ दे रहे हैं।

एक जातीय अनुष्ठानका गौरव आइसलैण्डको उन्नीसवीं शतीके उत्तरार्द्धमें ही मिला जबसे उसका सञ्चालन करनेवाली एक स्वतन्त्र राष्ट्रीय समिति बनी। इस राष्ट्रीय समितिकी समकक्ष उल्लेख्य संस्था है गोर्सेद अथवा कवि परिषद्। परिषद् द्वारा घोषणाके बिना कोई राष्ट्रीय समारोह नहीं हो सकता और प्रतिवर्ष यह परिषद् आगामी वर्षके उत्सवके स्थान और नियमोंकी घोषणा करती है। इस कवि-सम्प्रदायकी सविस्तार चर्चा यहाँ नहीं हो सकती, पर यहाँ स्वस्ति वचनके रूपमें इसके मंगलाचरणका ही अनुवाद दिया जा सकता है

प्रभु हमें अपना संरक्षण दे
और संरक्षणमें शक्ति,
और शक्तिमें सहानुभूति,
और सहानुभूतिमें विवेक,
और विवेकमें सत्‌का विवेक
और सत्‌के विवेकमें सत्‌का प्रेम
और सत्‌के प्रेममें समूचे जीवनका प्रेम
और जीवनमें प्रभुका प्रेम—
प्रभुका और शिवताका।

कविताके प्रति वेल्स-जनका यह लगाव इतना आश्चर्यजनक इसलिए है कि साधारण समकालीन प्रवृत्तिसे वह इतना भिन्न है। काव्य प्रेम और संगीत प्रेम केल्ट अथवा केल्टिक जातिकी स्वभावगत विशेषता है। उनकी भाषाकी नादमयता भी इसके सर्वथा अनुकूल है। आरम्भमें ब्रज भाषाके

सहज भावके बारेमें जो किंवदन्तियाँ प्रचलित हैं, कुछ वैसी ही बात वेल्श भाषाकी सहज संगीतमयताके बारेमें कही जा सकती है। और संगीतका यह संस्कार वेल्श भाषाका इतना गहरा अंग है कि उसकी गहरी छाप वेल्श लोगों द्वारा बोली और लिखी गयी अंग्रेज़ीपर भी पड़ती है। पिछली शतीमें जेरार्ड मैनली हॉपकिंसकी कविताओंका जो प्रभाव अंग्रेज़ी काव्य रचना और छन्दपर पड़ा, उसका श्रेय वास्तवमें वेल्श भाषाको ही मिलना चाहिए—हॉपकिंसका वेल्श संस्कार ही उसकी अंग्रेज़ी कवितामें प्रकट हुआ और उसीने हॉपकिंसको छन्द सम्बन्धी एक नयी दृष्टि दी। हमारी पीढ़ीके डायलन टॉमसका प्रभाव भी उतना ही स्थायी होगा या नहीं, अभी यह कहना भविष्यद्रष्टाका दावा करना होगा, किन्तु इसमें कोई सन्देह नहीं कि वह प्रभाव गहरा और व्यापक हुआ है। अपने समकालीन दूसरे कवियोंसे टॉमसकी कविता सुननेमें कितनी भिन्न है, यह अनुभवसे ही जाना जा सकता है, नहीं तो इसका अनुमान भी कठिन है कि एक ही भाषाके प्रकार सुननेमें एक-दूसरेसे इतने भिन्न हो सकते हैं।

किन्तु वेल्सकी यह काव्य चेतना वास्तवमें एक व्यापकतर चेतनाका अंग है। उसे राष्ट्रीय कहा जा सकता, यदि एक ओर यह प्रश्न न उठता कि क्या वेल्सको राष्ट्र कहना संगत है? और दूसरी ओर यह भी कठिनाई न होती कि राष्ट्र कहनेसे एक राजनैतिक इकाई ही सामने आती है जबकि हम एक सांस्कृतिक इकाईकी बात सोच रहे हैं—इतना ही नहीं, एक ऐसी सांस्कृतिक इकाईकी जिसकी मूल शक्ति उसके नागर रूपमें नहीं बल्कि उसके लोक रूपमें वास करती है और जो इस बातको जानती भी है। वेल्सके विभिन्न खण्डोंमें लोक-संस्कृतिकी परम्पराओंकी रक्षाके जो प्रयत्न हुए हैं—निस्सन्देह सरकारी सहायतासे—वे उल्लेखनीय हैं। कार्डिफका लोक-संस्कृति संग्रहालय अपने ढंगका एक ही है। स्कैण्डिनेवियाके यवा देश भी, जिनकी सांस्कृतिक परम्पराएँ उतनी लम्बी नहीं हैं और जिनकी नागर सभ्यताएँ कुछ तेज़ीसे लोक संस्कृतिको अपनेमें मिलाये ले

पुश्नली (वेल्स) का विहगम दृश्य

सहज माधुर्यके बारेमें जैसी किंवदन्तियाँ प्रचलित हैं कुछ वैसी ही बात वेल्श भाषाकी सहज संगीतमयताके बारेमें कही जा सकती है। और संगीतका यह संस्कार वेल्श भाषाका इतना गहरा अंग है कि उसकी गहरी छाप वेल्श लोगों द्वारा बोली और लिखी गयी अंग्रेज़ीपर भी पड़ती है। पिछली शतीमें जेराल्ड मैनली हॉपकिंसकी कविताका जो प्रभाव अंग्रेज़ी काव्य रचना और छन्दपर पड़ा उसका श्रेय वास्तवमें वेल्श भाषाको ही मिलना चाहिए—हॉपकिंसका वेल्श संस्कार ही उसकी अंग्रेज़ी कवितामें प्रकट हुआ और उसीने हॉपकिंसको छन्द-सम्बन्धी एक नयी दृष्टि दी। हमारी पीढ़ीके डायलन टॉमसका प्रभाव भी उतना ही स्थायी होगा या नहीं अभी यह कहना भविष्य-वक्ताका दावा करना होगा किन्तु इसमें कोई सन्देह नहीं कि वह प्रभाव गहरा और व्यापक हुआ है। अपने समकालीन दूसरे कवियोंसे टॉमसकी कविता सुननेमें कितनी भिन्न है यह अनुभवसे ही जाना जा सकता है नहीं तो इसका अनुमान भी कठिन है कि एक ही भाषाके प्रकार सुननेमें एक-दूसरेसे इतने भिन्न हो सकते हैं।

किन्तु वेल्सकी यह काव्य-चेतना वास्तवमें एक व्यापकतर चेतनाका अंग है। उसे राष्ट्रीय कहा जा सकता यदि एक ओर यह प्रश्न न उठता कि क्या वेल्सको राष्ट्र कहना संगत है? और दूसरी ओर यह भी कठिनाई न होती कि राष्ट्र कहनेसे एक राजनीतिक इकाई ही सामने आती है जबकि हम एक सांस्कृतिक इकाईकी बात सोच रहे हैं—इतना ही नहीं एक ऐसी सांस्कृतिक इकाईकी जिसकी मूल शक्ति उसके नागर रूपमें नहीं बल्कि उसके लोक रूपमें वास करती है और जो इस बातको जानती भी है। वेल्सके विभिन्न खण्डोंमें लोक-संस्कृतिकी परम्पराओंकी रक्षाके जो प्रयत्न हुए हैं—निस्सन्देह सरकारी सहायतासे—वे उल्लेखनीय हैं। कार्डिफका लोक-संस्कृति संग्रहालय अपने ढंगका एक ही है। स्कैन्डिनेवियाके युवा देश भी जिनकी सांस्कृतिक परम्पराएँ उतनी लम्बी नहीं हैं और जिनकी नागर सभ्यताएँ बहुत तेज़ीसे लोक संस्कृतिको अपनेमें मिलाये ले

पुश्पली (पेल्स) का विहगम दृश्य

सेंट-फ्रैंगेस उद्यानमें सालेका हौज़



आयरलैंडका सागर-तट

रही हैं लोक-जीवनको यथासम्भव संरक्षण देनेका प्रयत्न करती है और उनके लोक-संग्रहालय भी दर्शनीय होते हैं लेकिन कार्डिफका संग्रहालय और संग्रहोद्यान विशेष उल्लेख्य है। हम लोग पाँच छः हजार वर्ष पहलेकी संस्कृतिकी चर्चा करते हैं और उपन्यासोंमें तत्कालीन जीवनका कल्पित वर्णन करते हैं और निस्सन्देह इतनी लम्बी सांस्कृतिक परम्परा गौरवका विषय है। लेकिन दो-तीन सौ वर्ष पहलेका किसान ठीक किस ढंगके मकानमें किस ढंगसे रहता था आजके शहरी भारतवासीको उसका चाक्षुष उदाहरण पानेमें कठिनाई हो सकती है—इसके बावजूद कि हमारे देहातोंमें परिवर्तन बहुत कम और धीमी गतिसे हुआ है। और विभिन्न कालोंके स्थापत्य शिल्पमें क्या परिवर्तन होते रहे इसकी तरफ तो मानो हमारा ध्यान ही नहीं गया है—मन्दिरों, महलों और दुर्गोंकी बात मैं नहीं कह रहा हूँ, सिर्फ मध्य वित्त या अल्प वित्त मनुष्यके घरकी बात कह रहा हूँ। कार्डिफके संग्रहालयके उद्यानमें अलग अलग शतियोंके खेती घर देखकर बड़ा सन्तोष हुआ। ये खेती घर मॉडल या प्रतिरूप नहीं थे बल्कि भीतरी प्रदेशोंसे उठाकर लाये गये वास्तविक पुराने घर थे। घरोंको ठीक ज्योंका त्यों नये परिवेशमें प्रतिष्ठित करके, उनके भीतर उसी समयके चौकी खाट बर्तन भाँड और औजार रखे गये थे। हालैंडमें आर्नहेमके उद्यान-संग्रहालयमें भी ऐसा ही प्रयत्न देखा, अन्यत्र इस पैमानेपर तो नहीं।

नागर-जीवनकी ओर लौटना न वांछित है न सम्भव। लोक जीवनको संग्रहालयकी वस्तु मान लेना या उसके संरक्षणका दम्भ करना उसकी जीवनशक्तिका धार्मिकताका अपमान करना है। इन संग्रहालयोंपर बल देनेका आशय यही है कि इस मूल-स्रोतसे नागर-सभ्यताका सम्बन्ध नहीं टूटना चाहिए। नागर-सभ्यता सदा आत्म-चेतन अथवा प्रबुद्ध होती है लोक संस्कृतिमें ऐसी आत्म-चेतना या आत्म-बोध नहीं होता। यह अपने आपमें दोष नहीं है ठीक वैसे ही जैसे कि सुन्दरीको अपने रूपका बोध न होना दोष नहीं है। आवश्यकता इसी बातकी है कि लोक जनको गलत ढंगका

बाधा देनेका प्रयत्न न किया जाय, उसे शहरकी नकलची या नकली शहरी होनेकी ओर प्रवृत्त न किया जाय, बल्कि इसकी सुविधा दी जाय कि वह भीतरी प्रेरणासे ही सहज विकास कर सके। रूपसी रूप-गर्विता न हो इसमें कुछ भी खटाक नहीं है, लेकिन वह व्यर्थ ही कृत्रिम प्रसाधनोंके आकर्षणमें न खो जाय या उनकी अनुपस्थितिमें अपनेको अधूरा या हीन न समझने लगे, इसके अनुकूल परिवेश उसे देनेकी ओर उन्हें प्रवृत्त होना चाहिए जिनको सभ्यताने उसे उस कृत्रिमतासे इतना परिचित करा दिया है कि अब वह उससे उबर नहीं सकती। लेकिन उससे किसी जोखममें भी नहीं पड़ती।

दूसरी भाषा तो मैं नहीं जानता, और उसकी भाषाकी कविता भी नहीं समझता, लेकिन वहाँके बीस हजार राष्ट्र-कवियोंके सन्देशका यही अभिप्राय मुझे उपलब्ध हुआ।

नीलमका सागर, पन्नोंका द्वीप

ग्रेट ब्रिटेनके संयुक्त राज्यके तीसरे देश, और दूसरे मुख्य द्वीप आयरलैण्डके विषयमें कौतूहल बचपनसे ही था। वहाँकी लोक-कथाएँ पहलेसे पढ़ रखी थीं और अंग्रेज़ी काव्यसे परिचयके साथ-साथ आयरिश काव्यसे जो परिचय हुआ था उसकी विशेषताओंकी अलग छाप मनपर थी। यह प्रभाव अलग था, इंग्लैण्डका अलग, यह बात अकारण नहीं जान पड़ती थी कि 'अंग्रेज़ी' कवियोंमें जो दो सबसे अधिक प्रिय थे दोनों आयरिश थे।

क्रान्तिकारी-जीवनमें आयरिश विप्लवियोंकी जो जीवनियाँ पढ़ी थीं वे भी अपनी छाप छोड़ गयी थीं। स्वयं मेरे ऊपर उनका प्रभाव उतना गहरा नहीं था, जितना मेरे कुछ साथियोंपर, और मैं डैन ब्रीनकी आत्मकथाको केवल एक रोचक वृत्तान्त मानता था, एक प्रेरणा-स्रोत नहीं। लेकिन मेरे साथियोंमें भी कुछ ऐसे थे जो उस पुस्तकको बाइबलका समकक्ष प्रमाण-ग्रन्थ मानते थे, और यह तो मैं जानता ही था कि इससे पहलेके बड़े षड्यन्त्रकारियोंमें—भगतसिंह और उनके साथियोंमें—उसका स्थान और भी ऊँचा था। स्वयं मुझे रूसी आतंकवादियोंके वृत्तान्त अधिक उपादेय जान पड़ते थे और उनको अनुप्राणित करनेवाली नैतिक भावनाएँ अधिक मूल्यवान्। इतना स्वीकार कर सकता हूँ और जहाँ तक मुझे स्मरण है उस समय भी अनुभव करता था, कि रूसी निहिलिस्ट सम्प्रदायमें हास्यकी बहुत कमी थी और उनके जीवन-दर्शनकी बौद्धिक अतिशयता ही उसे मानो अमानुषिक बना देती थी। दूसरी ओर आयरिश स्वभावकी सहज हास्य-प्रवृत्ति और विनोदशीलता आयरिश क्रान्तिकारी आन्दोलनमें भी प्रति

बिम्बित थी और उसमें भाग लेने वालोंके जीवन प्रेममें एक आकर्षक सहज साहसिकता दीखती थी।

यूरोप गया तो आयरलैण्ड अवश्य जाऊंगा यह तो भारतमें भी जानता था। किन्तु ब्रिटेन पहुंचकर वहांकी राष्ट्रीयताके भीतर विभिन्न जातीय ताओंका अनभव करके आयरलैण्डके विषयमें कौतूहल और भी बढ़ गया। पुष्करलाके राष्ट्रीय कायोत्सवके बाद वहांसे ही आयरलैण्ड जानेका निश्चय किया। बगोरसे लिवरपूल आकर वहांके घाटसे रातका स्टीमर पकड़ा और दूसरे दिन सवेरे बेल्फास्ट पहुंच गया।

यों तो सवेरे बेल्फास्टकी बंदरगाहमें प्रवेश करनेके बाद ही आयरलैण्ड पहुंचा लेकिन वास्तवमें उसकी पकड़में तभी आ गया जब लिवरपूलसे जहाज छूटा। ऊपर जाकर दूर हटती हुई लिवरपूलकी बंदरगाहको देखनेके लिए खड़ा ही हुआ था कि एक सज्जन पास आकर खड़े हो गये और बातें करने लगे। मैं वार्तालापके 'मूड'में नहीं था, लेकिन उन्हें टालना कठिन था। और यह भी नहीं कह सकता कि मैं केवल सहता ही रहा उन सज्जनसे बातचीत रोचक भी थी और उत्तेजक भी और थोड़ी ही देरमें उसने बहसका रूप ले लिया। फिर हम लोग रात एक बजे तक विभिन्न विषयोंको लेकर जूझते रहे साहित्यिक राजनीतिक धार्मिक सामाजिक और कला-सम्बन्धी अनेक क्षेत्रोंको हमने खरोंचा और प्रत्येकमें अलग-अलग तरहके पैंतरे करते रहे। बीच-बीचमें वह सज्जन कहते हम आयरी लोग बड़े बातूनी होते हैं हम आयरियोंके लिए तो बात विवाद ही वह वायुमण्डल है जिसमें हम साँस लेते हैं आप सोचते होंगे कि मैं ब्लार्नी*का नमूना पेश कर रहा हूं लेकिन असली नमूना तो आपको

---

* ब्लार्नी एक आयरी दुर्ग और उसके भीतर स्थित एक शिला जिसे चूमनेसे व्यक्ति बातूनी हो जाता है। ऐसे व्यक्तिकी लच्छेदार बातोंको भी ब्लार्नी कहते हैं।

इंग्लिनमें मिलेगा ! इस प्रकार माना बातूनापनके लिए समा-याचनाका उनका वक्तव्य पूरा हो जाता और वह फिर और बातें करने लगते ! जो हो उनके कारण यात्रा भी अच्छी कट गया और कुछ शिक्षा भी मिली।

उत्तरी आयरलैंडको आयरलैंड न मानना कठिन है। पर अल्स्टर और आयरा स्वतन्त्र राज्यको एक ही आयरलैंड मानना और भी कठिन है! वास्तवमें उत्तरके प्राटेस्टेंट संस्कार उस स्वतन्त्र राज्यसे बड़ी इतने गहरमें अलग कर देते हैं कि ब्रिटनमें उत्तरी आयरलैंडकी दूरी गौण जान पड़ने लगती है। बस उत्तरी आयरलैंड प्राकृतिक और आर्थिक दोनों दृष्टियोंसे सम्पन्नतर है और उसकी समस्याएं इतनी विकट नहीं हैं जितनी स्वतन्त्र राज्यकी फिर (चाहे इस सम्पन्नताके कारण ही) इंग्लैंडसे उसका सम्बंध अधिक रहा है। उत्तरी आयरलैंडके लोग अपनी वर्तमान स्थितिसे सन्तुष्ट हैं इस सम्बन्धमें कोई द्विधा उन्हें नहीं है कि एक छोटेसे द्वीपका अंग होकर वे उस द्वीपके स्वतन्त्र राज्यसे सम्बद्ध न होकर दूर ब्रिटेनके पार्लामेंटके अधीन हैं। वास्तवमें यह अधीनता ऐसी है भी नहीं उत्तरी आयरलैंड अथवा अल्स्टरका अपना अलग पार्लामेंट है और अल्स्टर-वासी दो पार्लामेंट होनेमें असमंजसका कोई कारण नहीं देखता। वह ऐसा नहीं मानता कि इसके कारण उसकी अधीनता कुछ अधिक हो जाती है बल्कि, जैसा कि विदेशी यात्रियोंको पार्लामेंट दिखानेवाले एक गाइडने मेरे सामने ही लन्दन और मांचेस्टरसे आये हुए कार्पोरेशनके सदस्योंके दलसे कहा था आप लोग यह न समझें कि हम आपसे किसी बातमें पीछे हैं या कि हमारे अधिकार किसी तरह कम हैं। बल्कि एक मामलेमें हम आपसे आगे हैं—हम दो सरकारोंपर अपना गुस्सा निकाल सकते हैं!

अल्स्टरके लेबर मिनिस्टर मि० पी० टी० एन० ने कुछ मन्त्रियोंसे विधानमें भेंट हो चुकी थी उनके आमन्त्रणपर उनका सम्मिलित सदस्योंके साथ भोजन किया स्थानीय पत्रके प्रतिनिधिसे भेंट की और पार्लामेंट भवनका चक्कर लगा लिया इसके बाद मैंने अपनेको मुक्त समझा कि अल्स्टरके

चले प्रदर्शकी सर कम और आयरलैंडके परम्परागत नाम मरकत द्वीप की सार्थकताकी पन्ताल करे। क्वल हरियाली ही इसका कारण नहीं हो सकता क्योंकि हरियाली तो ब्रिटेनके द्वीप-समूहमे सर्वत्र है।

लेकिन यहां शायद उस आयरी 'बारह मास' का उल्लेख आवश्यक है जो भारत छोडनेसे पहले एक आयरी मित्रने इस प्रश्नके उत्तरमें सुनाया था कि कौनसे मौसममें आयरलैंड जाना ठीक होगा। पूरा ब्यौरा तो मुझे याद नहीं है पर साठवें ग्यारह महीने उन्होंने इसलिए अनुपयुक्त ठहराये थे कि उनमें वर्षा बहुत होती है—कभी निरी वर्षा कभी ओलेके साथ वर्षा कभी आंधीके साथ वर्षा कभी बर्फके साथ वर्षा कभी पिघली हुई बर्फ़पर ओले और आंधीके साथ वर्षा और कभी घने कोहरेके साथ थोडी-थोडी वर्षा जिसके कारण कुछ दीख ही नहीं सकता! इस प्रकार अगस्तका महीना बच गया था—बल्कि उसका भी एक पखवाडा फिर अन्तमें उन सज्जनने हंसकर कहा था कि अगस्तमें जानेपर भी वर्षासे विस्मय नहीं होना चाहिए केवल यह आशा करनी चाहिए कि दो एक दिनमें कभी न कभी धूप निकलती है।

इसके लिए विशेष आयोजन नहीं करना पडा था किन्तु आयरलैंड पहुंचकर मन यह स्मरण अवश्य किया कि मैं ठीक उसी पखवाडेमें वहां पहुंचा हूं जो कि आयरलैंडके लिए सर्वोत्तम बताया गया था। इसलिए मेरी जल्दीसे जल्दी अधिकसे अधिक देखनेकी उत्सुकता स्वाभाविक ही थी। उत्तरी आयरलैंडकी साढे तेरह लाख प्रजाका तीसरा हिस्सा बेल्फास्ट शहर में रहता है और बाकी दो तिहाई सारे देशमें बिखरा हुआ है यह देहातको मेरे लिए अधिक आकर्षक बना रहा था।

शामको सरकारी दफ्तर यडम्पर जाकर मैंने अनेक सम्भाव्य यात्राओं के विवरण पत्र इकट्ठे किये और रातको उनका अध्ययन करके अगले दिनका कार्यक्रम निश्चित कर लिया। बेल्फास्टसे सबेरे ही निकलकर नगरके कुछ मुख्य स्थानोंको देखकर भीतरी प्रदेशकी झीलें और नदियां

दक्षिन हुए उत्तरी सागर-तटतक जाकर, सागरके किनारे किनारे लौटनेकी योजना थी। इस सागर-तटकी सरसे वाल्मने आयरलैण्डका नाम मरकत द्वीप न केवल स्वीकार कर लिया बल्कि अपनी ओरसे उसमें इतना और जोड़ लिया कि वह पन्ना नीलमके एक बड़े थालमें जड़ा हुआ है, क्योंकि आयरलैण्डके उत्तरी और उत्तर-पूर्वी सागर-तटका सौन्दर्य अद्वितीय है और उत्तरी प्रदेशोंका विशिष्ट प्रकाश उस ओर भी रहस्यमय बना देता है।*

यह उत्तर-पूर्वी तट प्रदेश अर्थात् एंट्रिमका ज़िला अपने सौन्दर्यके लिए जितना महत्त्वपूर्ण है उतना ही अपने पौराणिक सम्बन्धके कारण और प्राग्मानवीय अवशेषोंके कारण। आयरी और स्काटी लोक-साहित्यमें उसका उल्लेख बार-बार आता है अनेक करुण कथाएँ उससे सम्बद्ध हैं। और इसी प्रदेशके सर्वोच्च शिखर टोस्टानकी छायामें पौराणिक आयरी (गेलिक) कविश्रेष्ठ आसियनकी क़ब्र है

उत्तरी सागर-तटका स्नान पोर्ट स्टुअर्टपर किया और वहाँसे पोर्ट रश जाकर रुका। ये दोनों स्थान मुख्यतया स्नान करनेवालोंके आकर्षणके हैं। पोर्ट स्टुअर्ट आयरी हास्य-लेखक चार्ल्स लीवरका स्थान रहा। कुछ आगे

---

* 'आयरलैण्डके समुद्र-तटपर' शीर्षक कवितामें 'बच्चन' ने लिखा है

सिन्धुका छिछला छिछला तीर
अकम्पित नील मुकुर-सा नीर
यहाँ लगता है कोई छोड़
गया है उरकी गहरी पीर!

सागरका 'नील मुकुर' मैंने देखा साक्षी हूँ। तीर अधिकतर चट्टानी है कहीं-कहीं बालुकामय, 'छिछला' तो सागर कहीं-कहींपर है। यों अपने उरकी गहरी पीरको एकाएक छिछले तीरपर छोड़ जानेवालेके हस्त लाघवका क़ायल हूँ। पीर नीली भी अवश्य होनी होगी, तभी छायावादी कविको सारा आकाश उससे भरा दीखता था—'शून्य' होनेके बावजूद!

बढ़कर व्हाइट राक्स नामक स्थान आता है जहाँसे तट पथरीला और चट्टानी हो जाता और कई मीलतक ऐसा ही रहता है। थोड़ी देर बाद चट्टानपर बने हुए डनलूस दुर्गपर पहुँच गये। इस दुर्गके अब खंडहर ही रह गये हैं लेकिन वे भी एक दूसरे युगमें ले जानेके लिए पर्याप्त हैं। सागरके किनारे किनारे पूर्वकी ओर बढ़ते हुए कुछ मील जाकर हम लोग उत्तर-पूर्व मुड़े। जायंटस काज़वे नामका स्थान संसारके बड़े अचरजोंमेंसे एक है। किसी सुदूर प्रागैतिहासिक युगमें ज्वालामुखीके तापसे पिघला हुआ पत्थर फिर जमा तो स्फटिक मणिवत नियमित आकारोंमें और ऐसे ही नियमित रूप और आकार प्रकारके हजारों प्राकृतिक षट्कोण स्तम्भ यहाँ देखनेमें आते हैं। जान पड़ता है मानो किसी प्राचीन कालमें अतिमानवी आकारकी किसी जातिके अभिकानने यहाँसे सागरके सेतुबन्धका आयोजन आरम्भ किया हो लेकिन काम अधूरा छोड़कर चले गये हों तभीसे ये असंख्य खम्भे यहाँ पड़े रह गये हों।

जायंटस काज़वेके पास ही डनसेवरिक नामक स्थान है जहाँके दुर्गका उल्लेख मिस्रके यात्री प्टॉलेमीने ईसवी दूसरी शतीमें किया था।

चट्टानों तटसे टकराते हुए महासागरका एक आकर्षण था। किन्तु यहाँपर तटका अपना आकर्षण भी अद्भुत था और इनके सोच नहीं पाता था कि सागरकी ओर देखूँ अथवा तटकी ओर।

कई घण्टे यहाँ बिताकर आगे बढ़े। राष्ट्र पार्ककी छाती भी सुन्दर खानी जो कि सौन्दर्यके कारण राष्ट्र द्वारा सुरक्षित है करिक-आ रीड जहाँ एक छोरसे दूसरेतक रस्सीका पुल डाला गया है और दूर हटकर राथलिन द्वीप—जहाँ स्काटलैंडके राबर्ट ब्रूसको निर्वासित किया गया था—(मकड़ीका जाल बुनते देखकर नया उत्साह पानेकी काव्य प्रसिद्ध घटना यहीं इसी निर्वासनमें घटी थी)—और कुछ आगे बढ़कर बालीकासलका छोटा कस्बा। यहाँसे राथलिन द्वीप तो दीखता ही था लेकिन सुदूर क्षितिजपर स्काटलैंडका तटका धुँधली-सी रेखा भी दीखती था। बाली

वासलमे फिर पहाडी प्रदेश आरम्भ होता था। यहातक पहाड दाहिनेका ■ और सागर बायेंको, लेकिन यहासे बन्दर गाहिनको भी पहाड आ गये और सागर उनकी ओट हो गया। लुप्त हो जानेवाली झील के पाससे गुजरते हुए कशेनडल्मे हम लोग फिर सागर तटपर आ गये और यहासे घूमती बलखाती हुई क्रमश अन्तिम पूर्वकी बनी हुई सडक बराबर सागर तटके साथ ही चलती रही। यहाँसे लेकर पोर्टनतक जहा आइलडमाजी प्रायद्वीपकी नोक तटकी सडक और खुले सागरके बीच आ जाती है प्राय तीस मीलकी यह सडक केवल सुन्दर ही नहीं है बल्कि आयरलैडके जीवनमें ऐतिहासिक महत्त्व भी रखती है। प्राय सवा सौ वर्ष पहले विकट दुर्भिक्ष के कालमें सहायता कार्यके रूपमें इस सडकका निर्माण आरम्भ किया गया था। खडिया पत्थरका यह सागर तट कई स्थलोपर अद्भुत रूप ले लेता है और कहीं कहीं छोटे छोटे द्वीप भी बना देता है।

लानस व्हाइटहेड तक सडक माजी प्रायद्वीपकी ओट रहती है और व्हाइटहेडसे निकलकर दक्षिण-पश्चिमको मुड जाती है क्योंकि यहीसे वह तग खाडी आरम्भ हो जाती है जिसे बेलफास्ट झील कहा जाता है। व्हाइटहेड पहुचते-पहुचते रात हो गयी थी लेकिन उससे हम देखनेकी विशेष क्षति नहीं हुई क्योंकि इसके बाद दिनके प्रकाशमें देखनेको कम रह गया था बल्कि रातका प्रकाश ही अधिक दर्शनीय था। बेलफ़ास्ट झीलमें खडे छोटे-बडे छोटे-छोटे जहाजो और खाडीके दोनो किनारोके प्रकाश अनेक ज्योति बिन्दु और रेखाए बनाते चलते रहे ■। दिनके पहले प्रकाशमें ये दृश्य बहुत भद्दे लगते है सन्ध्याका रगीन आकाश ही उन्हें सुन्दर बनाता है क्योंकि वह क्षितिज रेखाके नीचेकी कुरूपताओको रहस्यमय धुधलेपनमें डुबा देता है और ऊपर आकाशको चित्रमय भर देता है। फिर रातमें जब क्षितिज रेखाके ऊपरका चित्र भी धुधला पड जाता है तब ऊपर तारक-नक्षत्रादि और नीचे विद्युत नानाविध प्रकाश पुज एक नया चित्र आँक देते हैं। इसी क्षण-क्षण परिवर्तित चित्रको देखते हुए रात दस

बजे हम लोग बल्फास्टके अड्डेपर पहुंचे यहासे सभी घरके बुद्धू अपने अपने घरोंको गये और मैं अपने रेन बसेरेमें जा टिका।

लौटकर अल्स्टरके विषयमें तरह-तरहकी सूचनाओंका संग्रह करता रहा। शिकायतके लिए दो सरकारोंकी सुविधाका उल्लेख तो कर ही चुका हूं—शिकायत करनेकी आज़ादी लोकतन्त्रकी बुनियादी आज़ादियोंमेंसे एक है। लेकिन यह भी मालूम हुआ कि पश्चिमी लोकतन्त्रोंके विकासमें अल्स्टरका और भी महत्वपूर्ण योग रहा है। अमरिकाके उसने तेरह राष्ट्रपति दिये। राष्ट्रपतियोंके अलावा ऐसे भी बहुतसे व्यक्ति जिनके नामका उल्लेख इतिहासोंमें नहीं होता लेकिन जो जीवनको प्रभावित करते हैं अमरिका प्रवासी अल्स्टरवासी ही हैं। अमरिकाका पहला दैनिक समाचार-पत्र जान डनलप निकाला था जो सन १७६६ में स्ट्राबनके कस्बे में अपना छोटा सा प्रेस छोड़कर अमरिका चला गया था। उसका मुद्रण यन्त्र अब भी स्ट्राबनके प्रेसमें सुरक्षित है। अमरिकी स्वाधीनताकी घोषणा भी जान डनलपने ही छापी थी।

आयरलैंडकी देनका प्रतिदान अमरिका अपने ढंगसे करता रहा है। अपने ढंगसे इसलिए कि वह अल्स्टरको नहीं मिलता है बल्कि आयरीय स्वतन्त्र राज्यको प्रेरणाओंका मूल रहा है। आयरी क्रान्तिकारी धन्धा अमरिकामें शिक्षा पाये हुए व्यक्ति रहे या अमरिकी आदर्शोंसे प्रेरित रहे। डी वेलेरापर भी अमरिकी प्रभाव बहुत गहरा रहा और चुनाव आन्दोलनोंके समय विरोधी दलके लोग बहुधा उन्हें प्रवासी अमरिकी कहते थे।

दूसरे दिन सवेरे एयरप्रान्त एक्सप्रेससे चलकर बलफास्टसे डब्लिन पहुंच गये। पश्चिममें कम ही महाराष्ट्र अतिक प्रदेश इतने कुरूप और गन्दे हो सकते हैं जितना डब्लिनका अनिक जो स्टेशन पहुंचनेसे दो-तीन मील

पहलेसे आरम्भ हो जाता है। हावड़ा जाते हुए जैसी बस्ती देखनेको मिलती है वह किसी हद तक तुलनीय हो सकती है। स्टेशनसे होटल जाकर सामान से छुट्टी पाकर मैं तत्काल बाहर निकल पड़ा। पहले ही दिन होटलके आस पासके कुछ रास्ते चुनकर प्रत्येकको दो दो मील पैदल चलकर देख आना— पेरिससे ही नगर परिचयका यह मार्ग मैंने अपनाया है और बराबर पाता रहा हूँ कि यह सर्वोत्तम तरीका है। यों पेरिसका ढाँचा कुछ जटिल है, डब्लिनका केन्द्र नदीके किनारे ही बसा है और नदी तथा उसके पुल उसकी मुख्य शोभा हैं। गोमाको देखना चाहिए, सूँघना नहीं चाहिए! डब्लिनकी नदी लिफ़ीको आयरी लोग लिफी लिखा कहकर मानो उसकी तीव्र गन्धसे तन्मय हो जाते हैं—न उससे कष्ट पाते हैं न उसके लिए अपनेको उत्तरदायी मानते हैं—लेकिन प्रवासी अजनबी इस नामपर हँसकर भी क्षमा नहीं कर सकता। यों यह गन्ध सब गन्दगीकी ही हो, ऐसा भी नहीं है। इसके किनारे गिनेसका जो शराबका कारखाना है कुछ उसकी भी देन है। लेकिन दुर्गन्ध तो दुर्गन्ध है।

बाजार घूमकर, दो-एक कहवाघरोंमें झाँककर और एकमें संक्षिप्त भोजन करके, पुस्तकोंकी कुछ दुकानोंकी पड़ताल करके क्रमशः राष्ट्रीय संग्रहालयमें पहुँच गया। डाइरेक्टर टाम मकग्रा इतिहासविद् तो हैं ही, आयरलैण्डके बौद्धिकोंमें उनकी गिनती होती है और उनके नाम एक बन्धुका परिचय-पत्र भी था। उनसे मिला तो बातचीत केवल औपचारिक तक ही सीमित नहीं रही। नेहरू परिवारसे भी उनका परिचय रहा है। नेहरू और डी वलेराके सम्बन्धमें चर्चा हुई तो उन्होंने कहा, 'नेहरू और डी वलेरा दोनों एक-दूसरेको पसन्द करते हैं। बल्कि दोनोंका स्वभाव एक दूसरेसे मिलता है।' फिर थोड़ा हँसकर उन्होंने जोड़ दिया, 'लेकिन डी वलेरामें धीरज कुछ अधिक है, है न?'

संग्रहालयके 'राष्ट्रीय चित्र' देखकर बाहर चला आया—ये राष्ट्रीय चित्र आयरलैण्डके राष्ट्रीय आन्दोलनके ऐतिहासिक चरित्रों और ऐतिहासिक

घटनाओंके चित्र हैं या दूसरे शब्दोंमें राष्ट्रका चित्रमय इतिहास है। फिर चित्र गैलरी लिफीके किनारे और शहरकी बड़ी सड़क ओकोनेल रोड परिसर सेन्ट स्टीवेंस किनारे भी कुछ-कुछ ऐसे ही हैं लेकिन डब्लिनके वातावरणमें कुछ अधिक आत्मीयता और हार्दिकता है।

किन्तु डिपत होटलका लौटा तो एक आश्चर्य मेरी प्रतीक्षा कर रहा था। कर्नल किडराय जो युद्ध-कालके सैनिक जीवनमें मेरे कर्नल थे और अवकाश लेनेके बाद अब आयरलैण्डमें अपनी छोटी सी ज़मींदारी देखते थे वहाँ मेरी प्रतीक्षा कर रहे थे। मैंने उन्हें अपने डब्लिन पहुँचनेकी सूचना देते हुए लिखा था कि उनके गाँव भी आऊँगा लेकिन वह डब्लिन यह निश्चय करके आये थे कि मुझे रात वहाँ नहीं रहना है और उनके साथ ही मोटरमें उनके गाँव क्लोरकाशेल जाना होगा। होटलके मैनेजरसे मैं बात कर ली है और तुम्हें रात ठहरनेके पैसे नहीं देने पड़ेंगे। इसके बाद मेरे और कुछ कहनेको नहीं था। उनकी व्यवहार-बुद्धिसे मैं भारतसे ही परिचित था।

पचास मीलसे कुछ अधिककी यात्रा कोई डेढ़ घण्टेमें समाप्त करके हमलोग रातको उनके घर पहुँच गये। अन्धकारमें रास्तेके आस पासका दृश्य बहुत अधिक नहीं दीखता था यद्यपि ऊँची नीची हरी भूमिका धुंधला आभास मिलता रहा और कहीं कहीं दूरपर पानी भी चमक गया। किन्तु दूसरे दिन सवेरे उठकर पाया कि आयरलैण्डका रूप कुछ बदल गया है—अबसे परिदृश्य न । वर्ना कि उसमें श्रमनकारी व्यक्ति ही प्रधान हो गये हैं। अगले तीन दिनोंमें यद्यपि आस पास घूमा काफी तथापि यह घूमना किसी न किसीसे मिलने जानेका ही आनुषंगिक था और प्रत्येक यात्राका परिणाम कुछ दृश्योंका नहीं बल्कि कुछ व्यक्ति चित्रोंका ही संग्रह होता था। अपनी डायरीमें उन दिनोंको भाग आज स्मृतिमें सम्मुख किसी स्थल अथवा प्रदेशके भर नहीं आते वरन् एक छोटी सी पोर्ट्रेट गैलरी हो आती है

विलरायकी जमींदारी बड़ी नहीं है बल्कि इतनी छोटी है कि उन्हें जमींदार न कहकर किसान ही कहना चाहिए। मकई आलू और कुछ सब्जियोंकी खेतीके अलावा गोशाला मुर्गीघर ही आयके मुख्य साधन हैं। गोशाला अत्यन्त साफ सुथरी और वैज्ञानिक ढंगसे बनी हुई है और उसे 'ग्रेड ए' का लाइसेंस प्राप्त है। विलरायके साथ उनकी जमीनें देखता हुआ उनके कमचारियों और खेतिहर मजदूरोंसे मिला।

जॉन थारके गहुे गालीमें लगा रहा था। परिचयके समय मेरे साथ हाथ मिलाकर बाद वह घोरस विलरायसे बोला— आप ठीक जानते हैं कि आपका सम्मान मात्र बुलानिन नहीं है? (यह संकेत मेरी दाढ़ीकी तरफ था।)

निक गार्योकी देखभाल करता है। जॉन जहाँ मार्क्स बुल्गानिनकी छवि पहचानता था वहाँ निक अपने डावके टिकटपर छपे हुए एयर (आयरी स्वतन्त्र राज्य) के नक्शे तकको नहीं पहचानता था—उसके लिए किसी नक्शेका कोई अर्थ नहीं था, भूमि वही वास्तविक है जिसे छुआ जा सके, मुट्ठीभर भरकर उगाया और सूँघा जा सके और पैरोंसे रौंदा या फावड़ेसे चीरा जा सके

बुड्ढ़ा थालके दाँत नहीं थे लेकिन उससे खुली हँसीको कोई बाधा नहीं पहुँचती थी। वह खेत जोतता था और मछली पकड़ता था। क्रान्तिकारी आन्दोलनमें वह भाग ले चुका था और कोलिन्सके दस्तेके साथ जेल काट चुका था। इकहरी पर सुगठित देह सीधा तनकर खड़ा होनेपर भी वह नाटा दीखता था क्योंकि उसकी ऊँचाई पाँच फुटसे दो-एक इंच ही अधिक होगी। हाथ मिलाकर बाद विलरायसे बोला 'आपके बापूसे मिलकर मुझे बड़ा गर्व है। मैं नहीं जानता था कि हिन्दुस्तानमें ऐसे बौने लोग होते हैं!' (यह मेरा शरीर-सम्पत्तिका सानी नहीं बल्कि बुड्ढ़े थालके भारत ज्ञानका परिचय है!) थालके पास अपनी भी थोड़ी-सी

भूमि है किन्तु उसपर काम इतना अधिक नहीं रहता इसलिए वह किलरायकी जमीनोंकी चौकीदारी करता है।

आयरियोंकी वाचालताकी बात तो बहुत सुन रखी थी लेकिन उनकी चतुराई या व्यवहार कुशलताकी बातें इतनी नहीं सुनी थी। परिचितामें केवल कनल किलरायमें ही मोलतोल करनेम वसो व्यावहारिक पटुता देखी थी जो किसान वर्गमें पायी जाती है। कलकत्तेम एक बार एक अंग्रेजी प्रेमसे छपाईका वार्षिक ठेका पक्का करते समय प्रचलित भारतीय दरके अपने ज्ञानके आधारपर ठेकेकी रकमको काफी कम कर चुका था तब किलरायने जो प्रेस या छपाईके बारेमें लगभग कुछ नहीं जानते थे कहा था इससे आगे मैं बात करता हूँ—प्रेसकी ओरसे बात करनेवाले डाइरेक्टर उत्तरी आयरलैंडके थे जहाँके लोग सौदा करनेमें उतने ही पटु माने जाते हैं जितने आयरलैंडके किसान! किलरायने जब आयरी ढंगसे बड़ी-बड़ी बातें आरम्भ कीं तब प्रेसका डाइरेक्टर उन्हें यह कहकर चिढ़ाने लगा आप यह आयरी ज्ञानी भर ऊपर आजमाना चाहते हैं लेकिन मैं भी नान्टर हूँ! किलराय रेट कुछ और कम करना चाहते थे पर घटानेके लिए कोई समुचित युक्ति तो दे नहीं सकते थे। सहसा उन्होंने बनी फुर्तीसे अपने हाथपर थूककर डाइरेक्टरका हाथ पकड़कर हिलाते हुए कहा यह लो अब तो सौदा पक्का हो गया और मुहर भी लग गयी और एक रकम बता दी जो डाइरेक्टरकी बताया हुई दरसे काफी कम थी। आगे डाइरेक्टरको कुछ बोलनेका उन्होंने मौका ही नहीं दिया। थूकसे प्रतिज्ञापर मोहर लगानेकी प्रथा पश्चिमके कई प्रदेशोंके किसान समाजोंमें प्रचलित है—थूक जबानका प्रतीक बन जाता है और इस प्रकार यह क्रिया जबान देने का पर्याय हो जाती है!

डाइरेक्टर अचकचा कर किलरायको ओर देखता रहा और वह जल्दीमें यह कहकर बाहर निकल आये कि बस रेट तो पक्का हो गया बाकी बात भर यह सहकारी आपसमें कर लेंगे।

मेरे लिए भी यह घटना कुछ कम विस्मयकारी नहीं थी। मैं चुपचाप बाहर चला आया। बाहर आकर विल्रायनने हँसकर कहा, 'क्यों, कैसी रही? मेरे छुआईके बारेमें कुछ न जाननेसे फायदा हुआ न?'

मैं स्वयं विल्रायकी विज्ञान-बुद्धिसे तो परिचित था। लेकिन नहीं जानता था, यह बुद्धि केवल दिमागकी नहीं, आपकी प्रतिभाकी देन है। आपकी प्रतिभाकी कल्पना में एक विशेष प्रकारका मनोरंजक पागलपन ही आ जाता था, जिसके कारण आपको आँखें मूँदकर शीशेके सामने खड़े होकर यह देखना चाहता है कि वह नींदमें कैसा दीखता होगा, या रातको चौंककर दियासलाई जलाकर देखना है कि उसने सोनेसे पहले बत्ती बुझा दी थी या नहीं।

लेकिन मेरे चित्र-संग्रहक आपसे बिल्कुल दूसरे प्रकारके हैं।

एकने गाय चरानेके लिए एक खेत किरायेपर लिया है। यह तय हुआ है कि प्रति गाय वह पाँच शिलिंग प्रति मास देगा। इन्होंने ठीक एक-सी दो काली गायें खरीदकर लाता है। एकको वह उस खेतमें दिनमें चराता है, दूसरीको रातमें। लेकिन खेतके मालिकको वह केवल एक गायकी चराई देता है, क्योंकि दिनमें भी और रातमें भी एक ही काली गाय तो वहाँ चरती देखी जाती है।

इसने दो खेत लिये, एक अपने गाँवमें और दूसरा आठ मील दूर दूसरे गाँवमें। अपनी भेड़के झुण्डको वह एक दिन एक स्थानसे हाँककर दूसरे खेत तक ले जाता और दूसरे दिन वापिस ले आता। रास्तेमें कभी कोई टोकता तो वह उत्तर देता, 'वह जो मेरी दूसरी जमीन है न, वहीं अपनी भेड़ें चराने ले जा रहा हूँ।' लेकिन वास्तवमें आठ मीलकी यात्रामें भेड़ें जहाँ-तहाँ दूसरोंकी बाड़ोंमें मुँह मारती हुई जातीं और इसी प्रकार लौटतीं। भेड़ोंका पेट इस दूर-यात्रासे भरता, दोनों बार रास्तेका अच्छा खासा मुफ्तमें मिल जाता! इस प्रकार आरम्भ करके अपनी बचतसे इसने अभी हाल २५० एकड़ जमीन खरीद ली है।

श्रीमती हे विधवा ह। अब डब्लिनमें रहती हैं लेकिन पहले देहात में उनकी जमीदारी थी तब उसीके बीच एक बंगलेमें वह रहती थी। दंगे और अशांतिके समय एक बार रातको उनके घरमें डाकू आये और पिस्तौलें दिखाकर उनसे एक कागजपर हस्ताक्षर करवा ले गये जिसके अनुसार उन्होंने जमीनपर अपना सब अधिकार छोड़ दिया था। वह डब्लिन जाकर रहने लगीं जहां उनका कोस्ग्रेवसे परिचय हुआ जो अनन्तर राष्ट्रीय नेता और प्रधान मन्त्री भी हुए। डब्लिनमें प्रतिष्ठा और धाक जम जानेके बाद श्रीमती हे ने एक दिन अपनी जमीनकी खबर लेनेका निश्चय किया। देहाती मेलेका दिन था तब दर्जनभर सिपाही उनकी जमीनपर पहुंचे और जो पशु धन उन्हें उनकी जमीनपर कहीं भी मिला—गायें बछड़े घोड़े आदि—सबको लाकर सिपाही अपने साथ मेलेमें ले गये जहां उन्हें नीलाम कर दिया गया। नीलामसे होनेवाली आय डब्लिनमें माल किनके नाम जमा करा दी गयी। अनन्तर भूमि भी आस-पासके अच्छे समय और दवंग किसानोंमें बांट दी गयी। बुढ़ऊ बाल्डको भी इसी प्रकार जमीन मिली थी।

लोव गीऊन नामकी छोटी झीलके किनारे मेजर ई का सुन्दर बंगला है। फाटकमें प्रवेश करते ही उनके बागबानीके शौक़के प्रमाण मिलने लगते हैं। मेजर साहब भी ज़मींदार अर्थात् किसान हैं फौजसे अवकाश ले चुके हैं और अपने पड़ोसियोंकी तरह कुछ सनकी हैं यद्यपि बड़े मिलनसार और हंसमुख। उनके माता पिता दोनों जल्द बाट थक थे। उनके जन्म जानेका कारण रोचक है और सूचित करता है कि मेजर साहबका सनकी स्वभाव वंश-परम्परागत है।

पिता आयरी स्वातन्त्र्यके समर्थक थे और उसके आन्दोलनोंमें भाग लेते थे। उनके लिए जो उत्तेजक प्रश्न होते थे उन्होंने प्रथम इन्होंने लन्दनमें हाउस आफ़ कामन्सकी दर्शक गैलरीसे भाषण देना आरम्भ कर दिया था और रात जानपर भी बोलते ही रहे थे और इस प्रकार

गिरफ्तार हो गये थे। अद्भुत संयोग था कि उन्हें गिरफ्तार करनेवाला पुलिसमैन उनका भूतपूर्व सहपाठी था।

माता स्त्रियोंके मताधिकार आन्दोलनमें भाग लेती थीं। श्रीमती पंकहर्स्टके फेमिनिस्ट आन्दोलनकी वह कार्यकर्त्री थीं। पतिके साथ हाउस आफ़ कामन्समें वह भी मौजूद थीं। पतिके भाषणका उद्देश्य तो एक सनसनीदार प्रदर्शन करना था। यह तो जानी हुई बात थी कि वह गिरफ्तार हो जायेंगे। उनके गिरफ्तार होनेका कोई गुस्सा पत्नीको नहीं था। लेकिन सहसा यह पहचानकर कि गिरफ्तार करनेवाला स्वयं आयरी है और पतिका स्कूलका सहपाठी रहा, उन्हें बहुत क्रोध आया और उन्होंने पुलिसमैनको थप्पड़ मार दिया। इस प्रकार दम्पति जितने प्रदर्शनके लिए गये थे उससे अधिक सनसनीदार प्रदर्शन करके हाउससे निकले।

पहाड़ियोंके पार चाँदनीके कारण रहस्य-मण्डित प्रदेशको देखते हुए मिस्टर एम॰ के घर पहुँचे। उनसे शामको मिलनेकी बात थी। घर पहुँचने पर मालूम हुआ कि वह घरमें नहीं हैं, अपनी ज़मींदारीके दूसरे हिस्सेमें जानवरोंको देखने गये हैं। हम भी गाड़ी मोड़कर वहीं पहुँच गये—घरपर ही प्रतीक्षा करनेकी अतिशय औपचारिकता अनावश्यक समझी गयी। मिस्टर एम॰ मिले तो बड़े तपाकसे, लेकिन स्पष्ट ही कुछ उद्विग्न भी थे। मेरे साथीके पूछनेपर मालूम हुआ कि उद्विग्नताका कारण यह है कि उन्होंने अपने फार्मके पचास सूअर बेचे हैं और रातमें माल ग्राहकको देना होगा।

पशु-धनकी बिक्री साधारणतया दिनमें होती है। और माल तो अनिवार्यतया दिनमें लिया-दिया जाता है, क्योंकि उसमें कई तरहका धोखा हो सकता है और पशु-धनका व्यापार करनेवालोंमें ऐसे धोखेको धोखा नहीं केवल चतुराई समझा जाता है। यह प्रवृत्ति तो सारी दुनियामें है और आयरलैंडकी परम्परा साधारण विश्वास-परम्परासे अलग नहीं होती बल्कि उसका निर्वाह होता है। हम लोगोंने इस बातपर आश्चर्य प्रकट किया कि गन्दर माल इस रातको आ रहा है। एम॰ थोड़ा-सा सकुचाये। फिर एक

झपतीसी मुसकराहटके साथ बोले तुम तो पनेसी हो—तुमसे क्या छिपाना। इन्हें अमुकको जानते हो न ? वही सौदा करने आया था। उसके साथ एक और आदमी भी था मेरे खयालमें असल गाहक वही था। दोनान जानवर देख लिये और दाम पूछे मैने बता दिये। उन्होंने मोल तोल नहीं किया बोले ठीक है हम इससे ड्यौढ़ा दाम देंगे लेकिन मालकी डलिवरी रातको दो बजे लेंगे। अब मै उसीकी तयारीमें हूं—रातको ढेढ दो बजे उनके ट्रक आवेंगे।

मेरे साथीने रहस्यमय ढगसे हसकर कहा तब तो अच्छा सौदा है और गाहक स्थायी हो जाय तब तो क्या कहना है!

हम लोग एम की जमीनें और पशुशालाए देखते हुए इधर-उधरकी बातें करते रहे और रातमें लौट आये। लौटते हुए इस अदभुत व्यापारका भेद मझे बताया गया। इन्निके अमक एक ट्रासपोर्ट कम्पनीके मालिक है उनके ठेले देशभरमें चलते हैं। ठगाके अलावा या भी उनकी बहुत चलती है क्योंकि राजनीतिकोंसे उनके बड़े-बड़े दोस्त है। और पुलिसके तथा दूसरे अधिकारियोंमें भी उनकी धाक है। स्पष्ट ही इस आधी रातके सौदेका मतलब यह था कि माल रातो रात आयरी स्वतन्त्र राज्यकी उत्तरी सीमाके पार पहुचाया जायगा और उत्तरी आयरलैंडमें उसकी खपत होगी। कृपिकी पदावार और पशुधनके निर्यातपर आयरी स्वतन्त्र राज्य और उत्तरी आयरलैंड दोनोंकी ओरसे रोक है। इसलिए एसा व्यापार बहुत लाभदायक हो सकता है क्योंकि आयरी स्वतन्त्र राज्यमें पशु बहुत सस्ते मिल सकते हैं। मुझे याद आया कि अल्स्टरमें इस सीमा प्रदेशीय चोर बाजारकी और उसपर कड़ी निगरानीकी चर्चा सुनी थी। अब समस्याके प्रति लोगोंका सरकारोंका रवयमें भेद स्पष्ट हो गया। आयरी स्वतन्त्र राज्यमें कानूनी स्थिति और वास्तविक स्थितिका यह अन्तर केवल सीमा प्रदेशीय व्यापार नियमन तक ही सीमित नहीं है बल्कि बहुतसे क्षेत्रोंमें देखा जाता है। कानून कुछ और है व्यवहार कुछ और इसके लिए कोई विशेष

चिन्तित नहीं जान पड़ता कि इस दूरीको मिटाया जाय या नियन्त्रित किया जाय। वास्तवमें प्रजाकी साधारण राजनीतिक चेतना इस दूरीको न केवल सहनेको तैयार है बल्कि सहज भावसे स्वीकार करती है: उसे साधारण राज-व्यवहार या दस्तूरका अंग मानती है। बल्कि कह सकते हैं कि उसने इसकी भी कुछ मर्यादाएँ बना रखी हैं कि सिद्धान्त और व्यवहारमें कितना और कैसा अन्तर होता है और होना चाहिए! शायद इसके न होनेपर ही उसकी स्थिति कुछ असामंजस्य भरी जान पड़ेगी! सरकार, सुना है, इस बदलनका उत्कट प्रयत्न कर रही है, पर स्पष्ट है कि जनताकी उदासीनता—बल्कि प्रतिकूलता—के रहते यह अधिक सफल नहीं हो सकती।

तरु-विहीन किन्तु हरी पहाड़ियाँ: मानो सब पहाड़ियोंका ऊँचा-नीचा प्रदेश, जिसमें मानव नहीं दीखता, जीव-जन्तु भी नहीं दीखते और प्रायः रातका प्रकाश भी नहीं दीखता, लेकिन बहुधा हवाकी आवाजें सुनाई देती हैं, कभी वनवंशियों जैसी दबी हुई और कोमल, कभी चीत्कारों-सी तीखी या मर्मान्त स्वर सुनाई देते हैं—ऊपर मेघोंका गर्जन और नीचे कभी पानीपर पानीकी चोट तो कभी घास-फूसकी पत्तियोंसे छूकर सहसा चुप-सा हो जानेवाला मीठा-सा स्वर। यही प्रदेश वास्तवमें आयरलैंडका वह प्रदेश है जिसमें वहाँकी दर्द भरी लोक-कथाएँ जन्म लेती हैं, उसका लोक-संगीत अपनी करुणा भरी तानें आविष्कृत करता है और जिसमें धार्मिक लोक आस्थाएँ और अन्ध विश्वास पनपते हैं। क्योंकि यहीं निर्जनतामें प्रेतात्माएँ रोती हुई घूम सकती हैं, परियाँ असावधान अकेले यात्रीपर जादू कर सकती हैं, वनदेवियाँ भटक जानेवाले युवक-युवतियोंको भटका सकती हैं। वास्तवमें इन प्रदेशोंमें पहाड़ियोंपर छाया हुई हरियाली भी सच्ची हरियाली न होकर एक छलना है। एक तो वह निरन्तर रंग बदलती रहती है, दूसरे वह वास्तवमें घासकी हरियाली भी नहीं है। एक दिनमें भी

भोर दिन दोपहर और शामके प्रकाशके साथ उसका रग बदलता ह और ऋतुओंके साथ भी उसम आश्चयजनक परिवतन होता ह । गहर और हल्के हरसे लेकर पीले भूर सफेद नील कासनी ऊद बगनी प्याजी गुलाबी तरबूजी लाल और उनाबी तक सभी तरहके रग वह लती ह इन्ही रगोंकी कभी स्पष्ट और कभी धुधली कभी ठोस और कभी पारदर्शी झाइया और रगतें वह दिखाती ह उसकी हरियाली घासकी हरियाली नही ह कही घास ह तो कही काही कही सूख पत्थरोंके ऊपर छायी हुई हल्ल नामकी पश्चिम भाना तो कहा काहीक नाच छिपा हुई सघन और दलदल इसी हरियालीम कहा कोई ठोकर खाकर गिर सकना ह तो कही सहसा धसकर असहाय हो सकना ह कहा सुन्दर गध पत्य पा सकता ह तो कही भीतर-ही भातर जीण होकर कोयला हो गये वनस्पति-तत्त्व जिनक टुकड काट-काटकर इधनकी तरह जलाय जा सकत ह । हम जानत ह कि खनिज कोयला वास्तवमें प्राचीन कालकी वनस्पतियां ह जो धरतीक नीच दबकर जीण होना रही ह और फिर गिलित हो गयी ह लकिन इन पहाडोंका हरियाली बिना दब ही जीण होती रहती ह और उससे जलान लायक तत्व पानके लिए गहर खादना जरूरी नहीं ह उसीके टकड काटकर जलाय जा सकत ह ।* कोयला भई न राख वाली बात मनुष्योंक अन्तस्तलक बारम कही जाती ह लकिन यहा उसका स्थूल रूप देखा जा सकता ह ।

म अपनको अध विश्वासी नहीं मानता हू । धरती याद किसी भी प्रवासीको सता सकता ह फिर वह धर शहरम हो या देहातम पहाडोंपर हो या तटपटोंमें नदीक किनार हो या अथलक छोरपर । लकिन इस विशष प्रकारक प्रदशोंकी याद जिन्हें सताती ह व फिर उससे निस्तार नहा पा सकत उनक लिए या तो यहा लौट आना आवश्यक होता ह या फिर

---

* दलदल प्रदेशक इस कोयलको पाट कहत हैं ।

व भीतर-ही भीतर घुलते ही जाते हैं जैसे यहाकी हरियाली भीतर ही भीतर जल जाती है। मैंने इस प्रकार अकारण और अविरोध घुलते जानेवाले लोगोंको देखा है। लौटनेके सिवा दूसरा इलाज इस रोगका मैं नहीं जानता जिनके लिए लौटनेका रास्ता खुला नहीं है उनका रोग असाध्य ही मानता हूं। जो रोग अकारण होकर भी असाध्य है उसे राग कहना अवैज्ञानिक या वद्धि सगत है और जादू कहना निरा अन्धविश्वास यह दावा कैसे किया जाय? हम अगर तर्कके लिए ऐसा कहते भी हैं तो शायद भीतर ही भीतर कहीं स्वयं इस बातको पूरी तरह नहीं मानते। इसीलिए आयरलैंडकी लोक-कथाएं इतने गहरे और हृदय द्रावक प्रभाव रखती हैं। *

आलडकासलसे तीसरे पहर चलकर डनसनी पहुंचा जो प्लंकेट परिवारकी परम्परागत जागीर है। सुप्रसिद्ध वृद्ध लेखक और नाटककार लार्ड डनसनी यहींके हैं बल्कि यह जागीर उन्हींकी है। किंतु इधर अति-वृद्ध हो जानेके कारण उन्होंने जागीर अपने पुत्रको सौंप दी है और लन्दनमें रहते हैं। उनके कुछ काव्यमय नाटक तो कालेज जीवनमें ही पढ़े थे लेख और आत्मकथा पीछे पढ़ी। उनके पुत्र रैंडल जो अब उत्तराधिकारी हैं सेनामें मेरे साथ थे—घुड़सवार सेनासे टैंक कोरमें आकर वह उत्तरी अफ्रीकामें रहे थे और वहांसे बदलकर असममें आये थे जहां उनसे मेरा परिचय हुआ था। शामको उनके साथ उनकी जागीरकी सैर की रातको भोजन किया और देर रातमें डब्लिन लौट आया। दूसरे दिन स्वतन्त्र रायकी

* ऐसा ही अकारण घुलना दूसरे देशोंमें भी देखा जाता है जहाँ ऐसे प्रदेश होते हैं भारतके घुमन्तु गूजरों और अन्य पहाड़ी जातियोंमें इसके उदाहरण मिलेंगे, और उनकी लोक-कथाओंमें इसके अनेक करुण उल्लेख भी।

हवाई सर्विस एयर लिंगसके विमानमे लन्दन पहुच गया। आकाशसे एक बार फिर नीलमके सागरसे घिरे हुए इस बन्द चन्द पन्नेका एक छोर देखा और उसके नामका अनुमान किया फिर बलात ध्यान उधरसे हटाकर आगेकी ओर मोड लिया जहा अभी और यात्रा है और देश हैं दूसरे लोक जीवन और सगीत है और दूसरे पवन दूसरी झीलें दूसरा निर्जन सन्नाटा

धर्म-विश्वासोंकी गोधूली

रामलोटनको जब दिन छिपेके बाद सुबह पीपलके तलेसे जाते हुए डर लगता है और झुटपुटेमें भयावनी छायाकृतियाँ दीखती हैं तो वह लोहेका छल्ला छूता है और निर्भय हो जाता है। यह कहना कठिन है कि उसका डर अधिक निर्मूल है या कि डर काटनेका उपाय। लेकिन इसमें संदेह नहीं कि लोहे और भूत प्रेत या परियोंका बैर, मानव जातिके बहुत पुराने और बहुत फैले हुए विश्वासोंमेंसे एक है। इस अंध विश्वासका मूल उद्भव एक ही रहा, या कि समूची मानव-जाति किसी एक प्राक्कालीन वनौकस यूथसे ही उत्पन्न होकर संसार भरमें फैल गयी ऐसी कोई अटकल प्रस्तुत करना मेरा काम नहीं है। बुद्धिवादी यह भी कह सकते हैं कि जब से मानवने लोहेके अस्त्र बनाना सीखा और उसके सहारे वन-जन्तुओंसे सुरक्षा प्राप्त की तभीसे लोहेकी शक्तियोंमें यह विश्वास भी रूढ़ हो गया। किन्तु लोहेसे पहले ताँबेके अस्त्र भी कई जगह हुए, उससे पहले पत्थरके शस्त्र और अस्त्र काम आते रहे—किन्तु ताँबे या पत्थरकी चमत्कारी शक्तिमें ऐसा विश्वास कहीं नहीं पाया जाता।

जी हाँ। आयरी उपकथाओंमें परियोंके जादूसे बचनेके लिए लोहे [illegible] उपयोग लोक विश्वासका एक अभिन्न अंग है। परियों द्वारा उठाकर किसी मानवेतर लोकमें ले जाया जाना परियोंकी कहानियोंका एक साधारण अंग होता है। यूरोपके अन्य देशोंकी परियोंकी भाँति आयरी परियाँ भी भूतलके नीचे किसी पाताल-लोककी गुफाओंमें बसती हैं, और जिन्हें ले जाती हैं वहीं ले जाती हैं। वहाँ प्रचलित कहानियोंमें अकसर ऐसे चतुर कथानायकोंका वर्णन मिलता है जिन्हें जब परी-लोकमें ले जाया गया तब

उन्हें परी महलके सिंहद्वारके नाच कहीं लोहेकी एक कील या आल्पिन गाड़ दी जिसके प्रभावसे सिंहद्वार बन्द नहीं हो सका और लौटनेका रास्ता खुला रह गया।

घरोंके द्वारपर घोड़ेकी नाल टाँगनेका कारण उसका नाल होना ही नहीं है बल्कि लोहेकी होना भी है। घरके भीतर गर्भवती स्त्रियाँ सिरहाने लोहेकी छुरी या अन्य वस्तु रखती हैं और माना जाता है कि इससे माता और शिशु दोनों सुरक्षित रहते हैं।

प्राचीन अन्धविश्वासोंमें, जिन्हें धर्म विश्वासोंकी गोधूली-वेलाकी अवनिरूपित श्रद्धाके प्रारम्भिक संकेत माना जा सकता है किसी भी चमत्कारी तत्त्वके दो पहलू होते हैं। जिससे सुरक्षा मिलती है उसीसे डरना भी होता है जो वांछित होता है उसीको दूर भी रखना होता है जिसका आकर्षण जितना ही सहज होता है उसका उतना ही कड़ा निषेध किया जाता है। देवता ही परम अस्पृश्य और अस्पृश्य होते हैं। वास्तवमें विश्वासकी यह उभयमुखता प्राचीन मानवकी भोली होते हुए भी स्वस्थ दृष्टिका लक्षण है। चमत्कारका आधार शक्ति है शक्ति नैतिक भावनासे परे है अर्थात् अच्छे काममें भी लग सकती है और बुरेमें भी। इसलिए उसके सभी रूपोंको नियन्त्रित रखना ही श्रेयस्कर है। आचार और अभिचारकी सीमा रेखा बहुत सूक्ष्म है। अभिचारी कब स्वयं अपने तन्त्रका शिकार हो जाय कब उसकी भेजी हुई कृत्या स्वयं उसीको ग्रसने न लौट आय क्या ठिकाना!

लोहेकी शक्तिके विषयमें भी यह उभयमुखी विश्वास सर्वत्र पाया जाता है। वास्तवमें प्राचीन ग्रन्थोंमें जब मूसाको आदेश मिलता है कि यदि तू मेरे लिए पत्थरकी वेदी बनाता है तो तू उसे पत्थर काटकर नहीं बनायगा क्योंकि जिस पत्थरको तूने औजारसे छुआ वह भ्रष्ट हो गया है तब लोहेका निषेध हो गिने है—यद्यपि ग्रन्थमें लोहेका नाम नहीं

नहीं जाता था वल्कि (काठके) करघेपर ही बुना जाता था। इसमें एक ओर यह भाव भी है कि राज वस्त्र क्तरासे छिन्न अथवा सूचीसे भिन्न नहीं होना चाहिए क्योंकि अखण्डित वस्त्र ही राजाकी अखण्डित शक्तिके अनुरूप हो सकता है दूसरी ओर यह भी कारण था कि लोहेके स्पर्शसे ही वस्त्र दूषित हो जाता है। विकलांग व्यक्ति राजा नहीं हो सकता था, इसका भी ऐसा ही दोहरा कारण था। लोहेकी निन्दिका (या छूतका) एक रूप यह भी था कि किसीको लोहेकी बनी हुई कोई चीज दे देनेपर पानेवालेको दातापर कोई जादुई अधिकार मिल जाता था।* आयरलैंडकी परियोंकी कहानियोंमें बहुधा ऐसा उल्लेख मिलता है कि परियाँ या टोना करनेवाली स्त्रियाँ, अपने शिकारसे लोहेकी कोई चीज उधार माँगती है—जैसे हाँडी या चिमटा इत्यादि।

आयरलैंडका कोई भी जिला ऐसा न होगा जिसका परियोंसे सम्बद्ध लोक साहित्यका अपना भंडार न हो। चट्टानी सागर-तट और क्षुपविहीन हरी पहाड़ियोंके प्रदेश विशेष रूपसे परियोंकी लीला भूमि रहे हैं। सागर तटकी कन्दराएं सभी उनसे आवासित हैं और उनके पास आना-जाना जोखिमसे खाली नहीं है। और हरी पहाड़ियोंमें तूफानी रातोंमें परियोंके अभागे बंदियोंको चीखन-कराहत किसने न सुना होगा!

एसे बन्दिया या बन्दिनी स्त्रियोंकी अनेक कहानियोंमें स्थानीय अलंकरणमें बहुत अन्तर पाया जाता है। किन्तु अलंकृतियोंको अलग करके एक सामान्य रूप अथवा अभिप्रायकी खोज करें तो वह रूप कुछ इस प्रकार होता है कोई युवती सागर-तटपर घूमती हुई अथवा पहाड़ी पगडण्डीसे जाती हुई अचानक लापता हो गयी। लम्बे अरसे तक कहीं उसका कोई चिह्न नहीं मिला। फिर एक बार उतना ही अकस्मात उसके पति अथवा

---

* धन धान्य पवित्र हैं और हलसे जोती हुई भूमिका अन्न व्रतमें ग्राह्य नहीं है इस धारणाका सम्बन्ध भी क्या लोहेकी छूतसे नहीं है?

प्रेमीन उस एक चरमटके पास अकेला बठ हुए देखा। पूछनपर स्त्रीन बताया कि वह टानसे बधी ह और परियाको छाडकर न जा सकती किन्तु मुक्तिका एक उपाय ह। उसे मालूम हुआ ह कि एक रातम—जा प्राय अगली पूर्णिमाकी रात होती ह—परियाँ उस लकर कही अयत्र जान वाली ह। जिस मागसे परियाँ उस लकर जायगी वह उस मालूम हो गया ह। यदि उसका पति (अथवा प्रेमी) ठीक समयपर निर्दिष्ट स्थान पर खडा रह और उसके जात समय एक विशेष वनकी छडीसे उसक घोड का छू द ता टाना कट जायगा और वह मुक्त हो जायगी। (परियोंके धाखका नाल नही होती यह बताना सो अनावश्यक ह। कहानीके जिन रूपोंमें परियोंका शिकार स्त्री न होकर पुरुष होता ह उनम प्राय एसा भी सकत मिलता ह कि वह बिना नालके घोडेपर सवार होकर परियोंके प्रदेशसे जा रहा था और इसीलिए उनका जादू उसपर चल गया।)

पति निर्दिष्ट स्थान और समयपर पहुचता ह किन्तु लकरको देखकर घबरा जाता ह और छडी उसक हाथस छूट जाती ह। लकर बदिनीको लेकर आग बढ जाता ह। अनन्तर रातमें उसका चीत्कार सुनाई पडता ह। दूसर दिन सतम जहाँ-तहाँ रकतके दाग या एस दूसर चिह्न देख जात ह जिनस अनुमान हा जाता ह कि परियान अपन बन्दीक प्राण ल लिय। और कभी चिह्न कोई नही मिलता — पकिन चाँदनी रातोम (या जसा भी वह रात था वसी रातोंमें) चीत्कार प्राय सुनाई पडती ह।

यह विश्वास कहाँस आया ? कोई कहता ह यह उस समयका अव शष ह जब एक बलिष्ठ आक्रमणकारी जाति दूसरा जातिकी स्त्रियोंका हरण करके ल जाती थी। कोई यह भी अटकल लगाता ह कि आक्रमणकारी जातिमें स्त्रियोंकी संख्या बहुत कम होनक कारण स्त्री अपहरण उनक लिए अस्तित्वका प्रश्न बन गया था।

वह हागा। चारोंम नराज रणन और ल जानशील लागाकी जो अति रिक्त संख्याम जिन भूत और परियाँ दाखती था उसका कारण भी बद्धि

सम्भव हो सकता है—कि वे गाँवकी कुलाई केवल रातभर न करते रहे हों। इन चोर-व्यापारियोंको खदेड़नेके लिए जो घुड़सवार जिन्न उनका पीछा किया करते थे उन्हें भी चोरोंकी भय-रंजित कल्पनाकी सृष्टि मान लिया जा सकता है। जिन्न लोग रातको किसानोंके घोड़े चुरा ले जाते थे और उन्हें रात भर सरपट दौड़ानेके बाद पसीना-हारे और मुँहसे झाग गिरती हुई अवस्थामें वापस रख जाते थे। असम्भव नहीं कि ये जिन्न भी वास्तवमें चोर-व्यापारी रहे हों जिन्होंने इस अन्ध विश्वासको बहुत सुविधाजनक पाया हो।

किन्तु उस गाँवकी लवोयनके किसानकी कहानीका हम क्या करें, जिसने रातको तबेलेमें ताला डालकर पहरेपर कुत्ते बिठा दिये थे। क्योंकि रातको तबेलेके नीचे शोर सुनकर वह जागा तो नीचे खड़े जिन्न सरदारने उससे कहा 'तुमने हमारी रोजाना सवारीपर रोक लगा दी है तो हम देखना चाहते हैं कि तुम्हारा सवारीसे काम चल सकता है या नहीं?'

यह कहकर उसने गाँवके किसानकी पीठपर काठी कस दी और उसे हाँकता हुआ रातभर जिले भरमें दौड़ाता रहा और सबेरे उसीकी देहरीपर छोड़ गया। बड़े-बूढ़ोंसे पूछिए शायद इसका निष्कर्ष यह निकालेंगे कि अगर जिन्न आपके घोड़े माँगकर लिए ले जाना चाहें तो उन्हें ले जाने दीजिए।

निवाय झीलके पड़ोसमें एक और कहानी भी प्रचलित है। झीलके किनारे नरसलोंमें परियाँ विहार कर रही थीं, और नरसलोंके अलुए तोड़ कर उनसे छोटे-छोटे घोड़े बना रही थीं। एक मछुएने उन्हें देख लिया, और ललकारकर कहा "एक घोड़ा मेरे लिए भी बना दो।" परियोंकी अगुआने उसे बताया कि घोड़े तो और नहीं हैं किन्तु एक साँड़ है जिसकी वह चाहे तो सवारी कर सकता है। मछुएने मान लिया और साँड़पर सवार होकर परियोंके साथ हो लिया।

परियोंकी अगुआने उसे चेतावनी दी कि वह चाहे जो कुछ देखे सुने अपना मुँह न खोले।

रात भर घुड़सवार परिया और साड-सवार मछुआ चील्के किनारापर विचरत रह। भोरसे पहले काफिरा बाल्लिडरा नदीके किनार पहुचा तो परियाके घोड अबाबीलाके यण्डकी तरह नदीके पार फाँद गये। मछुएन भी साडको एड दी माड भी पार कूद गया। तब मछुएसे न रहा गया और साडका गला थपकत हुए उसन कहा शाबाश! साडको एसो कूद कभी नही देखी थी!

उसका यह कहना था कि परियाँ घोड और साँड सब लापता हो गय कवल मछुए राम नदी पार कीचमें औंध मह पड रह गय! नदीका यह भाग अब भी साड-कूद कहलाता ह।

क्या यह भी मछककी कूदको दखकर पगहा तुडाकर भाग निकलन वाली कल्पनाकी सृष्टि ह? अग्रजोम तर मेंल्कको कुछ भाग—साड मछक कहत भी ह!

उत्सव सम्बन्धी आयरी अन्ध विश्वास अपना अलग स्थान रखत ह। अन्ध विश्वासाकी परम्पराका अनुसन्धान करन हम नही निकल कवल आयरी लोक परम्पराम उनके अद्यतन स्थानके कुछ नमून भर द रह ह। नहा तो ब्रिटानी द्वीप समहके विश्वासाकी तुलना ही लम्ब अनुसन्धानका विषय हो सकती ह।

ईसाई बड दिन क्रिस्मस ईसाइयतसे कही पुराना ह। (होली भी पौराणिक हिन्दू धमसे कहीं अधिक पुरानी ह।) रोमिक आक्रमणस पहले ब्रिटनमें जा सूर्योपासक डूइड बसत थ उनके अयनात्सवका ही ईसाई करन क्रिस्मस हुआ। इस रूपान्तरमें डूइड उत्सवके साथ रोमिक जातियोका अयनोत्सव (शनि-उत्सव) भी मिल चका था जब उसपर ईसाई मतन यीशक जन्मकी कथाका आरोप कर लिया। आयरलण्ड क्रिस्मसके ईसाई उत्सवका महत्त्व बहुत पुराना नहा ह। उसका परम्परागत अनुष्ठान कमान नामक एक सम्म होता था जिस गुल्ली डण्डका एक रूप माना जा सकता ह। इस रविवार डण्डका नाम ही कमान था—न मालूम

इस शब्दकी व्युत्पत्ति कहाँसे है और फारसी शब्द 'कमान' से इसका कोई सम्बन्ध है या नहीं।

कमान के रूपमें प्रतियोगी दलोंमें कितने खिलाड़ी हों, इसकी कोई सीमा नहीं थी, न यही आवश्यक था कि दोनों दल लगभग समान हों।

इसी शीतकालीन ऋतु उत्सव अथवा अयनोत्सवका दूसरा अंग और भी रोचक था। दूसरे दिन लोग टोली बाँधकर रेन पक्षीके शिकारको निकलते थे। रेन खंजनसे मिलता जुलता छोटा-सा पक्षी होता है और यहाँकी किंवदन्तीके अनुसार वह 'भगवान्‌की मुर्गी' होता है। शिकार करनेवाली टोलियोंमें कुछ लोग विदूषककी पोशाकें पहनते थे, कुछ पुरुष और बच्चे और कुछ स्त्री-वेश धारण करते थे। अधिकतर लोगोंके हाथोंमें लकड़ीकी तलवारें होती थीं। पूरी टोलीका रूप कुछ कुछ वैसा ही अनुमान किया जा सकता है जैसा कि उत्तर भारतके देहातोंमें होलीके अवसर पर देखी जानेवाली टोलियोंका होता है। और कदाचित् दोनोंका मूल विश्वास भी मिलता-जुलता ही रहा। क्योंकि इसमें सन्देह नहीं कि टोलियोंमें पुरुष और स्त्री वेशधारी लोगोंका भाग लेना, काठकी तलवारों या छड़ियोंका प्रयोग, और भगवान्‌की मुर्गीके शिकारका प्रतीक, सभी उर्वरता-सम्बन्धी आदिम विश्वासोंके प्रतिबिम्ब हैं—उर्वरता भूमिकी भी और भूमि-सुता नारीकी भी।

ऐसा माननेका कारण है कि सभी धार्मिक पर्व मूल रूपमें ऋतुपरक रहे—प्राकृतिक घटनाओं और परिवर्तनों, अथवा कृषि-जीवनके कर्म और उपक्रमोंका योग और उल्लास उनमें प्रतिबिम्बित होता रहा। जहाँ प्रकृतिका विलास मानवके अनुकूल रहा वहाँ उसने आनन्द मनाया, जहाँ वैसा न रहा वहाँ उसने अपनेको सान्त्वना दी, या प्राकृतिक-तत्त्वोंको अपने अनुकूल बनानेके लिए उपचार या अभिचार किये—तन्त्र मन्त्र और जादू-टोनेका आसरा लिया।

आयरलैंडमें विशेष रूपसे ऐसा हुआ हो यह बात नहीं। श्रद्धाके विकासका सर्वत्र यही क्रम रहा क्योंकि यही संस्कृतिके विकासका क्रम है। इतना ही है कि वहाँ अब भी ऐसे अवशेष मिलते हैं जिनके सहारे विकासकी यह क्रिया देखी और समझी जा सके जैसे कि भारतके बहुतसे प्रदेशोंमें भी ऐसे अवशेष मिलते हैं। प्रजातन्त्रके साथ समाजका ही नहीं विश्वासों और श्रद्धाओंका भी जो समानीकरण हो रहा है उसके कारण शीघ्र ही ऐसी परिस्थिति आ जायगी कि अध्ययनके लिए ऐसी सामग्री दुर्लभ हो जाये या उसपर ऐतिहासिक पूर्वग्रहोंका आरोप हो जाये। इसका भी एक उदाहरण आयरलैंडसे लिया जा सकता है। वहाँका परम्परागत नव-वर्ष पहली नवम्बरको होता था। कटनीके बाद हर्षपूर्वक नये कृषि क्रमका उपक्रम किया जाये यह स्वाभाविक है। इसीलिए कृषि-वर्षका आरम्भ उत्तर भारतमें होना संगत है—क्रमसे कम उत्तरी देशोंमें—और क्योंकि यह हर्षोत्सव कटनीके बादका है इसलिए इसके साथ पुआलके अलावका सम्बन्ध भी स्वाभाविक है। भारतमें कृषि-वर्षका आरम्भ होलिकोत्सव और कहीं दीपोत्सव होता है। वैसे ही आयरलैंडमें सौएन अथवा पहली नवम्बरको नव वर्षोत्सव पहाड़ियोंपर अलाव जला कर मनाया जाता है। किन्तु कैथोलिक मतावलम्बी आयरलैंडमें लड़कोंसे यह प्रश्न पूछनेपर कि अलाव क्यों जलाये जाते हैं इस उत्तरपर आश्चर्य नहीं करना चाहिए कि प्रोटेस्टेंट धर्म-भ्रष्टोंकी हड्डियाँ जलाई जा रही हैं। यह प्राचीन अन्ध विश्वासपर नये ऐतिहासिक पूर्वग्रहका आरोप है।

हमने धर्म विश्वासोंकी गोधूलीकी बात कही थी—आधुनिक सन्दर्भमें जब गोएँ शहरसे दूर विजलास जगमग डेरियोंमें दुही जाती हैं और आँगनमें गायका बजाय मोटर रम्भाती है तब गोधूलीका कोई अर्थ नहीं गिना जाता है। फिर भी जैसे आत्मिक विश्वास नये पूर्वग्रह ओढ़ लेते हैं वैसे ही पुराना शब्दावली भी नये अभिप्राय ओढ़ना चलती है।

बीसवीं शतीका गोलोक

धार्मिन घण्टेमें मुझे प्राय आठ सौ मीलकी यात्रा करना है। बिजलीके इंजिनसे चालित रेलगाड़ीके लिए २७ मील प्रति घंटेकी औसत रफ्तार बहुत अधिक नहीं है, लेकिन इन आंकड़ोंका उल्लेख यही बतानेके लिए कर रहा हूँ कि आरामसे रेलगाड़ीमें बैठ जानेके बाद इतनी लम्बी यात्राकी बात सोचकर समय काटनेके उपायोंके बारेमें सोचना स्वाभाविक हो जाता है। यह तो ठीक है कि नया देश है—मैं बहुत-सा समय खिड़कीसे बाहर झांकनेमें बिताऊंगा ही—और यहां सब रेलें बिजलीसे चलती हैं इसलिए धुएंकी भी चिंता नहीं है। लेकिन बाईस घंटे बाहर ताकते रहना तो असम्भव है। इस यात्रामें प्राय बाईस घंटे दिनका प्रकाश रहेगा, फिर भी। मैं स्टाकहोमसे उत्तर ध्रुवप्रदेशकी ओर दौड़ा जा रहा हूँ मध्य जूनका मौसम है जब ध्रुव मण्डलमें चौबीसों घण्टे दिन रहता है। स्टाकहोममें प्राय दो घण्टेकी रात रहती है। लेकिन वहांसे पांच बजे चलकर रात होते न होते तो मैं उस समय और निकट पहुंच जाऊंगा जहां रात होती ही नहीं।

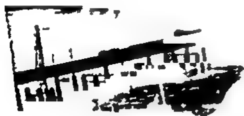
अपने साथ स्वीडनके सम्बन्धमें जो परिचय-पुस्तकें रख ली थीं उन्हें उलटकर उलट-पलटने लगा। आरम्भमें ही जो आंकड़े दिये गये थे उनसे ज्ञात हुआ कि स्वीडनकी कुल भूमिका आधेसे अधिक (५४५ प्रतिशत) वन भूमि है और प्राय १२ प्रतिशत गोचर भूमि या चरागाह। देशकी आबादीका घनत्व प्रति वर्गमील ४३ जन है। दूध और मक्खनकी खपत प्रति व्यक्ति क्रमश २१० सेर और ११ सेर वार्षिक है अर्थात औसतसे प्रत्येक व्यक्ति प्रतिदिन ९ छटांक दूध और ½ छटांक मक्खनका सेवन करता है। चीज और पनीर आदि इससे अलग हैं।

स्वाभाविक था कि इन आकडोंके आधारपर मै एक आधुनिक गाल्लेककी कल्पना करने लगा जिसमें असख्य काम धनए मुक्त भावसे वन प्रदेशों और हरियालियोंमें विचरण करती फिरती है और जहाँ-जहा उनके पैर पडते है वहाँ समद्धियाँ पनप उठती है। सुना था कि सात आकाशोके पार जो गोलोक है उसमें कभी अधेरा नहीं होता इससे उत्तरी स्वीडनमें भी उत्तरायणके दिनों गाल्लेककी कल्पना करना और भी स्वाभाविक था।

मै कभी पहननेके पट्ट उलटता हुआ और कभी बाहरके जगल हुए दृश्य देखता हुआ अगले दिन तीसरे पहर अपने लक्ष्यपर पहुच गया। आबिस्कोका टूरिस्ट केन्द्र यद्यपि था यथानाम ही तथापि उसकी सब व्यवस्था विद्यार्थियोंके हाथमें थी जो उन दिनों ग्रीष्मावकाशके कारण इधर उधर घूम रहे थे और अपने भरण-पोषणके लिए ऐसे स्थानोंकी व्यवस्थामें आवश्यकतानुसार परिश्रमका दान दते थे। बडे डाइनिंग रूममें जिसमें वेटर नहीं थे और स्वय सेवाका ही विधान था जहा-तहाँ दूध और दहीके भरे हुए जग रखे थे। होटलमें रहनेवाले इच्छानुसार पानी दूध अथवा दही पी सकते थे—जब जितनी बार जितना चाहे।

आधुनिक गाल्लेककी कल्पना इससे और पुष्ट हो आयी। लेकिन जगते हुए शान्त समय सहसा ध्यान आया कि इतनी लम्बी यात्रामे जिसका कमसे कम आरम्भिक अश हरियालीके प्रदेशोंमेसे गुजरा था मैने कहीं भी गाय या बछडा नहीं देखा। यह कैसा गोलोक है जिसमें गाय अदृश्य रहती है?

आबिस्कोमें दो तीन दिन पर्यटन करते समय स्टाकहोम लौट जानेके बाद दाक्षिणी स्वीडनकी यात्रामें मेने इस विषयमें जिज्ञासा प्रकट की थी। यह विषय इसलिए कि शायद प्रश्न मुख्यतया दाक्षिणी स्वीडनसे ही है। जिज्ञासा शान्त करने लायक उत्तर तो वहाँ भी नहीं मिला। उलटे सशय ही बढ़ने





स्टाक्होममें सूर्यास्त
[मालार झीलके पार नये नगर भवन और पुराने नगरके गिरजाघरकी मीनारें दीख रही हैं]

मध्यरात्रिका सूर्य, आबिस्को

की परिस्थितिके विषयमें अप्रत्याशित प्रश्न पूछे गये। एकने पूछा 'सुना है आपके देशके शहरोंमें सांड छुट्टे फिरते हैं। मुझे एक मित्रने बताया था कि बनारसमें शहरके एक चौकमें उन्होंने सांडोंकी लडाई देखी थी। तो क्या यह सच है?' मुझे याद आया कि स्वीडनमें तो नहीं, इंग्लैंडमें कहीं कहीं मैंने देखा था कि जहाँ सांड रखा जाता है वहाँ आस पास लम्बी चौड़ी चरागाह छोड़कर उसके बाहर मजबूत दीवार या बाड़ लगा दी जाती है और जहाँ-तहाँ चेतावनीके नोटिस टाँग दिये जाते हैं। एक दूसरे व्यक्तिने पूछा 'आपके यहाँ सुना है, गायें शहरोंमें बल्कि लोगोंके घरोंमें रहती हैं और चरानेके लिए सड़कोंपर छोड दी जाती हैं—बल्कि खूद-खूदकर कचरा खाती हैं। क्या यह बात ठीक है?' और एक दूसरेने इस प्रश्नके साथ जोड़ दिया 'लेकिन यह कैसे हो सकता है—भारतमें तो गायें पूज्य मानी जाती हैं। है न?'

जिज्ञासाका उत्तर इन प्रश्नोंमें नहीं मिला लेकिन उत्तर कहाँसे मिलेगा इसका कुछ संकेत तो मिल ही गया। देशकी १२ प्रतिशत भूमि गोचर भूमि है और वह शहरसे अलग ही रखी जाती है। वहाँ गायें स्वच्छता और स्वच्छन्दतासे रहती हैं और वहाँ दुहा जाकर दूध शहरोंमें पहुँचता है। यह तभी सम्भव हो सकता है जब कि वितरणका संगठन बहुत अच्छा हो। वितरण संस्थाके मुख्य कार्यालयमें और दो एक संग्रह और वितरण केन्द्रोंमें जाकर समझ लिया कि यह संगठन वास्तवमें बहुत विस्तृत और कुशल है। अन्य प्रकारके सहकार-संगठनोंकी बात अनन्तर करूँगा लेकिन दूधकी सहकारी संस्थाका उल्लेख यहाँ कर देना अप्रासंगिक न होगा। पूर्वीय मध्य स्वीडनकी जिस दूध सहकार संस्थाका केन्द्र स्टाकहोममें है उसके ३०,००० गोपालक सदस्य हैं। इसकी विभिन्न डेरियाँ प्रतिदिन २० लाख किलोग्राम दूधका संग्रह करती हैं। इन्हीं डेरियोंमें कृमि-नाशनके बाद दूध बोतलोंमें अथवा मोम-लगे कागजके पात्रोंमें बन्द करके बिक्रीके लिए भेजा जाता है अथवा क्रीम और पनीर निकालनेके लिए प्रयुक्त होता है। इन

डरियासे प्रतिवर्ष १ करोड २० लाख किलोग्राम (प्राय सवा तीन लाख मन) मक्खन और १ करोड किलोग्राम पनीर तयार होता है।

वहाँपर अपने देशकी गोधन सम्बन्धी चर्चा कुछ प्रीतिकर नही थी। गोधन सम्बन्धी सुधार और उन्नतिका उल्लेख भी कुछ विशेष अर्थ न रखता जबकि उस उन्नतिके बादकी स्थिति भी स्वीडनकी दृष्टिसे शोचनीय होती। मन ही मन सोचता रहा कि इन प्रश्नोंमें कितना अविश्वास और अज्ञात व्यंग्य है आपके देशमें साड छुट्टे फिरते है? आपके देशमें गाय कचरा खाती है? किन्तु आपके यहाँ तो गाय पूज्य मानी जाती है।

ठीक ही तो है। जहाँ मनुष्य गायको नही खाता वहाँ गाय मनुष्यको खाती है—और मनुष्य अच्छा भोजन नहीं है इसलिए उसको खाकर भी भूखी रह जाती है। गाय क्योंकि पूज्य है इसलिए उसको पालनेवाला निर्धन व्यक्ति उसको भी भूखा मारता है और उसके साथ स्वय भी भूखा मरता है और अपनेको यही सोचकर सान्त्वना दे लेता है कि गायको भूखा रखनेके कारण वह पाप भागी नही है क्योंकि वह स्वय भी तो भूखा है। वास्तवमें जब तक हमारी गो सम्बन्धी भावनाए परिवर्तित नही होती तब तक स्थितिमें कोई सुधार भी नहीं हो सकता और उस दिशाम किया जानेवाला सब प्रयत्न बालूकी दीवार है। गोधनका संवर्द्धन तो तभी हो सकता है जब हम उसे धन मानें अर्थात भावनाको एक ओर रखकर उसे आर्थिक नियमोंके अधीन मान लें। वृद्धि धनकी हो सकती है सुधार सम्पत्ति अथवा पूजीका हो सकता है। माताओंकी वृद्धि नहीं की जाती न सुधार होता है और माताओंको नम्बर घोरम कुछ कहना तो निरा दुर्विनय है।

स्टाकहोम अत्यन्त साफ-सुथरा शहर है। इतना साफ कि उसकी सडक आँखोंमें चुभे। लेकिन यह कहनेमें मुझे थोडा संकोच होता है कि

स्थापत्यकी दृष्टिसे वह सुन्दर भी है। वास्तवमें स्टाकहोमका स्थापत्य नवीन प्रवृत्तियोंके अध्ययनके लिए उपयोगी भले ही हो, कुछ-एक विशिष्ट इमारतोंको छोड़कर सुन्दर प्राय नहीं है। आरामदेह वह हो सकता है क्योंकि वह जिस सिद्धान्तपर आधारित है वह सुविधा प्रधान ही है सौंदर्य प्रधान नहीं। बल्कि वह सौंदर्यको सुविधाकी उपज मानता है। जो वस्तु या उपकरण जिस कामके लिए हो, उस कामके अधिकसे अधिक अनुरूप होना ही उसका सौन्दर्य है—उपकरणवाद (फंक्शनलिज्म) का यह सिद्धान्त सन १९३० के लगभग जर्मनी और फ्रांससे स्वीडन आया और फिर यहाँ स्वतन्त्र रूपसे विकसित होता रहा। नगर निर्माण और स्थापत्यमें इस सिद्धान्तका खण्डन तो कठिन है लेकिन अपनी ओरसे यह स्वीकार करनेमें मुझे कोई संकोच नहीं कि अपनी सवन्न-पद्धतिको अभीतक उसके अनुरूप नहीं ढाल सका हूँ। उपकरणको सुविधाजनक उपकरण अवश्य होना चाहिए लेकिन उपकरण होने मात्रसे वह सुन्दर हो जाता है यह अभीतक नहीं मान पाया हूँ और समझता हूँ कि लोक शिल्पके इतिहाससे जो उदाहरण उपकरणवादी देते हैं वे उनकी युक्तियोंका पूरा समर्थन नहीं करते। कोई भी उपकरण और सुन्दर बनाया जा सकता है, बिना उसकी उपयोगिता कम किये हुए। किसी भी उपकरणको अधिक उपयोगी बनाया जा सकता है बिना उसकी सुन्दरता घटाये हुए। मैं नहीं जानता कि उपयोगिताकी दृष्टिसे स्टाकहोमका पुराना नगर अपने समयकी आवश्यकताओं की पूर्ति अधिक अच्छी तरह करता था, लेकिन फिर भी मानता हूँ कि वह नये नगरसे कहीं अधिक सुन्दर है। मैं ही नहीं स्वयं स्वीडी लोग भी इसे मानते हैं और विदेशीको सगर्व यह दिखाते हैं। नवीनताके पोषक भी, जो नये नगर भवनपर गर्व करते हैं, कमसे कम उतना ही गर्व पुरानी नगरीपर भी करते हैं।

स्थापत्य विशेष सुन्दर न होनेपर भी स्टाकहोमके अनेक भाग बहुत सुन्दर हैं जिसका मुख्य कारण मालार झील है। यह झील और घुमाव

दार चौक नगरके विभिन्न खण्डोंमें विभिन्न आकार लिये हुए—कहीं नहर सी सकरी, कहीं सरोवर-सी गोल और कहीं उपसागर-सी फैली हुई। बीच बीचमें चट्टानें टीले अथवा वन खण्ड उसके सौन्दर्यको और बढ़ा देते हैं। बन्दरगाहसे एक ओरका तटवर्ती प्रदेश तो सुरक्षित राष्ट्रीय उद्यान बना दिया गया है और इसमें सड़कोंके आस पास हरियालियोंमें बिखरे हुए कहवाघर और भोजनालय बहुत ही आकर्षक हैं। प्रवासके पहले दिन अपने आतिथेयके साथ इस प्रदेशमें घूमकर ऐसे ही एक रेस्तराँमें भोजन किया था। आतिथेयको अपनी नयी जर्मन गाड़ी दिखानेका भी चाव था लेकिन मैं तो उसी तन्मय भावसे बाहरके दृश्य देख रहा था जिसके लिए अंग्रेज़ी मुहावरा 'रबरकी गर्दन घुमाना' बहुत ही उपयुक्त है। रेस्तराँका नाम लिण्डगार्डन (नीबूका बाग) तो सार्थक था ही बरामदेके बाहर और अनेक मालचोंपर सजे हुए विगायनी फूलोंका रूप और सौरभ भी रमणीय था। पञ्जी और नस्तर्शियम कार्नेशन और हाइड्रेंजिया—ये फूल भारतमें भी होते हैं लेकिन यहाँ उनका रंग रूप और आकार सभी और थे—हाइड्रेंजियाके गुच्छे तो फूल-गोभियोंसे भी बड़े! और आस पास पाँगर और लीलाकके पेड़ फूल रहे थे—लीलाकके फूल कुछ-कुछ महानिम्ब (बकायन) के फूलोंसे मिलते हैं लेकिन उनसे अधिक सुगन्धित होते हैं और उनके अलावा गुलाबी और सफ़ेद रंगके भी होते हैं।

अपने आतिथेयका उल्लेख कर ही दिया है तो दो एक बातें उनके विषयमें और कह दूँ। आतिथ्यके लिए वह व्यस्त तो थे ही मैंने उनके लिए एक समस्या और उपस्थित कर दी थी जिसे उन्होंने बड़े आत्मीय सहज भावसे स्वीकार कर लिया। स्वीडिश इन्स्टीट्यूट नामक संस्थाके एक मन्त्री होनेके नाते विदेशोंसे आनेवाले सभी प्रकारके अभ्यागतोंके स्वागत और उनके लिए आवश्यक प्रबन्धका काम वह करते रहते थे। यूनस्कोसे सम्बद्ध होनेके कारण मेरे स्वीडन प्रवासका प्रबन्ध भी उनकी संस्थाको सौंपा गया था। ऐसी संस्थाओंके लिए प्रबन्धका एक स्वयं चालित रूढ़ि सी बन जाती

है। लेकिन मेरे सामने कठिनाई यह थी कि मैं उस संस्थाका पहला लेखक-अतिथि था। मुझसे पहले जो अध्येता आते रहे, उन सबकी रुचि दूसरी दिशाओंमें थी — कोई इस्पातका कारखाना देखना चाहता था तो कोई जलविद्युतकी व्यवस्था, कोई पूर्वनिर्मित (प्री-फ्रैब्रिकेटेड) घरोंका अध्ययन करने आया था तो कोई समाज-कल्याणके कानूनोंका, कोई कागज बनानेके कारखाने देखना चाहता था तो कोई सहकार सभाएँ या केन्द्रीय कार्यालय। लेकिन मैं — मैं लेखकोंसे मिलना चाह रहा था! और वह अभी तक सोच रहे थे कि मेरे लिए क्या व्यवस्था उन्हें करनी चाहिए। केवल इतना अनुमान किया था (स्वयं-चालित कल्पनाका प्रताप!) कि मेरे समवयस्क कुछ लेखकोंसे भेंटकी व्यवस्था कर दी थी। मैंने उन्हें बताया कि मास्को व पेरिसमें भी ऐसी ही समस्या उठी थी और इसलिए मुझे वहाँ १५ दिन अधिक रुकना पड़ा था कि उनके विशेषज्ञोंसे पूछकर अपना कार्यक्रम स्वयं निश्चित कर सकूँ। इस सूचनासे उन्हें कुछ सान्त्वना मिली और उनका बोझ प्रत्यक्ष ही कुछ हल्का होता जान पड़ा। तब स्वागत मैंने यह भी सुझा दिया कि मिलनेके लिए समान वयका ध्यान रखना उतना आवश्यक नहीं है जितना समान रुचि अथवा जिज्ञासाओंका — समानशील व्यसनेषु सख्यम्। पहले ही दिन यह स्पष्टीकरण हो जानेसे अनन्तर बहुत लाभ हुआ, क्योंकि इस प्रकार मैं यथेष्ट लेखकोंसे भी मिल सका। बल्कि कई दृष्टियोंसे उनसे मिलना अधिक शिक्षाप्रद हुआ।

पहले दिन मैं विद्यार्थियोंके एक होस्टलमें ठहरा था — एक छात्रावासमें जो कि ग्रीष्मावकाशमें विद्यार्थियों द्वारा होटलके रूपमें चलाया जा रहा था। किन्तु दूसरे दिन मेरे लिए दूसरी जगह व्यवस्था कर दी गयी। यह दूसरा होटल प्राइवेट होटल था — कुल आठ कमरे — और पहाड़ीकी ढाल पर बनी हुई पाँच मंजिलोंकी इमारतमें पाँचवीं मंजिलपर था। (निचली

मंज़िलमें एक क्लब और एक रेस्तराँ भी था।) यह होटल 'लेखकोंका होटल' प्रसिद्ध था। कुछ ऐसी परम्परा थी कि स्टाकहोम आनेवाले विदेशी लेखक यहीं ठहरते या ठहराये जाते थे। होटलका खाता देखनेपर अनेक प्रसिद्ध नाम मुझे मिले। यह भी ज्ञात हुआ कि स्टिवेंसन भी कभी यहाँ रहे थे।

होटलसे स्टाकहोमका और मालार झीलके विभिन्न अंगोंका विहंगम दृश्य दीखता है। बल्कि अपने छज्जेसे ही मैं सूर्योदयसे सूर्यास्त तकका पूरा आकाश देख सकता था। क्योंकि यह छज्जा इमारतके कोनेपर बना हुआ था। पश्चिमकी ओर मालारके एक पल्लेके आगे नगर भवन सान्ध्य आकाशकी पटिकाके कारण बहुत अच्छा लगता था।

होटल पहाड़की ढालपर था। पाँच मंज़िलें उतर करके समतल भूमि पर नहीं पहुँचते थे बल्कि वहाँसे और बहुत नीचे उतरकर सड़क अथवा ट्रामकी लाइन मिलती थी। पटरीसे उतरनेमें इसमें प्राय दस मिनटका समय लगता और आती बार कड़ी चढ़ाई करनी पड़ती। इसलिए नगरके इस खण्डमें आनेके लिए बाहर एक सार्वजनिक लिफ्ट लगा हुआ था जिससे प्राय २० फुट सीधे चढ़-उतर सकते थे। यह लिफ्ट उपयोगी तो था ही नगरके लिए एक विशेष आकर्षण इसलिए भी था कि ऊपरी खण्डसे पटरी तक बना हुआ पुल स्टाकहोमका विहंगम दृश्य देखनेके लिए उत्तम स्थान था। सूर्योदय और सूर्यास्त नया और पुराना नगर बन्दरगाह और आने-जानेवाले जहाज़ नाव दौड़ना और बल खाती हुई ट्राम और मोटरें सभी यहाँसे देखी जा सकती थीं। मैं आते जाते सदैव इस पुलका मंज़र पर झुककर तमाशा देखा करता था। इतना ही नहीं आने जानेवालों की सुविधाके लिए पुलपर ही एक कहवाघर था जो वहाँ सस्ता-सा या छोटी कुर्सीपर बिठाकर चाय-कॉफी और उद्गार देखता था।

इस पुल और इस लिफ्टकी एक और भी उपयोगिता थी जिसका

पता लिफ्टकी एक बालिकासे लगा। (अधिकतर स्त्रियाँ ही लिफ्ट चलाती था केवल रातके तीसरे पहरकी ड्यूटी पुरुष करते [illegible] ।)

बालिकाएँ लिफ्टपर आने-जानेवाले प्रत्येक व्यक्तिका चेहरा बड़े ध्यानसे देखा करती थीं यह मैं लक्ष्य कर चुका था। स्वीडन जैसे विनम्रशील देश में ऐसे देखे जाना कुछ असमंजसकर भी था। एक दिन साँझको लिफ्टके ऊपर जानेपर पाया कि लिफ्टका तत्काल प्रयोग चाहनेवाले व्यक्ति वहाँ नहीं हैं, तो बालिकासे थोड़ी देर बातचीत करता रहा। मैं पहले भी सुना था कि आत्महत्या करना चाहनेवाले प्रायः वहाँ आते हैं—२०० फुटकी यह कूद आत्महत्याका अमोघ उपाय है! बालिकाने बताया कि वह हर चेहरेको इसीलिए ध्यानसे देखती है—कि कहीं यह आत्म जिघांसुका चेहरा तो नहीं है? कभी कभी यह भी सोचती हूँ कि अगर कोई आत्महत्या करना ही चाहता तो मैं क्या उसे मैं रोकूँ गी?

इस प्रश्न पर मेरा ध्यान टिक गया। मैंने पूछा 'क्या पहले भी आपने कभी किसीको रोका है?'

बालिकाने बताया कि एक बार एक व्यक्ति उसके सामने ही, कूदनेके लिए मुंडेरपर चढ़ रहा था तो उसने पीछेसे उसकी कमर पकड़ ली। किन्तु भरसक बाधा देनेपर भी वह उस कूदनेसे रोक न सकी—जकड़ छुड़ाकर वह गिर ही गया। बाधाका केवल इतना ही असर हुआ कि जहाँ कूदनेसे वह निश्चय दूर खुले स्थानमें गिरता वहाँ कूदनेके बजाय गिरनेके कारण मेंड़ अथवा बिजलीके तारोंके एक खम्भेपर गिरा, और फिर तारोंके टूट जानेसे नीचे—किन्तु कम वेगसे। फलतः वह तत्काल मरा नहीं—उसे अस्पताल ले जाया गया, जहाँ टूटी हुई हड्डियों और बिजलीसे जल जानेके घावोंके कारण आठ दिनके मर्मान्तक कष्टके बाद उसकी मृत्यु हुई।

"तबसे मैं हर चेहरेको बड़े ध्यानसे देखती हूँ। इसलिए नहीं कि जान लूँ कि यह आदमी मरना चाहता है या नहीं बल्कि इसलिए भी कि मैं समझ सकूँ कि इसके मरना चाहनेपर मुझे बाधा देनी चाहिए या नहीं।'

थोड़ी देर हम दोनों चुप रहे। फिर उसने माना स्वगत कहा ' कोई कैसे जान सकता है कि दूसरेका दुख कितना गहरा है ? और जानकर कैसे उसमें दखल दे सकता है ?

लिफ्टका प्रयोग तो मैं इसके बाद भी बहुत दिनों तक करता रहा। लेकिन चार्ल्सकी कही अन्तिम बात मेरे मनमें बार-बार उदित होती रही—विशेषकर उसका उत्तरार्द्ध— और जानकर कैसे उसमें दखल दे सकता है ?

क्योंकि यह दखल न देना स्वीडी जीवन दर्शनमें एक महत्त्वका स्थान रखता है—उनके स्वातन्त्र्य-पूजनका एक अंग है। दखल न देनेका दर्शन पेरिसमें भी पाया जाता है। अपवाद रूपी किसी किसी व्यक्तिमें वह मानवीय सहानुभूतिका रूप भी हो सकता है और मैं जानता हूं कि पेरिसमें भी लोग हैं जो बिना एक-दूसरेके जीवनमें दखल दिये एक दूसरेकी सहायता करते हैं। लेकिन पेरिसका दखल न देनेका दर्शन मुख्यतः सम्वेदनाकी अनुपस्थितिका दर्शन है—मानवके प्रति मानवकी उदासीनताका। स्वीडनमें यह दोनों अलग आधारपर खड़ा है—मानवके प्रति मानवके सम्मानपर व्यक्तिकी अखण्ड सार्वभौम सत्तापर। इस विशेष दृष्टिकोणके अनेक उदाहरण सुने भी और देखे भी। लेकिन इस सम्बन्धमें अपने कुछ अनुभवोंका वर्णन अलगसे करना ही अच्छा होगा।

एक छोटे कस्बेके बाहरी मुहल्लेकी एक सड़क सड़कके किनारे दीवारपर टंगा हुआ लेटरबक्स। सहसा आँखें लेटरबक्सपर नहीं उसके नीचे कुट्टिम भूमिपर टिक जाती हैं। वहाँ एक चिट्ठी और उसके ऊपर कुछ पैसे रखे हैं। फिर समझमें आ जाती है बिना टिकटकी चिट्ठी और पैसे इस विश्वासके साथ रख गये हैं कि डाकिया स्वयं टिकट लगाकर चिट्ठी ले जायगा।

राजधानीकी ट्रामगाड़ी। पिछले द्वारसे सवारियाँ चढ़ती हैं, अगले दो द्वारोंसे उतरती हैं। क्रमशः आगे बढ़ती हुई वे बीचमें बैठे कंडक्टरसे टिकट लेती जाती हैं। भीड़ बहुत है, प्रगति धीरे हो रही है, कुछ लोगोंको जल्दी उतर जाना है—वे टिकट कैसे लें? अचानक दीखता है, उतरनेके द्वारोंके पास छोटी-छोटी पेटियाँ लगी हुई हैं—लोग उतरते हुए उनमें पैसे डालते जाते हैं। पेटियोंपर लिखा है—'आपको टिकट लेनेकी सुविधा न हुई हो तो किराया यहाँ डालते जाइये।'

एक मामूली स्टेशन। आप गाड़ीसे उतरे हैं। मध्यवित्ती भारतवासी हैं, इसलिए प्रायः आवश्यकतासे अधिक असबाब लेकर यात्रा करनेके आदी हैं, यद्यपि इतना सीख गये हैं कि बिस्तर ले जाना आवश्यक नहीं है। कुली कहीं दीखते नहीं। आप बगलमें एक बंडल और दोनों हाथोंमें एक-एक सूटकेस तौलते हैं कि एक मधुर स्वर कहता है—'एक मुझे दीजिए—' और आपके कुछ कहनेसे पहले एक सुरूप सुवेश व्यक्ति आपके हाथसे एक सूटकेस ले लेता है—'बस तक जायेंगे?' बसपर पहुँचकर वह आपको धन्यवाद देनेका अवसर न देकर कहता है—'हमारे देशमें आपका प्रवास सुखद हो, यह मेरी हार्दिक कामना है'—और चल देता है।

एक और स्टेशन। रातके ग्यारह बजेका समय, थोड़ी देर बाद आपकी गाड़ी आनेवाली है। आप सूने प्लेटफार्मपर टहल रहे हैं कि अचानक देखते हैं, जिस होटलमें आप दो दिन ठहरे थे उसीमें टिके हुए आठ-दस स्वीडिश व्यक्ति आपकी ओर आ रहे हैं। क्या ये भी उसी गाड़ीसे जानेवाले हैं या किसीको लेने आये हैं? नहीं, ये सब आपको विदा करने आये हैं। 'आप बाहरसे आये हुए हमारे अतिथि हैं, पराये देशमें जाकर यह अनुभव करना कि हम अजनबी या पराये हैं अच्छा नहीं लगता। हम चाहते हैं कि आप इस देशको अपना घर समझें और आपको गाड़ीपर पहुँचाने आये हैं—इस कामनाके साथ कि आपका हमारे मध्यमें आना फिर हो।' रातके ग्यारह बजे और बिना किसी संस्थाकी प्रेरणाके निजी सौजन्यका यह

शिष्टाचार ! अतिथि-सत्कारकी उत्कट परम्पराएँ कई देशोंमें हैं और आतिथ्यकी अतिरंजित परिभाषाएँ भी कई जगह मिलती हैं। सभ्यताकी अनेक परिभाषाएँ हैं और संस्कृतिकी तो और भी अधिक। किंतु सभ्यता यदि व्यक्तिकी स्वतन्त्रताका निर्वाह करते हुए एक सुगठित और सुव्यवस्थित समाजके रूपमें रहनेकी कलाका नाम है तो जिस देशमें ये छोटी-छोटी किन्तु स्मरणीय अनुभव मुझे हुए वह संसारका कदाचित् सबसे अधिक सभ्य देश है। और अगर मानवका वह नीति संस्कार जिससे वह सहज और निरायास भावसे ऐसा आचरण करता है जो दूसरे मानवके लिए सुखकर प्रीतिकर या कल्याणकर है और इस दूसरेपर बोझ भी नहीं बनने देता—अगर ऐसा नीति संस्कार संस्कृतिमें कुछ भी महत्त्व रखता है तो निस्सन्देह स्वीडन एक अत्यन्त पुष्ट संस्कृति सम्पन्न देश है।

ये घटनाएँ या असाधारण नहीं हैं किन्तु उनका किसी देशके साधारण दैनंदिन जीवनका अंग होना ही उन्हें असाधारण बनाता है। नहीं तो इक्के दुक्के नीतिवान या नागरीक व्यक्ति किस देशमें नहीं मिलते ? स्वीडनमें और भी मार्केकी बात यह है कि नैतिक संस्कार निर्वाह आधुनिकतम वैज्ञानिक प्रगतिके साथ साथ होता है। औद्योगिक उन्नति आर्थिक सम्पत्ति विस्तृत व्यापार व्यापक शिक्षा—इनके साथ साथ विनयका विकास होता है और समाजके हर स्तरपर होता है। यह स्तर वहाँ इतना नहीं है जितना भारतमें या दूसरे अनेक पूर्वी अथवा मध्यवर्ती देशोंमें क्योंकि स्वीडन साथ ही सबसे अधिक समाजवादी देश भी है। वहाँ बातपर उतना मगर आग्रह भर ही न हो व्यवहार परा है। यह अत्यन्त विकसित व्यक्ति-स्वातन्त्र्य और उसके साथ-साथ इतना व्यापक सामाजिक सहयोग—यही स्वीडनका अचरज है और यही मानव जातिके भविष्यके लिए आशाका संबल।

किसी देश अथवा समाजके साधारण अथवा जातिगत चरित्रको उसकी भौगोलिक स्थितिका परिणाम मान लेना एक प्रकारके नियतिवादको जन्म

देता है। ऐसा भौगोलिक नियतिवाद मुझे अमान्य है। किंतु स्वीडी चरित्र की विशेषताओंको उसकी देशगत स्थितियोंके सन्दर्भमें अवश्य देखा जा सकता है। विरल आबादीवाले ऐसे प्रदेशमें, जहाँ घने सरोवरों और पर्वतोंका बाहुल्य है, जहाँ गर्मी जाड़ेमें दिन और रातका अंतर इतना अधिक होता है कि कुछ महीने दिन काटे नहीं कटता और कुछ महीने रात मानो अन्तहीन हो जाती है, जिसमें बहुधा गाँव या अकेले घर महीनों तक बर्फसे घिरे अथवा दबकर बाकी संसारसे अलग हो जाते हैं, वहाँके रहनेवाले लोगोंका ऐसा स्वभाव पाना कुछ अद्भुत नहीं है। अलग अकेले रहनेका अभ्यासी अगर चिन्तनशील, अल्पभाषी या मितभाषी, एकान्तप्रेमी और दूसरेके काममें हस्तक्षेप न करनेवाला हो जाता है, तो क्या आश्चर्य है? स्वीडनमें एक ही झील एक ही घाटपर सैलानियों द्वारा मछलीके शिकारके लिए या दो एक दिनकी छुट्टी बितानेके लिए कोई मालिक मकान दो चार कमरे बनवाता है तो इसका ध्यान रखता है कि वे एक-दूसरेको न दीखें, एक-दूसरेके परिवेशमें, एकान्तमें अथवा मनोवांछित ढंगसे समय यापनमें बाधक न बनें। यह नहीं है कि (लारेंसके शब्दोंमें) सभ्य मानवको मानवकी बू असह्य हो गयी है। बल्कि यह इस बातका प्रमाण है कि ऐसा नहीं हुआ है और न साधारण स्वीडी चाहता है कि ऐसा हो। स्टाकहोममें एक बार देखा था, गर्मियोंमें अपने अलग ढंगसे और हाटबाटके वातावरणसे मगन रहकर छुट्टियोंके कुछ दिन निजी पारिवारिक वातावरणमें बितानेके लिए लोग अपनी-अपनी मोटरोंके पीछे कारवाँ टेंट जोतकर निकले, तो एक ही सागर-तटपर एक ही विशाल कैरावान-पार्कमें ६००० टेंट पंक्तियाँ बाँधकर खड़े हो गये। पार्कमें मोटर और टेंट खड़े करनेकी जगह थी, प्रत्येकके लिए बिजलीका कनेक्शन मिल सकता था और पानी आदिकी व्यवस्था थी। अपने अद्वितीय ढंगसे निजी रूपसे छुट्टी बितानेके लिए एक ही मैदानमें जुटे हुए ६००० पंक्तिबद्ध परिवार। मानो छुट्टी बितानेके युद्धके लिए महाप्रांगणमें सेनाएँ जुटी हों।

यह कहना इंग्लंडके साथ दोहरा अन्याय होगा कि प्राणमें जन्मे हुए सब लोग वास्तवमें ऐसा अवकाश संग्राम चाहते हैं। इंग्लंडकी आबादी कहीं घनी है, और वहां वैसे एकान्त विश्रामके लिए स्थान भी नहीं है जैसा स्वीडनमें सम्भव है। किन्तु जो कुछ सम्भव है उसका पूरा उपयोग वहां नहीं होता जब कि स्वीडनमें जो व्यक्ति अवकाश या विश्रामके लिए दौड़ता है वह केवल अपने कायस्थ या परिचित परिवारसे दूर नहीं जाता बल्कि जन मानस दूर जाता है।

शिक्षित और सम्पन्न देशमें ऐसे एकान्त प्रेमसे विशेषतया जब उस सम्पन्नताके साथ साथ स्वतन्त्र धार्मिक चिन्तन कई विश्वासोंको दुर्बल कर देता है इसकी सम्भावना रहती है कि व्यक्ति एक आध्यात्मिक शून्यका अनुभव करे। इसके दुष्परिणाम स्वीडनमें देखे जा सकते हैं। एकान्तमें और अति मात्रामें मद्य सेवन वहांकी एक सामाजिक समस्या है। मद्यके कारण ही नहीं अन्य कारणोंसे भी एकान्तसे घिरे हुए कुछ व्यक्तित्व वहां विकृत हो जाते हैं। यह शायद भौतिक समृद्धिका अनिवार्य दण्ड है। किन्तु इन विकृत परिणामोंको छोड़ भी दें तो भी लक्षित होता है कि स्वीडी लोगोंमें कहीं गहरेमें एक उदासी अथवा चिन्तनशील निरानन्दका भाव होता है। कदाचित् इसी अति गम्भीरता अथवा अन्तर्मुख उदासीके कारण दक्षिणी जातियोंके लोग उन्हें मनहूस या बद्दू मानते हैं। उदाहरणतः प्रायः ही स्वीडियोंमें विनोदकी कमीकी चर्चा होती है। फ्रांसका साहित्यकार जहाँ बात बातमें सबको दूसरेको चमत्कृत करने प्रभाव डालने वाचित्र और आंगिक अभिनय द्वारा मुग्ध और अभिभूत करनेमें यत्नशील रहता है स्वीडनका लेखक वहां ग्रहण करते चुपचाप बैठकर या सागर-तट अथवा वन-प्रान्तमें घूमते हुए चिन्तन करनेका अभ्यासी है। फ्रांसीसी कलाकार एक कुशल नट है अविराम अपने करतब दिखाता है और आपका आदर प्राप्त करना चाहता है। वह सजग है कि आप उसके अभिनय-कौशलकी दाद दें। उसके लिए यह मानो बड़ा पराजय होगी

कि वह जो पाठ अदा कर रहा है उसे आप उसका सच्चा रूप समझ लें। यह दूसरी बात है कि जो अभिनेता मानो जागते कभी भी रंगमंच छोड़ता हो नहीं उसका सच्चा रूप आप क्या मानें। किन्तु यहाँ तो फ्रांसीसी कलाकार आपको बताना चाहता है वह आपके सामने बैठकर अपना रूप—अपने असली रूप देखता है आपको सम्बोधन करके अपनी बात—अपनी असल बातें सुनता है। इसके विरुद्ध स्वीडी इसके कम बोलता है अपने गम्भीरतम चिन्तनों और मान्यताओंकी चर्चा प्राय नहीं करता किन्तु जब करता है तो निश्छल निष्ठा भावसे। आपके सामने आकर वह आपकी बात सुनता है सुनता है यदि सहमत नहीं होता तो आपकी बात गाँठ बाँध कर रख लेता है कि फिर एकान्तमें किसी झील-झरनेके किनारे बैठकर सोचेगा।

और मजेकी बात यह है कि फ्रांसका बौद्धिक व्यक्ति तो उत्तरके साहित्यकारको बुद्धू और मनहूस समझता ही है उत्तरी साहित्यकार भी सहज ही इस मूल्यांकनको स्वीकार लेता है। मुझसे एकाधिक बार स्वीडी लेखकने ऐसा कहा। फ्रांसके लेखक प्रतिभाशाली हैं हम लोगोंमें तो कोई प्रतिभा नहीं है। वी आर नॉट ब्रिलिएंट लाइक द फ्रेंच वी आर डल पीपल।

किन्तु आभ्यन्तर विवेचनको छोड़कर सतहको ही देखें। स्वीडनमें शिक्षाका प्रसार आश्चर्यजनक है। शिक्षा सभी स्तरोंपर निःशुल्क या लगभग निःशुल्क है। कई जिलोंमें प्रारम्भिक और उच्च विद्यालयोंमें भी विद्यार्थियोंको दोपहरका भोजन स्कूलकी ओरसे बिना मूल्य दिया जाता है—बिना इसका विचार किये कि किस विद्यार्थीकी आर्थिक स्थिति कैसी है। सन १९५५ में सात लाख विद्यार्थियोंको एक बार बिना मूल्य भोजन मिलता रहा। (स्वीडनकी कुल जन-संख्या सात करोड़ है)

विश्वविद्यालयोंमें शिक्षा राज्यकी ओरसे निःशुल्क दी जाती है, किन्तु राज्य विश्वविद्यालयोंका नियन्त्रण नहीं करता और वे अपनी स्वतन्त्रताकी रक्षाके बारेमें अत्यन्त सतर्क हैं। बल्कि विश्वविद्यालयोंकी स्वतन्त्रता अध्ययन स्वातन्त्र्य और विचार स्वातन्त्र्यके आन्दोलनका ही एक पहलू है। स्वीडनके प्राचीन विश्वविद्यालय सत्रहवीं शतीमें स्थापित हुए और उस समय धर्म शिक्षा उनके पाठ्यक्रमका अंग थी ही। अनन्तर धर्म विश्वास सम्बन्धी आन्दोलनके साथ-साथ अध्ययन और अनुशीलनकी स्वतन्त्रताका प्रश्न जुड़ गया। विश्वविद्यालयोंकी स्वतन्त्रताका आन्दोलन इसका एक पहलू था। आचार्योंकी नियुक्तिके सन्दर्भमें राज्य और विश्वविद्यालयोंका एक ऐतिहासिक संघर्ष भी हुआ, जिसमें वैज्ञानिक अनुशीलनकी स्वतन्त्रताका सिद्धान्त जयी हुआ। स्वीडी समाचार-पत्रोंकी स्वतन्त्रता भी यहाँ कानून द्वारा सुरक्षित है। स्वीडियोंका दावा है कि इस स्वतन्त्रताको सुरक्षित रखनेका सबसे प्राचीन विधान स्वीडनका है। वर्तमान कानूनमें भी किसी प्रकारके नियन्त्रणका निषेध है और युद्धकालमें भी समाचार-पत्रोंपर सेंसर नहीं नियुक्त किया जा सकता।

विश्वविद्यालयोंमें शिक्षा निःशुल्क होती है, इसका अर्थ यही है कि विश्वविद्यालय विद्यार्थियोंसे कुछ नहीं लेते। किन्तु प्रत्येक विद्यार्थीके लिए किसी विद्यार्थी संगठनका सदस्य होना आवश्यक होता है और ये संगठन चन्दा लेते हैं। ये संगठन कि नाम अधिकतर प्रान्तिक होते हैं और वे राष्ट्र कहलाते हैं। विद्यार्थी-जीवनके अनेक पहलू इन संघों अथवा राष्ट्रोंके सहकारी अनुशासनमें रहते हैं। संघ ही छात्रावास चलाते हैं और विद्यार्थियोंके रहनेकी व्यवस्था करते हैं, सहकारी आधारपर विद्यार्थियोंके खाने-पीनेका या दुकानें चलाते हैं, विद्यार्थियोंके लिए चिकित्सालय चलाते हैं, नौकरी मिलनेके लिए उद्योग करते हैं और यहाँ तक कि सन्तोषजनक व्यवहार रहनेपर उन्हें वृत्तियाँ भी देते हैं, अथवा बेकारी भत्तोंकी व्यवस्था करते हैं। और ये छात्र-संगठन स्वयंभू और स्वायत्त होते हैं। विश्व

विद्यालय उनमें कोई हस्तक्षेप नहीं करता, केवल माँगे जानेपर परामर्श देनेकी व्यवस्था कर दे सकता है। उदाहरणतया सहकारी संस्थाको चलानेके लिए किसी अर्थशास्त्रज्ञकी आवश्यकता होनेपर विश्वविद्यालयसे इस सम्बन्धमें सहयोग माँगा जा सकता है।

विश्वविद्यालय सभी ग्रीष्मावकाशके लिए बन्द थे, केवल उपसालाके प्राचीन विश्वविद्यालयमें जाना हुआ—वह भी इसलिए कि कुछ ऐसे लोगोंसे मिलना था जो स्थायी रूपसे वहीं रहते थे।

किन्तु सिगतुनाका लोक-संस्कृति महाविद्यालय खुला था। बल्कि ग्रीष्मावकाशमें तो यहाँ विशेष हलचल होती है, क्योंकि अवकाशमें बाहरके लोग भी कभी-कभी अतिथिशालामें आकर रहते हैं। उपसालासे मैं सिगतुना जाकर उसी अतिथिशालामें ठहरा। यह संस्था लोक-संस्कृतिके अध्ययनके लिए और लोक-कला तथा लोक-शिल्पकी रीतियोंके पालन और प्रचारके लिए काम करती है। यहींकी गायक मण्डलीसे मैंने अनेक स्वीडी लोकगीत सुने और कुछ फीतेपर रिकार्ड करके साथ ले आया। उन दिनों वहाँ नौत्सव (मिड-समर फ़ेस्टिवल) भी था, इसलिए स्वीडी लोक-नृत्य भी देखनेको मिले जिसमें न केवल विद्यालयके छात्र और छात्राएँ सम्मिलित होती थीं बल्कि आसपासकी बस्तियोंके अनेक कृषक और नागरिक भी। प्रतिदिन विधिवत् इन्द्र-ध्वज (मस्तूल) की प्रतिष्ठा होती थी और उसके आसपास सम्मिलित नृत्य होता था। नृत्योंके विभिन्न प्रकार थे। मण्डलाकार नृत्य होनेपर भी कुछको नटन (डान्स) कहा जाता था और कुछको खेल (प्ले)। सारे यूरोपमें ऐसे अनेक लोक-नृत्य प्रचलित हैं जिनको खेल कहा जाता है—उन्हें विशिष्ट करनेके लिए उनके साथ विशेषक नाम जुड़ा हुआ हो सकता है। मेरा अनुमान है कि भारतमें भी ऐसा ही परम्परागत अन्तर रहा—नट अथवा नृत धातुसे बने हुए विभिन्न नाम कदाचित् इस अन्तरको सूचित करते हैं कि कुछ नृत्य अभिनय-प्रधान थे और वाचिक तथा आंगिक अभिनयके द्वारा किसी कथाकी व्याख्या

विश्वविद्यालयोंमें शिक्षा राज्यका आरम्भ नियन्त्रण किया जाता है किन्तु राज्य विश्वविद्यालयोंका नियन्त्रण नहीं करता और वे अपनी स्वतन्त्रता रखनेके बारेमें अत्यन्त सतर्क हैं। यदि विश्वविद्यालयोंकी स्वतन्त्रता अध्ययन-अध्यापन और विचार-स्वातन्त्र्य आन्दोलनका ही एक अंग है। इंग्लैण्डके प्राचीन विश्वविद्यालय मध्ययुगमें स्थापित हुए और उस समय धर्म शिक्षा केन्द्र शासन-तन्त्रका अंग था। अनन्तर धर्म विरोध सम्बन्धी आन्दोलनके साथ-साथ अध्ययन और अनुशासनकी स्वतन्त्रता प्राप्त कर लिया। विश्वविद्यालयोंकी स्वतन्त्रता आन्दोलन उसका एक अंग था। आधुनिकोंका निश्चित रूपमें राज्य और विश्वविद्यालयका एक लिखित समझौता नहीं हुआ जिसमें स्थापित अनुशासनकी स्वतन्त्रता सिद्धान्त बना हुआ। समाचार-पत्रोंकी स्वतन्त्रता भी यहाँ कानून द्वारा सुरक्षित है। स्वाधीनताकी दावा कि इस स्वतन्त्रताको सुरक्षित रखनेका सबसे प्राचीन विधान स्थापित है। वर्तमान कानूनमें भी किसी प्रकारके नियन्त्रणका निषेध है और युद्धकालमें भी समाचार-पत्रोंपर सेंसर नहीं लिखित किया जा सकता।

विश्वविद्यालयोंमें शिक्षा निःशुल्क होती है इसका अर्थ यह है कि विश्वविद्यालय विद्यार्थियोंसे कुछ नहीं लेते। किन्तु प्रत्येक विद्यार्थीके लिए किसी विद्यार्थी संस्थाका सदस्य होना आवश्यक होता है और ये संगठन चन्दा लेते हैं। इन संस्थाओंके नाम अधिकतर धार्मिक होते हैं और वे राज्य कहलाते हैं। विद्यार्थी अक्सर अनेक वर्ष तक इन सभा अथवा राज्योंके सदस्योंके अनुशासनमें रहते हैं। सब ही छात्रावास चलाते हैं और विद्यार्थियोंके रहनेकी व्यवस्था करते हैं। संस्थाएँ साधारण विद्यार्थियोंके कामकी चर्चा करनेमें चलते हैं विद्यार्थियोंके लिए चिकित्सालय चलाते हैं नौकरी दिलानेके लिए उद्योग करते हैं और यहाँ तक कि संस्थायें बेकार रहनेपर उन्हें वृत्तियाँ भी देते हैं अथवा उद्योग-धन्धोंकी व्यवस्था करते हैं। और ये छात्र-संगठन स्वयंसेवी और स्वायत्त होते हैं। किन्तु

विद्यालय उसमें कोई हस्तक्षेप नहीं करता, केवल मांगे जानेपर परामर्श देनेकी व्यवस्था कर दे सकता है। उदाहरणतया सहकारी संस्थाको चलानेके लिए किसी अर्थशास्त्रज्ञकी आवश्यकता होनेपर विश्वविद्यालयसे इस सम्बन्धमें सहयोग मांगा जा सकता है।

विश्वविद्यालय सभी ग्रीष्मावकाशके लिए बन्द थे, केवल उपसालाके प्राचीन विश्वविद्यालयमें जाना हुआ—वह भी इसलिए कि कुछ लेखकोंसे मिलना था जो स्थायी रूपसे वहीं रहते थे।

किन्तु सिगतुनाका लोक-मस्कूल महाविद्यालय खुला था। बल्कि ग्रीष्मावकाशमें तो वहाँ विशेष हलचल होती है, क्योंकि अवकाशमें बाहरके लोग भी यहाँकी अतिथिशालामें आकर रहते हैं। उपसालासे मैं सिगतुना आकर उसी अतिथिशालामें ठहरा। यह संस्था लोक संस्कृतिके अध्ययनके लिए और लोक-कला तथा लोक शिल्पकी रीतियोंके पोषण और प्रचारके लिए कार्य करती है। यहाँकी गायक मण्डलीसे मैंने अनेक स्वीडी लोकगान सुने और कुछ फीतेपर रेकार्ड करके साथ ले आया। उन दिनों अर्ध-मौसम (मिड समर फेस्टिवल) भी था, इसलिए स्वीडी लोक-नृत्य भी देखनेको मिले जिसमें न केवल विद्यालयके छात्र और छात्राएं सम्मिलित होती थीं बल्कि आसपासकी बस्तियोंसे अनेक कृषक और नागरिक भी। प्रतिदिन विधिवत् इन्द्र-ध्वज (मे पोल) की प्रतिष्ठा होती थी और उसके आसपास विभिन्न नृत्य होता था। नृत्योंके विभिन्न प्रकार थे। मण्डलाकार नृत्य होनेपर या कुछको नटन (डांस) कहा जाता था और कुछको अटन (वॉक)। सारे यूरोपमें ऐसे अनेक लोक-नृत्य प्रचलित हैं जिनको वॉक कहा जाता है—उन्हें विशिष्ट करनेके लिए उनके साथ विशेषक नाम जुड़ा हुआ हो सकता है। मेरा अनुमान है कि भारतमें भी ऐसा ही परम्परागत अन्तर रहा—नट अथवा अट धातुसे बने हुए विभिन्न नाम कदाचित् इस भेदको सूचित करते हैं कि कुछ नृत्य अभिनय प्रधान थे और वाचिक तथा आंगिक अभिनयके द्वारा किसी पदकी व्याख्या

करते थे जबकि कुछ दूसरे नये गीतोंके साथ होनेवाले भी सहज आनन्द-अभिव्यक्तिके नृत्य होते थे। मैं नहीं जानता कि यह अनुमान कहाँ तक तथ्य-संगत है न यही कि भाषा-तत्त्वके विशेषज्ञ इसपर क्या कहेंगे किन्तु इतना अवश्य है कि इस प्रकारका भेद लोक-नर्तकके मनमें भी रहा और शास्त्रीय परिभाषा करनेवाले नाट्य-शास्त्र विचारकके मनमें भी।

दूर देशीय अतिथि होनेके नाते मुझे संस्था देखनेकी पूरी सुविधा तो दी ही गयी प्रतिदिन भोजनके समय अध्यक्षकी मेज़का साझा करनेका सम्मान भी मिला। पश्चिममें भोजनका समय ही वार्तालापका उत्तम समय माना जाता है इसलिए यह अवसर मेरे लिए विशेष उपयोगी हुआ क्योंकि प्रतिवार अध्यक्षके साथ दो एक और लेखक-अतिथियोंसे भी बात चीत हो जाती और पश्चिमकी साहित्यिक और सांस्कृतिक परम्परा अथवा उनकी विशेष समस्याओंपर कुछ नया प्रकाश मिलता या किसी नये दृष्टिकोणसे परिचय होता। मध्य-कालमें धर्म और कलाका जो सम्बन्ध विच्छिन्न हुआ ईसाई चर्चने कलाकारका जो बहिष्कार कर दिया उसके परिणामोंपर बहुत चर्चा होती रही। अध्यक्ष महोदयका दृढ़ विश्वास था कि कलाकारको अविश्वास्य मानकर कलाके प्रति उदासीन हो जानेमें चर्चने जो भूल की थी उसके कुप्रभाव दोनोंपर पड़े और अब धर्म-संस्थाओंको फिरसे यह उद्योग करना चाहिए कि उनमें और कलाकारोंमें सामीप्य हो— धर्म-संस्थाओंको रचनाशीलताका योग मिले और कृतिकार फिरसे श्रद्धासे अनुप्राणित हो। निरी श्रद्धाहीनताको मैं भी कोई रचनात्मक शक्ति नहीं मानता हूँ यद्यपि वैज्ञानिक जिज्ञासु-बुद्धिका कायल हूँ। फिर भी अध्यक्ष महोदयकी भावनाका सम्मान करते हुए भी मैं उनकी योजनाको व्यावहारिक नहीं मानता था—भारत जैसे देशमें भी नहीं स्वीडन जैसे देशकी तो बात ही क्या! किन्तु ऐसे वार्तालापका उद्देश्य सहमति नहीं होता विचारोत्तेजन ही होता है।



स्टाकहोममें एक काव्य-गोष्ठी
[पढ़ते हुए नीचे फिर क्रमशः लेखक, जन लुन्क्वाड, पाल एनहस्ट और लाम फोर्नेर]

ग्रीष्म-कालीन विद्यालयमें
[मार्टिन आल्वड द्वारा संचालित विद्यालयमें भारतके विषयमें लेखकका व्याख्यान]

लेखक, चिन्तक, अध्यापक, सभी तो ग्रीष्मावकाशके लिए शहरसे या अपने साधारण निवासोंसे दूर भाग हुए थे—कोई समुद्रमें कोई सागर किनारे कोई पहाड़के झोंपड़ोंमें तो कोई शहरियोंके कॉटेज-ग्रामोंमें। चार दिनोंकी चाँदनी में ही धूप आतपमें सब लोग उन स्थानोंको चले गये थे जहाँ दिन भर (और कितना लम्बा दिन!) बैठ अथवा छिपकलीकी तरह धूपमें पड़े-पड़े दिन काट जा सकें। क्योंकि फिर सर्दी अथवा रातमें सभीको अपने-अपने शहर लौटकर काममें लग जाना होगा। यादगार पतापर किसीसे मिलना सम्भव नहीं था क्योंकि किसीका पता पाना भी कठिन था। कोई अचानक ही मिल जाय तो मिल जाय। एक ही केन्द्रमें जाना उपयोगी हो सकता था जहाँ उस समयमें लोगोंके होनेकी ही सम्भावना हो। लिथुआनिया और दक्षिण स्वीडनके मुख्य नामक स्थानमें हाकिस्गाम (गटट-नार्सा) की सन्ध्यामें जा पहुँचा जहाँ मेरे पुराने परिचित मार्टिन आल्बुक समान विचारके एक छापखानेका संचालन करते हैं और एक ग्रीष्म-कालीन विद्यालय भी चलाते हैं। मार्टिनसे मेरा परिचय प्रथम बीस वर्ष पहले था जब वह भारत आये थे और कलकत्तेमें मेरे साथ रहे थे। वह मूलतः उत्तरी इंग्लैंड निवासी थे किन्तु उनके पिता यहाँ अकेले निवास होकर आये थे और यहीं बस गये थे। इसी कालमें उनकी नार्वेकी पत्नी श्रीमती इंगा आल्बुकसे परिचय हुआ था। प्रकाशक लेखक और शिक्षक होनेसे मैं उत्सुक तथा उनकी अपनी पचीस या—और उनके इस समय विद्यार्थी युवकों और युवतियोंसे भी और एक सर्वथा अनौपचारिक शिक्षा पद्धतिसे भी। मार्टिन तथा विद्यार्थियोंके अनुरोधपर विद्यालयमें दो-एक भाषण भी दिये और कहानियाँ भी सुनायीं फिर मार्टिनके अध्ययन कक्षमें बराबर उनसे भारत तथा अपने स्वानुभव अनुभवोंका विनिमय करता रहा।

लौटकर फिर स्टॉकहोममें अपने परिचित होटलमें स्थान पाया। स्विट्स अब भी उसी प्रकार लोग आते जाते थे और स्विट्सकी चाँदनी

अब भी उतने ही ध्यानसे उसे अक्सर देखा करती थी। किन्तु होटलमें टिक जानेके बाद एक नया अनुभव हुआ।

सबेरे नाश्तेके बाद परिचारिकाने पूछा, "क्या आपको कुछ कष्ट दे सकती हूँ?"

मैंने कहा—"बताइए?"

"आप मेरी हस्ताक्षर पुस्तकमें हस्ताक्षर कर देंगे?"

मैंने हँसकर कहा, "सहर्ष।"

"और साथ कुछ लिख भी देंगे?"

मैंने कहा, "अच्छी बात है, आप कापी मुझे दे दीजिए, मैं लिख रखूँगा।"

वह कापी ले आयी। कापी क्या थी, मेरी अभ्यस्त छोटी-सी ऑटोग्राफ बुक भी नहीं थी। एक बड़ा-सा एल्बम था। उस होटलमें इस परिचारिकाके रहते जो-जो देशी-विदेशी साहित्यकार यहाँ टिके थे (और यह मैं कह चुका हूँ कि यह होटल साहित्यकारोंका अड्डा था)—उन सभीके उसमें न केवल हस्ताक्षर और सन्देश थे, बल्कि स्टाकहोममें रहते हुए उनके भाषणों या भेंटके जो भी संवाद समाचार-पत्रोंमें छपते रहे उनके कटिंग भी। पन्ने उलटते हुए मुझे आश्चर्य हुआ जब मैंने देखा कि *मुल्कके समाचार पत्रोंमें मेरे वहाँ जानेके सम्बन्धमें जो संवाद और (निश्चय ही मार्टिनका लिया हुआ) जीवन-वृत्त छपा था उसके भी कटिंग उस एल*बममें लगे हुए थे। मैंने यथास्थान कुछ लिखकर हस्ताक्षर तो कर ही दिया, तीसरे पहर कापी लौटाते समय चिढ़ाते हुए स्वरमें पूछा, "लेकिन मेरा फोटो तो समाचार-पत्रोंमें नहीं छपा, उसका आप क्या करेंगी?"

उसने हँसकर कहा, "अभी तो आप स्टाकहोममें हैं। अर्थात् अभी तो इसकी सम्भावना है कि आपका फोटो अखबारमें छप जाय!" यों समाचार-पत्रोंमें ऐरे-गैरे अनजान फोटो छपते रहते हैं और मेरा फोटो छप जाना भी नितान्त असम्भव तो नहीं था, लेकिन स्वीडनकी विनयशीलता

का आभारी हू कि यहा वसा नहा हुआ। स्टाकहोमसे विदा होनेसे पहले मन स्वय ही अपना एक फोटो एल्बमके लिए उस दे दिया। भविष्यमें जो भारतीय लेखक वहां जावें और उस होटलमें ठहरें व चाहें तो इस सकेतसे लाम उठा सकते ह ।

मन ऊपर कहा कि स्वीडन ससारका सबसे अधिक समाजवादी देश ह—कि समाजवादके आन्दोलन व्यावहारिक रूप वहीं सबसे अधिक देखा जाता ह। निस्सन्देह एस समाजवादी व्यवहारके लिए देशका समृद्ध होना आवश्यक ह और वहांकी वन-सम्पत्ति खनिज सम्पत्ति और जल विद्युत शक्तिकी दद मिलिक कारण स्वीडनकी समृद्धि बन्ती हो जाती ह किन्तु वास्तवमें समाजवादी व्यवस्थाका विकास वहांके सहकारिता-आन्दोलनके कारण ही होता रहा ह। सहकारिता सिद्धान्तपर श्रमन वहां उन्नीसवी शताब्दी ही होता रहा पर सन १९३० स यह आन्दोलन देश-व्यापी हो गया और अब तो इसके विभिन्न पहलुओंके आंकड चकित कर दनवाले ह। डरी सघ की सदस्य संख्या अढाई लाखसे अधिक ह मास विक्रय सघकी प्राय तीन लाख और कृषि सघकी प्राय ढ लाख। कृषि सघ क्रय और विक्रय दोनोंका काम सभालता ह खेतीकी पदावार बचता ह और कृषकके लिए बीज खाद चारा औषधि आदि प्राप्त करता ह। इतना ही नहीं सदस्यों की शिक्षा प्रशिक्षण भी वह योग देता ह सूचना-पत्रिकाएं और साहित्य भी प्रकाशित करता ह—यहां तक कि कुछ भारतीय कृति-साहित्य भी उसने प्रकाशित किया ह। (यदि वह भारतका उत्तम साहित्य नहीं ह तो इसका उत्तरदायित्व उस परामर्श दनवाले भारतीयपर ही। उसने तो सुन्दर प्रकाशन किया ह)

यह सहकार सिद्धान्त अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्रमें भी लागू होता ह स्कन्डिनेविया चारों देश आपसमें ऐसा सहयोग करते हैं। एक देशके सघके

सम्पर्कको दूभर देनारे गंध भी बड़ी सुविधा देते हैं जो स्वेच्छापूर्वक मत देना इसके अलावा अन्योन्याय क्रय विक्रय भी डाक द्वारा होता है। यह आपसी सहयोग देनारे सहजीवनका उत्तम और प्रेरणाप्रद उदाहरण है। स्वेच्छा पूर्वक सहयोगपर आधारित यह समाजवादी समाज कैसे इतनी व्यवस्था पूर्वक चलता है लोकतन्त्रमूलक यह रथ कैसे बिना घरघराहटके सहज गतिसे चलता जाता है कहीं रगड़ या अटक उसमें क्यों नहीं पैदा होती इसकी पड़ताल करने चलें तो लौटकर फिर एक जानी हुई बातपर आ जाना पड़ेगा कि समता उसी समाजमें होता है जो स्वतन्त्र हो और समाज वही स्वतन्त्र होता है जिसका अंग व्यक्ति स्वतन्त्र हो और अपने स्वातन्त्र्यके उपभोगके लिए ही सामाजिकताका वरण करता हो। सब सामाजिक सम्पर्कों और सम्बन्धोंकी मूल प्रेरणा है व्यक्तिकी आध्यात्मिक स्वतन्त्रताकी खोज।

किन्तु आधुनिक गोलोकमें गोदर्शन? हाँ गोलोककी यात्राका मेरा वृत्तान्त अधूरा ही रह जायगा यदि अन्तमें यह न कहूँ कि वहाँसे लौटनेसे पहले गायें मैंने देखीं—खुली हरियालीमें खड़ी बड़ी वात्सल्य भरी आँखों वाली गायें जिन्होंने गोपद-परिक्रमा द्वारा पृथ्वी प्रदक्षिणाका फल पानेकी कल्पनाको जन्म दिया होगा—जैसी गायोंके लिए कालिदासने पयोधरीभूतचतुःसमुद्रा गोरूपधरा इवोर्वीकी उत्प्रेक्षा की थी। अगर मुझसे किसी गायने यह नहीं कहा कि

न केवलाना पयसा प्रसूतिमवेहि मा कामदुघा प्रसन्नाम्

और न यह अनुग्रह ही प्रकट किया कि

प्रीतास्मि ते पुत्र ! वर वृणीष्व

तो इसका कारण यह भी हो सकता है कि बीसवीं शतीकी सुरभी अथवा नन्दिनी मानव भाषा नहीं बोलती और यह भी कि मैं ही गुरुभक्ति

विहीन होनेके कारण अपात्र समझा गया। जो हो, इस आलोक-यात्रासे लौटकर यह मान लेनेको तैयार हूँ कि कालिदासने अगर ताम्र-लोहित प्रभा पतंगस्य को पल्लववर्णा मुनेश्च धेनु के समकक्ष ही ठहराया तो कोई अनय नहीं किया

'सञ्चारपूतानि दिगन्तराणि कृत्वा दिनान्ते निलयाय गन्तुम् ।
प्रचक्रमे पल्लवरागताम्रा प्रभा पतङ्गस्य मुनेश्च धेनु ॥'

एक अनमना कवि

यह लेख या निबन्ध नहीं है, संस्मरण रूप कहा जा सकता है। किन्तु यदि संस्मरण नाटकीय भी हो सकता है, अर्थात् नाटकीय घटनाओंका हो सकता है और उनकी नाटकीयताको लक्षित करनेवाला इस प्रकार एक तटस्थ दर्शक भी हो सकता है, तो मैं इसे एक नाटकीय झाँकी कहना ही अधिक उपयुक्त समझूँगा।

नाटकीय मंचकी स्थितिके लिए सबसे पहले देश-काल निर्देश होना चाहिए। इस झाँकीका देश है स्वीडनका राजनगर स्टाकहोम और काल है कुछ वर्ष पहलेका ग्रीष्म। प्रधान पात्र है स्वीडी कवि एरिक लिण्डग्रेन। वही चरित-नायक 'अनमना कवि' है। पर उसे प्रधान पात्र कहनेका अभिप्राय यह कदापि नहीं है कि दूसरे पात्रोंका महत्त्व कम किया जाय, क्योंकि वास्तवमें दूसरे पात्रोंके बिना न केवल प्रधान पात्र तक पहुँचना न होता बल्कि पूरी घटना ही घटित न हो पाती।

लिण्डग्रेन प्रबल व्यक्तित्वके प्रतिभाशाली पुरुष हैं। उनका स्वभाव, जैसा कि नाटकके घटनाचक्रके प्रवर्तनमें प्रकट होगा, तेजस्वी और दूसरों पर हावी होनेवाला है—वैसा जिसे पश्चिमके मनोवैज्ञानिक डायनमिक पर्सनैलिटी कहते हैं और भारतीय परिभाषामें शायद राजसिक वृत्ति कहा जा सकता है। आयु लगभग पैंतालीस। युद्धकालीन कवियोंकी पीढ़ीके अग्रणी नेता (यद्यपि युद्धमें स्वीडन तटस्थ ही था) समकालीनोंमें भी और युवतर कवियोंमें भी सम्मानित।

अन्य पात्र हैं काउण्टेस आमली पास, अभिजातवर्गकी कवयित्री श्रीमती जन गुडल्याड गेरिना, यान ग्नेस्टट, कवि लाज्लो हामोरी, कवि और

लेखक राजनीतिज्ञ आइलवग सम्पादक और क्रान्तिकारी आन्दोलनके नेता, त्रास फार्नेल लेखक, और श्रीमती फार्नेल, बर्ट नीयें लेखक और समीक्षक तथा दो एक अन्य साहित्य प्रेमी।

प्रत्येक नाटकका आरम्भ होनेसे पहले कुछ निर्देश होना चाहिए। यही कठिनाई है। क्योंकि निर्देशके नामपर जो कुछ सूझता है वह वास्तवमें एक स्वीकारोक्ति ही है और स्वीकारोक्ति भी ऐसी जिससे कि नाटकका प्रयोजक—क्योंकि वह नाटककार अपनेको कैसे कहे ?—इच्छा न रहते भी उसका सूत्रधार बन जाता है।

किन्तु जब सूत्रधारतासे निस्तार नहीं है तब इस उत्तरदायित्वको स्वीकार ही करना होगा। आत्म रक्षाके लिए और कथाको सही दक परम्परा देनेके लिए यह स्पष्ट कर देना होगा कि यह सूत्रधार केवल कथा-सूत्रको धारण करनेवाला है नाटक-सूत्रको नहीं।

तो अब स्वीकारोक्तिसे आरम्भ किया जाय। समझ लीजिए कि नाटकका आरम्भ सूत्रधारके इन दिया बयानसे आरम्भ होता है।

यूरोप जाते समय एक लेखककी हैसियतसे जो प्रश्न मेरे मनमें थे, यह नहीं है कि उनकी तीव्रता कुछ कम हो गयी है या कि उनका उत्तर पाना अब मुझे उतना आवश्यक नहीं जान पड़ता। किन्तु इतना अवश्य है कि जब गया था तब मनमें यह विश्वास था कि इन प्रश्नोंका उत्तर जरूर बहुतेरे यूरोपीय लेखकोंके पास होगा, इतना ही नहीं, पूछनेपर वे उत्तर बता भी सकेंगे। अब इस बारेमें विश्वाससे छुट्टी पा गया हूँ। जानता हूँ कि इन प्रश्नोंके कोई बने-बनाये उत्तर नहीं हैं। जो बने-बनाये उत्तर देते हैं वे झूठ बोलते हैं—कुछ जान-बूझकर और कुछ अनजान। यह जानता हूँ कि पूरे उत्तर तो क्या उत्तरोंका थोड़ा-बहुत धुँधला-सा संकेत भी बहुत थोड़े लोगोंके पास है, पश्चिममें भी उतने ही थोड़े लोगोंके पास

जितनाके प्रथम—भारतमें अथवा अन्य एशियाई देशोंमें। बल्कि इसमें भी कुछ अधिक जानता हूँ वह यह कि इन प्रश्नोंका उत्तर चाहनेवाले लोगोंकी संख्या भी बहुत कम है—यूरोपमें भी उतनी ही कम जितनी कि भारतमें—क्योंकि ऐसे प्रश्न ही बहुत कम लोगोंके मनमें उठते हैं। इन प्रश्नोंके बिना भी काम मजेमें चलता है बल्कि इनके न उठनेसे ही काम मजेमें चलता है प्रश्न उठनेवाले तो उनको भार भीतर भी चैन नहीं लेने देती और बाहरसे भी गालियाँ दिलवाती है।

यूरोपके लोग ज्यादा व्यावहारिक हैं। या या कह लीजिए कि यूरोपके आदर्शवादियोंने अधिक मार खायी है जब कि भारतमें लेखकके लिए अभी इस लाचारीका श्रीगणेश ही हुआ है कि वह निमम वास्तविकतासे टक्कर ले। इसलिए यूरोपके अधिसंख्य लेखकोंने यह स्वीकार कर लिया है कि जहाँ एक ओर ऐसे प्रश्नोंके अस्तित्व या उनकी सम्भावनाका खण्डन न किया जाय वहाँ दूसरी ओर खाहमखाह उन्हें आमन्त्रित भी न किया जाय—जब तक बन उन्हें दूर-दूर मन्त्रान किया जाय। छुट्टे साँड़ दूर चौक चौराहेपर हुड़कते रहें तो रहें आ बैल मुझे मार कहते हुए लाल रुमाल दिखाकर उन्हें भड़कानेकी कोई जरूरत नहीं है।

यह सब अब जानता हूँ। पश्चिमका दृष्टिकोण अपनाया अब भी नहीं है लेकिन उसे समझने लगा हूँ। किन्तु तब नहीं समझता था। समझता होता तो यह नाटक न हो पाता। प्रधान पात्रकी पात्रता इसीमें है कि उसके सहारे मैं क्रमशः यह समझ सका और इसी समझ सकनेकी क्रियाका सूत्रपात इस नाटकीय झाँकीकी घटना-वस्तु है।

जैसे प्रश्न भर मनमें उठते थे और जिनके उत्तर पानेकी नहीं तो जिनपर विचार विनिमय करनेकी आशा मैं करता था उनमेंसे कुछ ये हैं

ईश्वर है या नहीं इस प्रश्नको एक तरफ रखकर यह बताइए कि कौनसे सत्यों या तत्त्वोंको आप ध्रुव मानते हैं? आपके जीवन दर्शन या

जीवन-सम्बन्धी विश्वासका आधार क्या है? मूल्योंका आपका बोध कहाँसे उद्भूत होता है—मूल प्रतिमान या प्रमाण क्या है?'

'इसके प्रतिकूल आपकी मूल चिन्ता या जिज्ञासा क्या है—नैतिक, आत्मिक सम्बन्धमें, जीवनके सम्बन्धमें, [illegible] सम्बन्धमें, [illegible] सम्बन्धमें कौन-सा बुनियादी प्रश्न आपको व्याकुल करता है?

'मनुष्य नैतिक है या अनैतिक या अतिनैतिक—[illegible]' विज्ञान क्या कहता है?

'संसार भरमें मानव-मात्रमें बढ़ता हुआ मानसिक तनाव किस बात का संकेत है?

'आप कहाँ तक अपनेको उत्तरदायी मानते हैं—[illegible] उसके लिए, आपका [illegible] करता है उसके लिए, मनुष्यों [illegible] जो करती है उसके लिए?

निस्सन्देह ये प्रश्न बहुत बड़े-बड़े हैं और इनका पूछा जाना [illegible] लगता है—और नहीं तो इसलिए कि इतनी बड़ी-बड़ी बातोंकी चर्चा करना भी दम्भ समझा जा सकता है (और हो भी सकता है)। निस्सन्देह देशमें भी मेरे परिचितोंमें दो-चारसे अधिक नहीं हैं जिनसे ऐसी चर्चाका साहस कर सकता हूँ। और यह तो बराबर जानता था कि पश्चिमके सामाजिक वार्तालापके नियम एवं मानदण्डोंमें कुछ अति गम्भीर [illegible] सम्मत बताये हैं।

फिर भी इन प्रश्न पूछनेकी बात मैं सोचता था तो यह निरी मूर्खता नहीं थी। [illegible] अनुसंधान तो मैंने प्रामाणिक नहीं किया था, लेकिन स्वीडनमें जहाँ-तहाँ जो चर्चाएँ हुई थीं उनसे यह विश्वास होता था कि यहाँपर इन गम्भीर विषयोंकी चर्चा हो सकती है—मनोरंजक या प्रभावशाली सामाजिक वार्तालापके या 'काव्य-शास्त्र विनोद' के स्तरपर नहीं बल्कि सच्ची जिज्ञासाके स्तरपर। इन विश्वासोंके सम्बन्धमें कुछ गम्भीर चर्चाएँ हो चुकी थीं सम्पूर्ण लौकिक और सबसे अधिक समाजवादी राज्य

में लोगोंकी मानसिक स्थितिकी भी चर्चा हुई थी। एकाधिक बार-बार यह मत प्रकट किया था कि सबसे अधिक समृद्धशाली और आर्थिक दृष्टिसे निश्चित होनेपर भी स्वीडनमें जन-साधारणका मन भाव आनन्द अथवा सन्तोषका नहीं था। दुःखी उन्हें नहीं कहा जा सकता, उदास अथवा निर्वेद अथवा हताश भी नहीं कहा जा सकता। फिर भी कवि और लेखक जब गम्भीर स्तरपर चर्चा करते तो यह न केवल स्वीकार करते बल्कि आग्रहपूर्वक कहते कि लोगोंका स्थायी भाव निरानन्द अथवा असुखका है। लोग असुखी हैं और विश्वके प्रति उनका भाव अनाश्वस्त है।

क्या? यह असुखी भाव क्या है? भविष्यके प्रति कैसी आशंका है? इसका सही-सही निरूपण नहीं हुआ था। किन्तु कुछ संकेत अवश्य मिले थे—भले ही कभी-कभी वे परस्पर विरोधी भी रहे हों। एक तो स्पष्ट संकेत था ही, जहाँ ईश्वरमें या किसी पारलौकिक सत्तामें विश्वासका सहारा नहीं है वहाँ भविष्यका क्या आश्वासन हो सकता है? निरा ऐहिक सम्पत्ति या समृद्धिसे क्या होता है? यह ठीक है कि उससे असुख नहीं होता—पर क्या सुख उससे होता है? और जो क्लेश निर्धनतासे होता है वह दूर किया जा सकता है—पर उससे आगे? जहाँ कोई विश्वास नहीं है और कोई क्लेश भी नहीं है वहाँ मानवका मन किस चीजपर टिक सकता है?

इसकी भी चर्चा होती रही थी कि उत्तर मध्य कालमें जब साहित्यकार और चर्चका नाता टूट गया—जब चर्चने साहित्यकारको अविश्वास्य मानकर उपेक्षणीय घोषित कर दिया तबसे न केवल साहित्यकी कल्याणकारी शक्तिका ह्रास हुआ बल्कि चर्चकी भी कल्याणकारी शक्ति क्षीणतर हो गयी। क्योंकि धर्म और कला दोनोंकी शक्ति इनकी परम्परासे पुष्ट होती है और उनके एक-दूसरेसे अलग हो जानेपर क्षीण। कला विहीन अथवा सौन्दर्य-बोध विहीन धर्म नीरस हो जाता है और श्रद्धा विहीन कला निष्प्राण।

ऐसी चर्चाओंके कारण भी धीरे धीरे साहस बढ़ता गया था और क्रमश: गम्भीरतर मौलिक प्रश्नोंकी चर्चा कर सकना सम्भव मानने लगा था।

सूत्रधारका यह बयान उनकी अपनी मन:स्थितिको तो स्पष्ट करता ही है, स्वाइनर्स स्टपवासी मन:स्थितिका भी कुछ संकेत देता है। समझ लीजिए कि नाटकका स्थायी भाववक्ता सूक्त इसीमें है।

एक कवि-गोष्ठी

यान गोनसटन्क परपर एक छोटी-सी कवि-गोष्ठी हुई जिसमें सभीने अपनी-अपनी भाषामें अपनी-अपनी कविताएँ पढ़ीं और साथमें उनका भावार्थ भी बताया। कविताका अनुवाद नहीं हो सकता यह एक सामान्य बात है। इस गोष्ठीमें भाग लेनेवाले कवि अधिकतर नयी पीढ़ीके कवि होनेके कारण इस बारेमें और भी सहमत थे क्योंकि नयी पीढ़ीकी कविता अपेक्षया अधिक उन तत्त्वोंपर निर्भर करती है जिनका अनुवाद नहीं हो सकता। फिर भी अलग अलग भाषाओंकी लय और ध्वनियोंके बारेमें सभीका कौतूहल था और सभी बड़े मनोयोगसे एक-दूसरेकी रचनाएँ न समझते हुए भी सुनते रहे।

मैंने स्वीडनमें ही लिखी गयी दो-एक कविताएँ सुनायीं। एक वहींकी एक झीलके किनारे लिखी गयी थी। स्थानका उल्लेख करनेपर नौर्येनने बताया कि उसी झीलपर एक स्वीडी कविकी कविता भी है जिसकी लय और ध्वनि मेरी हिंदी कवितासे बिलकुल भिन्न है। मुझे कौतूहल हुआ, नौर्येनने वह कविता सुनायी और फिर दोनों कविताओंके अर्थ और मूल्यपर विचार होता रहा। नौर्येन कविता अच्छा पढ़ते थे इसलिए उनसे और भी कविताएँ सुनी गयीं। उसके बाद साहित्य-सम्बन्धी और क्रमश: दूसरे गम्भीरतर विषयोंकी चर्चा होने लगी।

समकालीन हिन्दी समीक्षामें प्रवृत्तियोंकी चर्चामें भी इसके उदाहरण प्रकट

में लोगोंकी मानसिक स्थितिकी भी चर्चा हुई थी। व्याख्यान बार-बार यह मत प्रकट किया था कि सबसे अधिक समृद्धशाली और आर्थिक दृष्टिसे निश्चिन्त होनेपर भी स्वीडनके जन-साधारणका मनोभाव आनन्द अथवा सन्तोषका नहीं था। दुःखी उन्हें नहीं कहा जा सकता, उदास अथवा निर्वेद अथवा हताश भी नहीं कहा जा सकता फिर भी कवि और लेखक जब गम्भीर स्तरपर चर्चा करते तो यह न केवल स्वीकार करते बल्कि आग्रहपूर्वक कहते कि लोगोंका स्थायी भाव निरानन्द अथवा असुखका है। लोग असुखी हैं और विश्वके प्रति उनका भाव अनाश्वस्त है।

क्या? यह असुखी भाव क्या है? भविष्यके प्रति कैसी आशंका है? इसका सही सही निरूपण नहीं हुआ था। किन्तु कुछ संकेत अवश्य मिले थे—भले ही कभी-कभी वे परस्पर विरोधी भी रहे हों। एक तो स्पष्ट संकेत था ही जहाँ ईश्वरमें या किसी पारलौकिक सत्तामें विश्वासका सहारा नहीं है वहाँ भविष्यका क्या आश्वासन हो सकता है? निरी ऐहिक सम्पत्ति या समृद्धिसे क्या होता है? यह ठीक है कि उससे असुख नहीं होता—पर क्या सुख उससे होता है? और जो क्लेश निर्धनतासे होता है वह दूर किया जा सकता है—पर उससे आगे? जहाँ कोई विश्वास नहीं है और कोई क्लेश भी नहीं है वहाँ मानवका मन किस चीज़पर टिक सकता है?

इसकी भी चर्चा होती रही थी कि उत्तर मध्य कालमें जब साहित्यकार और चर्चका नाता टूट गया—जब चर्चने साहित्यकारको अविश्वास्य मानकर उपेक्षणीय घोषित कर दिया तबसे न केवल साहित्यकी कल्याणकारी शक्तिका ह्रास हुआ बल्कि चर्चकी भी कल्याणकारी शक्ति क्षीणतर हो गयी। क्योंकि धर्म और कला दोनोंकी शक्ति एककी परम्परासे पुष्ट होती है और उनके एक-दूसरेसे अलग हो जानेपर क्षीण। कला विहीन अथवा सौन्दर्य-बोध विहीन धर्म नीरस हो जाता है और श्रद्धा विहीन कला निष्प्राण।

ऐसी चर्चाओंके कारण भी धीरे धीरे साहस बढ़ता गया था और क्रमश गम्भीरतर मौलिक प्रश्नोंकी चर्चा कर सकना सम्भव मानने लगा था।

सूत्रधारका यह बयान उसकी अपनी मन स्थितिको तो स्पष्ट करता ही है स्वीडनके ऐसलावी मन स्थितिका भी कुछ संकेत देता है। समझ लीजिए कि नाटकके स्थायी भावका संकेत इसीमें है।

एक कवि-गोष्ठी

मान गानस्टक घरपर एक छोटी सी कवि गोष्ठी हुई जिसमें सभीने अपनी-अपनी भाषामें अपनी-अपनी कविताएँ पढ़ीं और संक्षेपमें उनका भावार्थ भी बताया। कविताका अनुवाद नहीं हो सकता, यह एक सामान्य बात है। इस गोष्ठीमें भाग लेनेवाले कवि अधिकतर नयी पीढ़ीके कवि होनेके कारण इस बारेमें और भी सहमत थे क्योंकि नयी पीढ़ीकी कविता अपेक्षया अधिक उन तत्वोंपर निर्भर करती है जिनका अनुवाद नहीं हो सकता। फिर भी अलग अलग भाषाकी लय और ध्वनियोंके बारेमें सभीका कौतूहल था और सभी बड़े मनोयोगसे एक-दूसरेकी रचनाएँ न समझते हुए भी सुनते रहे।

मैंने स्वीडनमें ही लिखी गयी दो एक कविताएँ सुनायीं। एक वहाँकी एक झीलके किनारे लिखी गयी थी। स्थानका उल्लेख करनेपर नोर्येन बताया कि उसी झीलपर एक स्वीडी कविकी कविता भी है जिसकी लय और ध्वनि मेरी हिंदी कविताओंसे बिल्कुल भिन्न है। मुझे कौतूहल हुआ नोर्येन वह कविता सुनायी और फिर दोनों कविताओंके लय और मूलपर विचार होता रहा। नोर्येकी कविता अच्छी पसन्द थ, इसलिए उनसे और भी कविताएँ सुना गया। उसके बाद साहित्य-सम्बन्धी और क्रमश दूसरे गम्भीरतर विषयोंकी चर्चा होने लगी।

गमस्टाड न हिन्दी सभोंमें प्रयासियोंकी चर्चामें भी इसका प्रमाण प्रकट

होने लगे हैं। जैसे यूरोपमें साधारणतया और स्वीडनमें विशेष रूपसे साहित्यिक प्रवृत्तियोंको एक-एक दशकके युगोंमें बाँट लिया जाता है। तीसोंके कवि, चालीसोंके कवि, पचासोंके कवि—इस प्रकार कवि-वर्गोंकी चर्चा होती है। इस गोष्ठीमें उपस्थित स्वीडी कवि प्रायः सभी मुझसे एक या दो युग छोटे थे। क्योंकि कुछ चालीसोंके दशकके थे और कुछ पचासोंके दशकके—अर्थात् कुछ उत्तर युद्ध-कालमें प्रकाशमें आये थे और कुछ सन् ५० के बाद। उनकी परिभाषासे मैं तीसोंका लेखक था। इसी वर्ग-विभाजन और प्रत्येक दशककी विशिष्ट प्रवृत्तियोंकी चर्चाके प्रसंगमें एरिक लिण्डग्रेनका नाम सामने आया।

सभी एकमत थे कि चालीसोंके दशकके सबसे अधिक प्रभावशाली और विचारोत्तेजक कवि वही हैं और सभीकी राय थी कि मुझे उनसे मिलना चाहिए। मैं नहीं कह सकता कि उन लोगोंका वास्तवमें यह विचार था कि जिन प्रश्नोंकी चर्चा मैं करना चाहता था उन प्रश्नोंका उनकी दृष्टिमें सही उत्तर लिण्डग्रेन दे सकेंगे। सम्भव है कि उन्होंने केवल यही सोचा हो कि लिण्डग्रेनसे मेरा भिड़ा देनेसे कुछ उत्साह और कौतूहलप्रद प्रश्नोंकी चर्चा होगी। यह भी था ही कि लिण्डग्रेन लगभग मेरे समवयस्क होंगे और इसलिए चर्चा कुछ बराबरीके स्तरपर होगी—स्वीडनमें अजनबियोंसे मिलनेकी बात होती है तो सम्भाव्य व्यक्तियोंके चुनावका एक आसान तरीका यह समझा जाता है कि दोनों पक्ष लगभग एक ही वयके हों। बड़े-छोटेकी भेंटमें यह अन्देशा रहता है कि वह निरा इण्टरव्यू न बन जाये अर्थात् उसमें एक पक्ष केवल जिज्ञासु या गाहक हो और दूसरा पक्ष उत्तर देनेवाला। जहाँ तक यूरोपके लेखकोंका आपसमें मिलनेका सवाल है, यह कसौटी किसी हद तक ठीक भी हो सकती है क्योंकि एक पीढ़ीके लेखकोंका अनुभव लगभग समान आधारपर होनेके कारण उनकी जिज्ञासाओंके वैचारिक और रागात्मक सन्दर्भ लगभग एक-से होते हैं और इसलिए आदान-प्रदान अधिक सहज और परस्पर स्फूर्तिप्रद हो सकता है। भारत और स्वीडनके जीवनकी

भूमिका एक-दूसरेसे इतनी भिन्न है कि ऐसा अनुभव-साम्य होनेकी सम्भावना कम है। बल्कि एक ही पीढ़ीके लोगोंमें तो और भी कम, अलग-अलग पीढ़ियोंके लोगोंमें तो कुछ सम्भावना हो भी सकती है।

पर सभीकी सम्मति थी कि हमें मिलना चाहिए। आतिथेय ग्रनस्टेट और उनके मित्र पार्लेन्गने इसके लिए उत्साह दिखाया कि वे मिलनेका प्रबन्ध कर देंगे। मैं तो ऐसे लोगोंसे मिलना चाहता ही था जिनसे विचारोंको उत्तेजना मिले और प्रश्नोंका कुछ समाधान हो।

रात बारह बजे लगभग गोष्ठी समाप्त हुई। अथवा बारह तो बज ही गये यद्यपि उसे रात नहीं कहा जा सकता क्योंकि उस समय उत्तरी प्रदेशोंके ग्रीष्मकी सधिकालीन फीकी रोशनी थमी थी।

एक आपातन

स्टाकहोमकी पूर्वी बन्दरगाहसे कुछ हटकर एक पानगृहका कमरा। दो और व्यक्तियोंको साथ लिये कवि लिन्डग्रेनके सामने मैं बैठा हूँ और सोच रहा हूँ कि क्या इस वातावरणमें कुछ बातचीत हो सकेगी? यों तो यूरोपमें साधारणतया पानगृहमें होनेसे बात-चीतमें कोई बाधा नहीं आ जाती। बल्कि बहुत-सी बातें तो वहीं सुन्दर होती हैं—परन्तु सब वातावरणमें या तो हो ही नहीं पातीं या लम्बे परिचयकी भूमिका माँगती हैं। पर औपचारिकताके बन्धनसे मुक्त हो सकना एक बात है और एकाग्र गम्भीरता दूसरी बात। क्या ऐसा नहीं हो सकता कि शिष्टाचारसे मुक्त होकर हार्दिकता स्थापित करनेका काम तो पानगृहमें हो जाय और उसके बाद विचार-विनिमयके लिए अन्यत्र चल दिया जाय? मैं लिन्डग्रेनको लेकर अपने सबसे प्रिय होटलके कमरेमें जानेकी सम्भावनापर विचार कर ही रहा था कि लार्स फार्सेल आ पहुँचे। बोले, 'यहाँसे हम लोग सीधे मेरे घर चलेंगे। मेरी पत्नी आप सबसे भेंट करना चाहती है।' लिन्डग्रेन

होने लगे हैं। इधर यूरोपमें साधारणतया और स्वीडनमें विशेष रूपसे साहित्यिक प्रवृत्तियों एक-एक दशकके खण्डोंमें बाँट लिया जाता है। तीसोंके कवि, चालीसोंके कवि, पचासोंके कवि—इस प्रकार कवि-वर्गोंकी चर्चा होती है। इस गोष्ठीमें उपस्थित स्वीडी कवि प्रायः सभी मुझसे एक या दो युग छोटे थे। क्योंकि कुछ चालीसी दशकके थे और कुछ पचासी दशकके—अर्थात् कुछ उत्तर युद्ध-कालमें प्रकाशमें आये थे और कुछ सन् ५० के बाद। उनकी परिभाषामें मैं तीसोंका लेखक था। इसी वर्ग-विभाजन और प्रत्येक दशककी विशिष्ट प्रवृत्तियोंकी चर्चाके प्रसंगमें एरिक लिण्डग्रेनका नाम सामने आया।

सभी एकमत थे कि चालीसी पीढ़ीके सबसे अधिक प्रभावशाली और विचारोत्तेजक कवि वही हैं और सभीकी राय थी कि मुझे उनसे मिलना चाहिए। मैं नहीं कह सकता कि उन लोगोंका वास्तवमें यह विचार था कि जिन प्रश्नोंकी चर्चा मैं करना चाहता था उन प्रश्नोंका उनकी दृष्टिमें सही उत्तर लिण्डग्रेन दे सकेंगे। सम्भव है कि उन्होंने केवल यही सोचा हो कि लिण्डग्रेनसे मेरे भिड़ जानेसे कुछ उत्तेजक और कौतूहलप्रद प्रश्नोंकी चर्चा होगी। यह भी सोचा हो कि लिण्डग्रेन लगभग मेरे समवयस्क होंगे और इसलिए चर्चा कुछ बराबरीके स्तरपर होगी—स्वा[illegible] अजनबियोंसे मिलनेकी बात होती है तो सम्भाव्य व्यक्तियोंके चुनावका एक आसान तरीका यह समझा जाता है कि दोनों पक्ष लगभग एक ही वयके हों। बड़े छोटोंकी भेंटमें यह अन्देशा रहता है कि वह निरा इण्टरव्यू न बन जाय अर्थात् उसमें एक पक्ष केवल जिज्ञासु या ग्रहीता हो और दूसरा पक्ष उत्तर देनेवाला। जहाँ तक यूरोपके लेखकोंका आपसमें मिलनेका सवाल है यह कसौटी किसी हद तक ठीक भी हो सकती है क्योंकि एक पीढ़ीके लेखकोंका अनुभव लगभग समान आधारपर होनेके कारण उनकी जिज्ञासाएँ वैचारिक और रागात्मक सन्दर्भ लगभग एक-से होते हैं और इसलिए आदान-प्रदान अधिक सहज और परस्पर स्फूर्तिप्रद हो सकता है। भारत और स्वीडनके जीवनकी

के हाथके गिलासकी ओर इशारा करके उन्होंने जोड़ा — 'यह कार्यक्रम भी जारी रहेगा और बात-चीत भी होगी।'

थोड़ी देरमें हमलोग फोर्नोल घर पहुँच गये। स्थापत्य पर साधारण तथा इतना कुछ नहीं हुआ करता—स्वीडनमें भी नहीं—लेकिन फ़ोर्नोल भाग्यशाली हैं। ऊपरी मंज़िलका उनका खण्ड या तो मकानके पार्श्वमें और पिछवाड़ेको है लेकिन पीछे क्योंकि आँगन और छोटा-सा बगीचा है इसलिए पिछवाड़ेकी ओर होना उसका गुण ही है। वहाँ शान्ति भी है और खुली हवा भी और खिड़कीसे बाहर झाँकनेसे नीचे हरियाली भी दिख जाती है।

नाटकीय झाँकीके अन्य पात्र वहाँ पहले ही हैं। श्रीमती फोर्नोल से परिचय हो जानेके बाद सभी लोग पास-पास दो टुकड़ियोंमें बँटकर बैठ जाते हैं जिनमें बात चीत अलग अलग भी चलती है और कभी-कभी आर पार भी—कभी मेरी टुकड़ीमेंसे लिडग्रेन पुकारकर दूसरी ओरके लोगोंसे कुछ कहते हैं और कभी दूसरी ओरसे नीर्वे जिनसे इस बीच कई बार मिलना हुआ था और एक समानशील-व्यसन भावकी स्थापना हो गयी थी हमारी टुकड़ीके लिए कुछ कुछ कह देते हैं। श्रीमती फोर्नोल विभिन्न प्रकारके पेय पदार्थोंके प्रबन्धमें व्यस्त हैं।

थोड़ी देरमें टुकड़ियोंके सदस्योंमें कुछ अदला-बदली हो जाती है। या शिष्ट बात-चीतका यह क्रम भी है कि थोड़ी थोड़ी देर सभीसे आलाप होता रहे पर यह मैं यहाँ भाँप रहा हूँ कि फोर्नोल और नीर्वे जो मेरे पास आ गये हैं वह इसलिए कि बात-चीतका स्तर बदलनेके लिए वे योजनानुसार आगे बढ़ रहे हैं।

बात चीत धीरे धीरे गम्भीरतर होती गयी है और बीच-बीचमें नीर्वे अथवा मेरी ओरसे कुछ ऐसे प्रश्न भी बात चीतमें झोंक दिये गये हैं जिनसे शीघ्र ही उसमें उबाल आने लगे। लिडग्रेन बड़े उत्साहसे बहसको आगे बढ़ा रहे हैं, ऐसा तो नहीं लगता लेकिन उसमें भाग तो वह रुचिसे ही

ले रहे हैं। इससे साहस पाकर और परिस्थितिको अनुकूल समझकर फोर्नेल कहते हैं : हमारे भारतीय बंधु आपसे दो एक विशेष प्रश्न पूछना चाह रहे थे—हम लोगोंमें इस तरहकी चर्चाएं होती रही हैं और इस विचार विनिमयमें हम सभीको दिलचस्पी है।'

लिंडग्रेन अनुमति-सूचक भावसे मेरी ओर देखते हैं।

ऐसा प्रश्न करते मुझे संकोच तो होना लेकिन आप मानेंगे कि सच मच ऐसी जिज्ञासाएं मेरे मनमें रहीं और मैं चाहता रहा हूं कि अपने यूरोप प्रवासका उपयोग उनका उत्तर पानेके लिए करूं। एक तो मैं यह पूछना चाहता हूं कि एक लेखक या कविके नाते वह कौन-सा प्रश्न है जो आपको सबसे अधिक विचलित या व्याकुल करता है? प्रश्न पूछकर मैं उत्सुक भावसे लिंडग्रेनके चेहरेकी ओर देखता हूं।

कोई आवश्यक नहीं है कि प्रश्नका उत्तर मुझे मिले ही। उसे हंसकर भी टाल दिया जा सकता है या उसके उत्तरमें वाक्चातुर्यका कोई पैंतरा दिखाया जा सकता है। या यह प्रतिप्रश्न किया जा सकता है कि आप अपनी ओरसे उदाहरण देकर प्रश्नको स्पष्ट कीजिए। ऐसा कोई भी उत्तर या पैंतरा मेरे लिए विस्मयका कारण न होता क्योंकि सभी तरह की प्रतिक्रियाएं मैं पहले देख चुका हूं।

किन्तु लिंडग्रेनकी प्रतिक्रिया मेरे लिए सर्वथा अप्रत्याशित है।

वह थोड़ी देर अपने गिलासके पारसे अपलक आंखोंसे मेरी ओर देखते रहते हैं। फिर सहसा गिलासको मेजपर पटकते हुए आगेको झुक आते हैं उनका चेहरा भी गिलासके तरल पदार्थ-सा सनसना उठता है और रागात्मक स्वरमें वह पूछते हैं : आप कौन होते हैं ऐसा प्रश्न पूछने वाले? अगर मैं ही आपसे ऐसा सवाल पूछूं तो क्या आप जवाब देनेका साहस करेंगे? अगर मैं ही पूछूं कि आप मृत्युसे डरते हैं कि नहीं तो आप सही-सही उत्तर देंगे?

यह आवेग अप्रत्याशित है। तो भी बुरा क्या है? खरी-खरी बात

यान करने लगते हैं। तालियाँ फिर अलग-अलग हो जाती हैं—कभी दो कभी तीन कभी सारे तीन—और लोग स्थानान्तरित होते रहते हैं।

थोड़ी देर बाद फिर ऐसा संयोग होता है कि फोर्नेल दम्पति और मैं अपनेको अन्य व्यक्तियोंसे कुछ अलग खड़े हुए पाते हैं। फोर्नेल श्रीमती स्वरसे क्षमा-याचनाके भावसे कहते हैं... मन ऐसा नहीं सोचा था—आप बुरा न मानेंगे—उनका आशय आपका अपमान करनेका नहीं है—वास्तवमें उनका स्वभाव ऐसा डायनमिक है कि—

श्रीमती फोर्नेल तत्परतासे कहती हैं... देर हो रही है मैं रसोईमें जाकर कुछ खानेको थोड़ा प्रबन्ध करूँ। मैं दोनोंको आश्वासन देते हुए कहता हूँ... नहीं-नहीं बुरा माननेकी कौन-सी बात है। कोई जरूरी तो नहीं है कि प्रश्नोंका उत्तर दिया ही जाय। बल्कि मैं तो सोचता हूँ कि उनकी यह अतिरंजित प्रतिक्रिया भी अर्थ रखती है—मेरे लिए तो सारी बात चीत अत्यन्त रोचक है।' फिर कुछ और हँसकर... स्कॉटी नराब घराके गाने मुझे नहीं आते नहीं तो मैं जरूर उनका साथ देता।

ये तीनों एक तरफ खड़े धीमे धीमे क्या बातें कर रहे हैं? जरूर कुछ गम्भीर बात होगी जो कि नहीं होने देती है। लिंडग्रेन तत्क्षण उठकर हम लोगोंके पास आते हैं और श्रीमती फोर्नेलसे पूछते हैं... तुम नहीं गानेमें साथ दोगी? और फोर्नेलका हाथ पकड़कर घूम घूम कर गाने लगते हैं।

श्रीमती फोर्नेल कुछ खानेका प्रबन्ध करने रसोईकी ओर चल देती हैं। हम तीनों फिर आकर सबमें मिल जाते हैं।

थोड़ी देर बाद फिर न जाने कैसे ऐसा होता है कि मैं और नोर्वे औरोंसे अलग हो जाते हैं और बातें करने लगते हैं। लिंडग्रेनकी पीठ हमारी ओर है और वह खिड़कीसे बाहर झाँकते हुए गा रहे हैं और हँस रहे हैं। फोर्नेल मुझे कुछ कहते हुए रसोईके गलियारेकी ओर बढ़ते चले जाते हैं जिसका अभिप्राय समझकर मैं भी... आइ बग योर पार्डन?

कहता हुआ उनके साथ-साथ चलता हूँ और लोग भी पीछे-पीछे चले आते हैं।

हम लोग केवल पान और बात-चीतके लिए आमन्त्रित थे, भोजनके लिए नहीं। लेकिन बात-चीत लम्बी और निर्भ्रान्त होती चली गयी है और निस्सन्देह न हम उठनेवाले हैं न और किसीको जाने देनेवाले हैं। इसलिए श्रीमती फ्रॉस्टका कुछ खानेका सामान जुटानेके लिए व्यस्त होना स्वाभाविक ही है। यूरोपीय घरोंमें ऐसा कम होता है कि चार-छः व्यक्तियोंके खाने लायक सामान घर ही मेंसे निकल आये। सामान जमा रखनेकी आवश्यकता भी कभी नहीं पड़ती और न मेहमान ही कभी ऐसा संकट उत्पन्न करते हैं। दो-एक डिब्बे खोलकर श्रीमती फ्रॉस्ट बिजलीके चूल्हेपर जल्दी-जल्दी सॉसेज और आलू तल रही हैं—इनके साथ रोटी और मक्खनसे कुछ-न-कुछ काम तो चलेगा ही। इस बीच थोड़ी-बहुत और व्यवस्था हो जायगी।

फ्रॉस्ट रसोईकी दहलीज़के पास खड़े रोटी भी काट रहे हैं और हम लोगोंसे बात-चीत भी करते जा रहे हैं। हम लोग घूम-फिरके अन्तमें आस-पास ही भटकते रहते हैं। महायुद्धमें स्वीडन तटस्थ रहा। तटस्थताको राजनैतिक दृष्टिसे उसने उचित माना और अब भी उचित मानता है। किन्तु अपने जाति-भाइयोंपर जो अत्याचार होते उसने देखे उससे उस तटस्थताको लेकर एक अपराधी भाव भी कहीं उसके अवचेतनमें आ गया है। नात्सियोंका आक्रमण और उत्पीड़न डेनमार्कने सहा, नार्वेने सहा—अमानुषी अत्याचार सहकर भी दोनों हार गये, टूटे नहीं। और उनके निकटतम सम्बन्धी उदार जाति-भाई उनके सगे स्वीडी यह सब देखते रहे और तटस्थ बने रहे! क्या यह तटस्थताका या अहिंसाका आदर्श ही था, या कि स्वार्थको आदर्शकी ओट मिल गयी थी? तटस्थता आदर्श भी रही हो सकती है किन्तु कितना सुविधाजनक था वह आदर्श! क्या उस सुविधाकी आड़में कहीं मृत्यु-भय भी छिपा हुआ नहीं था? स्वीडी प्रबुद्ध वर्गमें ये

प्रश्न उनसे आम नहीं पूछ जाते किन्तु उनका चेतनामें कहीं गहरेमें ये बने हुए हैं। विशेष रूपसे उस वर्गके उन प्रबुद्ध व्यक्तियोंमें जिन्होंने युद्धारम्भसे कुछ ही पूर्व वयस्कता पायी या जो उत्तर युद्ध-कालमें साहित्यिक-जगतमें प्रमुख स्थानोंपर रहे अर्थात चालीसी वाली पीढ़ीमें ही यह भाव तीव्रतम होना चाहिए क्योंकि ये ही लोग युद्धके पिछले वर्षोंमें सार्वजनिक जीवनमें सामने आये थे उन्हींके भीतर यह नैतिक संघर्ष हो सकता था कि सार्वजनिक जीवनमें प्रतिष्ठित स्थान पायें या कि उसे छोड़कर अपने सगे हलिया और नार्वेजियाके लिए कुछ करें—उन सगोंके लिए जो कि गुप्त रूपसे नात्सियोंके प्रतिकारक संगठन कर रहे थे और अतिरिक्त जोखम उठा रहे थे।

हम लोगोंकी बात चीत धीरे धीरे हो रही थी। लेकिन उसकी पृष्ठभूमिमें अमुखर स्तरपर मैं अपने-आपसे भी बात चीत करता जा रहा था कि क्या लिङग्रनके मनमें भी भीतर कहीं ऐसा संघर्ष न होगा—आत्मग्लानिका यह भाव न होगा? अगर उनकी पीढ़ीके लेखकोंमें अधिकतरमें इसके चिह्न हैं तो वह स्वयं तो उस पीढ़ीके प्रमुख व्यक्तियोंमें रहे तेजस्वी स्वभावके रहे डायनमिक चरित्रके रहे—अर्थात उनका व्यावहारिक जीवन उनकी रागवृत्तियोंके अधिक दबावमें रहा क्या उनका गम्भीर बात चीतसे इनकार करना ही एक गम्भीरतर आलापकी भूमिका नहीं है?

उस समय ये विचार इतने स्पष्ट रूपसे मेरे सामने नहीं आ रहे थे केवल उनका धुंधला आभास था। स्पष्ट तो वे क्रमशः होते गये ज्यों-ज्यों इस नाटकीय वार्तालापमें एक-एक कड़ी जुड़ती गयी। या फिर अनन्तर जब जब नीर्ये अथवा पोर्नेल्न उनकी चर्चा करके चिन्तित भावसे यह आशा प्रकट की कि मैं लिङग्रनके व्यवहारको मनमें न लाऊंगा।

किन्तु यहाँ तो अभी और बाधाएं होनेको थीं। गलियारेमें भारी पदचाप सुनकर हम मुड़े तो लिङग्रनका स्वर आया यहाँ रसोईमें क्या साजिश हो रही है? जो कुछ है हम तो यहीं खायेंगे।

गो व्यक्तियोंको साथ लिये हुए वह रसोईमें प्रविष्ट हो रहे थे। छोटेसे रसोई घरमें हुल्लड़-सा वातावरण हो गया था। हम लोग फिर बैठककी ओर लौट गये और थोड़ी देरमें श्रीमती फ्रोर्लिंग अपने पति और डायनमिक अतिथिको साथ लिये हुए भोजन-सामग्री ले आयीं।

रातके अर्थात भोरके अर्थात मध्य रात्रिके धुंधले दिनके दो बजे जब गोष्ठी समाप्त हुई तब भी लिण्डमनके गानोंका भण्डार अभी चुका नहीं था। मैं टामसे भी अपने होटल जा सकता था, किन्तु नीर्ये टक्सीमें मुझे पहुँचाने आये क्योंकि उन्हें रास्तेमें एक बार फिर क्षमा माँगनी थी। दूसरी ओर मैं कुछ इसलिए चिन्तित था कि दूसरे-तीसरे दिन जब लिण्डमैन स्वयं पूरी गोष्ठीके बारेमें विचार करेंगे तब उन्हें कैसा लगेगा? उस समयका अन मनापन और बेरुखी क्या अनन्तर उन्हें और भी अनमना न बनायेगी?

लाम्कीप झाँकी यहीं समाप्त होती है। भरत-वाक्यकी आवश्यकता नहीं है। यह सूत्रधार नाटकका नहीं था केवल कथाका था, और उसका भरत-वाक्य तो नीरवता ही हो सकती है। या वह इतना कह सकता है कि इस झाँकीकी स्मृति उसे अब भी स्फूर्ति देती है वही स्फूर्ति इससे पाठक को भी हो।

लोकोत्तर

अन्तहीन वन-प्रदेश और अन्तहीन दिन — अन्तहीन उज्ज्वल आकाशमें प्रकाशकी लहरोंकी अन्तहीन वर्षा। मानव अब पशु नहीं रहा है और उसके सोने-जागने और कर्म करनेका समय प्रकाश और अन्धकार, सूर्योदय और सूर्यास्तके प्राकृतिक अनुक्रमसे मुक्त हो गया है, लेकिन फिर भी हमारे जाने-अनजाने भी दिन और रात हमारी नैसर्गिक शक्तियोंको एक ताल-छन्दमें बाँधे रहते हैं। यहाँ स्वीडनके ग्रीष्मकालमें मेरे लिए उस ताल-छन्दमें कुछ व्यतिक्रम हो गया है और उसकी लय अनिश्चित हो गयी है। कभी बीस-चौबीस-तीस घण्टे तक नहीं सोता हूँ, क्योंकि साँझ ही नहीं होती तो रातका बोध कहाँसे होगा! फिर कभी अचानक पाता हूँ कि नींद सहसा आँखोंको ही नहीं, अंग-प्रत्यंगको विवश किये दे रही है, जब कि घड़ी देखनेपर पाता हूँ कि दोपहरके बारह बजे हैं, या अपराह्ण पाँच-छः बजेका समय है। दिन और रातके बोधसे वंचित, ऐसे भी अनियमित अन्तरालके बाद जब भी सोया हूँ—सो सका हूँ—तो कमरेकी खिड़कियाँ बन्द करके और दुहरे तिहरे पर्दे खींचकर! अब समझमें आ गया है कि क्यों यहाँ सदन खिड़कियोंमें सजावटी पर्दोंके बाद एक और बहुत मोटा काला पर्दा भी रहता है, जैसा पुराने ढंगके फोटोग्राफर कमरेपर डालनेके लिए रखते थे। इस महीनों लम्बे दिनमें बिना ऐसे उपायोंसे कृत्रिम रात कर लिये बिना तो सोना ही सम्भव न होगा। एक बार मैंने किसीसे ग्यारह बजे मिलना था (दिनके ग्यारह बजे) किन्तु नींदसे जागकर मैंने देखा कि दोपहरके दो बजे हैं—या यह आश्चर्यकी बात नहीं थी, क्योंकि जिस समय सोया था उस समय भोरके चार बजे थे—भोर अभ्यासवश कहता हूँ, यह नहीं कि उससे पहले रात हुई थी।

स्टाकहोममें फिर भी दिन और रातका कुछ अन्तर पहचाना जाता था। प्रकाश तीखा और फीका होता रहता था। किन्तु उत्तरकी ओर बढ़ते हुए यह अन्तर कमसे कमतर होता गया है और अब अन्तहीन वन प्रदेशपर बरसती हुई अन्तहीन धूप ही रह गयी है।

स्टेशनका नाम ही ध्रुववृत्त है। गाड़ी वहाँसे आगे बढ़ती है और खड़ियासे खिंची हुई एक लम्बी रेखा पार कर जाती है। यही ध्रुव प्रदेशकी मेखला है। जैसे देशोंके सीमान्त मर्यादा-स्तम्भों और खड़ियाकी लकीरसे चिह्नित किये जाते हैं वैसे ही यह मेखला अंकित कर दी गयी है। सीमाके पार, गोलोकम हम मानो लोकोत्तर प्रदेशमें आ गये हैं— वन-खण्डका अभी अन्त नहीं है किन्तु उन्हींके बीच-बीच जहाँ-तहाँ बीहड़ सूखे प्रदेश आ जाते हैं, कभी छोटी-बड़ी झीलें, कभी सद्य गलित बर्फकी कीच।

और इस प्रकार किरूनाके बसर प्रदेशको, जहाँ लोहेकी खानें हैं और जहाँ चित्रकार वानगोगने आरम्भिक अज्ञात जीवनके कुछ वर्ष बीते थे, पार करते हुए लापोनिया (लापलैण्ड) के भीतर आबिस्कोका छोटा स्टेशन। लाप जातिके वनोंमें छिपे हुए गाँव भी अधिकतर पीछे रह गये हैं। पालतू और जंगली मृग (एक प्रकारका बलिष्ट बारहसिंघा जिसे लाप लोग खाते भी हैं और गाड़ियोंमें जोतते भी हैं) भी अब स्वच्छन्द विचरण करता हुआ नहीं दीखता। आबिस्को, तोर्ने त्रास्क नामक एक विशाल झीलके किनारे पर बसा हुआ है। झील प्रायः सत्तर मील लम्बा है और सन्नारियोंके लिए इसके आकर्षणके अनेक कारण हैं। एक तो आस-पासके शिखरोंके आरोहण अथवा बर्फीली ढलानोंपर स्कीकी दौड़के लिए यह बहुत अच्छा केन्द्र है। दूसरे जिन विशेषियोंकी लापोनियाके लोक-जीवनमें विशेष दिलचस्पी है व

यहाँसे झील्के पारकी स्लाप वस्तियोंमें आ सकते हैं—ये वस्तियाँ सभ्य जीवनके आवागमन और हलचलसे अपेक्षया अधिक दूर और सुरक्षित हैं और वहाँके लोक-जीवनकी परिपाटी शहरी रीतियोंसे कम प्रभावित है। तीसरे—और कदाचित् यही आकर्षण सबसे अधिक संख्यामें यात्रियों को खींचता है—यहाँसे झीलके पार मध्य रात्रिका सूर्य बहुत सुन्दर दीखता है।

मध्य रात्रिका सूर्य क्या और कैसे होता है, इसे गणितसे और रेखा चित्रोंसे समझाया जा सकता है। उसका सिद्धान्त विशेष कठिन नहीं है। किन्तु वह कैसा होता है, किसी भी वर्णनसे यह अवगत कराना कठिन है। धीरे धीरे क्षीणतेज होता हुआ वह क्षितिजके निकट आता जाता है किन्तु कुछ ऊपर ही रहकर मानो अपना विचार बदल लेता है, फिर और डूबता नहीं बल्कि लगभग क्षितिजके समान्तर उत्तरकी ओर बढ़ता चलता है। फिर धीरे धीरे उत्तरसे पूर्वकी ओर जाता हुआ वह धीरे धीरे ऊपर उठने लगता है। इस प्रकार सूर्योदय और सूर्यास्त नहीं होता, केवल रातके ग्यारह बजके लगभग सूर्य पश्चिमोत्तर दिशामें क्षितिजके निकट आ जाता है और भोरके तीन बजके लगभग पूर्वोत्तर दिशासे फिर ऊपर उठना प्रारम्भ करता है। यह स्थिति आबिस्कोकी है जो ध्रुवमण्डलके भीतर तो है, पर फिर भी ध्रुवसे कुछ दूर तो है ही। ठीक ध्रुवपर तो स्थिति और भी अद्भुत होती होगी क्योंकि वहाँका पूर्व और पश्चिम तो मिट ही जाते होंगे और उत्तर दक्षिण भी एक कल्पना भर रह जाते होंगे—सूर्य केवल एक सम रेखामें उठता और उतरता रहता होगा।

आबिस्कोके टूरिस्ट होटलसे तोर्ने त्रास्कके पार जिस दिशामें आधी रातका यह सूर्य दीखता है, वहाँ अस्ताचल पदाकांक्षी कोई पर्वत भी नहीं है। वहाँसे बायें, अर्थात् दक्षिणमें, ऊँचे शिखर हैं और दाहिने अर्थात् उत्तरको एक लम्बी पर्वत शृंखला है, किन्तु क्षितिजका ठीक वह अंश खुला है। इससे सूर्य और भी स्पष्ट दीखता है और जब उत्तरकी ओर

सरकता हुआ थोड़ा थोड़ा लगता जाता है तब मानो गिरि-शृंखलाकी रीढ़ पर लुढ़कता हुआ आता है—यद्यपि ऊपरसे नीचेको नहीं नीचेसे ऊपर की ओर।

तीन दिन तक प्रति दिन व्यालूके बाद—घड़ी या सूर्य ही भोजनका समय बताती थी!—झीलके किनारे या अपनी खिड़कीमें बैठकर घण्टों सूर्यको देखता रहा। ग्रीष्मकालीन सूर्य होनेपर भी ध्रुवमण्डल होनेके कारण उसकी चौंध अधिक नहीं होती थी और रातमें तो उसे बिना कष्टके देखा जा सकता था। मैं क्योंकि ठीक उत्तरायणके समय नहीं गया था बल्कि उसके कुछ दिन बाद ही, इसलिए मुझे कुछ और भी सुविधा थी क्योंकि ठीक मध्य रात्रिके समय सूर्यके न डूबनेपर भी क्षितिजपर कुछ सन्ध्याकालीन पीली अथवा लाल रंगत आ जाती थी और दो-तीन घण्टेके लिए सारे परिदृश्यपर और विशेष रूपसे झीलपर जादू छा जाता था। फिर दो-तीन घण्टेकी नींदके बाद प्रातराशका समय हो जाता था और उसके बाद घूमने किसी शिखरपर चढ़ने, या नदी-नालेके स्रोतका अनुसन्धान करने, या मोटर-बोटमें झीलकी सैर करनेका मोह बहा ले जाता था। वास्तविक नींद दोपहरके भोजनके बाद ही हो पाती थी जिसके बाद फिर शामकी सैर और रातका सूर्य-दर्शन। यहाँ भी काँचकी दोहरी खिड़कियाँ और उनके भीतर दोहरे पर्दे थे। दोहरी खिड़कियाँ गर्मियोंमें धूपको और जाड़ोंमें ठण्डको रोकनेका काम देती हैं।

छोटे-छोटे पेड़—यहाँ इतना अधिक हिम-पात होता है कि बड़े पेड़ बच ही नहीं सकते—और चट्टानोंके बीचमें घूमती और किलोलें करती आती हुई फेनोज्ज्वल नदी। थोड़ी आगे ही वह झीलमें विलीन हो गयी है किन्तु यहींपर इसका प्रवाह कैसा दुर्दान्त और उल्लास भरा जान पड़ता है! ऊपर कुछ ही मील दूरसे यह आयी है—इसी पासके पर्वतकी ओटमें

तो आबिस्कोयारका वह हिम-सरोवर है जिससे गल-गल आबिस्कोयोक नदीका उद्भव होता है। वहाँसे एक शान्त उन्मत्त यहाँसे दूसरा सुन्दर झीलमें विसर्जन—(ताने यह अभी जमी हुई नहीं है यद्यपि तैरते हुए हिमखण्डोंसे भरी है किन्तु शीघ्र ही फिर जम जायगी)—निश्चित अनभिज्ञता के बीच कैसा उद्दाम गतिमय जीवनानन्द! धरातर झुकी हुई जिस चट्टान पर बैठकर मैं फहराता हुई उसकी पनचाक्की देख रहा हूँ उसके ऊपर और मेरे आसपास मेरे पीछे वन प्रदेशमें झिल्लीकी झंकार और मच्छरोंकी गुंजार हो रही है। ध्रुव प्रदेशमें मच्छर!—क्षणिक नाना प्रकार के कीट पतंगों (और तितलियों) का लघु जीवन भी मध्य रात्रिके सूर्य वाले कुछ सप्ताहोंका ही तो जीवन है! वर्षका सन्नाटा टूटनेपर अचानक उसका उदय होता है और फिर उतना ही अचानक वह निःस्वर मौन हो जाता है और फिर नयी बर्फका सन्नाटा उसका अंतिम चिह्न भी मिटा देता है।

झिल्लीका अविरत उल्लास
देता है संकेत कहीं क्या उसे
मृत्यु है कितनी पास ?

सवेरे आबिस्कोजार तक हो आया हूँ। बल्कि प्रातराशके लिए वहीं अपने साथ कुछ ले गया था। बर्फके नालेसे निकलते हुए पानीको देखता हुआ दूर तक बढ़ता रहा फिर नीचेकी ओर लौटते हुए आधे रास्तेमें एक काठके पुलपर खड़ा होकर नदीका प्रवाह देखा और फिर धाराके पारकी वन-वीथीमें बिखरे पेड़ोंके तनोंके अनमन आकारोंपर विस्मय करता रहा। पानी और बर्फके वार लम्बे काल काठको कैसे कैसे अनभिन्न रूप दे देते हैं—या यों कहें कि प्रतिकूल प्रकृतिके सब आघात सहता हुआ प्राकृत जीवन कैसे अपनी रक्षाके नये-से-नये और अद्भुत-से-अद्भुत मार्ग निकालता रहता

है इन रूपोंको हम विकृत भी कह सकते हैं लेकिन जो अदम्य जिजीविषा इतने आश्चर्यजनक रूपोंमें प्रकट होती है उसे हम विकृत कैसे कहें? वह उन्हें गोठा और मरोड़ा और कुण्डलाके, रंग बिरंगी काहियाँ और निम्न कोटिके उद्भिज और भी विचित्र रूपोंमें सजा देती है।

आबिस्कोयोक्कके किनारे किनारे होटल तक लौट आया हूँ किन्तु विश्राम करनेका मन नहीं है। कुछ भी मन नहीं है एक अशान्ति है जो शिखरोंके एक बर्फीले एकान्तकी ओर बुला रही है। मैं जानता हूँ कि अपना एकान्त ही एक अदम्य-चिरन्तन समस्याके रूपमें मेरे सामने है और मेरी अशान्तिका कारण है लेकिन मानो यह भी जानता हूँ कि उस एकान्तमें भागकर इस अशान्तिसे बचना सम्भव नहीं है बल्कि उसका साक्षात करके ही। अकेला भी अन्ततोगत्वा कितना अकेला है? दो हिमजड़ित अवस्थाओंके बीच नदीका यह उल्लास ही क्या उसके एकान्तका साथी नहीं है? क्या जीवनका निर्वैयक्तिक आनन्द ही व्यक्तिका सर्वोत्तम सखा नहीं है?

इन अस्पष्ट निरूपित जिज्ञासाओंका उत्तर होटलमें नहीं है, सलानी समाजमें नहीं है। मन दोपहरके लिए भी कुछ खानेको साथ लिया और नुआ या निस्सकी चढ़ाई चढ़ने लगा।

पहले वन प्रदेश। अपनी ही ग्रन्थियोंसे उलझे हुए वृक्ष और छोटे और कुण्ठित होते हुए धीरे धीरे लुप्त हो जाते हैं और उनका स्थान धयवती झाड़ियाँ ले लेती हैं। फिर और ऊपर—झाड़ियाँ भी चुक जाती हैं और घास ही घास रह जाती है। बीच-बीचमें सन्ध्या पर उसमें धँस जाते हैं नीचे पोली मिट्टी और पानी है—बर्फको गले अधिक समय नहीं हुआ है। और ऊपर—घासकी हरियालीमें बीच-बीचमें कीचड़ छोटे-छोटे नाले—चट्टानोंकी आड़में इन स्थलोंपर बहुत बर्फ जमी रहती है और शायद इस कीचड़ सूखते-न-सूखते इसपर दुबारा नयी बर्फ पड़ जायगी। और ऊपर घास भी खत्म हो गयी है और चट्टानोंकी ओटमें या बड़ी-बड़ी दरारोंमें अभी बर्फ जमी हुई है और धीरे धीरे पिघल रही है।

मैं शायद पथसे भटक गया हूँ। लेकिन शिखरकी चढ़ाईमें पथ क्या और भटकना क्या। ऊपर शिखर है—ऊपर आकाशकी ओर होता है। नीचे बस्ती है, नीचे ही तो है और अभी तो दीख भी सकती है—कहींसे भी, किधरसे भी उतर जाने हीसे तो वहाँ पहुँचा जा सकेगा।

और ऊपर। अब बस्ती भी नहीं दीखती। चढ़ाई कुछ कम हो गयी है। और यह शिखर तो नहीं जान पड़ता, लेकिन कम ढालकी भूमि आ गयी है, आकाशको छोड़कर सब कुछ इसी ढालकी चट्टानोंकी ओट हो गया है। मैं और आकाश और दुर्गम चढ़ाई। और अनिश्चित किन्तु मनमें दृढ़तापूर्वक धारण किया गया एक शिखर जो मेरा लक्ष्य है

एक दिन जब
सिवा अपनी व्यथाके कुछ
याद करनेको नहीं होगा—
क्योंकि कृतियाँ दूसरोंके याद करनेके लिए हैं
एक दिन जब
दे न पाया जो उसीकी नोक
बस सालती रह जायगी—
क्योंकि दे पाया अगर कुछ याद उसको आज
मैं करता नहीं हूँ और
जीवन! शक्ति दो
उस दिन न चाहूँ याद करना

एक दिन
उस दिन
जिसे अपनी पराजय भी
दे सकूँगा समुद, निःसंकोच
उसीको
आज
अपना गीत देता हूँ।

शिखर नहीं था, पठार था। थोड़ी-सी ऊँचाई, उसपर नहीं था केवल हवा द्वारा बर्फकी धूलसे मँजी हुई एक समतल भूमि। लेकिन एकान्तमें आकाश विचुम्बित समतल भूमि।

मैं भटक गया था, पर खोया नहीं। लौट आया। राहमें उतरते हुए एक आध जगह घुटनों तक बर्फमें धँस गया, फिर वहीं बैठकर बर्फके गोले बनाकर अपने-आपसे खेलता रहा। फिर अन्तमें लौट आया।

आबिस्को ध्रुव-मण्डलके भीतर और स्वीडनकी उत्तरी सीमाके निकट तो है ही, उसके पास ही तीन देशोंकी सीमाएँ मिलती हैं, यह भी उसके आकर्षणका एक कारण है। झीलके किनारे किनारे और तुओल्या शिखरके पश्चिम आगे बढ़ते हुए अगला स्टेशन रिक्सग्रांसेन है जो स्वीडन का अन्तिम पड़ाव है। इसके बाद लाइन वास्तविक सीमान्त पार करके नार्वेके प्रदेशमें प्रवेश करती है और नार्विक नामक बन्दरगाह तक जाती है। एक ही दिन आगे जाकर लौट आनेवालोंके लिए सीमान्तकी पुलिस पासपोर्ट और वीसाकी विशेष चिन्ता नहीं करती और आबिस्को अथवा रिक्सग्रांसेनसे सैलानी बहुधा नार्वेका वीसा न रहनेपर भी नार्विक तक हो आते हैं। नार्वेका वीसा मैंने भी नहीं लिया था और यह भी जानता था कि नार्विकमें कमसे कम रात भर न रहना हो तो वहाँ जाना लगभग व्यर्थ है, फिर भी सीमा पार करके अपने देखे हुए देशोंमें एक और नाम जोड़ लेनेका बचकाना आकर्षण मुझमें भी था और मैं रिक्सग्रांसेनसे तीन स्टेशन आगे जाकर वापिस लौट आया। एक और देश छू आनेके दावेके अतिरिक्त इस यात्रामें कोई उल्लेखनीय बात नहीं थी। दृश्यका निरन्तर परिवर्तन होते रहनेपर भी परिदृश्य वही था। एक ओर पहाड़का पार्श्व और चट्टानें, बीच-बीचमें बन जाती रक्षी पटरीपर सुरंगोंके द्वार, पिघली बर्फके नाले, नीचे बनी छोटे-छोटे गहरे ताल और कभी जमी

मैं शायद पथसे भटक गया हूँ। लेकिन शिखरकी चढ़ाईमें पथ क्या और भटकना क्या। ऊपर शिखर है—ऊपर आकाशकी ओर हो तो है। नीचे बस्ती है, नीचे ही तो है और अभी तो दीख भी सकती है—बस भी, किधरसे भी उतर जाने होंस तो वहाँ पहुँचा जा सकेगा।

और ऊपर। अब बस्ती भी नहीं दीखती। चढ़ाई कुछ कम हो गयी है। और यह शिखर तो नहीं जान पड़ता लेकिन कम ढालकी भूमि आ गयी है, आकाशको छोड़कर सब कुछ इसी ढालकी चट्टानोंकी ओट हो गया है। मैं और आकाश और दुर्गम चढ़ाई। और अलक्षित किन्तु मनमें दृढ़तापूर्वक धारण किया गया एक शिखर जो मेरा लक्ष्य है

एक दिन जब
सिवा अपनी व्यथाके कुछ
याद करनेको नहीं होगा—
क्योंकि कृतियाँ दूसरोंके याद करनेके लिए हैं
एक दिन जब
दे न पाया जो उसीकी नोक
बबस सालती रह जायगी—
क्योंकि दे पाया अगर कुछ याद उसको आज
मैं करता नहीं हूँ और
जीवन ! शक्ति दो
उस दिन न चाहूँ याद करना

एक दिन
उस दिन
जिसे अपनी पराजय भी
दे सकूँगा समुद, निःसंकोच
उसीको
आज
अपना गीत देता हूँ।

शिखर नहीं था, पठार था। कोई नोकीली ऊँचाई उसपर नहीं थी केवल हवा द्वारा बर्फकी धूलसे मजी हुई एक समतल भूमि। लेकिन एकान्त में आकाश विचुम्बित समतल भूमि।

मैं भटक गया था, पर खोया नहीं। लौट आया। राहमें उतरते हुए एक आध जगह घुटनों तक बर्फमें धँस गया फिर वहीं बैठकर बर्फके गोले बनाकर अपने-आपसे खेलता रहा। फिर अन्तमें लौट आया।

आबिस्को ध्रुव-मण्डलके भीतर और स्वीडनकी उत्तरी सीमाके निकट तो है ही उसके पास ही तीन देशोंकी सीमाएँ मिलती हैं यह भी उसके आकर्षणका एक कारण है। तोर्ने नास्क झीलके किनारे किनारे और नुआन्या शिखरके पाससे आगे बढ़ते हुए अगला स्टेशन रिक्सग्रान्सेन है जो स्वीडन का अन्तिम पड़ाव है। इसके बाद लाइन वास्तविक सीमान्त पार करके नार्वेके प्रदेशमें प्रवेश करती है और नार्विक नामक बन्दरगाह तक जाती है। एक ही दिन आगे जाकर लौट आनेवालोंके लिए सीमान्तकी पुलिस पासपोर्ट और वीसाकी विशेष चिन्ता नहीं करती और आबिस्को अथवा रिक्सग्रान्सेनसे चलनेवाली बन्या नार्वेका वीसा न रहनेपर भी नार्विक तककी सैर कर आते हैं। नार्वेका वीसा मैंने भी नहीं लिया था और यह भी जानता था कि नार्विकमें कमसे कम रात भर न रहूँगा तो वहाँ जाना लगभग व्यर्थ है फिर भी सीमा पार करके अपने देखे हुए देशोंमें एक और नाम जोड़ लेनेका बचकाना आकर्षण मुझे भी था और मैं रिक्सग्रान्सेनसे तीन स्टेशन आगे जाकर वापिस लौट आया। एक और देश छू आनेके दावेके अतिरिक्त इस यात्रामें कोई उल्लेखनीय बात नहीं थी। दृश्यका निरन्तर परिवर्तन होते रहनेपर भी परिदृश्य वही था। एक ओर पहाड़का पार्श्व और चट्टानें बीच-बीचमें बर्फानी रुपहली प्रस्तरपर सुरंगोंके द्वार, पिघलता बर्फ नालेके नीचे कभी टप्-टप् गिरते बाल और कभी जमा

हुई झीलें। रिक्सग्रासन लौटकर स्टेशन उतर गया। स्टेशनके पास ही छोटी सी बस्ती है जिसका मुख्य सहारा सैलानी हैं। लाइनके दूसरी पार लीफ्ट वान (रस्सीका मार्ग) का निचला पड़ाव है जहाँसे बिजली द्वारा चालित हिंडोलेमें बैठकर पड़ावपर पहुँचते हैं। यह हिंडोलागाड़ी सैलानियोंके लिए आकर्षक भी है और उपयोगी भी। मेरे लिए तो स्वयं इसकी सैर और उपरले छोरके बर्फीले ढलानोंकी सैर अथवा वहाँसे दीखने वाले हिम सरोवरोंका दृश्य रोचक था लेकिन सैलानियोंके लिए इसकी उपयोगिता यह है कि ऊपरी छोर कई हिम मार्गोंका संगम है और वहाँसे कई ग्रामोंतक स्कीकी दौड़ करते हुए जाया जा सकता है। यह हिम पादुका अथवा ऊन-खड़ाऊँ पहनकर लोग इस स्थानसे जापानियोंके पर्वतीय मार्गोंका अन्वेषण आरम्भ करते हैं कुछ लौटकर यहाँ आते हैं तो कुछ दूसरी ओर आविस्कोसे नीचे जा उतरते हैं और कुछ नावेंयो पवन श्रेणियोंमें जा निकलते हैं। मेरे पास न इसके लिए समय था न मुझे स्कीका अभ्यास है मेरे लिए शिखरसे दूर तक दीखनेवाले दृश्य ही महत्त्वका था। हिंडोले-गाड़ीके ऊपरी ठियके और ठियसे नीचेके परिदृश्यके मैंने कई चित्र लिये और फिर वहीं चट्टानपर बैठकर दूरतक हिम-सरोवरोंके दृश्य देखता रहा। तीनों पासके झीलकी सतह तो पिघल चुकी थी और उसमें तैरते हुए हिम-खण्ड क्रमशः छोटे होते जा रहे थे किन्तु यहाँसे दूसरी झील भी दीखती थी जो अभी जमी हुई थी। मैंने कुछ रंगीन चित्र भी लिये लेकिन रंग वास्तवमें यहाँपर था ही नहीं—उजला और काला और उसके ऊपर एक हल्की धुँधली नीलिमा या कहीं-कहीं चट्टानोंपर हल्की-सी धूसर रंगत—रंगके नामपर इतना ही था। बाकी सूना विस्तार और प्रकृतिकी निर्विकल्प सत्तामयता।

बर्फ गिरते और गलते मैंने देखा है। हिम-नदियोंका आरम्भिक रिसना और पर्वतीय गर्जन मैंने सुना है। जमे हुए नदी-तल और ताल भी देखे हैं और उनपर चला भी हूँ जमी हुई पपड़ी टूट जानेसे ठण्डे पानीमें गोते

भी खा चुका हूँ। किन्तु पानीकी किसी वस्तुत बड़ी सतहका पिघलते हुए टूटना अभीतक आँखों नहीं देखा। उसके चित्र और ध्वनि-चित्र देखे-सुने हैं—ध्रुव प्रदेशीय बड़ी-बड़ी झीलोंकी सतहके भी और ध्रुवसागरके भी। कल्पनासे अवश्य उनके अनुभवमें प्रवेश कर सकता हूँ जिन्होंने उद्यम करके अथवा संयोगवश इनका अनुभव प्राप्त किया है किन्तु उसे प्रत्यक्ष अथवा इन्द्रियगोचर करनेकी लालसा अभी बनी है।

हिंडोलेपर बैठे-बैठे शून्यमें झूलते हुए और शिखरकी बर्फमें टहलता हुआ मैं इसी दृश्यकी कल्पना करता रहा हूँ। कैसा हो अगर अभी मेरे देखते देखते ही हिम सरोवरके निर्लिप्त तलके ऊपर और नीचेके तापमानका यह सूक्ष्म सन्धि-स्पर्श आ जाय जब कि बर्फ चटचटाकर टूट जाती है और असंख्य हिम-खण्ड सहसा नीली हो गयी सतहपर तैरने लगते हैं—जैसे कभी जाड़ेकी बदली फटकर तीतरपंखी रूप ले लेती है और उसके बीचमेंसे आकाशकी नीलिमा झाँकने लगती है। तीन मासमें वा यह हो चुका था इन ऊपरी सरोवरोंमें किसी दिन भी उसकी सम्भावना हो सकती थी। या कि ऐसा भी हो सकता है कि कोई सरोवर जमा ही रह जाय और उसके पिघलनेसे पहले ही नया हिमपात होने लगे? ऐसा भी तो होता है कि इसी प्रकार स्थायी हिम-तल्पर और हिम-पात होते होते निचला स्तर निर्लिप्त ही हो जाय। क्या उत्तरी ध्रुवके ठोस समुद्रोंने बहुत-से अंशमें इसी प्रकार निर्लिप्त होकर भूगर्भ पहुँचनेकी पात्रता नहीं पायी है?

यहाँ नव-पल्लवके प्रस्फुटनसे, मंजरीसे और पिक-रवसे वसन्तागम जाना जाता है। किन्तु यहाँ न पत्ते हैं न उद्भिज्ज स्तरसे ऊपरके वनस्पति यहाँ वसन्तागमके कोई मूर्त लक्षण हो नहीं हैं, केवल बढ़ता हुआ प्रकाश और चमकी हुई ठण्ड एक-मात्र लक्षण होगा हिमतल्पका चटचटाकर टूटना—तोमार दुर्निवार चरणेर अलंघित पथ इस विजय नादके होनेतक वसन्तका आना अलक्षित ही होता रहेगा—उसकी पद-ध्वनि किसीकी पहचानी हुई नहीं होगी क्योंकि किसीकी सुनी हुई हो न होगी।

चट चट-चट कर सहसा तड़क गये हिम खण्ड
जमे सरसीके तलपर
लुढ़क-पुढ़ककर स्थिर
वसन्तका आना
—यद्यपि पहले नहीं किसीने जाना—
होता रहा प्रमाणित।

नयी किरणसे छुए शृंग हो गये सुनहले
बहते सारे हिम-द्वीप।

ये हेम मुकुट हैं केवल
दूर सूर्यके लीला स्मितसे शोभन
कौतुक-पुतले।

इन्हीं कौतुक-पुतलोंकी कल्पना करता हुआ और असंख्य प्रपातोंकी गूंज सुनता हुआ मैं लौट आया। हिम-सरोवर पिघला नहीं नीचेकी हिम शिलाकी तो बात ही दूर।

नीचेकी हिम शिला पिघलकर जिस दिन
स्वयं मिलेगी सरसी-जलमें
नव वसन्तको उस दिन
मेरा शीश झुकेगा।

क्योंकि तपस्या
चमक नहीं है
वह है गलना



हिमानी और हिम शिलित झील

[चित्रमें जो यन्त्र दीखता है वह भूम-गाडीसे यात्रियोंको शिखरपर ले जानेवाली चरखीको चलाता है]

चट चट चट कर सहसा तड़क गये हिम खण्ड
जमे सरसीके तल्पर
मुदृढ़ पुढ़ककर स्थिर
वसन्तका आना
—यद्यपि पहले नहीं किसीने जाना—
होता रहा अलक्षित।

नयी किरणने छुए शृंग हो गये सुनहले
बहते सारे हिम-द्वीप।

ये हेम मुकुट हैं केवल
दूर सूर्यके लीला स्मितमे शोभन
कौतुक-पुतले।

इन्हीं कौतुक-पुतलोंकी कल्पना करता हुआ और असंख्य पत्र निर्झरोंकी गूँज सुनता हुआ मैं लौट आया। हिम-सरोवर पिघला नहीं नीचेकी हिम शिलाकी तो बात ही दूर।

नीचेकी हिम शिला पिघलकर जिस दिन
स्वयं मिलेगी सरसी-जलमे
मय वसन्तको उस दिन
मेरा मौन झरेगा।

क्योंकि तपस्या
चमक नहीं है
वह है गलना



हिमानी और हिम शिलित झील

[चित्रमें जो यन्त्र दीखता है वह झूला-गाडीसे यात्रियोंको शिखरपर ले जानेवाली परखीको चलाता है]

हैमलेटका दुर्ग—एलसिनोर

कहा जा सके। वास्तवमें वहाँ परम्परागत और आधुनिक का ही विषय हो सकता है उससे पहलेकी सीढ़ियाँ वहाँ नहीं मिलेंगी। कदाचित् यही कारण है कि यूरोपके कुछ नये देशोंकी भाँति स्कैंडिनेवियाई देश भी लोक संस्कृतिके अवशेषोंके संरक्षणके लिए इतने अधिक यत्नशील रहते हैं।

इस प्रकार लोकोत्तर प्रदेशसे फिर साधारण भूमिपर आ गया। किन्तु लोकोत्तरकी गहरी छाप बनी रही। प्रायः पच्चीस वर्ष पहले जब जीवनमें जिस एक प्रश्नको लेकर बहुत सोचा करता था और किसी कृतिमें निरूपित करनेके अनेक प्रयत्न करता रहता था—कवितामें उपन्यासमें नाटकमें भी!—वह एक नये रूपमें उभर आया था। स्टाकहोममें लिफ्टसे कूदकर आत्महत्या करनेवालोंकी चर्चा जीवन और मरणके प्रसंगपर एक स्वीडी कविसे इच्छा विरुद्ध और उत्तेजित बहसने मेरे चिन्तनको फिर उसी प्रश्नपर केन्द्रित कर दिया था—एकाएक मृत्युसे साक्षात् होनेपर कैसा लगता है? अत्यन्त सूक्ष्म-काल तो ऐसी स्थितिमें केवल दुर्दान्त जीवन प्रेम (या कह लीजिए जीवन मोह) उभरेगा अस्तित्ववादी इसी सूक्ष्म क्षणका विश्लेषण करते हैं क्योंकि मृत्यु-साक्षात्का क्षण ही चरम जीवन बोधका क्षण है। किन्तु क्षणकी बात न सोचकर उस अवस्थाकी बात सोचूँ तब? मृत्युके साक्षात्के क्षणको नहीं काल-व्यापी परिस्थितिको अन्य सब परिस्थितियोंसे अलग करके एकान्त भावसे कैसे देखा और निबाहा जाय यह मैं बराबर सोचता रहा था और ऐसी परिस्थितिमें उत्पन्न हुए पात्रोंको और सब प्रभावोंसे अलग करनेके लिए मैं निर्जन द्वीपसे लेकर बन्द हो गयी सुरंग तक अनेक परिस्थितियोंकी कल्पना की थी। लापोनियाके हिम-निर्मित एकान्तने इस प्रश्नको फिर उभारा। और अन्तमें जब एक स्वीडीने विज्ञान दुःख और यातना सम्बन्धी एक प्रसंगपर बातचीतके सिलसिलेमें अपना एक अनुभव सुनाया तो सहसा मुझे लगा कि अपनी समस्याके हलके लिए

एक पोली-सी किरण मुझे दीखने लगी है। यह लेखिका कैंसरके एक दुःसाध्य रोगके साथ लापोनियाके एक पहाड़ी आश्रममें जाड़ा भरके लिए बन्दी हो गयी थी—अनपेक्षित हिमपातके कारण उस आश्रमके आने जानेके सब मार्ग बन्द हो गये थे। मृत्युकी प्रतीक्षा करता हुआ एक व्यक्ति और उसे देखता हुआ एक दूसरा व्यक्ति जो उस मृत्युका निवारण भी चाहता था और उसकी कामना भी करता था—मेरी समस्याका चरम रूप जिसमें यह समस्या सब ओरसे काटकर शून्यमें रख दी गयी थी सामने था!

किन्तु यह अनुभव भी लोकोत्तर है, और इस समस्याके शान्त-शान्त परिणाम भले ही दूसरोंके सम्मुख प्रस्तुत किये जा सकते हों, इस समस्याके साथ कृतिकारकी यात्रा भी एक लोकोत्तर और वर्णनातीत यात्रा है। युधिष्ठिरकी अन्तिम हिमालय-यात्राका वर्णन व्यासने किया है उनके लिए यह बताना सम्भव था कि कैसे पत्नी और भाई एक-एक करके परिश्रमसे हारते गये। किन्तु अगर युधिष्ठिर इसका भाष्य लिखने बैठते तो वह दूसरा होता! न केवल दूसरा होता, बल्कि वह यात्रान्तका ही भाष्य होता यात्राका नहीं!

और मैं अभी यात्रापर हूँ।

सागर-कन्या और खग-शावक

अवनीन्द्रनाथ ठाकुरने भारतमाताकी कल्पना गैरिक-वसना तपस्विनीके रूपमें की है। नहीं तो भारतवासियोंके मनमें आज देश माताका रूप सिंहवाहिनी दुर्गाका ही एक प्रक्षेपण होता है। ब्रिटेनकी देश माता ब्रितानिया भी सिंहवाहिनी है। जर्मनियाके वाहन रीछ है। इसी प्रकार अधिकतर देश देश माताकी रूप-कल्पना नवीन अथवा तेजस्विताके किसी प्रतीकके साथ करते हैं।

किंतु डेनमार्ककी प्रतीक कन्या सागरके किनारे एक चट्टानपर बैठी हुई स्वप्न देखनेवाली किशोरिका सागर-कन्या अथवा जल परी है।

हम आदि-कवि वाल्मीकिपर गर्व करते हैं, यूनानके लोग आदि-कवि होमरपर, दोनोंने एक एक महायुद्धकी गाथा लिखी है। ब्रिटेन शेक्सपियरपर गर्व करता है जो राज संघर्षोंका नाटककार है।

डेनमार्कको गर्व है अपने परियोंकी कथा लिखनेवाले हांस एंडरसनपर जिसे बीते अभी १५० वर्ष नहीं हुए लेकिन जिसकी कहानियोंको चालीस से अधिक देशोंके बच्चे जानते हैं।

राष्ट्रके साहित्यकार और राष्ट्रकी प्रतीक मूर्तिमें परस्पर सम्बन्ध है। कोपेनहागनकी जल परी एंडरसनकी एक कहानीकी नायिका है★ और उसी कहानीने उसे डेनमार्ककी चेतनामें इतना गहरा तक बसा दिया है।

★कहानीमें बत्तखके बच्चोंमें मिला हुआ कुरूप शावक सबके व्यंग्य सहता हुआ सुंदर राजहंसमें विकसित होता है, यह हंसी फिर परम सुंदरी जल कन्या बन जाती है।

इस आधारपर देखनेके बारेमें अनेक सिद्धान्त प्रतिपादित किये जा सकते हैं। यह भी सम्भव है कि उनमें कुछ सार हो और इनमें परिन्दोंकी कल्पनाशीलता अगर प्रधान नहीं तो एक महत्त्वपूर्ण गुण अवश्य हो। लेकिन ऐसा कोई सिद्धान्त प्रतिपादित करनेकी आवश्यकता नहीं है जो अतिव्याप्ति दोषसे दूषित हो। इतना कहना पर्याप्त है कि इनमेंसे कुछ लोग कुल-क्रमागत, सभ्य और मिलनसार हैं और उनकी विनोदप्रियताकी चर्चा ग्राम-पंचायतोंके देखनेमें भी होती है। उदाहरणके लिए उनके निकटतम पड़ोसी और जाति भाई स्टोर्क पक्षियोंकी स्वाभाविक ईर्ष्याके बावजूद निरन्तर उनके इन गुणोंकी प्रशंसा करते रहते हैं।

पशु-पक्षियोंके जीवनमें दिलचस्पी यूरोपके दूसरे स्थानोंमें भी पायी जाती लेकिन हालैण्ड ही एक ऐसा देश है जहाँ देशके बच्चोंका ही नहीं विदेशी वयस्क यात्रियोंको भी उत्साहपूर्वक नगरसे ५०–६० मील दूर ले जाया जायगा—बगुलोंका घोंसला देखने।

यह घोंसला वास्तवमें है भी एक अजूबा। बगुले ऋतुप्रवासी जीव हैं, नियत समयपर उनकी डारें उत्तर और दक्षिणकी ओर उड़ती देखी जाती हैं। हालैण्डसे उनके गुजरनेका समय ऐसा है कि वहाँ उन्हें साल रखनेके लिए स्थान देनेकी आवश्यकता होती है। कभी बहुत पहले सदियोंमें उनकी डारें सम्पूर्ण गोलैण्डसे जाती थीं और यहीं अपने घोंसले बनाती थीं। अब बहुत थोड़े पास-पास देखे जाते हैं। एक परिवार एक ही स्थानपर घोंसला बनाता है और प्रतिवर्ष वहीं लौटकर आता है। एक वयस्क नायक अपने वयस्क सम्पूर्ण बगुला हो जाता है और डारके साथ उड़ जाता है।

किन्तु दृश्य होना ही घोंसलेको अजूबा नहीं बना देता। विशेषता यह है कि ये घोंसले जंगलमें झाड़ोंमें पेड़ोंमें या चट्टानकी दरारमें नहीं होते घरोंमें होते हैं और घरोंमें भी छतोंमें नहीं बल्कि ठीक चिमनीके ऊपर। घोंसला बहुत बड़ा होता है इसलिए उसे ऐसी जगहकी आवश्यकता भी होती है। बगुलेके घोंसलेके लिए घरकी चिमनीका चुना जाना सम्पत्तिके लिए

बड़े गर्वकी बात होती है बल्कि उसे अगरेज सौभाग्यसूचक भी मान सकते हैं क्योंकि घोंसलेको देखनेके लिए बड़ी दूर-दूरसे यात्री आते हैं और सीढ़ीसे ऊपर जाकर घोंसला देख सकने या फोटो ले सकनेकी सुविधाके लिए पारितोषिक भी अल्प देते हैं। इसलिए गृहपति अपने पक्षी अतिथि को सब तरहकी सुविधा देता है, गज भर व्यासके घोंसलेके लिए उसी मापकी जाली चिमनीके ऊपर लगा देता है। और इसका ध्यान रखता है कि अतिथि-युगल और उसके शावकको कोई कष्ट या जोखिम न हो।

किन्तु हम जल-परीके पार्श्वमें बसे हुए कोपनहागन तक पहुंचनेमें पहुल हो बक-पातीके पीछे हो लिये, इसे पाठक बहक जाना नहीं तो भटक जाना ही समझेगा!

[२]

कोपनहागन भी यूरोपके उन नगरोंमेंसे है जिनकी सुन्दरताका आधार मुख्यतया उनकी सफाईमें है। डेनी जाति प्राचीन जातियोंमेंसे एक है और साहस-कर्मी सागरिकोंकी यूरोपीय परम्परामें डेनियोंका योग कुछ कम नहीं रहा—अनेक नौ-युद्धोंमें वे जयी होते रहे और प्रदेशोंको अधिकृत करते रहे*। इसलिए पुराने दुर्ग, प्रासाद और उद्यान भी डेनमार्कमें अनेक हैं और कोपनहागन भी उनसे रहित नहीं है। फिर भी शहरका रूप प्रधानतया नये स्थापत्यपर आश्रित है। पुराने घर बन्दरगाहकी नहरोंके किनारोंपर हैं लेकिन घरोंका स्थापत्य अभी तक नगर स्थापत्यका मुख्य अंग नहीं माना जाता क्योंकि दर्शककी दृष्टि पहले राजकीय अथवा सार्वजनिक भवनों की ओर ही आकृष्ट होती है।

---

* भारतके पूर्वी सागर तटपर तरंगम्बाडि (अंग्रेजी वर्तनीके प्रताप से 'ट्राँकुबार'!) गाँवकी पुरानी डेनी बस्ती और गिरजाघर भी डेनी साहसिकोंके स्मारक हैं।

नगर भवन, पार्लमेंट भवन, कुछ प्रासाद, गिरजाघर, मूर्ति-संग्रहालय आदि गिना देनेके बाद फिर नगरके दो चार बड़े चौक, उद्यान और बन्दरगाहकी गोदियोंकी चर्चापर उतर आना पड़ता है। या फिर उन नयी बस्तियोंकी ओर ध्यान जाता है जिनके छोटे-छोटे बंगले डेनमार्कके आधुनिक सहकार और जन-कल्याणके आयोजनोंका उदाहरण हैं। इसके बाद विदेशी यात्री अनिवार्यतः शहरके बाहरकी ओर देखता और दौड़ता है। कोपनहेगन सुखद और प्रशंसनीय और स्वच्छ है, लेकिन दर्शनीय तो ज़ीलैंडका सागर-तट है; राजकीय मृग-वन है, उद्यानका 'लोक-जीवन संग्रहालय' है, फ्रेडरिक्सबर्ग और क्रोनबर्ग दुर्ग हैं। नगरमें जहाँ-तहाँ स्थापित मूर्तियाँ और फ़व्वारे भी दर्शनीय और उल्लेखनीय हैं, किन्तु वे तो नगर-दर्शनकी यात्रामें अनायास ही दीख जाते हैं।

क्रोनबर्ग दुर्ग पढ़े लिखे भारतीय पाठकोंसे अपरिचित नहीं है। क्योंकि यह हैमलेटका दुर्ग है जिसे शेक्सपियरने (और, हा हन्त! विनोर साहब) साहित्यमें प्रतिष्ठित कर दिया है। 'एल्सिनोर' का यह दुर्ग द्विभाजित व्यक्तित्ववाले अभागे राजकुमार हैमलेटका स्मरण तो दिलाता ही है, डेनी राष्ट्रीयतासे और गहरा सम्बन्ध भी रखता है। क्योंकि इसके एक तल-घरमें पौराणिक डेनी महारथी होल्गर डेन सोता है जो डेनमार्कके संकटके समय जागेगा और उसकी रक्षा करेगा।

सागर-तटके उल्लेखसे जो चित्र आँखोंके सामने आता है, डेनमार्कका अधिकांश तट वैसा नहीं है, बल्कि एक पतली स्वच्छ झीलका तट ही जान पड़ता है। इसीलिए सागरकी इस भुजाको सागर कहा भी नहीं जाता, 'साउंड' अथवा 'सुंड' कहते हैं जिसे झीलका पर्याय ही मानना चाहिए। पूर्वी बंगालमें जो 'हाओर' पाये जाते हैं—'हाओर' सागरका ही अपभ्रंश है—वैसा ही जल-प्रसार यह भी है—अन्तर इतना ही है कि इसकी स्वच्छ पारदर्शी नीलिमा हमें तलकी चट्टानें भी देख लेने देती है।

वास्तवमें उसकी डेनमार्कको स्वीडनसे पृथक् करनेवाला सागर उतना

भी है और तंग भी। स्वीडनके सागर-तटसे तो कोपनहागन भी दीख जाता है। लोग उत्तरी सीलैण्डसे दैनिक खरीद-फरोख्तके लिए भी नावमें बैठकर स्वीडन चले जाते हैं या स्वीडनसे डेनमार्क आ जाते हैं। कुछ चीजें इधर सस्ती हैं कुछ उधर, इसलिए यह सरहदी व्यापार और आवागमन आसानीसे समझा जा सकता है। दोनों देशोंका परस्पर सौहार्द भी ऐसा है कि सीमाप्रान्तकी साधारण बाधाएं वहां नहीं होतीं।

जितना उथला यह सागर है उतना ही कम ऊंचा सीलैण्डका भू-भाग है। इसीसे सीलैण्डके आविर्भावकी पौराणिक कथाका आरम्भ हुआ होगा। डेनमार्ककी देवी गेफियनको वर मिला कि स्वीडनकी जितनी भी भूमिपर वह दिन भरमें हल चला लेगी उतनी भूमि उसे मिल जायगी। अपने चारों पुत्रोंको बैलोंमें परिवर्तित करके गेफियनने हल चलाना शुरू किया और इस प्रकार सीलैण्ड डेनमार्कका अंग बन गया।

सीलैण्डका तट सब ओर अत्यन्त सुन्दर और प्रीतिकर है। टूरिस्टोंके लिए उसे आकर्षक बनानेके प्रयोजनसे उसका और भी विकास किया गया है और उसकी सड़कें कांच-सी चिकनी और चमकदार हैं। समुद्र-किनारेके चायघर और आमोद भवन भी सुन्दर और रंगीन हैं और उनके नाम भी वैसे ही आकर्षक। जिसमें मुझे जानेका सुयोग मिला उसका नाम था क्रिस्टल्स पर्ल—सागर-तटका मोती। चायघर मोती-सा था या नहीं इसपर विवाद अनावश्यक है, किन्तु उसके बाहर सागरसे उछली हुई डाल्फिन मछलीकी जो कांसेकी प्रतिमा स्थापित थी उसका ध्यान मुझे अब भी हो जाता है।

मैं कोपनहागनमें अथवा डेनमार्कमें अधिक नहीं रहा। सच बात यह है कि मेरी डेनमार्ककी यात्राको मेरी दृष्टिसे देश-यात्रा गिनना ही नहीं चाहिए। स्वीडनसे हालैण्ड जाते हुए चार-पांच दिनके लिए रास्तेमें

रह गया बस इतनी भर मेरी यात्रा थी। लेकिन जो लोग एक महीनेमें संसार भ्रमण करते हैं, या तीन दिनमें भारत देखते हैं उनकी तुलनामें तो मैं कुछ समयके लिए डनमार्कमें बस ही गया था। क्योंकि मैं किसी टूरिस्ट होटलमें नहीं ठहरा जहाँ रहा वह एक कालेजका छात्रावास था जिसे ग्रीष्मावकाशमें विद्यार्थी ही होटलकी तरह चलाते थे। विद्यार्थी मनोहरसे बन्धु भाव स्थापित हो गया। विद्यार्थी टेलीफोन आपरेटर एक युवा लेखक था जिसकी कहानी प्रतियोगितामें पुरस्कृत होकर कई इनाम छप चुकी थी और मैं भारतमें एक पत्रमें पढ़ी थी। उसकी पत्नी भी रेडियो और टेलीविजनमें गायिका थी। दोनोंके साथ कोपनहागनका बन्दरगाहकी सैर की और मत्स्याहारके भोजनालयोंमें—जिन्हें डेनोंका देशी पर्याय मानना चाहिए—भोजन किया। मेरे प्रवासके चार दिनोंमें एक रविवार था उस दिन इस दम्पतिके साथ एक मुनिवार बसमें उनके देहाती घरमें मिलने गया। दिन भर वहीं बिताया आतिथेयके साथ भोजन बनाया थोड़ी-बहुत चित्रकारी और छायागिरी की और एक सहज आत्मीयताका भाव लेकर लौट आया। क्या यह आत्मीय भाव ही मेरा इस उजली हुई छरहरी (पत्नी इंग्रिड, जो कि समानिव होनेके कारण सचमुच यथा नाम था!) याद दिलकी यादोंमें परिवर्तित नहीं कर देता? जो फोटो वहीं लिये थे उनका उल्लेख नहीं करूँगा क्योंकि ... वे लोग विशेष रुचि लेते हैं जिनके लिए देश-यात्रामें देखना नहीं कैमरा प्रधान है (हू.ग' इंडिया!)। किन्तु चलते समय मूर्तिकार कल्लाकार अपना एक छोटा चित्र मुझे भेंट किया था वह अभी मेरे पास है और डनमार्कसे मेरा सम्बन्ध बनाये हुए है। इतना ही नहीं, छात्रावासमें जिस कमरेमें मैं रहता था उस कमरेमें उसके स्थायी निवासीकी ओरसे आगन्तुकके लिए जो सन्देश लिखा रखा था वह भी मुझे स्मरण है। वह विद्यार्थी कमरा छोड़कर गया था तो उसे खाली नहीं कर गया था बल्कि अपने सामानसे सजाकर रख गया था इसीलिए आते समय मुझे यही उचित जान पड़ा कि इस सजावटमें भारतीय

सजावा भी कुछ योग अपनी ओरसे कर दूँ और साथ ही उस अपरिचित विद्यार्थीके लिए एक सन्देश भी लिखकर रख दूँ—अपने प्रातिकर प्रयासके लिए कृतज्ञता ज्ञापन कर दूं। कमरेकी एक दीवारपर डेनमार्ककी राज परम्पराका अत्यन्त विनोदपूर्ण चित्र लगा हुआ था—डेन अपने राज-कुलसे स्नेह करते हैं इसलिए उनकी चर्चा आनन्दपूर्वक नहीं बल्कि विनोद भरी आत्मीयताके साथ करते हैं। इसी चित्रके एक कोनेसे अपना सन्देश अटका कर मैं चला आया। मैं आशा करना चाहता हूँ कि लौटकर वह विद्यार्थी जब भी अपने राजाओंके वंश-वृक्षकी ओर देखकर मुसकराता होगा तब उसका प्रीति भाव क्षणभरके लिए भारतकी ओर भी मुड़ आता होगा।

डेनी लोग अपने राजाओंका जो विनोदपूर्ण प्रचार करते रहते हैं उसमें कुछ यह बोध भी है कि राज-कुल टूरिस्ट व्यवसायके लिए लाभकारी होते हैं। जिस धवल-केश आदि पुरुषसे उनकी राज-परम्परा आरम्भ होती है उसे वे सहज आत्मीयतासे बुढ़ऊ आम कहते हैं किन्तु यह सहजता अतिपरिचयजन्य अवज्ञा वाली नहीं है। देनके जीवनमें राज-कुलकी देनका इतिहास जाननेपर समझमें आता है कि क्यों डेनी लोग उनपर इतना गर्व करते हैं। पिछले महायुद्धमें जब डेनमार्कपर नात्सियोंका कब्जा हो गया था तब राजाका अखण्डित धैर्य सारे देशको साहस और सान्त्वना देता रहा था। इतना ही नहीं राज परिवारके लोग अपनेको इस पूर्णताके साथ जन-जीवनमें मिला देते हैं कि अचरज होता है। राजा संगीत प्रेमी हो यह तो साधारण बात है किन्तु ऐसा गुणी कलावन्त हो कि नियमित रूपसे संगीत भवनोंमें जन साधारणके लिए कार्यक्रम प्रस्तुत किया करे यह और कहाँ सुना गया है? या जन साधारणसे एकात्मता स्कैंडनेवियाके सभी देशों की परम्परा रही है और स्कैंडनेवी देशोंके राज-कुल एक दूसरेसे निकट सम्बद्ध हैं भी—बल्कि नार्वेका वर्तमान राजा तो डेनमार्क द्वारा भेंट दिया गया था! एक राजाकी निस्सन्तान मृत्यु हो जानेपर जब प्रश्न उठा कि उत्तराधिकारी कौन हो तब निकटतम सम्बन्धी स्वीडी राजकुमारको

इसलिए नहीं आमन्त्रित किया गया कि नार्वेको बड़े देश स्वीडनसे थोड़ा डर भी था। नार्वेने डेनमार्कसे एक राजकुमार माँगा और डेनमार्कको भेंट उसे स्वीकार हुई। किन्तु नार्वेके राजा हाकानने अत्यन्त निष्ठापूर्वक अपने नये देशकी सेवा की और इस प्रकार स्कैंडिनेविया देश-परिवारको और भी घनिष्ठ आत्मीयताके बन्धनमें बाँध लिया।

क्या उस आत्मीयताके बन्धको इतना और विकसित नहीं किया जा सकता कि भारत और स्कैंडिनेवियामें परस्पर अनुकूलता बढ़ायी जा सके? मैं नहीं जानता। लेकिन सागरमें एक बूँद जल झरा देनेवाली घासकी पत्ती की तरह मनमें जो बन पड़ा मैं कर आया।

राइनके साथ-साथ

विधिवत स्वीकृत कार्यक्रमके अनुसार जितना भ्रमण करनेकी अनुमति मिली है उससे अधिक भ्रमण कर रहा हूँ। दूसरे शब्दोंमें ये जो यात्राएँ कर रहा हूँ उनका यात्रा-व्यय यात्रा वृत्ति देनेवाली संयुक्तराष्ट्र संस्थासे नहीं माँग सकता हूँ—वह अपने दैनिक भत्तेमेंसे ही जैसे-तैसे निकालना होगा। यों यह इतना कठिन नहीं है क्योंकि होटलमें न रहकर छात्रावासमें रहने और भोजन रेस्टराँमें न कर किसी कैंटीन या नुक्कड़ चौराहेके ढाबेमें कर लेनेसे ही इतनी बचत हो जाती है कि थोड़ा-बहुत घूमने फिरनेका व्यय निकल आवे। सामानकी विशेष आवश्यकता नहीं पड़ती कन्धेपर टाँग लिया जानेवाला झोला भर सामान पर्याप्त है और फालतू सामान तो जहाँ कहीं भी निश्चिन्त भावसे छोड़ा जा सकता है। (जो मुझे जानते हैं वे तो जहाँ तहाँ बहुत सा सामान जुटाकर उसे वहीं छोड़कर आगे चल देने की मेरी आदतसे भली भाँति परिचित ही होंगे!)

बाडन्से उत्तरके लिए छूटनेवाली एक पैसेंजर गाड़ीके तीसरे दर्जेके डिब्बेमें रातमें अकेला बैठा हुआ ठिठुर रहा हूँ इसका यही रहस्य है। यहाँ दर्जेके हिसाबसे तो किराया घटता बढ़ता ही है गाड़ीकी रफ्तारके अनुपातसे भी एक ही दर्जेके किरायेके कई स्तर होते हैं। संयुक्तराष्ट्र संस्थाकी कृपासे अधिकतर यात्राएँ विमानसे करता रहा हूँ जरूरी कामके लिए उड़ते फिरना आवश्यक हो सकता है लेकिन वास्तवमें देश देखना हो तो कुछ धीमी गतिसे और स्थल मार्गसे ही जाना चाहिए।

सूना अँधेरा रात। ठिठुरन। डिब्बेके कोनेमें सिमटे हुए अकेले व्यक्ति को सूनेपनने मानो और भी घेर लिया है। और गलियारेमें (गाड़ीके सब

डिब्बे एक-दूसरेसे मिले हुए हैं और गलियारेसे होते हुए एक सिरेसे दूसरे सिरे तक जाया जा सकता है।) भारी पल्टनिया बूटोंकी चाप उस सूनेपन को और भी घना कर रही है। बाजलमें देर रातको चलना हुआ था; अब रातके अन्तिम पहरमें गाड़ी सीमान्त पार करके जर्मनीमें प्रवेश कर रही है और इस सीमान्तर स्टेशनपर कस्टमवाले पड़ताल करते हुए घूम रहे हैं।

कुछ ऐसा ही सूना और मनहूस वातावरण दो पीढ़ी पहलेकी हिन्दुस्तानी रेलगाड़ियोंके तीसरे दर्जेके डिब्बोंमें मिल जाया करता था। यह उस जमानेकी बात है जब रेलगाड़ियोंमें भीड़ नहीं होती थी—जो हो कलजुगके बावजूद ऐसा जमाना हमने अपनी आँखों देखा था!—और बहुधा बड़े डिब्बेमें सारी रात भर अकेले-दुकेले बैठकर सफ़र हो जाता था। किन्तु यूरोपकी रेलगाड़ियोंमें जब मनहूसियत छाती है तो कुछ ज्यादा मनहूस जान पड़ती है। हो सकता है कि मुझे अजनबी होनेके नाते ऐसा जान पड़ता हो, पर मेरा खयाल है कि यूरोपके अजनबी हिन्दुस्तानके अजनबियोंकी अपेक्षा एक दूसरेसे ज्यादा अपरिचित होते हैं। पिछले महायुद्धके बाद विशेष रूपसे जर्मनीमें यह अजनबीपन और अधिक हो गया है। जैसे कछुआ खतरेके आभाससे डरकर अपने अवयव भीतर सिकोड़ लेता है, वैसे ही साधारण जर्मन नागरिक जीवनको भीतर ही भीतर समेटकर जीनेका आदी हो गया है।

मेरा सामान भी चेक किया जा रहा है। डाग टेगकर कस्टमका सिपाही पूछता है: "स तू?"—इतना ही बस! वह जर्मन है और यह जानता है कि मैं विदेशी हूँ, शायद इसीलिए मान लेता है कि मुझसे फ्रांसीसीमें बात करनी चाहिए। मैं उत्तर देता हूँ: "बाक़ी तो मेरे कागज़ात हैं।" मेरे हाथका बैग जिसमें पास-पोर्टके अलावा तरह-तरहके प्रमाण-पत्र और अधिकार-पत्र हैं, मैं उसकी ओर बढ़ा देता हूँ।

वह मुसकराता है लेकिन उसकी मुसकराहट जैसे वहाँ नहीं है। शायद इशारेसे मुझे छुट्टी देता हुआ वह आगे बढ़ जाता है। सूनापन फिर उसी

राइनके साथ-साथ

विधिवत स्वीकृत कार्यक्रमके अनुसार जितना भ्रमण करनेकी अनुमति मिली है उससे अधिक भ्रमण कर रहा हूँ। दूसरे शब्दोंमें ये जो यात्राएं कर रहा हूँ इनका यात्रा-व्यय या यात्रा वृत्ति देनेवाली संयुक्तराष्ट्र संस्थासे नहीं मांग सकता हूँ—वह अपने दैनिक भत्तेमेंसे ही जैसे-तैसे निकालना होगा। पर यह इतना कठिन नहीं है क्योंकि होटलमें न रहकर छात्रावासमें रहने और भोजन रेस्टराँमें न कर किसी कैंटीन या नुक्कड़ चौराहेके ढाबेमें कर लेनेसे ही इतनी बचत हो जाती है कि थोड़ा-बहुत घूमने फिरनेका व्यय निकल आवे। सामानकी विशेष आवश्यकता नहीं पड़ती। कन्धेपर टांग लिया जानेवाला थैला भर सामान पर्याप्त है और फालतू सामान तो जहां कहीं भी निश्चिन्त भावसे छोड़ा जा सकता है। (जो मुझे जानते हैं वे तो जहां-तहां बहुत सा सामान जुटाकर उसे वहीं छोड़कर आगे चल देनेकी मेरी आदतसे भली भांति परिचित ही होंगे।)

बाजलसे उत्तरके लिए छूटनेवाली एक पैसेंजर गाड़ीके तीसरे दर्जेके डिब्बेमें रातमें अकेला बैठा हुआ ठिठुर रहा हूँ। इसका यही रहस्य है। यहां दर्जेके लिहाजसे तो किराया घटता-बढ़ता ही है, गाड़ीकी रफ्तारके अनुपातमें भी एक ही दर्जेके किरायेके कई स्तर होते हैं। संयुक्तराष्ट्र संस्थाकी कृपासे अधिकतर यात्राएं विमानसे करता रहा हूँ। जरूरी कामके लिए उड़ते फिरना आवश्यक हो सकता है लेकिन वास्तवमें देश देखना हो तो कुछ धीमी गतिसे और स्थल मार्गसे ही जाना चाहिए।

सूनी अंधेरी रात। ठिठुरन। डिब्बेके कोनेमें सिमटे हुए अकेले व्यक्तिका सूनापन मानो और भी घेर लिया है। और गलियारेमें (गाड़ीके सब

डिब्बे एक-दूसरेसे मिले हुए हैं और गलियारेसे होते हुए एक सिरेसे दूसरे सिरे तक जाया जा सकता है) भारी पटरियों पहियोंकी चाप उस सूनेपन को और भी घना कर रही है। बाहरमें देर रातका धुन्धला हुआ था अब रातके अन्तिम पहरमें गाड़ी सीमान्त पार करके जर्मनीमें प्रवेश कर रही है और इस सामान्य स्टेशनपर कस्टमवाले पड़ताल करते हुए घूम रहे हैं।

कुछ ऐसा ही सूना और मनहूस वातावरण मैं पहलेकी हिन्दुस्तानी रेलगाड़ियोंके तीसरे दर्जेके डिब्बोंमें मिल जाया करता था। यह उस जमानेकी बात है जब रेलगाड़ियोंमें भीड़ नहीं होती थी—जी हाँ कलयुगके बावजूद ऐसा जमाना हमने अपनी आँखों देखा था!—और बहुधा सफरमें भी रात भर अकेले-दुकेले कटनेका मौका हो जाता था। किन्तु यूरोपकी रेलगाड़ियोंमें जब मनहूसियत छाती है तो कुछ ज्यादा मनहूस जान पड़ता है। हो सकता है कि सब अजनबी होनेके नाते ऐसा जान पड़ता हो पर मेरा खयाल है कि यूरोपके अजनबी हिन्दुस्तानके अजनबियोंसे अपेक्षया एक-दूसरेसे ज्यादा अपरिचित होते हैं। पिछले महायुद्धके बाद विशेष रूपसे जर्मनीमें यह अजनबीपन और अधिक हो गया है। जैसे कछुआ बाहरके आघातसे डरकर अपने अवयव भीतर सिकोड़ लेता है वैसे ही साधारण जर्मन नागरिक जीवनको भीतर-ही भीतर समेटकर जीनेका आदी हो गया है।

मेरा पासपोर्ट भी चेक किया जा रहा है। ओहदेदार पढ़कर पूछता है ...ब्रू?—इतना ही बस? वह जर्मन है और यह मानता है कि मैं विदेशी हूँ शायद इसीलिए मान लेता है कि मुझसे अंग्रेजीमें बात करनी चाहिए। मैं उत्तर देता हूँ, बाकी तो सब कागजात हैं। मेरा थैला, जिसमें पास-पोर्टके अलावा तरह-तरहके प्रमाण-पत्र और अधिकार पत्र हैं, मैं उसकी ओर संकेत करता हूँ।

वह मुसकराता है लेकिन उसकी मुसकराहट जरा फीकी लगती है। फिर दूसरा मुँह लटका देता हुआ वह आगे बढ़ जाता है। सूनापन फिर छा

तरह धर देता है। कोटका कालर उठाकर मैं गलेको ढाँपता तक ढक लेता हूँ और जूतेमेंसे पैर खींचकर अपने नीचे दबा लेता हूँ। थोड़ी देर बाद धड़धड़ाकर गाड़ी चल पड़ती है।

किताब बताती है कि इससे आगेका प्रदेश बहुत सुन्दर है। कोब्लेंसे ही हम लोग राइन नदीके साथ-साथ चले हैं। कोब्लेंसका नदी-तट भी बड़ा सुन्दर है किन्तु अब हम श्याम-वन के सुन्दर प्रदेशसे गुज़र रहे हैं जो कि भौगोलिक दृष्टिसे भी उतना ही महत्त्वपूर्ण है जितना कि ऐतिहासिक दृष्टिसे। किन्तु सूनी अँधेरी रातमें उस सौन्दर्यको देखनेका कोई उपाय नहीं है। अंधकारमें सब सौन्दर्य एकसे होते हैं—बल्कि सुन्दर और असुन्दर भी एकसे ही होते हैं।*

लेकिन बीच-बीचमें खिड़कीसे बाहर झाँकता हुआ मैं सोचता हूँ कि स्वयं अंधकार सब एकसे सुन्दर नहीं होते। घरकी याद मुझे सताये ऐसा मेरा स्वभाव नहीं है क्योंकि जहाँ रहता हूँ अपनेको इतना व्यस्त रखता हूँ कि इसकी गुंजाइश ही नहीं रहती। पर यहाँ खिड़कीसे झाँकते हुए सहसा भारतकी स्मृति उमड़कर आती है और आप्लावित करती हुई चली जाती है। यूरोपके अंधकारकी अपेक्षा कितना अनिर्वचनीय सुन्दर होता है भारतकी रातका अंधकार! हमारा आकाश यूरोपके आकाशसे सुन्दरतर होता है यह पहले भी लक्ष्य किया है यहाँ रात तारा भरी कभी नहीं होती, इक्के-दुक्के तारे ही दीखते हैं और चाँद भी कभी-कभी दीखता है तो प्रायः खोया हुआ-सा। समझमें आता है कि क्यों भारतका चन्द्रमा रजनी रूपी नायिकाका नायक है निशानाथ है रात्रिपति है। पर मैं

* अनन्तर इस प्रदेशमें दिनमें भी घूमा नदी-यात्रा भी की। किताब की बातका प्रत्यक्ष देखा सबूत पा लिया!

आकाशकी रातके भी आकाशकी बात नहीं कर रहा था, अंधकारकी ही बात कर रहा था। मरुका अंधकार रूखा और ठोस होता है; भारतका अंधकार स्निग्ध और कुछ न दीखनेपर भी मानो पारदर्शी। यूरोपका अंधकार मानो काले दर्पणोंकी दीवार होता है; हमारा अंधकार काले मखमलका पर्दा।

इस मखमलमें मानसिक मस्तिष्क आप्यायित होता हुआ न जाने कब मैं ऊँघ जाता हूँ। मूनायन मनमूसियन, छिपुरल और अरडन सब एक धाराहीन नीलिमामें विलय हो जाते हैं।

जब जागकर एक लम्बी अंगड़ाईके बन्धन जोड़ खोलता हूँ तब देखता हूँ कि वन-प्रदेश कबका पीछे छूट गया है—राइनका रुख कुछ पश्चिमको हो गया है और हम सीधे उत्तरकी ओर बढ़े जा रहे हैं। एक छोटेसे वनोद्यानके पाससे होकर गाड़ी मुड़ती है, हम एक नदी पार करते हैं—यह माइन नदी है जिसके किनारे फ्रांकफर्ट बसा है।

मेरी मंजिल यह नहीं है, पर यहाँ कुछ परिचित हैं जिनसे मिलना है। कुछ परिचित और कुछ परिचितोंके परिचित जिनके नाम पत्र लेकर आया हूँ—पुराने क्रान्तिकारी जिनके नाम इतिहासोंमें लिख लिये गये हैं, जिनकी क्रान्तियाँ अब शायद अर्थहीन हो गयी हैं लेकिन जिनके अपने प्रयत्न कभी अर्थहीन नहीं होंगे—जिनके अनुभव उनके अपने जीवनकी सम्पत्ति तो हैं ही, उन सभीके जीवनको सम्पन्नतर बना सकते हैं जिन्हें उनके निकट सम्पर्कका सौभाग्य मिले।

[२]

फ्रांकफुर्तसे रेलकी पटरी राइनके साथ-साथ कुछ और पश्चिमको मुड़ जाती है और नदीसे आँख-मिचौनी खेलती हुई कोब्लेंजके समीप घाटसे निकलती हुई बोन पहुँचा देती है। राइन नदीका पाट इधर आकर कुछ चौड़ा हो जाता है और पहाड़ियाँ भी कुछ विरल हो जाती हैं। फिर

भी प्रदेशका रूप बहुत अधिक नहीं बदलता। किनारोंपर टँगे हुए मीनारदार छाजे बड़े दुर्ग और उनकी घनी हरी लताएँ छाये आकाशकी नीलिमा बन तरुओंकी श्यामलता और नदीके जलके मटमैले रंगके बीच अपना अलग स्थान रखती है। नदीपर चलनेवाले स्टीमरोंकी हवादार छतोंमें जो चपल हल्कापन है वह सारे दृश्यकी भव्यताको कम नहीं कर पाता क्योंकि ये दुर्ग शूर वीरताके इतिहासके कोषमें उसे स्थायी रहते हैं। दुर्ग-मन्दिर निरन्तर के बीचमेंसे बलखाती हुई नदी मानो बचते पाणिप्रार्थी शूरमाओंके बीचमेंसे बचकर निकल जानेवाली स्वयंवरा हो। यूरोपकी नदियाँ सभी अपना अपना अलग प्रभाव रखती हैं। पेरिसकी सेन नदीका तो शहरने अन्त ही देखा जो कि शहर-सा बसा हुआ है और जिसका सौन्दर्य प्रकृतिका नहीं स्थापत्यका है। टेम्स टेवरा नदीका वर्णन अन्यत्र कर चुका हूँ। वियनाके निकट डानाउ अथवा डेन्यूब नदीको देखकर पहली बार लगा कि वास्तवमें शहर नहीं नदी देख रहा हूँ। उसका रंग भी कुछ अधिक उज्ज्वल था। इसे शाही नदी कहनेका कारण जितना यह रहा होगा कि वियना एक साम्राज्यकी राजधानी रहा उतना ही उसकी नैसर्गिक भव्यता भी। अगर राइन स्वयंवरा युवती है तो डेन्यूब निश्चय ही पट्टधारिणी राजमहिषी। किन्तु ऐसी उपमाओंका कोई अन्त नहीं है और कल्पनाको इस दिशामें छूट दे दी जाय तो नदी देवताओंका एक नया पुराण बन सकता है।*

---

* राइन नदीका एक वर्णन

रोनके समान वेगवती लोआरके समान चौड़ी मयूसकी भाँति पर्वत-वेष्टित सोम-सी हरित और उर्वरा टाइबर-के समान ऐतिहासिक डेन्यूब सी शाहाना नील-सी रहस्यमयी अमरिकाकी नदियों सी स्वर्ण तारांकित, दूरतम एशियाकी किसी नदी सी प्राचीन काव्य गाथा मयी!

—विक्टरह्यूगो



राइन प्रदेशमें निगेरनुक

कार्ल्सरुह नगर-सभाका उद्यान

बाड क्राएत्सनाख

डा० फाउस्टका घर, क्राएत्सनाख

बॉन पश्चिम जर्मनीकी राजधानी है किन्तु यह गौरव उसने नया ही पाया है और उसे देखकर अभी तक यह नहीं लगता कि यह वास्तवमें राजधानी है। देशके प्रधान नगरमें जो गुण होने चाहिए और राष्ट्रके जीवनका जो केन्द्र बिन्दु इसका स्वयं जो भान होना चाहिए उसका ध्यानमें रखने पर यह भी कहना ही होगा राजधानी जान पड़ता है—वह विभाजित जर्मनीकी ही नहीं यूरोपकी स्वायत्तता है।

बॉन शान्त-स्वच्छ है पर वह शहर भी राजधानी अभी नहीं बन पाया है। आगन्तुकपर उसका प्रभाव भी राजधानी-सा नहीं पड़ता एक परम्परागत प्रादेशिक नगरका-सा ही पड़ता है। शान्त-स्वच्छ तो बाद अनेक नये भवनोंका निर्माण यहाँ हुआ है और नगरके किनारेका नये परम्परागत स्थापत्यका आस्वाद न। फिर भी शहरका मुख्य भाग मध्य-काल और उत्तर मध्य-कालका स्मारक-सा भरा है। इनमें मुख्य है रोम स्थापत्य निदर्शन ही मानस लगनेवाला बड़ा गिरजाघर या मिन्स्टर। शहरका नाम और युवावस्थामें यहाँ एक दूसरे युगका स्मरण दिलाता है—जब बाईस बरस यहाँ जो पहुँचनेकी खबर भूत-सा सिरपर सवार नहीं थी और जो यह हाल था सुन पहुँचने में सुगम किसी तरह कम कष्ट नहीं था बल्कि कुछ अधिक ही होता था क्योंकि वह देर तक रहना था।

पहलेसे पुराने भवन नामकीय कामसें लगा दिये गये हैं। कुछ नये बन गये हैं। जिस होटलमें मैं टिका हूँ वह कुछ तो इसलिए पुराने ढंगका है कि मैं विश्राम कर रहा हूँ पर कुछ उसका कारण यह भी है कि कम पुराने मकानमें नये होटल हो ही नहीं सकता। सस्ते तो आधुनिक होटल हैं पर कमरेमें स्नान घर नहीं होता जितनी तरह सीढ़ियाँ और गलियारा बनाना पड़ता है उसमें आदमी थक जाता है। और नीचेसे कमरे तक पहुँचनेके लिए जितना श्रम करना पड़ता है वह शायद आदमी भरपूर बिना कोई भी करनेको तैयार न होता।

मैं उस कमरे तक पहुँचकर ही रह गया नहीं मिल जाता क्योंकि मानव

व तक रुपये साथ जाता है। या तो जमन शिष्टाचारमें तरफ कुछ है जो अधिक पर बातें परम्परामें जा... भी ... है कि ... पुरानी ... शिष्टाचारकी परम्पराएं अभी जीवित हैं। चार आदमी दफ्तर बाहर जाते हैं तो प्रत्येक बार ... उनके परस्पर स्वास्थ्य कामना करते हैं ... प्राप्त! ... याम द ... पर्याप्त नहीं होना बल्कि ... भी होना पड़ता है। ... लिए इतना उठक-बैठक करनी पड़ती हो तो ... हो क्या ... है! ... विश्वविद्यालयके ... आचार्य महोदयका स्मरण हो आता है जो घरसे विश्वविद्यालय जानेके लिए ... आ ... पटरीकी ... पकड़ लेते और बराबर एक ही गतिसे ... घोड़ाबाघ चलते जाते थे—लोगोंको ... बार-बार ... की दुआकी ... परवाह न करनी थी। ... जब उन्हें ... जाओकी बात समझाकर किनारेकी पटरीसे चलनेका ... तब उनका उत्तर ... स्वभावतः ... (... लोग गलतीमें आवश्यकता ... दते हैं) कितना सुन्दर उदाहरण था ... आधा मामला एक बार आठा एक बार नामा—आधा पारी ना। सीधा सपाट रास्ता पकड़ सहारे चला जाता हूं किनारे चक्कर कौन बार बार फुट पाथपर चढ़ना उतरना रहे! आचार्य महोदय बीयर ता न ... पान ... किन्तु जमनीमें भी जन्मे और ... होते तो इसलिए न ... कि कौन बार बार ... उठक बैठक करता!

हाइडलबर्ग भोजनालयमें मैं एक ... बार भोजन किया फिर मितव्ययिताके लिए विश्वविद्यालयको ... छोटी दुकानोंमें हो जाना रहा ... चखन भी था और ... छात्राग्नी आती थी। यहां ग्राहक प्राय ... मामले और ... या ... प्रकारका दूसरा मितव्ययिता भोजन ... किन्तु साथ बीयरका ... अवश्य। मैंने जब पानीका गिलास मांगा तब वेटरने चारों तरफ मेरी ओर देखा और फिर कुछ रुककर कहा आप बैठ जाइए पानी मैं वहां पहुंचा दूंगा। ... देर बाद पानीका

गिलास आ भी गया। यूरोपका साधारण भोजन मुझे कम रुचता था, इसलिए मैं अधिक मात्रामें दूध सब्जियोंके अलावा प्रत्येक भोजनके साथ दूध भी लिया करता। बेटरसे मैंने पूछा कि क्या एक गिलास दूध भी मिल सकेगा? वह बिल्कुल सन्न सा लगभग आधा मिनट तक मेरी ओर देखता रह गया। फिर थोड़ा मुसकराकर उसने जर्मनमें जाने क्या कुछ कहा जो मैं समझ न सका। इतना ही समझा कि दूध नहीं मिल सकता। मैंने धन्यवाद कहकर उसे विदा करना चाहा पर वह जब मुझे अपनी बात समझाना आवश्यक समझता था—दूसरी मेजसे एक व्यक्तिको बुला लाया जिसने मुझे अंग्रेजीमें उसकी बात समझाते हुए कहा "बेटर यह कहना चाहता है कि इसलिए महाशय आपने बायरके बदले पानी माँगा था तो मैंने ला दिया। अब इससे आप यह समझें कि यहाँ दूध भी मिल जायगा तो यह आपकी भूल है।" मैंने हँसकर सज्जनको धन्यवाद दिया और छुट्टी पायी। शहरकी गलियोंमें घूमते हुए यह तो देख भी लिया था कि वहाँपर दूरी है भोजन करके उधरसे लौटते हुए होटलमें आनेमें कठिनाई नहीं थी।

बॉनको अपने संगीतकी परम्पराओंपर गर्व है। जो युगोंसे प्रसिद्ध जीवित जर्मन संगीत-महात्माओंकी देन सबसे बड़ी है—ऐसे संगीत महात्माओंकी प्रतिभा आपकी और अधिक चुकी है। किन्तु नगरका संगीत-परम्पराओंसे सम्बन्ध जहाँ एक ओर अतीत है वहीं दूसरी ओर वर्तमान सजग है। प्रबन्ध होता है जिनमें नियमित रूपसे शास्त्रीय संगीतके कार्यक्रम प्रस्तुत किये जाते हैं। संगीतके इतिहासमें बॉनका नाम अभिन्न रूपसे जुड़ा हुआ है क्योंकि युगप्रवर्तक संगीतज्ञ बीथोविन सबसे बड़ा नाम बॉनसे सम्बद्ध है। बीथोविनका जन्म यहीं हुआ और यहाँका बीथोविन भवन और बीथोविन संग्रहालय न केवल उस महान् कलाकारकी स्मृति की रक्षा किये हुए हैं बल्कि इस बातका भी प्रमाण है कि नगर उससे अपने सम्बन्धपर कितना गर्व करता है। गर्व अपने आपमें बड़ी अच्छी बात नहीं है क्योंकि किसी बातके महत्वको समझे बिना भी उसपर गर्व किया

जा सकता है, किन्तु स्मृति भवन और संग्रहालय जिस रूपमें रखे गये हैं वह सिद्ध करता है कि बान निवासियोंकी गौरव भावना वास्तवमें बेटहोवनके संगीतके प्रति प्रेम और महानताके सच्चे सम्मानका प्रतिबिम्ब है। बेटहोवन भवनकी तीसरी मंजिलपर जिस छोटेसे कमरेमें बेटहोवनका जन्म हुआ उसमें कोई भी परिवर्तन नहीं होने दिया गया है, यहाँ तक कि मरम्मतमें भी उसका रूप नहीं बदलने दिया गया है। बफका बनाया हुआ प्रस्तर प्रतिमा उस कोठरीका एक मात्र अलंकरण है। किन्तु उसके आस-पासके कमरे मूल्यवान एतिहासिक सामग्रीसे भरे हुए हैं। एक कमरेमें उस बाजेके पर्दे भी रखे हैं जिसपर बेटहोवनने बजाना सीखा था। बेटहोवनकी हाथकी लिखी हुई स्वर लिपियाँ और कई एल्बम भी रखे हैं। तीन सौके लगभग हस्तलिपियोंका यह संग्रह यूरोपीय संगीतके इतिहासमें अपना विशिष्ट स्थान रखता है। इसके कमरोंमें बेटहोवनके पियानो और विभिन्न तार यन्त्र भी रखे हैं।

[४]

कार्लसरुहे। श्याम वन के छोरपरका छोटा सा एतिहासिक नगर। बानसे चलकर फिर एक बार राइनके किनारे देखते देखते फ्रांकफुर्त पार करता हुआ यहाँ आ गया हूँ। विविध कार्यक्रमके आधीन यहाँ आनेका मेरा कोई काम नहीं है, मुझे म्यूनिख पहुँचना चाहिए जहाँपर संयुक्तराष्ट्रसे सम्बद्ध एजेंसी और जर्मन भारत मैत्री संघ मेरे लिए कुछ कार्यक्रम बना रहे हैं।

लेकिन विविध कार्यक्रम मेरा हो ही क्या सकता है? लेखक हूँ जो वृत्ति मुझे मिली है लेखक होनेके नाते ही मिली है और उसका क्या उपयोग मैं करूँगा इस प्रश्नका यही उत्तर मैंने दिया है कि अनुभव-संचयके लिए और यूरोपकी आत्माको पहचाननेके लिए भ्रमण करना चाहता हूँ। यह

मानवा विधिवत् कायक्रम क्या न मकता ह ? अनमय-सचयरा विधि क्या हो सकती ह सिवा अनुभव सचयके ?

और वाल्सग्ह एक व्यक्तिका पता लगान आया हू । इस व्यक्तिस मरा कोइ काम नहीं ह अगर इतना ही पता लग जाव कि वह जीवित ह—बल्कि इतना भी नहीं इतना भर पता लग जावे कि उसक बारेम कुछ भी जानकारी—यह भी जानकारी कि यदि वह जीवित नहीं ह तो कब और कहाँ उसकी मत्य हुई—कोई उपाय ह तो वह भी यथष्ट होगा । कौन था ? वह भी एक पुराना क्रान्तिकारी था—हिटलरके उदयम पहल था उसके उस समयके कुछ सहकर्मी मरे घनिष्ट मित्र ह । हिटलरके उदयके बाद ही वह बिना कोई निशान छोड गायब हो गया था । लोगोंका गुमनाम इस प्रकार लापता या निःशेष हो जाना कोई असाधारण बात न थी थी । अब उसके बारेम कुछ भी समाचार एक ऐतिहासिक उप लब्धि होगी । बल्कि इतना जानना भी उपयोगी होगा कि अब भी ऐसे रास्ते हो गये व्यक्तिकी खोज हो सकती है ।

यहाँ तक अनुभव-सचयकी बात ह क्या इस यात्राका उत्तर—क्षमा का उत्तर—मेरे अनुभवकी वद्धि नहीं करेगा ? म तो समझता हूँ कि एस खोये-हुए अन्वेषण ही व्यक्तिको समकालीन इतिहासके सजीव सम्पक म लाते ह जिनसे ऐसे व्यक्तिको भी इतिहासकार नहीं साहित्यकार ह जिसे ऐतिहासिक घटनाएँ अभिप्रेत नहीं उसके प्राणोंसे सम्बन्ध प्रयोजन ह ।

(उस व्यक्तिसे भेंट नहीं हुई । लेकिन उसका पता लग गया । वह उस समय वाल्सग्हम नहीं था लेकिन जीवित था और फिर काम करने लगा था—क्रान्तिकर्म न । कहानी समाप्त ? उसके पतेपर चिट्ठी छोड़ कर और अपने मित्रोंको उसकी सूचना देकर मन अपनी खोज समाप्त समझी, चिट्ठीका उत्तर मुझे प्राय डेढ़ बरस बाद मिला ।)

[५]

छोटे-से लगा हुआ नगरका उद्यान है जो भारतमें जाता तो बगीचा या बाग कहलाता किन्तु यहाँपर वाड (वन) कहलाकर ही सन्तुष्ट है। आज छुट्टीका दिन है इसलिए तीसरे पहरको नारंगी-रंगकी धूपमें विहार करनेके लिए आबाल-वृद्ध वनिता सभी तरहके नागरिक वनके भीतर मीलों तालके किनारे घनी हरियालीमें जुटे हैं—हरियाली कुछ पीली पड़ने लगी है। किन्तु अभी भीड़में जा मिलना जरूरी नहीं है क्योंकि पेड़ोंके बीचमें जाती हुई अनेक वन-वीथियोंमेंसे किसी एकको पकड़ा जा सकता है और इससे अप्रत्याशित सुन्दर स्थलोंमें पहुँचा जा सकता है। पत्तियाँ भी लाल और सुनहली हो गयी हैं। रातको उनमें धुंध भर जाती है और सवेरे उसकी नमी नीचे नमी हुई पत्तियोंमें बस जाती है। छायावादी कहते हैं कि नीरव पत्तोंपर रात अपने आँसुओंकी छाप छोड़ गयी है। किन्तु यह नमी पतझड़की पत्तियोंमें वह खमीर उठाती है जिससे वे पत्तियाँ पचकर हारकर धरतीकी नयी उर्वरा शक्तिमें परिणत हो जायेंगी—उनकी मृत्यु नये जीवनकी भूमिका बन जायगी। जीवनकी इसी क्रियाकी एक अनिर्वचनीय गन्ध इन पत्तियोंमें उठ रही है। वसन्तके सौरभ दूसरे होते हैं किन्तु शरत्कालकी वनगन्ध अपना अलग प्रभाव और सम्मोहन रखती है। यह गन्ध एक अवसन्नताकी गन्ध है जो कि थकान नहीं है एक स्निग्ध निश्चिन्तताकी जो कि जड़ता नहीं है जिसकी विमुग्धतामें इसका तीखा बोध है कि हम जाग्रत हैं कि हमारी इन्द्रियाँ जागृत हैं सचरणशील हैं और नयी संवेदनाके लिए उत्सुक हैं। कितना सार्थक है इन्द्रियोंके लिए वन्य सौन्दर्य—वन-भूमिमें उन्मुक्त गायोंकी भाँति हमारी इन्द्रियाँ जीवन-रसका अनुभव करती हुई विचरण करती हैं।

शरद्-ऋतु। वायुमें हल्की-सी सिहरन है। धूप कुछ तेज होकर उठ जाती है और उसकी गरमी पत्तियोंको सुनहला रंग देने लगती है और फिर धीरे-धीरे काला पड़ जाती है।

शरद्‌ऋतु। घर लौटनेका समय आ गया है।

यायावरमें कोई आत्मावमान नहीं है। भीतर उमड़ते हुए करुण भावको थकन ही पर डालकर वह वाणीका अपव्यय नहीं करता। केवल एक गहरा स्तब्धताका अकेलापन जिसमें सबकुछका अतिरिक्त सजाना है किन्तु मन माना जड़ है। देखना है सुनना है घ्राण है स्पर्श है—सभी कुछ है किन्तु नहीं है चिन्तन। वहाँ केवल स्तब्धता है। जानते मानो मनस्पर्श आ गया है और भीतर केवल सन्नाटा है।

वनोद्यानसे बाहर नगर भवनके सामने फव्वारापर प्रकाशका खेल सुन्दर है। दूकानोंमें शीशेके पीछे सजी हुई वस्तुएँ सुन्दर—या कमसे-कम आकर्षक हैं, रंगीनी और नवीनता लिये हुए हैं। पूरा बाजार है।

चौकमें आते जाते कारों और गाड़ियोंके धुँए और तम्बाकूवालोंसे अनेक गन्धें एक पम्प्री और ताजी डबलरोटीकी गन्ध, प्याज और मसालेके बघारकी गन्ध, सड़ी जाती सागसब्जीकी गन्ध, दूसरे पत्तोंसे और किनारेके पत्तोंकी गन्ध, मरते हुए सूखे पत्तोंकी गन्ध और गलते हुए गीले पत्तोंकी सर्वथा भिन्न गन्ध—कैसा गन्ध-संकुल है।

ट्रामगाड़ियोंका शोर, ऊँची एड़ियोंके जूते और कटे पत्ते पट पट चरर और पुरानी लगामोंसे टूटती भारी चाप, कहवा घरोंसे दूध मिलानेवाले यन्त्रोंका शोरगुल और फेंकनेवाले यन्त्रोंकी गूँज, अनेक प्रकारके स्वचालित यन्त्रोंकी खनखनाहट, तश्तरियोंकी खनखनाहट—कैसा स्वर-संकुल।

ठंडे पानीका स्पर्श, गरम पाइपका स्पर्श, अंगराक्य पत्तेका चिकना स्पर्श, बन्द कमरेकी बासी रोमिल मखमली स्पर्श (कनखा कम्बो जमनमें बहुत प्रचलित है) ठण्डे काटेका रोमिल स्पर्श, होटल की चाबियोंके साथ लगे हुए प्लास्टिकके टिकटका कगार और निर्वैयक्तिक स्पर्श, हाथमें लिये हुए अखबार हृदयको उँगलियाँ काटनेवाला कटार और अपरिचित स्पर्श—कैसा स्पर्श-संकुल

और इस बहुविध संकुल आकार-प्रकार में से सहसा एक तात्कालिक सब ओर से रोम जारोप ... गोरखका घर जानेका समय आ गया

घर। कितना परिभाषाएं हो सकती हैं इस एक शब्दकी—कितने रूपों और बिम्बोंमें वह मूर्त होकर सामने आ सकता है। एक चित्र और कठकी रेखा जो धीरे धीरे उभरती और दबती है जिसमें कोई गन्ध नहीं फूटती क्योंकि मानो बाणोंकी गन्ध धीरे धीरे निगल लिया जा रहा है हवा कणोंकी एक लहर जिसमें एक साथ ही घरकी और किसी बहुत दिनके भूले हुए फूलकी गन्ध उठ रही है। पुष्प प्रवालोपहित यदि स्यान्मुक्ताफल वा स्फुटविद्रुमस्थम् ... निजी होता है और उसके बिम्ब भी निजी होते [illegible] इसलिए हर किसीके घरका अपना अलग स्वरूप उभरती है। किन्तु निजीपनका यह क्षेत्र निजी है इसलिए आगे रहना चाहिए

[६]

कालमरहका वही बनावटीन। वही तीसरे पहरकी धूप जो पेड़ोंमें परते हुए सागरकी धाराको और सुनहला कर देती है। उसी सविता तालकी एक भजा जिसके तटपर गिरते ही झरती पत्तियोंका कम्पन शान्त हो जाता है और उसके बाद पानीकी सतहपर सिहरनका एक वृत्त बनता है और फैलता हुआ विलीन हो जाता है। अपनी वापसी गति तालको सौंपकर उसीके फैले हुए वृत्तमें पत्तियाँ टिक जाती हैं।

और इस दृश्यको देखते हुए मन सहसा चलनासी एक लहर आप्लावित कर रही है—कि मैं जीवित हूँ कि जीवन सुन्दर है कि जीवित होनेकी अनुभूति सौन्दर्यकी चरम अनुभूति है कि मैं मरना नहीं चाहता कि मैं मर जाऊँगा।

॥ मरना नहीं चाहता। और मैं अवश्य मरूँगा।

दोनों ही बातोंमें कुछ भी नया नहीं है। नया ज्ञान मुझे कुछ नहीं

मिला है। केवल नया चलना मिली है—दोनों ही बातें अलग-अलग एक नये उन्मेषके रूपमें मेरे भीतर घुस गया है। मानो अस्तित्व मात्रका निचोड़ उठाकर मेरे सम्मुख रख दिया है—अस्तित्व मात्रसे मेरे सम्बन्धका सार-तत्त्व। कि जीना सुन्दर है कि मैं जीवित हूँ और मरना नहीं चाहता कि मैं मरूँगा।

यह बोध धूपकी तरह उजला और मर्मस्पर्शी है। उसके साथ कोई व्यथा नहीं है कोई क्लेश या कुंठा नहीं कोई पराजय नहीं। कदाचित इसलिए कि यह बोध मेरे अपनेपनका नहीं अपनेसे बड़े कुछका है जीवनका है। सुन्दर जीवन है मैं नहीं सुन्दरता मैं जीवन नहीं। जीवित होना एक सम्बन्ध है मरना न चाहना उस सम्बन्धके प्रति एक राग भाव। मेरे मर जानेपर उस राग भावका क्या होगा? मैं नहीं जानता और उसका कोई महत्त्व है। अगर वह भाव बना रहता है और तब चेतन रहता है और फिर एकाएक बन जाता है तब उसके चुक जानेसे भी क्या? जब तक कि यह राग भाव मेरे उस भावके बोधसे पहले ही चुक जाता तब तक गाथा किस बातकी?

और उस सम्बन्धका क्या होगा? क्या वह नहीं रहेगा? और क्या उसका न रहना उसके रहे होने को निरर्थक नहीं बना देता? यह भी मैं नहीं जानता इससे भी कोई अन्तर नहीं पड़ता। जीवन नहीं चुकता अगर मैं हूँ जबतक मैं हूँ तब और तबतक मैं सम्बद्ध भी हूँ—असम्बद्ध अवस्थाका मैं ज्ञान हो नहीं सकता। इसलिए जहाँतक मेरी बात है यह सम्बन्ध चिरन्तन है—मैं सम्बन्ध होनेका ही ज्ञान सकता हूँ उसके न होनेका ज्ञान हो नहीं सकता।

कोब्लेन्ज़से स्टुटगार्ट और उसके रास्ते होता हुआ मैं म्यूनिख चला गया। इस यात्राका पहला भाग उतना ध्यान देकर प्रत्यक्ष जाना था और सुन्दर था परवर्ती भाग नीरस लगा। म्यूनिखमें भी इसार नदीका किनारा और उससे लगा हुआ मक्सिमिलियन भवनके आस-पासका वनोद्यान सुन्दर

गा—यहाँ भी भारतीयोंका गमन पहुँच चुका था। निम्नभाग गर्म
और उसका उद्यान भी दर्शनीय और स्मरणीय था। वहाँ म्यूजियममें जो
कुछ देखा वह स्मरण तो है पर स्मरणीय उसे नहीं कह सकता। उल्लेख-
नीय भी वह रहा है। जो थोड़ा बहुत कहने योग्य होगा वह दूसरे प्रसंगोंमें
पहले या आगे बन गया है।

मेरी डायरीमें दोष है कि काम्बोडियामें हिन्दुओंके याने भारतीयों-
का जो सौन्दर्य देखा वह मेरे जीवनमें अद्वितीय है। यह टिप्पणी कलाके
सौन्दर्यपर भी हो सकती है और मेरे जीवनानुभवपर भी। कितना महत्त्व
उसे दिया जाय यह पाठककी रुचि और उसके विचारपर है। मेरे एक
मित्र हैं जिन्होंने अभी तक पहाड़ नहीं देखा। मन एक बार उठा और नहीं।
तो हजार फीटकी ऊँचाई तक ही जानेकी उत्सुकता थी पर उनको इस
परामर्शने रोक दिया कि पहाड़ तो इतना ऊँचा होता है कहीं अचा-
नक ऊपर आ गिरे तो

पतझरका एक पात

[बर्लिनकी डायरीसे एक पृष्ठ]

आज जरा जाड़ा पड़ने न लगा हो, ऐसा नहीं, पर पत्तियाँ ऐसे जल्द गिरना इतना जल्द शुरू—यह नहीं देखा। हमारे यहाँ एक-दुक्के पत्ते गिरे देखनेको मिल जाते हैं, बहुत हुआ तो आठ-दस पत्तोंकी पाँत। पर इस वनखण्डोंमें सभी पत्ते ऐसी भड़काली कत्थईसी सुनहली चादरसे ढके थे और नीचे गिरे पत्तोंपर चलते हुए धूसर वस्त्र सोनेके मुकुट जैसे चमक जाते थे। हमारे पैरोंसे दबकर पत्तियाँ एक ताली परन्तु हृदय मधुर दे रही थी—और वह मुझे बचपनकी स्मृतियोंमें डुबाये दे रही थी।

मेरी साथिन, जो जर्मन हैं पर यहाँके एक भारतीय विद्यार्थीकी पत्नी हैं और इसीसे मेरी परिचिता हुईं, सहसा बोलीं—मुझे बचपनकी याद आ रही है—पिताके साथ इस वनमें घूमने आया करती थी। वह भी तब ही तुम्हारी तरह तेज चलते थे—अब तो लोग तेज चलते ही नहीं।

मैं चकित हुआ—और लड़कियाँ कौन तेज चलती हैं? जागकर हमारे देशमें तो— पर चुप रहा, मुस्करा दिया।

सामने कहीं परोंकी चाप सुनाई दी। थोड़ी देरमें पगडंडीसे मानो भाग चले दौड़। एक छोटा सैनिक दस्ता—लगभग सात आठ सैनिक जिन्हें शायद सायंका अभ्यास कराया जा रहा था। वे आकर दूसरी ओर निकल गये, हम आगे बढ़ते रहे।

चलते। पर मौसमें आ मुझे लगा कि कुछ बदल गया है। साथिन

पड़ा क्या बात है ? और उसके बन्द न्त स्वरम चार गया— न मिपाहियाने आकर सब कुछ छिपा लिया ।

मन कहा व तो गये । पत्तियाँ तो अब भी बगी हो रगान है और धूप—

उसने आविष्ट स्वरसे कहा न भ और मनिक नहीं देखना चाहता ! क्या सब जगह मनिक है ?

प्रसंग बहुत ही नाजुक था—हर जमनके लिए होता पूर्वी वन्तिम और भी अधिक क्योंकि वहा गय सत्ता कहो अधिक अन्य है और नागरिक जीवनपर उसकी छाप बना अधिक गहरी । म उसम उस युद्धकालीन अनुभवोंकी बात पूछना चाहता—पर दूसरके जीवनको कुरेदनेका अधिकार नहीं मिलता है जब पहले महानुभूतिका सम्बन्ध स्पष्ट हो चका हो—क्या वैसी स्थिति मेरी है ? मन कुछ पूछा नहीं—उस समय पर कितने प्रश्न मेरे मनमें थे—हैं

बनम एक छोटी मील मिली उसमें निरते पत्तोको हम देखा किय । जमन स्वभावकी कल्पनाशीलता जागी उसने कहा य पत्तियाँ परियोंकी टोपियाँ है । जाड़ोंमें य बफके नीचे छिप जायेंगी वसन्तमें फिर निकलेंगी । अगले वष— पर अगले वषके उल्लेखसे वह फिर उदास हो गयी ।

× × ×

लौटकर विदा लेनेसे पहले मने उस भोजनपर आमन्त्रित किया और हम लोग एक रेस्टरॉकी ओर चले । रास्तेमें उसने कहा तुम मुझे जमनीमें बाहर क ।—या अपने देशमें—कोई काम नहीं दिला सकते—म बाहर वननेके लिए भी तयार हूँ ।

मने चौंककर कहा क्यों ? क्योंकि मने मालूम है वह एक दनिक पत्रमें काम करती है ।

उसने इधर-उधर देखकर कहा, 'क्योंकि बर्लिन अब रहने लायक नहीं रह गया है। मैं शान्तिके वातावरणमें रहना चाहता हूँ।'

मैंने पूछा, 'तो क्या पश्चिमी जर्मनीमें नहीं जाया जा सकता?'

'पर मैं काम लेकर जाना चाहता हूँ—भागकर नहीं। मेरी समझ है—पर शरणार्थी बन जाना भी तो—भविष्य गिरवी रख देना है।'

मैं थोड़ी देर चुप रहा। फिर मैंने कहा, 'वे राजनीतिक शरणार्थी तो बड़े आत्मा होते हैं—तुम तो एक विचारी [illegible]—'

उसने आहत होकर कहा, 'नहीं, नहीं, नहीं! भागकर नहीं जाऊँगा, शरणार्थी नहीं बनूँगा! यही मुश्किल है, पर गुलाम जिन्दा तो रह सकते हैं और अपने साथ होते हैं। पर शरणार्थी—शरणार्थी सब अकेले होते हैं—और [illegible] किसके?'

बात यह थी तो हम पासपोर्ट लिखानेका पता गया—पूर्वी बर्लिनमें बिना स्थायी पता नहीं मिल सकता—क्योंकि अगर पश्चिमी जर्मनीका हो तो उस पताको [illegible] लिया जायगा। पहले चौंका, फिर सब स्थिति याद आ गयी, चुपचाप पासपोर्ट लिया लिया।

अब रातमें पश्चिमी बर्लिनके इस छोटे होटलकी तीसरी मंजिलके बारजेका ध्वान्त देखता हुआ सोच रहा हूँ, कौन-सा अच्छा है—अपने देशमें दासवत् रहना या दूसरोंके बीच अनाथवत्?

यह कहना था हिन्दुस्तानी भाई लोग हैं, ठीक ही है, पर भाग्यवान मानो इतिहासने उन्हें बाध्य तो नहीं किया। यह उनका सौभाग्य रहा है। वे पूरापर अनभिज्ञता [illegible] नहीं निकाल सकते, पर सहानुभूति तो दे सकते हैं।

⁂

यूरोपका स्नायु-केन्द्र : बर्लिन

नगरका एक ध्वस्त बन चौक। आधुनिक नगरका आंशिक चौक जिसका नया नाम था दयष्ट नया नाना वर्ग निरन्तर ध्वन्सका बात करात रहना भी आवश्यक समझा जाना है।

चारों मण्डलम सभी ओर काँचका बना-बना खिड़कियाँ जिनके भीतर प्रकाश जगमगा रहा है। मन्चपर उनसे छनकर आया हुआ रोशनी मन्चका बत्तियाकी रोशना धीमी हुई मोटरोंकी रोशना—थिर और चलन्त धारियाम बटती हुई नानाविध दीप्तियाके जाल। भीतरी मध्यम अंधकार का एक वृत्त जिसम ध्वंसा मी आभास कि कंगूरपर टूटा हुआ महराबें और शिखर हैं फिर महमा और भी गहरे अन्धकारसे एक कुएँम निकला हुआ गिरजाघरकी एक टूटा मीनार।

बर्लिनक राजमार्ग कुरफ्युर्स्टेनडाम (सरदारोंका मार्ग) के मुख्य चौक म खड़ा हुआ यह ध्वस्त गिरजाघरका यह खण्डहर ज्यों-का-त्यों रहने दिया गया है और उसके आसपास सब कुछ फिरसे बना और बसा दिया गया है। गिरजाघर एक समय बर्लिनकी बहुमूल्य निधि समझा जाता था उसके खण्डहर भी कम सुन्दर नहीं हैं और चारों ओर नये निर्माणसे घिर गए होनेके कारण उसका सौन्दर्य मानो और समृद्ध हो आया है—उसका प्रतीकत्व इन संस्कारोंसे पुष्ट होकर और साथ ही आम नागरिक जीवनसे आग्रहपूर्वक असम्पृक्त रहकर और भी शक्तिशाली हो गया है।

मैं चाहता तो इसमें घूमकी दीवारोंसे ऊपर उठ सकनेकी शक्तिका ही प्रभाव देखता इससे अधिक कुछ नहीं। या नैतिक प्रचारका आग्रह कुछ अधिक होता तो इस युद्धकी ध्वंसात्मकताका प्रभाव मान लेता। या निरा

सौंदर्यवादी—यद्यपि कुछ विकृत प्रवृत्तिका !—होता तो मृत्यु या विनाश का सौन्दर्य भी स्पष्ट देख सकता। या चाहता तो गिरजाघरकी स्थितिको यों भी देख सकता कि आस-पास सब कुछका पुनर्निर्माण करनेके बाद स्टोन-सा गिरजाघरका ढाँचा इसमें वर्तमानका व्यंग्य-सा थिएटर प्रस्तुत किया है—एक नाटकीय विषमता द्वारा आगन्तुकपर अधिक प्रभाव डालनेका प्रयत्न किया है।

किन्तु मन जो इससे उसके पीछे कहा यह मन भले ही रहा हो वास्तवमें स्पष्ट भिन्न था। या किसी भी चीजमें किसी प्रतीकका उद्भावन जितना उस चीजको देखता है उतना ही अपने आपको प्रकट करना भी और कोई चाहे तो यत्न कर सकता है कि मुझे गिरजाघरमें जो दीखा उसमें मेरा ही दोष। किन्तु मन यही देखा कि यह टूटा हुआ गिरजाघर मानो युद्धोत्तर यूरोपका प्रतीक है—सुन्दर गठित जीवन और विनाशके विरोधी आदर्शोंके कारण भीतर-ही-भीतर गिरा हुआ धर्म विश्वासमें डिगा हुआ, मानवीय और धर्म प्रेरणाके आगमन भावमें विरोधी दबावोंसे छिन्नभिन्न हुआ और बाहर और भीतरसे भी प्रखर आक्रमण ऐसा आला जिसे कि उसे अनदेखा न किया जा सके।

यूरोपमें प्रवेश करनेके कुछ दिन बाद ही मैंने किसीसे कहा था कि भारतीय शहर स्वच्छ और शान्त होते हैं किन्तु यूरोपीय शहर अधिकाधिक गया किया। किसी भी साधारण स्थापत्यकी तरह स्थान न समझ और इन दोनोंका अन्त है लेकिन कुछ दिनोंबाद अन्तर मनमें आता चला रहा और अब भी यही है। और मन ऐसा लगा कि जिस प्रकार यूरोपके मनुष्य का खण्डित रूप और है उसी तरह यूरोपका अस्तित्व चेहरा मूलतः खण्डित चेहरा है।

और गिरजाघरका आधा खण्डित खाली शिखर मानो इस गरप विकृत चेहराका प्रतीक बना खड़ा था।

यह कदाचित् इसी पश्चात् या वर्तमान भावनाका प्रभाव था कि बर्लिन प्रवासमें जो कुछ मैं संचित कर सका उसमें आँखोंकी स्मृतियाँ प्रधान नहीं हैं। बल्कि अनुभूतियोंकी या बातचीतोंकी स्मृतियाँ ही उभर कर सामने आती हैं। यह नहीं कि वहाँ देखा कम – या कि देखा उसका कम था, यही कि देखी हुई प्रत्यक्ष वस्तुके साथ किसी मानव-व्यक्ति—या व्यक्ति-समूह, जाति या मन—की अनुभूतियाँ इस प्रकार गथी होती थीं कि आँखोंसे ग्रहण की हुई छापकी अपेक्षा कानों द्वारा ग्रहण की गयी छाप कहीं अधिक गहरी होती थी। एक ताल देखने गया था, ताल बहुत सुन्दर था और पहले पतझड़के रंगोंने उसके किनारे और भी सुन्दर बना दिये थे; लेकिन उसे स्मरण करता हूँ तो आँखोंके सामने उतना स्पष्ट कुछ नहीं आता, अपनी मार्गदर्शिकाकी कही हुई बातें ही कानोंमें अधिक स्पष्ट गूँजती हैं। पानीमें सूखते पत्तों और अधनंगी डालियोंकी काँपती छायाएँ देखकर वह अर्द्ध स्फुट स्वरोंमें जिस कल्पना-लोककी बात करती रही उसमें जिस गहरी व्यथाको अवचेतन भावमें संचित कर सकी थी वही मेरे सम्मुख आता है। वन प्रदेशमें एक छोटे-से कस्बेके घरमें बैठकर काफ़ी पी थी लेकिन स्मरणमें केवल उस घरका बूढ़ा सामने आता है जिसने काफ़ी लाकर मेज़पर रखी थी। कोई कारण नहीं था कि उसे मेरे ऊपर सन्देह हो या मुझसे डर हो लेकिन यह स्पष्ट था कि जिस दुनियामें वह रहता था उसमें जो प्रतिनिधि होता है उससे भिन्न कुछ भी होना (जैसे मेरे-से विदेशीकी उपस्थिति) केवल अनिष्ट ही हो सकता था। जाना कभी नहीं था, गा उर था—यद्यपि गाउस्सीवर निरन्तर चिन्तित रहते थे कि जानावाला ना जीवन होता है। एक नाइट क्लबमें गया था, नाइट-क्लबका वातावरण और ही होता है और मेरे लिए तो वह बस अपनी पहली अनुभव था लेकिन पहले याद आता है यह कि कोई मज़ाक कर रहा है सारे पूर्वी बर्लिनमें यही एक जगह है जहाँ सामने बाहर मज़ाक किया या सुना जा सकता है।

निस्सन्देह मैं पूर्वी और पश्चिमी बर्लिनके अनुभवोंको मिला गया हूँ। निस्सन्देह दोनों खण्डोंके वातावरणमें आकाश-पातालका अन्तर है और पूर्वी और पश्चिमी जर्मनीका जीवन शायद सबसे इस अन्तरको प्रतिबिम्बित करता है—पूर्वी जर्मनीसे मेरा परिचय नहीं है, केवल उसकी राजधानी पूर्वी बर्लिन है। बर्लिन पूर्व और पश्चिमके बीच बाल्का वालें हैं और एक सतत खाल्टम रोगी है, शक्तियोंके स्वाभाविक परिणाम है। एक दूसरा आयाम भी है जिसमें यह अन्तर स्पष्ट नहीं रहता, क्योंकि यह स्वयं परिणाम है। बर्लिनको या जर्मनीको या यूरोपको चाहे अगर दो विरोधी शक्तियोंने सचमुच विभक्त किया हुआ चाहे तो इसलिए कि यूरोपीय जातियाँ जिस आधार भूमिपर खड़ी रहती हैं वह विभाजित और अन्तर्वि-रोधग्रस्त हुई है। बर्लिन यूरोपका स्नायु-केन्द्र है और जिस स्नायु जाल का यह केन्द्र है वह रुग्ण है, अति-संवेदनशील और असहिष्णु है। उसका ज्वर आपातत: सनसनी उत्पन्न करता है और विश्राम कभी नहीं कर पाता इसलिए निरन्तर और भी कमजोर और भी असहिष्णु और भी विक्षुब्ध संवेदनशील होता जाता है।

बर्लिनकी वर्तमान स्थितिसे जो परिचित नहीं हैं उनके लिए दो-चार समझानेके लिए अवकाश चाहिए। मैं इसमें यह कि जर्मनीके भाग बने हैं जो अलग-अलग देश और राष्ट्र माने जाते हैं। पश्चिमी जर्मनीकी राजधानी बॉन है, पूर्वी जर्मनीकी बर्लिन। महायुद्धके बाद बर्लिनपर चार महाशक्तियोंका संयुक्त सैनिक शासन होता था। अनन्तर ब्रिटेन, फ्रांस और अमरीकाके सैनिक अधिकारियोंने सैनिक नियन्त्रण उठाकर अपना खण्ड नगर शासनको सौंप दिया, दूसरा भाग रूसी सत्ताके अधीन रह पूर्वी जर्मनीकी सरकार स्थापित हुई और पूर्वी जर्मनीकी राजधानी इसी खण्डमें है।

कानूनकी दृष्टिसे बर्लिन खुला शहर माना जाता रहा, अर्थात् उसके एक खण्डसे दूसरे खण्डमें जानेपर कोई नियन्त्रण या प्रतिरोध न था। बाद बीचमें कठिनाइयां और संघर्षोंके बावजूद यह स्थिति बनी रही है। कहनेको बर्लिन एक और अविभाजित है और आन-जानपर किसी तरहकी कोई रोक नहीं है, लेकिन वास्तवमें दोनोंके बीचमें कितनी गहरी खाई है यह वहां पहुंचकर ही जाना जा सकता है। शासनिक स्तरपर जो भेद है, वैचारिक अथवा मनोवैज्ञानिक खाई उससे भी कहीं गहरी है। बल्कि प्रशासन अथवा अर्थ-व्यवस्थाके जो भेद दीखते हैं उनके मूलमें यह मानसिक भेद ही है।

पश्चिमी बर्लिन सम्पन्नताकी ओर एक आश्वस्त यद्यपि सतर्क आशा वादकी प्रतिमूर्ति है। उसकी भरी पूरी दुकानोंमें नाना प्रकारका माल है बाजारोंमें चहल पहल है। पूर्वी बर्लिनकी दुकानोंमें सजावट बिलकुल नहीं है क्योंकि माल भी कम है, व्यापार बेचनेवालेकी गरजसे नहीं, खरीदने वालेकी गरजसे चलता है। पसन्दकी गुंजाइश नहीं है, खान-पीनकी चीजें सरकारी दूकानोंसे मिलती है और उसके बाद बुनियादी आवश्यकताओंकी पूर्ति सरकारी या व्यवसायी दुकानोंसे होती है। पश्चिमी बर्लिनमें जैसे उत्साह और चहल-पहल दीखती है पूर्वी बर्लिनमें उसी तरह एक सन्नाटा मानो सारा नगर टोह टोहकर डरता डरता कदम रख रहा हो। बाहरी व्यक्तिको स्पष्ट दीख जाता है कि युद्ध और पराजयके बादके अनिवार्य अनिश्चयने पश्चिममें फिर एक धैर्ययुक्त साहसका रूप ले लिया है किन्तु पूर्वमें वह एक कसमसाते आतंकमें बदल गया है।

एक शहरको दो में बांटनेवाली इस मानसिक दीवारके स्थूल और वास्तविक चिह्न जगह जगह दीखते हैं। पश्चिममें इस गिरजाघर जैसे दो चार स्मारकोंको छोड़कर सब कुछ फिरसे निर्मित हो गया है। इसके विपरीत पूर्वमें सरकारी इमारतों और स्तालिन आले जैसे दो एक राज मार्गोंको छोड़कर नगरका अधिकांश वैसा ही ध्वस्त और खण्डित पड़ा है। पूर्व और

पश्चिमकी सीमा रेखापर सैनिक पंक्तियाँ बढ़ानेकी कोई आवश्यकता नहीं है क्योंकि ध्वंसावशेषोंकी एक अटूट रेखा ही सीमा बना देती है। शहरके यातायातपर कोई रोक न होनेपर भी, नगर रेलको छोड़ यातायातका कोई साधन ऐसा नहीं है जिसका एक खण्डसे दूसरे खण्डमें जानेके लिए उपयोग किया जा सके। पश्चिम बर्लिनकी टैक्सी सीमासे सौ गज पहले रुककर सवारी उतार देती है, वहाँसे पैदल सीमाके दूसरी ओर सौ गज जाकर दूसरी टैक्सी ली जा सकती है—अगर मिल जाय तो! मुझे अपने बीस-पच्चीस फेरोंमें कभी भी पूर्वी बर्लिनमें टैक्सी न मिल सकी, पैदल प्रवेश करनेके बाद मीलों पैदल ही घूमा और अन्तमें रेलगाड़ीसे वापिस लौट आया। नगरके दोनों खण्डोंमें टेलिफोन व्यवस्था है, लेकिन एक ओरसे दूसरी ओर टेलिफोनका सम्बन्ध नहीं है। शहरके दोनों भागोंसे अलग-अलग दुनियाके अधिकतर देशों और नगरोंको टेलिफोन किया जा सकता है लेकिन पूर्वी बर्लिनसे पश्चिम या पश्चिमी बर्लिनसे पूर्व टेलिफोन नहीं किया जा सकता। इतना ही नहीं, बाहरी आदमी पूर्वी बर्लिनमें भी किसीको टेलिफोन नहीं कर सकता क्योंकि टेलिफोनकी कोई डाइरेक्टरी वहाँ प्रकाशित नहीं की जाती। यदि आप पहलेसे कोई नम्बर जानते हों तो बात दूसरी है, नहीं तो एक मात्र उपाय यह है कि आप डाकसे पत्र डाल दें और अपना पता दे दें। अपना टेलिफोन नम्बर भी आप शायद नहीं दे सकते क्योंकि होटलमें ऐसा हो सकता है कि आपको नम्बर न बताया जाय, पूछनेपर यही उत्तर दिया जाय कि आप पता दे दीजिए जिससे आप सम्पर्क करना चाहते हों वह स्वयं टेलिफोन कर लेगा।

पश्चिमी बर्लिनके चौकोंमें उद्यान हैं, बच्चे खेलते हैं, अच्छी पोशाकोंमें स्त्रियाँ घूमती हैं, हँसी-मजाकके स्वर सुनाई पड़ते हैं। पूर्वी बर्लिनके चौक उजड़े और सपाट और सूने होते हैं, और उनके चारों ओर पहरेदार हाथ और बन्दूक कन्धोंमें लिए [illegible] जयकार और नारे कम सुनकर और अधिक बन्द दबे जान पड़ते हैं। हँसी-कवाह जो सैनिक या प्रदर्शन

वारा चौकस भर जाते है और फिर बिगड जाते। उनमें भी चौकसी स्वभाव नहीं बनता। पश्चिमके चौर समझनेके लिए आमोद प्रमोदके लिए है पर वे चौकस प्रशासनके लिए आन्दोलनके लिए।

पश्चिमसे जय विनिमयपर कोई प्रतिबंध नहीं है विदेशी मुद्रा भी साधारण नियमानुसार बदला जा सकता है। पूर्वी और पश्चिमी जर्मन मुद्राओं भी विनिमय निर्बाध रूपसे होता है बराबर और बल दोनोंके लिए एक पश्चिमी मार्क (जो लगभग सवा रुपयेके बराबर होता है) मार्केट पूर्वी मार्कोंके बराबर समझा जाता है। यही विनिमयकी सरकारी दर है और यही आनुपातिक व्यापारिक मूल्य। पूर्वी बर्लिनमें विनिमयपर कड़ा प्रतिबंध है। कोई विदेशी मुद्रा सरकारी बैंकको छोड़कर कहीं भी परिवर्तित नहीं की जा सकती और वह भी वहाँकी सरकारी दरसे जिसके अनुसार एक पूर्वी मार्क एक पश्चिमी मार्कके बराबर गिना जाता है—अर्थात कोई भी विदेशी सिक्का या पश्चिमी मार्क भी पूर्वी बर्लिनमें भुनाने पर उसका एक चौथाई कम मिलता है—रुपयेमें साढ़े बारह आने मनाईमें कट जाते हैं।

नगरके दो भागोंमें मुद्राके सम्बन्धमें ऐसी भिन्न व्यवस्थाओंके क्या विलक्षण परिणाम होते हैं इसका ब्यौरा देना यहाँ आवश्यक नहीं है। उससे अपनी रक्षाके लिए पूर्वी बर्लिन यह व्यवस्था करता है कि किसी विदेशीसे अपनी मुद्रा भी नहीं लेता और पश्चिमी जर्मनीकी मुद्रा भी नहीं केवल डालर या स्टर्लिंग माँगता है। जर्मन मुद्रा—पूर्वी या पश्चिमी—केवल उस दशामें स्वीकार की जाती है जब वह पूर्वी बर्लिनके सरकारी बैंकसे डालर अथवा स्टर्लिंग देकर प्राप्त की गयी हो और वहाँसे इसका प्रमाण पत्र भी लिया गया हो जो कि साथ दिखाया जा सके अर्थात प्रकारांतरसे फिर केवल डालर या स्टर्लिंग ही स्वीकार किया जाता है।

विदेशीको किसी भी स्थानमें कुछ भी खरीदनेके लिए पासपोर्ट दिखाना पड़ता है। अर्थात समझ लीजिए कि अपरिचित हर किसीको पासपोर्ट

दिखाना पड़ता है—क्योंकि पासपोर्ट देखकर ही तो यह निश्चय हो सकता है कि कौन किधरका है। होटलमें भोजन करनेके लिए या सिगरेट खरीदने के लिए पासपोर्ट दिखाना पड़ता है। किन्तु पासपोर्ट हाथमें लेकर लिए फिरना जरूरी नहीं, उसका नाम होटल या स्टेशन वाला दर्ज कर लिया जायगा और जिसमें उसका नाम होटल या स्टेशन में सुविधानुसार तैयार है—या अगर जर्मन मान दें तो उपर्युल्लिखित प्रमाण पत्र साथ—अर्थात् प्रमाण-पत्र दिखाने बाद उस यह सुविधा हो जाती है कि साथ चार-गुना दाम देकर भोजन कर ले। यह सुविधा भी विदेशियोंके लिए है, जर्मनोंके लिए नहीं—पश्चिमी जर्मनीका पासपोर्ट दिखानेवाला भी जर्मन, मुझे उनका सुविधा नहीं हो जायगी। मेरे बार यह अनुभव हुआ कि पश्चिम जर्मन नागरिक साथ पूर्वी बर्लिन आकर या भोजनालयमें जानेपर मोहरोंके बिना भोजन किये बढ़ता था। फिर पूर्वी बर्लिनमें मैं था तो बिना पूर्वी सिक्के साथ ही भोजन करना पड़ा। यहाँ पश्चिमी जर्मन साथ आनेपर पश्चिम बर्लिन लौटकर ही भोजन करता। पश्चिम बर्लिनमें पत्र या पश्चिम जर्मन नागरिक बिना सिक्के आदिके भोजन कर सकते थे और किसी भी समयमें नियम विनिमय दरपर नाम चुका सकते थे। पश्चिम बर्लिनमें भोजन करनेका नियम पत्र बर्लिनके लोगोंके लिए प्राकृतिक हो होता था क्योंकि एक तो पश्चिम और पूर्वके बीच गमनागमन था दूसरे दोनोंका वातावरण भिन्न और स्वतन्त्र होता था और उसमें परस्पर बातचीत हो सकती थी। पूर्वी बर्लिनमें जनताको बार यह अनुभव हुआ कि किस परिस्थितिमें प्रश्न पूछनेपर पर बार गलत भावना उधर देखकर बन्द... बर्लिन... अर्थात् ... पश्चिम जर्मनी थे। यानी बर्लिन। ... (या स्वतन्त्र था।) गन्ध माया... गुजरता है और विश्वास (या स्वतन्त्रता था।) ... धारन विचार प्रकट किये जा सकते हैं

... मालूम पड़ा कि मैं ... ... हूँ या नहीं?

मरे नकारात्मक उत्तर देनपर फिर पूछा गया कि क्या मुझ नाइट क्लबमें जानपर एतराज ह ? क्या म उस अनतिक समझता हू ?

मन उत्तर दिया कि एसी कोई बात नहा ह मुझे नाइट क्लबका अनभव नहा ह न उधर विशष रुचि ह। थोडा-सा कौतूहल है अवश्य पर एसा नहा कि उसे शान्त किय बिना म अपनको अन समय या मानू कि मुझमें बौद्धिक जिज्ञासा नहो ह।

मुझ कहा गया कि नतिक आपत्ति न होनपर मुझ ह्यायो म अवश्य जाना चाहिए। क्या ? इसलिए कि पूर्वी बर्लिनम और शायद समूच पूव जमनीमें वह एक मात्र जगह ह जहाँ शासन और शासकोके बारमें मजाक सुना जा सकता ह। पश्चिमम लोग शासनके बारमें हसी मजाक करते ह और प्रधान मन्त्री या मन्त्रि मण्डलपर व्यग्य कर सकत ह लकिन यू काट मक जोक्स एबाउट उलब्रिश्ट और पिएक ।

कहना न होगा कि ह्यायो नाइट-क्लबकी इतनी सिफारिश काफी थी। म दो बार वहाँ गया भी। दीप्त अन्तरग वातावरण शराबकी भाप और तम्बाकूके धुएकी गधाती धुध थोडी देरके लिए स्नायविक तनावको शिथिल करके मानवीय हो गय चहर हल्का फुल्का सगीत बीच-बीचमें वसा ही हल्का नत्य। ग्यारह और साढे ग्यारहके बीच दस पन्द्रह मिनटका हास्य व्यग्यका वह कायक्रम जिसके लिए ह्यायो की इतनी प्रसिद्धि थी और जिसके कारण सब लोग वहाँ एकत्र होत थे। दो या तीन व्यक्ति यह कायक्रम उपस्थित करत थ। समकालीन भारतमें एसा कोई कायक्रम नहीं होत जिनकी इससे तुलना की जा सके किन्तु गयी पीढी तक उत्तर भारतमें जो स्वाग होत थ या पूर्वी प्रदेशम भाड लोग जसे कायक्रम प्रस्तुत किया करत थ जिन्हें व स्मरण ह व जान सकेंग कि किस चटोले ढगस समकालीन शासक-वगपर व्यग्य किया जाता था। उसस अधिक गहरा कुछ ह्यायो में नहा था लेकिन जो था वह उससे कम मनोरजक भी नहीं था और इसलिए और भी अधिक आवश्यक था कि परिष्कृत होन

के साथ-साथ वह इतना दुर्लभ था। निरानन्द जीवन-संघर्षमें बंधे हुए देशमें बस इस एकमात्र स्थानमें राजनैतिक व्यक्तियोंकी स्वाधीनता बची रह गयी है। इसकी पड़ताल करनेपर अनेक प्रकारके उत्तर मिले। एक उत्तर यह था कि नाइट-क्लबका प्रवासी इटालियन मालिक स्थानीय पुलिसको खिला-पिलाकर अपना व्यवसाय करता है और धन कमाता है। दूसरा यह था कि सरकार भी यह समझती है कि देशके गलाघोंट वातावरणमें कहीं तो इसकी छूट होनी चाहिए और व्यंग्य प्रवृत्तिको एक जगह केन्द्रित कर देनेसे अन्यत्र उसके दबावसे बचाव हो जाता है। अर्थात् हायो एक प्रकारका 'सेफ्टी वाल्व' है जो बर्लिनका बायलर फट जानेकी आशंकाको दूर करता है। तीसरा उत्तर यह था कि ऐसे एक स्थानके द्वारा सरकारके लिए जासूसीका काम आसान हो जाता है—सभी असन्तुष्ट लोग यहीं जुटते हैं और इस प्रकार अपने-आप उनकी सूची तैयार हो जाती है। अर्थात् हायो वास्तवमें खुफिया-पुलिसके एजेंटका काम करता है।

कौन-सा उत्तर सच था मैं नहीं जानता। सम्भव है कि तीनों ही गलत हों। लेकिन तीनोंमेंसे कोई भी सच हो सकता है। और यह भी असम्भव नहीं है कि तीनों सच हों क्योंकि कोई बुनियादी विरोध उनमें नहीं है।

उत्तर जो भी हो उल्लेख्य वह वातावरण है जिसमें ऐसी सम्भावनाएँ हो सकती हैं और हायो जैसी संस्थाको इतनी सफलता मिलती है।*

× × ×

डायरीसे कुछ उद्धरण

'हम लोग पूरब देशके वासी हैं। पुराणको मानते बहुत हैं लेकिन आचरण हमारे लिए नयेका ही अधिक होता है। यूरोपमें औसत व्यक्तिके

---

* यह नाइट-क्लब सन् १९५६ में बन्द कर दिया गया। उसका मालिक पश्चिम जर्मनीमें है।

लिए भी पुरानेका आकर्षण आश्चर्यजनक रूपसे बलवान होता है। और पुरानेमें मनुष्य केवल ऐतिहासिक-पौराणिक या धार्मिक महत्वकी चीजोंका नहीं है—यद्यपि उस तरहका तो हम भी पाखण्ड किए और सानाकी नजाना और मित्रता और तानमन्त्र की ओर आकृष्ट होते हैं। किन्तु यूरोपमें पुराने व जर्जर पुराना सारा जीवन भी आता है। एक तरहसे कहा जा सकता है कि यूरोपीयकी रुचि शुद्ध सामाजिक सांस्कृतिक प्राचीन की ओर अधिक है जबकि हमारी रुचि पौराणिक ऐतिहासिककी ओर है। पुराने शहरके पुराने मकान पुरानी गलियाँ पुराने गिरजाघरोंके चौक खंडहराम बने आज पुराने भटियारखाने—इन सबके प्रति यूरोपमें आश्चर्यजनक कौतूहल होता है। इसका कारण शायद यह है कि वहाँका पुराना संस्कृति यान्त्रिक वैज्ञानिक दबावसे तेजीसे मिटता जा रही है और लोगोंमें उसका दर्द बहुत है। रोम और नेपल्ससे लेकर स्टाकहोमतक शहरके पुराने भागोंकी गलियोंके प्रति एक-सी ममता और लगाव पाया जाता है और ऐसी गलियोंमें निरुद्देश्य भटकनेका अवसर मिलनेपर लोग उसका पूरा उपयोग करते हैं। मानो एक खोया हुआ काल निरपेक्ष नहीं तो मध्ययुगीन संस्कृतिके लिए सब तरस रहे हों और हम? मुझे याद आता है दर्शनका एक फ्रांसीसी प्रोफेसर एक भारतीय दूतावासमें पूछने गया था कि क्या भारतमें भारतीय दर्शनके सम्बन्धमें कोई नयी पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं जिन्हें वह अपने पुस्तकालयके लिए मंगा सके तो भारतीय सांस्कृतिक अधिकारीने सगर्व उत्तर दिया था दर्शन? आधुनिक भारतमें हमारी प्रवृत्ति ऐसी ओर नहीं है। हम बड़ी तेजीसे उन्नति कर रहे हैं।

—नि।

बर्लिन चिड़ियाघरके ...व स्टेशनसे रेलमें सवार होकर पूर्वी बर्लिन

र प्रोफेसरोंसे स्टेशनपर उतरा, जहाँ मास्टर [illegible] से भेंट हुई। बर्लिनका संग्रहालय देखा, वहाँ मथुराके भारतीय चित्रोंका सूचीपत्र लिया, पश्चिम एशियावाला कमरा देखा जो एक समय सारे यूरोपमें प्रसिद्ध था, किन्तु जो अब देखनेको बहुत कम है, क्योंकि बर्लिन संग्रहालयकी अधिकतर मूल्यवान वस्तुएँ रूसमें हैं। संग्रहालयसे लौट घरमें भोजन किया। शाम को हम लोग शहरकी सैर करने निकले। कोई पास ना मिलना [illegible] या तो दुबारा रेलमें बैठ कर शहरसे बाहर निकल जाते या पैदल [illegible] पर [illegible] गये। हम लोगोंने दूसरा मार्ग चुना, क्योंकि [illegible] रोज रात अच्छा नहीं लगता। एक बार [illegible] तक [illegible] किया। [illegible] पर [illegible] कर वहाँसे आगे पैदल जाना ही ठीक है।

[illegible] पुरानेपनका आकर्षण तो मेरे लिए पसन्द आय है पर यह [illegible] सदा होता है। महायुद्धके ध्वंसावशेष पर्याप्त नहीं हैं। और पश्चिमको तो महायुद्धके आसपाससे इटलीकी तरह हटाया भी नहीं गया है। [illegible] भी नहीं हो पाता है और यहाँके निवासियोंका तो कहना क्या? घरोंके भीतर या अपने अपने आँगनमें व्यक्ति या परिवार जो कुछ कर सकते हैं, करते हैं। और [illegible] अव्यवस्था और [illegible] आवागमनके व्यवस्थित और सुरक्षित [illegible] बिना सुधार आते [illegible] है। [illegible] यहाँ एक [illegible] हो जाता है, क्योंकि इस प्रकार [illegible] सम्बन्ध [illegible] समाजका और [illegible] जीवनका [illegible] दर्शन किया है। बल्कि [illegible] कारण और [illegible] कुछ [illegible] हैं, क्योंकि [illegible] में हो नहीं आता [illegible] पूरा। घरोंसे [illegible] में [illegible] है। [illegible] [illegible] [illegible] उनके पुराने [illegible] और [illegible] हैं और [illegible] प्रकाशित [illegible] हो [illegible] या [illegible] [illegible] नाना [illegible] मानव [illegible] को स्वीकार कर लिया है। बल्कि [illegible] और [illegible]

बना लिया हो और उसके भीतर स्पन्दित और विकसित हो रहा हो। पुराने यातनाघरोंमें दमन-शिकार ईसाई जैसे समाधियोंके तले घरोंमें रहते थे वैसे ही आधुनिक निर्वैयक्तिक अत्याचारसे ग्रसित कितने लोग इस प्रकार अपने ही ध्वसावशेषोंमें छिपकर जीवन बिता देते हैं।

यह बात पूर्वी बर्लिनमें ही हो ऐसा नहीं है। और भी शहरोंमें ऐसी स्थिति होती है। बल्कि ऐसा भी नहीं है कि व्यक्तिके ऊपर अत्याचार केवल उन्हीं संगठनोंमें हुए हों जिनमें व्यक्तिको व्यक्ति नहीं माना जाता केवल सामाजिक संगठनकी इकाई माना जाता है। जिन समाजोंमें व्यक्तिको प्रधान माना जाता है और समाजको उनके अन्योन्य सम्बद्ध व्यापारोंका पुंज वहाँ भी अनजाने ऐसा अत्याचार होता है और ऐसी परिस्थिति आती है कि व्यक्ति अपनी रक्षाकी व्यवस्था करे। रक्षा इस या उस कानून या प्रवर्त्ति या अत्याचारसे नहीं केवल अपनी नगण्यतासे। कर्मीकी किकर्तव्यता का यह खतरा आधुनिक मानवताका सबसे बड़ा संकट है। समाजवादी संगठनोंमें वह अधिक स्पष्ट है उसकी ओर प्रवृत्ति अधिक मुखर और क्रियाशील। इसे उसी तरह अच्छा मानना चाहिए जिस तरह जो रोग अनजाने भीतर ही भीतर खोखला कर सकता है उसका प्रकट हो जाना अच्छा होता है—वह निदान और चिकित्साको आसान बनाता है।

चिड़िया घर और जल-जन्तु घर देख लिये। फिर रेलमें बैठकर पूरब की ओर। लेकिन आज पूर्वी जर्मनीका वर्षोत्सव है और सभी सड़कोंपर उसकी तैयारियोंकी चहल-पहल है। मार्क्स एंगेल्स चौक जिसे सब परेड चौक कहते हैं झण्डोंसे सजाया गया है। आने जानेके रास्ते बन्द हैं। इमारतोंपर यातायातके खम्भोंपर लिखे गये नारे टाँग गये हैं। सब ओरसे आत्मकथ्य अक्षर मानो मकानोंमें भी गला फाड़ फाड़ कर चिल्ला रहे हैं।

लेकिन प्रदर्शन दर्शन या नारे सुननेके लिए तो मैं यहाँ नहीं आया।

स्टेशनमें ही एक सिनमा घर है जिसमें निरन्तर छोटी-छोटी रीलें दिखायी जाती रहती है। आप पौन घण्टे उसमें बठकर डोनाल्ड डक कुछ खबरी फिल्म और डनी के द्वारा संयुक्त राष्ट्र शिशु रक्षा फंड के लिए बनायी गयी रोचक फिल्म देखकर मैं फिर कुफुर्स्टेनडाम लौट आया। भोजन करके फिर रेल पकड़ी। वस्ट क्रोएत्स स्टेशनपर उ०से भेंट हुई जिनके साथ बर्लिन मोआबिटके सुनसान अन्तिम प्रदेशमें भटकता रहा और तरह-तरहके वृत्तान्त सुनता रहा। रात एक बजे उ०को गाडीमें सवार करा कर दूसरी गाड़ीसे होटल लौट आया।

फिर रेलसे फ्रीडरिशस्ट्रास जो नगर रेलका और पूर्वी जमन रेलका जक्शन है। वहाँसे उ०को साथ लेकर दूसरी गाडीमें सवार होकर पूर्वकी ओर फ्रीडरिशहागन लाल बन्गोमीना स्ट्रा होते हुए रावर और पानी पीकर पदल मिगलसी झीलके घाटपर पहुँचे। सरका मौसम समाप्त हो चुका है इसलिए घाटपर नाव नहीं मिलेगी। हम लोगोंने पहले ही झील का चक्कर लगानेका निश्चय किया और चल पड़े। झीलके दो हिस्से हैं बल्कि यह कहिए दो झीलें हैं—ग्रासे (बड़ी) और क्लाइने (छोटी)। एक नहर इन दोनोंको मिलाती है। इसी नहरके किनारे एक छोटा-सा कहवा घर है मौसममें शायद यह भरा-पूरा रहता हो लेकिन आज वहाँ सन्नाटा छाया है। सुन्दर वन प्रदेशका सन्नाटा कम-से कम मुझे प्रीतिकर लगता है लेकिन वर्लिनके सन्नाटेमें एक अजीब मनहूसियत है। बटर जिस तरह हम लोगोंको घूर घूर देखता है, उससे यह मनहूसियत और भी बढ़ती सी जाती है। उसकी कृशता और उदासीन दृष्टि मानो कह रही है क्या जो आज कल सा स्टीका मौसम न होता फिर तुम लोगोंको सर करनेका अवकाश कैसे मिल गया? और आज तो रविवार दिन भी नहीं है फिर तुम लोग क्या मटरगश्ती करने निकल पड़े? क्या काम छोड़कर आये हो? या कि

तुम्हारे पास कोई छिपा हुआ मन है जिसके कारण तुम लोग ऐसा समाज-निरपेक्ष जीवन बिता सकते हो? मेरा दिल यह जानना चाहता है कि आज जब दिन यहाँ कोई नहीं आयेगा फिर भी हम सरकारी कहवाघरमें सरकारी नौकरी करते हुए सरकारी नौकरी बजा लानेको मजबूर हैं और तुम जैसोंके लिए जो कि निठल्ले और काम चोर होते हैं। शायद हमसे ज्यादा चतुर चालाक भी हो। और क्या जो यह लड़का तो जैसे मालूम होता है और यह आत्मा तो बिल्ला है—जैसे इसका कामसे दिल भरा और इस बिल्लीके साथ घूम रहा है? क्या यह जासूस है? क्या पुलिसको रिपोर्ट करनी चाहिए या पुलिसको रातभर गिरफ्तार करवा देना चाहिए?

सम्भव है कि मेरी संवेदना अति क्रियाशील हो रही हो। सम्भव है कि मेरी कल्पनाशक्ति भी योग दे रही हो। लेकिन साधारणतया मेरी संवेदना इस मामलेमें मुझे धोखा नहीं देती कि किस व्यक्तिकी भावना मेरे प्रति कैसी है वह जैसा है वैसा क्यों है इसके कारणके अनुमानमें भले ही भ्रम रहता हो।

जो हो हम लोग जल्दी ही कहवाघरसे बाहर निकल आये और नहरके दूसरे छोरपर जहाँ एक छोटा-सा टीला-सी थी पानीके किनारे अमराईके एक कुंजमें बैठ गये। नहरके किनारेपर लगा हुआ एक बेंत का पेड़ अपना माथा झुकाकर पानीको सहला रहा था। पतझड़के रंगोंसे रंगे अमराईके सूखे पत्ते धीरे धीरे झरकर नहरकी निश्चल सतहपर गिरते थे और उनसे फैलते हुए कम्पनके वृत्त धीरे धीरे दूर जाकर विलीन हो जाते थे। पत्ते रंगीन थे किन्तु आकाश उदास होनेके कारण सब पत्तोंका रंग भी दबा-दबा उदास था।

जर्मन जाति शायद यूरोपकी सबसे कलाप्रेमी जाति है। यहाँ कल्पना शक्तिका चमत्कार मैं उनके सब अंगोंमें देख रहा हूँ—यानी रूप कला प्रतिमा (कल्पना) के अंगमें। हमारे देशमें जैसे यह कहना निन्दाकी पराकाष्ठा है कि अमुकको तमीज नहीं है उसी तरह अंग्रेजोंके लिए

यह बड़ा गाली है कि 'अमुकमें सेंस आफ ह्यूमर नहीं है' जर्मनके लिए इतनी मर्म-स्पर्शी गाली है कि 'अमुकमें कल्पना नहीं है।'

किन्तु मेरी साथिनमें जर्मन कल्पना यथेष्ट मात्रामें थी। हम लोगों को चुपचाप बैठे हुए अधिक समय नहीं हुआ था कि नहरपर तिरते पत्ते परियोंकी नौकाएँ हो गये। नहरके पार एक छोटा सा घर था जिसमें शायद नहरका चौकीदार रहता था। हम लोगोंके बैठे बैठे झुटपुटा हो आया था और उस घरकी खिड़कीके भीतर बत्तीका प्रकाश हो गया था। परन्तु बीचमें और फिर बनकी घनी हुई डालोंके बीचमें किरणोंका एक कलम सा मानो पानीपर कुछ लिखने लगा था। मेरी साथिनकी अपलक आँखें मानो उस कलमकी नोकपर केन्द्रित थीं और पानीपर उसका लिखित पढ़ रही थीं—

परियोंकी नौकाएँ.... आज परियोंका अंतिम उत्सव दिवस है, क्योंकि अगले सप्ताह वे सब मर जायेंगी। उनकी नौकाएँ पानीमें डूब जायेंगी। फिर धीरे धीरे पानीकी सतह ठण्डी और कठोर हो जायगी, हिम और तुषार धीरे धीरे बनकी पानीको सब कुछको मार डालेगा। परियाँ डूबकर मर जायेंगी और उनकी आत्माएँ पातालभवनमें कहीं चली जायेंगी।

वह चौंक उठी एक धीमे स्वरमें मन कहा.... फिर वसन्तमें परियोंका पुनर्जीवनोत्सव होगा और वे कमलोंमें और नयी पगडंडियोंमें नृत्य करेंगी और आर्केस्ट्रा बजायेंगी—

न! पहले परियाँ मरती नहीं थीं, पातालभवनमें जाकर अन्धकार आगारकी गुफाओंमें रहने जाती थीं और वसन्तमें फिर नयी किरणोंके संसार बाहर निकल आती थीं। लेकिन अब वैसा नहीं है। अब वे सब मर जाती हैं। मैं जानती हूँ। सब कुछ मर जाता है, कुछ भी बना नहीं रहता है, न कुछ लौटकर आता है।.... मैं जानती हूँ। आखिर हर चीजका दाम चुकाना पड़ता है। परियाँ मोल-तोल नहीं करतीं और दाम चुकानेवाली दुनियामें आ नहीं सकतीं.... दाम चुकाना पड़ता है, हमेशा हर चीजका

दाम चुकाना पड़ता है, यही अच्छा है कि स्वेच्छासे दाम चुका दिये जावें।

नहरकी और अमराईके कुंजकी उदासीसे ज्यादा गहरी उदासी उसके मनकी झीलपर छायी हुई है। उस दारुण दिनमें उसे मेरे सम्मुख संकोच नहीं हुआ है, यह उसका अनुग्रह है। लेकिन झीलकी शान्तिको भंग नहीं करना चाहिए। मैं कुछ बोला नहीं। मेघाच्छन्न आकाशमें जो दो-तीन तारे निकल आये थे उन्हींकी ओर संकेत करके रह गया। वह चुप हो गयी। थोड़ी देर बाद दूर बहुत धीमा धक धक-धक-धकका स्वर सुनाई देने लगा। बनी झीलके आर-पार आने-जानेवाला मोटर-बोट अपना अन्तिम फेरा करने आ रहा था। हमलोग उठकर घाटके पास आ गये। मोटर-बोटमें-से एक अकेली सवारी उतरी। वह भी जर्मन था। कल्पनाशील था, अकेला कुछ जानके बन रहा था। उतरते उतरते वह कह रहा था: प्रेत-नौका घाट आ लगी और उसमें-से उतरा— कि सहसा किनारेपर खड़े हम दोनोंको देखकर सकपकाकर चुप हो गया!

प्रेत-नौकापर हम दोनों सवार हुए। दूसरी पार बस मिल गयी— एक अप्रत्याशित संयोग! स्टेशनसे हम लोगोंने पश्चिम बर्लिनके चिड़ियाघरवाले स्टेशनकी राह पकड़ी। स्टेशनपर ही हम लोगोंने काफी पी और उसके बाद उ० के घर लौटनेके लिए गाड़ी देखने चले तो ज्ञात हुआ कि पूरबको जानेवाली अन्तिम गाड़ी जा चुकी है। परन्तु वह मीलों चल सकती है और चलती है यह मैं जानता था, लेकिन रातके डेढ़ बजे उसे पैदल घर जानेके लिए छोड़ देना अकल्पनीय था। स्टेशनसे बाहर मालूम हुआ कि कुछ टैक्सियाँ ऐसी हैं जिन्हें पूर्वी बर्लिनमें प्रवेश करनेका लायसेंस दिया गया है। ऐसी एक टैक्सी ढूँढकर उसपर सवार होकर चले। आधी रातको टैक्सी लेकर पूर्वी बर्लिनमें जाना मजाक नहीं है। लेकिन जितना ही अधिक दूर हो जायँ उतना ही धीरे चलना उचित है, क्योंकि तेज चलनेवाली टैक्सी तो दिनमें भी सन्देहकी दृष्टिसे देखी जाती है और आधी रातमें तो

सीमापे सन्तरी उसे टोकनेसे पहले उसपर फायर कर देना ही बेहतर समझ सकते हैं। पहले ही दिन मुझे चेतावनी दी गयी थी कि अगर कभी पूर्वी बर्लिनमें टक्सीमें जानेका संयोग हो तो टक्सीको दस मीलसे अधिक गतिसे न चलने दूँ नहीं तो जानका खतरा है!

लौट आया हूँ। चार बजने वाले हैं। बदली कुछ छट गयी है और हल्की-सी ठण्ड है। '

× × ×

डायरीमें ही—कुछ सुनी हुई घटनाएँ क्या जाने कभी लिखी जाने वाली कहानियोंके प्राख्प लेकिन भविष्यमें उपयोग हो न हो अभी भी ये मार्मिक हैं, आलोकप्रद हैं

मार्कका गुस्सा प्रसिद्ध था। वह सवेरे उठता ही तो झल्लाया होता, और सबसे राततक उसके चेहरेका भाव ऐसा रहता कि पास-पड़ोसी सभी डरते थे। क्या और कैसे उसका स्वभाव ऐसा हो गया यह कोई नहीं जानता था क्योंकि जब वह वायु-सेनामें भरती हुआ था तब सभी उसके हँसमुख चेहरे और मिलनसार स्वभावकी प्रशंसा किया करते थे।

लेकिन कुछ अद्भुत बात थी कि बच्चे उससे नहीं डरते थे। उसका झल्लाया हुआ चेहरा न केवल उन्हें आतंकित नहीं करता था बल्कि उसे देखते ही बच्चे घेर लेते थे और तरह-तरहकी फरमाइशें किया करते थे।

मि० जिसने यह घटना मुझे सुनायी वह प्राय अपनी फरमाइशोंसे तंग किया करती थी। मार्क उसका पड़ोसी था। अधिकतर तो वह अपने कामपर गायब रहता था लेकिन जब-जब घर आता था तब मि० उससे मिलने अवश्य जाती थी। वह भी मि० के घर अवश्य आता था। जर्मन कहानियोंका उसमें भी बहुत थी और मि० की मानापो वह बड़ी कहानियाँ सुनाया करता था। बल्कि मि० ने बताया कि बचपनमें उसकी कहानियाँ सुनते-सुनते वह कुर्सीपर ही सो जाती थी और बीच-बीचमें जाग

कर लगता था कि वह अभी कहानियाँ सुनाय हो जाने जा रहा है। फिर आगे रातके बाद किसी समय वह चला जाता था और सबेरे ही अपना व्यापार रवाना हो जाता था।

एक बारकर गि० का और दूसरोपर एक और बालिकाको सुनाता आ बाद मल्करपर चला जा रहा था कि उसने देखा सामनेसे एक लड़का रोती हुई चली आ रही है। उसने पास आये हुए स्वरमें उसने पूछा क्या है रोती क्यों है ? क्या बात रही है तुम ?

लडकीने रोते रोते उत्तर दिया मेरा दूधका नल गया है। मैं घर नहीं जाऊगी—मार पड़गी।

दूध तब बहुत महगा था। (एक लीटर अथवा सवह छटाकके लिए लगभग चार रुपये देने पडते थे।)

बालने और भी रुखाईसे कहा तो रोना क्या है ? चल मेरे साथ। वह उस बालीको बननानी दुकानपर ले गया।

कैसा था तेरा जग ?

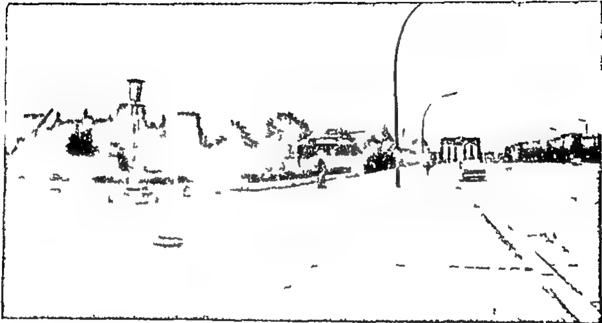
दुकानके बनानेपर ठीक वैसा ही जग बालने उस खरीद दिया और फिर दूसरी दुकानसे दूध भी ले दिया। जा अब जा! और खबरदार जो रोया तो! और यह न समझना कि फिर जग टूट गया तो मैं और ले दूगा—जग टूटा तो ऐसा थप्पड लगाऊगा कि जीवन भर याद रहेगा! समझी ? जा!

बात बचन ही कुरूप था। पर अपने रूपका उसे ध्यान नहीं था। गि० का अनुभव उसको मानाकी कहानियाँ सुनाते हुए प्राय वह उस युवतीकी रूप कल्पना भी किया करता था जिसके साथ भविष्यमें कभी वह विवाह करेगा—अभी तक उससे परिचय नहीं हुआ है लेकिन उससे क्या

एक दिन विमान उतरते-उतरते विमान चालक बाल सहसा मर गया। बताया गया कि दुर्घटनामें वह हो जानेसे उसकी मृत्यु हुई। किन्तु उसके

बॉन बेटहोवनभवन





बर्लिन सीमा रेखा

[ब्राडनबर्ग द्वार और रूसी युद्ध-स्मारक यह द्वार पूर्व और पश्चिमकी सीमा रेखा है]

परिचित फुसफुसाते स्वरोंमें कहते हैं कि उसने उन्हींसे पहले सीख लिया था—कि वह पूर्ण स्पष्ट हृदयंगम हो गया था, जीवनके अन्तरंग निजी स्तरपर भी और वायु-सेनाके विमान-चालकके नाते भी। अपना और अपने साथ अपने जैसों विमानका नाश ही वह चाहता था।

क्यों? इस 'क्यों' का उत्तर ही उसकी कहानी होगा, कदाचित् जर्मनी की और यूरोपकी भी कहानी होगा—क्योंकि वह नवीनतम साक्षात्कार की कहानी होगा।

× × ×

यह कहानी महायुद्धसे पहले शुरू हुई। ठीक कितना समय पहले, यह कहना कठिन है।

मायर और उसकी पत्नी उनके पड़ोसमें तीस बरससे रह रहे हैं। इस निःसन्तान दम्पतिमें आपसमें बच्चों जैसा प्रेम है जो कि सभी पड़ोसियोंके लिए कौतुक की और ईर्ष्याकी भी चीज है। दोनोंके बाल पक गये हैं लेकिन अब तक वे एक-दूसरेसे ऐसे दुलराते हुए स्वरमें बात करते हैं कि पड़ोसियोंको बलात् अपने-अपने दाम्पत्य जीवनका अन्तरवलोकन करनेके लिए बाध्य कर देता है।

अचानक वातावरणमें खिंचाव आता है। कहीं कुछ दीखता नहीं है लेकिन सब जानते हैं कि सतहके नीचे कोई भयानक शक्तियाँ काम कर रही हैं। मायरकी नौकरी छूट जाती है। पति-पत्नी दोनोंको कहीं किसी प्रकारका काम नहीं मिल सका है। सहायता भी नहीं मिल सकी है और क्रमशः भोजन मिलना भी असम्भव होता जा रहा है।

मायर-दम्पतिको उसपर शिकायत नहीं है। न उनको [illegible] शिकायत है। वे चुपचाप सहते हैं, मुसकराते हैं और एक-दूसरेपर पूर्ववत् अपना दुलार उड़ेलते हैं।

पड़ोसियोंमें उनकी कोई बातचीत अपने कष्टके सम्बन्धमें नहीं होती।

पड़ोसी भी आपसमें उनकी बदलती हुई परिस्थितिकी चर्चा नहीं करते। मानो सबने सब परस्पर अभिसन्धि करके एक नाटकीय समयका निर्वाह कर रहे हों जिसमें कुछ भी बदला नहीं है और मायर तथा उनकी पत्नी वैसे ही दीख पड़ते हमसे-स्वतः जीव हैं जैसे पड़ोसी उन्हें बरसोंसे जानते आये हैं।

केवल इतना होता है कि आमतौर मायरके सवेरे उठकर दरवाजा खोलना है तो पाते हैं कि कोई वहाँपर एक बोतल दूध रख गया है या कभी रोटी और मक्खन या कभी कुछ और। ऐसा भी होने लगा है कि कभी कभी दोनों बाहरसे आते हैं तो पाते हैं मेजपर एक लिफाफेमें कुछ रुपया रखा है।

यह सब कैसे होता है कौन करता है मायर दम्पति किसीसे नहीं पूछते। न उन्हें कोई बताता है। न वे कभी कहीं इसकी चर्चा सुनते या करते हैं।

फिर एक दिन ऐसा आया कि श्रीमती मायर सवेरे घरसे अकेली बाहर निकलीं—प्रायः तो दोनों एक साथ निकलते थे और टहलने जाते थे। थोड़ी देर बाद वह अकेली ही वापिस लौटीं। मायर शाम तक भी नहीं लौटे। रातको भी नहीं लौटे। दूसरे दिन सवेरे जब वह फिर अकेली बाहर निकलीं तो लोगोंने भी जान लिया कि मायर घरमें नहीं हैं। यह भी जान लिया कि लौटकर नहीं आयेंगे। यह भी जान गये कि पहली रात जो मोटर तड़के तीन बजे मुहल्लेमें आकर रुकी थी वह मायरको लेने ही आयी होगी।

श्रीमती मायर थोड़ी देर बाद लौटकर घरके भीतर चली गयीं। फिर बाहर निकलीं तो आठ बजे शाम सज-धजकर जैसे लोग विनय अवसरोंके लिए या पार्टीके लिए तैयारी करते हैं। पड़ोसके प्रत्येक घरमें जाकर वहाँ शालीनतासे साथ उन्होंने अपने पड़ोसियोंको धन्यवाद दिया। आप नहीं चाहते कि कोई जाने कि आपने हमपर क्या-क्या कृपा की है। लेकिन

मैं यह चाहती हूँ कि आप लोग जान लें कि हम कितने कृतज्ञ रहे और मैं कितनी कृतज्ञ हूँ। यह कृतज्ञता प्रकट करनेका दूसरा मौका मुझे शायद न मिले।

कृतज्ञता ज्ञापनका अपना दौरा करके श्रीमती मायर घर लौटीं और थोड़ा देर बाद साधारण कपड़े पहनके फिर बाहर निकलीं।

फिर वह लौटी नहीं। कहाँ गयी किसीको मालूम नहीं। इतना ही कि वह लौटी नहीं जैसे कि मायर भी नहीं लौटे जैसे कि और भी हजारों नहीं लौटने थे क्योंकि जिस समय वह घरसे निकले थे उस समय वे यहूदी थे अर्थात् उनकी पिछली आठ पीढ़ियोंमें कोई एक पूर्वज यहूदी था।

मायरको तो यहूदी जानवर या मानकर गैस देकर मार दिया गया होगा। किन्तु मिसेज मायरका क्या हुआ? अधिकतर पड़ोसियोंका विश्वास था कि उन्होंने आत्म-हत्या कर ली। लेकिन कुछका पक्का विश्वास है कि वह घरसे निकलकर सीधे थानेमें गयी जहाँ उन्होंने बयान दिया कि वह भी विवाहसे नहीं वंशसे यहूदी हैं और थानेसे गैस देनेकी जगह भेज दी गयीं।

उनका देहका क्या हुआ कौन जाने। यहूदियोंकी देहसे बनाये गये रसायन जर्मन-जीवनमें कहाँ तक रच गये हैं इसका कोई हिसाब नहीं रखा गया है।

× × ×

आर्जेन्टीनाकी राजधानी बुएनास एरिसमें मदाम अल्वारेस नामकी एक सम्भ्रान्त महिला रहती हैं। लोगोंसे उनका परिचय पूछनेपर बताया जायगा कि वह पहले एक प्रसिद्ध रसायनविद् थीं और जर्मनीके किसी विश्वविद्यालयमें पढ़ाती थीं अब अवकाश ले चुकी हैं। परिचय देनेवाला इसके साथ-साथ बड़े रहस्यपूर्ण ढंगसे मसखरा देगा। और पन्द्रह करनेपर पता होगा कि मदाम अल्वारेसको यह नाम उनके अट्ठारहवें विवाहने बाहर

प्राप्त हुआ है। सियार अल्वारससे उनका विवाह एक वर्षसे अधिक नहीं टिका और महायुद्ध समाप्त हो जानेके बाद वह यूरोप भी नहीं लौटी। वहीं अकेली रहने लगी है। सियार अल्वारस किसी दूसरे नगरमें रहते हैं।

तथ्य सब ठीक है। लेकिन कहानी यह नहीं है। कहानी बिल्कुल दूसरी है।

श्रीमती अल्वारस मूल जर्मन है। इतना ही नहीं एक पुराने अभिजात परिवारकी है। रसायनकी शिक्षा प्राप्त करके उन्होंने विश्वविद्यालयमें रसायन पढ़ाना आरम्भ किया और साथ-साथ एक प्रयोगशालामें अनुसन्धान करने लगी। इसी प्रयोगशालामें अनुसन्धानके सिलसिलेमें न मालूम क्या हुआ कि उनके स्वभावमें एक अद्भुत परिवर्तन आ गया। इसके एक डेढ़ महीने बाद ही उन्होंने रसायनशालाके एक-दूसरे आचार्यसे विवाह करके सबको अचरजमें डाल दिया क्योंकि पतिसे विज्ञान सम्बन्धी चर्चाके अतिरिक्त किसी प्रकारका घनिष्ठताका कोई लक्षण किसीने नहीं देखा था। लोग और भी चकित तब हुए जब विवाहके कुछ दिन बाद दोनों सैरके लिए दक्षिण अमरिका चले गये और वहाँसे पत्नी अकेली लौटी। कुछ दिन बाद पत्नीकी दरख्वास्तपर उनका डाइवोर्स हो गया।

दो एक महीने बाद रसायनकी युवती अध्यापिकाने फिर विवाह किया दम्पति फिर विश्व-यात्राके लिए चले और पत्नी फिर अकेली वापिस लौट आयीं।

तीन चार विवाहोंके बाद वातावरण ऐसा हो गया कि उन्हें नौकरी छोड़ देनी पड़ी। किन्तु सम्पन्न अभिजात परिवारकी होनेके कारण उनकी स्वच्छन्दता बनी रही और विवाह भी होते रहे।

अट्ठारहों पति प्रतिभाशाली वैज्ञानिक रहे हों, ऐसा तो नहीं, लेकिन किसी-न-किसी प्रकारकी प्रतिभा सभीमें थी और देशान्तर जाकर प्रायः समान प्रतिष्ठा पायी। केवल दो एक अपवाद थे किन्तु ये प्रायः

विवाहित पञ्च की रानी और इनमें असमान्य थे, और एक तो पत हो था।

उस समय यह बात भी नहीं था—और बताया भी नहीं जा सकता था—अब बताया जा सकता है कि अट्ठारहों पति यहूदी थे। तत्कालीन जर्मनीमें उनके प्राणोंकी रक्षा अधिक दिन न हो सकती। लेकिन एक अभिजात जनता और नारीके स्वच्छाचारके कारण सभी आज जीवित हैं, स्वस्थ हैं और अधिकतर मानव-कल्याणके लिए यत्नशील हैं।

सभी बच गये हैं, जिन्होंने । कहा तो गया उस नारीका चरित्र जो आज मदाम अन्वारस कहलाती है। उसका नाम लेकर अधिकतर लोग स्वच्छ और स्वस्थ मगर समझदार है। इसमें वह विचित्र शान्ता हो ऐसा नहीं जान पड़ता। उसने अपने ढंगसे अपनी शक्ति भर जर्मन जातिके अहंकारजन्य अत्याचारका प्रतिकार किया है और उसके पापका शोध किया है। शायद यह तरीका सभीको असंगत (और भारतवासियोंको चौंकानेवाला) लगे पर एकदम स्वेच्छापूर्वक वरण किये गये कष्ट (तपस्या) के द्वारा दूसरेके पापके मार्जनका सिद्धान्त उसका ईजाद किया हुआ नहीं है। उसके पीछे ईसाका प्रमाण है और ईसाइयतकी समूची परम्पराकी शक्ति।

मदाम अन्वारस रखैल और पुंश्चली मानी जाती है। अकेली है। निःसन्तान है। मुझे कोई बताये कि अपने अट्ठारह विवाहोंके बावजूद वह अभी कुमारी भी है तो मुझे अचरज नहीं होगा।

इस चरित्रका परिचय मुझे उन्हींकी एक सहेलीसे मिला है जो स्वयं यहूदी है और जिसका भाई मदाम अन्वारसके अन्यकालीन पतियोंमें एक रहा। नाम सभी कल्पित हैं, स्थान और काल-सम्बन्धी विवरणमें भी थोड़ा हेर-फेर है लेकिन मूल घटना सच है और चरित्र वास्तविक है।

× × ×

र्मनिमें म अधिक समय नहा रहा। था नमा आधारपर किसी नगर या द या जातिका प्रभावग्राह वाम ह और उसम धोखा हो सकता ह। भागन हुए मि क बारमें जा कुछ लिख हैं वह उसका उदाहरण ह ग्रहण करनी चाहिए कि इम भी वसा भूल न करें। लेकि कि म जा कर रहा हूँ उसमें इसको उप ा ह। जमन मय विशप प्रयोजन नहीं ह। उसका वणन म नहा कर र इतिहास उसकी राजनाति या दशन या विज्ञान उसकी व्यापारिक स्थितिके बारम मुझ न काई राय देनी ह न व यार करना ह। बल्कि जमन लोग क्या सोचत ह क्या चचा भी म नहीं कर रहा हू—यद्यपि इसका अनुमान थु तना असम्भव नही ह।

मुझ सयोगवश यह अवसर मिला कि इन मवर पाठ तनाव जमन मानसके भातर ह उसकी कुछ झाँकिया पा लू। तनाव देश-कालकी परिस्थितियान उत्पन्न किया है और अथवा उसे दूर करनकी योजनाए लिए इन सबका वर्णोंका यक ह। लेकिन जिस प्रकार सूर्योदयका प्रकाश देखनके लिए सक्रमणके सिद्धान्त जानना आवश्यक नही ह उसी प्रकार का दखनके लिए जमनीका अध्ययन आवश्यक नहीं ह

यूरोपक मध्यमें बहुत जमनी रहा ह और ह। द जमनीका केन्द्र ह और वहाँ शान्ति होनवाले (या अशान्ति तनाव सारे यूरोपको सचालित करत ह। म सयोगवश (बीचमें यह देश आया। जो कुछ मान मुझ मिला उसस करनमें मय वर्षों भी लग सकत ह लेकिन यह तो मर यात्राकी बात ह।

यूरोपका स्नायु-केन्द्र   बर्लिन

एक क्षण भर और रहने दो मुझे अभिभूत
फिर जहाँ मैंने सजोकर और भी सब रखी हैं ज्योति शिखाएँ
वहीं तुम भी चली जाना
शान्त, तेजोरूप।

एक क्षण भर और
लम्बे सर्जनाके क्षण कभी भी हो नहीं सकते।
बूँद स्वातीकी भले हो
बेधती है मर्म सीपीका उसी निर्मम त्वरासे
वज्र जिससे फोडता चट्टानको।

भले ही फिर व्यथाके तममे
बरसपर बरस बीतें
एक मुक्तारूपको पकते।

वर्लिनम म अधिक समय नही रहा। थाड न्निार्के निजी अनुभवक आधारपर किमी नगर या देश या जानिका प्रभावग्राही चित्रण आत्मका काम ह और उसमें धाखा हो सकता ह। भागन हुए विदेशी टूरिस्ट भारत के बारेम जो कुछ लिखत ह वह इसका उदाहरण ह और उसम शिक्षा ग्रहण करना चाहिए कि हम भी वसी भूल न करें। लकिन म नहा समझता कि म जो कर रहा हू उसमें इसकी उपे ा ह। जमन जीवनके बहिरगस मप विशप प्रयोजन नही ह। उसका वणन म नही कर रहा हू। जमनीके इतिहास उसकी राजनीति या दशन या विज्ञान उसकी अथ-व्यवस्था या यापारिक स्थितिके बारेम मुच न काई राय देना ह न काई रवया अख्ति यार करता ह। बकि जमन लाग क्या साचन ह क्या चाहत ह इसकी चर्चा भी म नही कर रहा हू—यद्यपि इसका अनुमान कुछ दिनामें कर लना असम्भव नहीं ह।

मझ सयोगस यह अवसर मिला कि इन सबक पीछ जा आभ्यन्तर तनाव जमन मानमके भीतर ह उसकी कुछ झाकिया पा हू। नि सदेह वह तनाव देश-कालका परिस्थितियान उत्पन्न किया है और उसे समझन अथवा उसे दूर करनकी योजनाके लिए इन सबका वर्षोंका अध्ययन आव श्यक ह। लकिन जिम प्रकार सूर्योदयका प्रकाश देखनके लिए सौर मण्डलक सक्रमणक सिद्धात जानना आवश्यक नहा ह उसी प्रकार इस अन्तरालोक को देखनके लिए जमनीका अध्ययन आवश्यक नही ।

यूरोपक सघर्षोंका केन्द्र जमनी रहा ह और ह। वर्लिन अब भी जमनीका केन्द्र ह और वर्गीकृत हानवाले (या अवर्गीकृत भी) स्नायविक तनाव सारे यूरोपको सचालित करत ह। म सयोगवश वर्लिनोरा-सी कौंधमें यह दख पाया। जो कच्चा माल मन मिला उसमे कुछ निमाण करनमें मत्र वर्षों भी लग सकन ह लकिन यह तो मरी आभ्यतर यात्राकी बात ह।

एक क्षण भर और रहने दो मुझे अभिभूत
फिर जहां मैंने सजोकर और भी सब रखी हैं ज्योति शिखाएँ
वहीं तुम भी चली जाना
शान्त, तेजोरूप।

एक क्षण भर और
लम्बे सजनाके क्षण कभी भी हो नहीं सकते।
बूद स्वातीकी भले हो
बेधती है मम सीपीका उसी निमम त्वरासे
वज्र जिससे फोडता चट्टानको।

भले ही फिर व्यथाके तमम
बरसपर बरस बीतें
एक मुक्तारूपको पकते।

•

प्राची-प्रतीची

चेहरे

कुछ चेहरे देखकर मनमें विचार उठता है—अरे, यह चेहरा मैंने पहले कहीं देखा है—और यह क्षण केवल पहले देखनेके स्मरणका क्षण नहीं बल्कि पहचाननेका क्षण होता है। उस क्षणमें वह चेहरा मित्रका चेहरा लगने लगता है।

कुछ चेहरे ऐसे होते हैं जिन्हें देखकर भी मनमें सहसा यही विचार उत्पन्न होता है कि अरे, यह चेहरा तो पहले कहीं देखा है, पर यह क्षण केवल एक चिन्तक स्मरणके क्षणका होता है, कोई पहचान उसको आलोकित नहीं करती। और यह देखा हुआ चेहरा उस क्षणमें और भी अपरिचित लगने लगता है।

और जान पड़ता है कि पहले वर्गके चेहरे दिन-पर-दिन कम होते जा रहे हैं और दूसरे वर्गके बढ़ते जा रहे हैं।

क्योंकि मानो अब मनुष्यका उत्पादन एक बड़े पैमानेके उद्योगके कारखानेमें होने लगा है—व्यक्तित्व खोकर अब वह प्रतिमा नहीं रह गया है बल्कि केवल एक ठप्पा हो गया है।

कहाँ गये बाइबलके वे ऋषि महात्मा जिन्होंने कहा था कि ईश्वरने स्वयं अपनी प्रतिमासे मानवको रचा?

वरणकी स्वतन्त्रता

मनुष्यकी नैतिकताका क्या अर्थ है सिवा इसके कि वह अपने कर्मके लिए उत्तरदायी है? लेकिन जिस कर्मका उसने स्वेच्छासे वरण नहीं किया है, वह उसका कर्म कैसे है?

इसलिए अगर हम मनुष्यकी वरणकी स्वतन्त्रता नहीं मानते तो हम उसकी नैतिकताकी सम्भावना भी नहीं मानते।

यन्त्र और आत्म-दान

यान्त्रिक उन्नति इस क्रमसे सुगमतर बनाती जाती है कि मानव अधिकाधिक काम बिना आत्म-दान कर सके।

अर्थात् वह क्रमशः अधिकाधिक मानवोंका अहन्ता होना अधिकाधिक सम्भव बनाती जा रही है यदि वे यान्त्रिक उन्नतिपर ही निर्भर करते हैं।

यान्त्रिक उन्नति

यान्त्रिक उन्नति अपने-आपमें दूषित नहीं है। वह मृत्युको सुगमतर बनाती है, इसका अर्थ यह नहीं है कि वह जीवनको असम्भव बनाती है।

किन्तु यान्त्रिक उन्नति आत्माको प्रेरणा नहीं देती और वह प्रेरणा आवश्यक है। उस प्रेरणाके लिए मानवकी खोज आत्मनिष्ठ मानवकी खोज है।

शिक्षा, विचार और भावना

लोक-कल्याणका अर्थ जब परिस्थितियोंका प्रतिमानीकरण समझ लिया जाता है तब शिक्षाका अर्थ भी मानसिक प्रतिक्रियाओंका प्रतिमानीकरण हो जाता है। तब हम परिस्थितियोंकी विशिष्टताको अवांछनीय समझने लगते हैं और मानव प्रतिक्रियाओंकी विशिष्टताको अनिष्टकर होता।

शिक्षा विवेकको परिष्कार देती है। जो शिक्षा विचार-शक्तिकी बजाय भावनाका नियमन करना चाहती है वह मतवादिताकी धात्री है।

प्रतिमान और प्रतिमानीकरण

हम जीवनके प्रतिमानकी बात करते रहते हैं और जीवनका प्रतिमानीकरण करते रहते हैं।

हम सांस्कृतिक स्वातन्त्र्यको राजनैतिक मतवाद बनाना चाहते हैं पर यह भूल जाते हैं कि स्वतन्त्र रहनेके लिए संस्कृति तो प्रतिदिन कम होती जाती है। व्यक्ति-संस्कृति भी व्यक्ति-स्वातन्त्र्यकी भाँति प्रतिदिन आक्रान्त होती जा रही है।

देव प्रतिमा

ईश्वरने मानवके रूपमें अपनी प्रतिमाका निर्माण किया। कुशल शिल्पी होनेके नाते उसने प्रत्येक प्रतिमा भिन्न और अद्वितीय बनायी। भिन्न होनेके कारण प्रतिमाएँ परस्पर प्रेम कर सकीं।

अब यन्त्र-युगमें मानव ईश्वरके रूपमें अपनी प्रतिमाका निर्माण करता है। उत्पादक होनेके नाते वह सभी प्रतिमाएँ एक रूप और एक प्रमाण बनाता है। समान होनेके कारण प्रतिमाएँ एक दूसरेसे केवल घृणा कर सकती हैं।

संस्कृति व्यक्तित्वका विस्तार

संस्कृति व्यक्तित्वका विस्तार और प्रसार माँगती है, संकोच या छुटाव नहीं। संस्कारी व्यक्ति बराबर नयी उपलब्धियोंको आत्मसात् करता चलता है। संस्कृत व्यक्तिकी आत्म संज्ञा या अनुभूति किसी व्यक्ति या वस्तुके मुकाबिलेमें उसके विरुद्ध उभर कर आनेके लिए नहीं होती— जैसे घर या बटुएकी सजावट या मित्र मण्डली या प्रेमी— बल्कि वह उन्हें अपनेमें धर लेती है।

अलंकरण और पशुकरण

पश्चिमकी आधुनिका अपने नाखून रँगती है। नाखून अब उसके शरीरका अंग न रहकर एक अलंकरण रह गये हैं। वह अपना चेहरा रँगती और सजाती है, वह चेहरा भी उसका अपना नहीं रहा है बल्कि एक

आभरण हो गया ह । अद्वितीय वैयक्तिक निजी चहरा किसीका नहीं होना सजावी जो कुछ प्रसिद्ध शैलियाँ ह उनमेंसे किसी एक शैलीका चहरा पहचान लिया जाता ह—अर्थात चहरा नहीं चहराके मास्क रह गये हं ।

दिनके समयके अनुसार पहने हुए अलकारोंके अनुसार पोशाकके रगके अनुसार मुख रजनी (लिपस्टिक) का रग भी बदलता ह । सजम नया यह देखा ह कि आधुनिकाए अपनी वेश भूषाके अनुरूप आख बालोंको भी रगती ह । इस प्रकार मुह भी और केश भी व्यक्तित्वके अविभाज्य अग न होकर उसके आवरण मात्र हो गये ह ।

क्या यह मानवीय व्यक्तित्वका क्रमिक पशुकरण नहीं ह ? एक एक अग गलकर गिर नहीं रहा ह बल्कि स्वय काटकर फेंक दिया जा रहा ह ।

और पूवकी आधुनिका ? यह नहीं कि उसकी कल्पना असम्भव ह—आधुनिका पूवकी भी हो सकती थी । शायद हो भी लेकिन पूवकी दृष्टिमें विकास यदि भीतरी होता ह तो आधुनिकता भी भीतरी सस्कार ही होगा और उसका दृश्य लक्षण कोई न होगा । जिन्हें हम आधुनिकाके नामसे पहचानते ह वे वास्तवमें पूवकी ह ही नहीं । यह ठीक ह कि इसीसे वे पश्चिमी नहीं हो जातीं । पश्चिमके अनुकरणमें उन्होंने भी अपनेको अग अग करके प्रसाधित बनाया ह और उसके बाद पशु देशको फिर पाश्चात्य रगमें रग लिया ह—अर्थात उनके चहरेका रग पहचाने हुए चहरेका स्वाभाविक रग भी नहीं ह—वह रगे हुए पहचाने हुए चहरेका रग ह ।

वयस्कताके रूप

पश्चिमी जन जब तक युवा रह सकता ह रहता ह फिर वय मया हो जाता है ।

पूर्वी जन जब्राक वश मवन रह मकता ह रहता ह सिर उद्ध न जाता ह।

नाति शास्त्र

यूरापकी परम्पराम स्वत त्रता व्यक्तिकी आत्म निभरता रहा ह चानम परिवारको आत्म त त्रता और भारतम ग्राम-समाजका स्वत सम्पणता।

कि तु इसके विपरात परम्परास यूरापकी नाति शास्त्र सम्पक्तिका रचा ह चानका स तुलनका और भारतका स याम अथवा अनासक्तिका।

एका त मार्ग

मध्याका तक या बहुमतका सिद्धा त एक सीमातक ठीक ह लेकिन वह सीमा बनी स्पष्ट और अन घनीय ह। जो अधिक नियमक नाच न रह कर सम्पूणके नियमके अधान रहना चाहता ह उसके लिए एक ही माग ह। वह माग अधिसख्यक शासनसे आग बढकर एकमवक शासनतक जाता ह—वह माग सम्पूण और अखण्ड एकान्तका माग ह।

भयक रूप

आत्म हत्याकी और काई प्ररणा नहा हा सकती सिवा मत्यु भयक।

इसीका दूसरा पश यह ह कि जहां मत्यका भय ह वहा आत्म-हत्याकी प्रवत्ति भी आग उठता ह—यदि वह प्रवत्ति पर हत्याका प्रवत्तिका रूप नहा ल ली।

काम और मृत्यु

आधनिक पश्चिमका समस्याक दा पक्ष ह।

पहला काम (सक्स) का स्वाकार अथवा दमन?

दूसरा : सत्यका स्वीकार अथवा दमन ?

पहली समस्या चेतनाकी समस्या है। पश्चिमने अब इसके काम चलाऊ उत्तर या अनेक उत्तरोंकी परम्परा पा ली है। दूसरी समस्या आत्माकी समस्या है। अभीतक पश्चिम इससे कतराता हो रहा है।

किसी भी प्रश्नसे कतराना या उसका दमन करना अस्वस्थ है—रोग उत्पन्न करता है।

कामके दमनके दुष्परिणामोंसे सत्यके दमनके दुष्परिणाम कहीं अधिक भयानक होते हैं।

अद्वितीयता और प्रतियोगिता

जो मानवीय व्यक्तित्वकी अद्वितीयता की बात करते हैं वही फिर प्रतियोगिता बराबरी की भक्ति कैसे दे सकते हैं ?

क्या जरूरी है कि हर घरम रफाजन्टर हो, अन्यथा मानवकी प्रतिष्ठा बनी नहीं रह सकती ?

संस्कृति और अवकाश

संस्कृति अवकाशका आनन्दमय उपभोग करनेकी क्षमता है। अवकाश का उपभोग तनावसे मुक्त शान्त मन स्थिति माँगता है। बिना शान्तिके अवकाश नहीं है, अवकाशका बोध या स्वीकार नहीं है।

अतएव जो अशान्त है वह सुसंस्कृत नहीं हो सकता। यह क्या समूचे पश्चिमके लिए एक चेतावनी नहीं है ?

बुद्धिजीवी

बुद्धिजीवी वास्तवमें भौतिकताको अस्वीकार नहीं करता, बल्कि उसपर पलता है। उसकी अधिकतर समस्याएँ इसीसे उत्पन्न होती हैं। और यही उसकी विवशता और असमर्थताकी जड़ है।

इष्ट और साधन

सुख क्या इष्ट है? कहना कठिन है।

समरसता क्या इष्ट है? अवश्य। सुख तो उसकी सांयोगिक एवं आनुषंगिक उपलब्धि है।

समरसताकी पहली शर्त है आत्म-चेतनासे मुक्ति। इस मुक्तिके दो साधन हो सकते हैं — एक तो मृत्यु, दूसरा गहरा राग।

पश्चिमी दृष्टि सभ्यताके नामपर रागको नियन्त्रित करना चाहती है और जीवन-प्रेमके नामपर मृत्युकी चेतनाको दबा देना चाहती है।

भारतीय दृष्टि रागको पूजाके आसनपर प्रतिष्ठित करती है और मृत्युको गहरे सत्यके रूपमें स्वीकार करती है।

चेतनाके दूसरे छोरपर

कुछ पश्चिमी चिन्तकोंने जिज्ञासावश मृत्युका अन्वेषण किया है। वे आत्म-चेतनाके छोर तक गये हैं और उन्होंने उचककर अनस्तित्वके अनन्त गगनकी एक झांकी देखी है। फिर वे लौट आये हैं—कुछ डरसे कांपकर और कुछ बिना डर।

पूर्वी चिन्तकने ऐसा अन्वेषण नहीं किया। यद्यपि वह अनस्तित्वको मानकर नहीं चला। उसे विश्वास रहा है कि चेतनाके दूरतम छोरके बाहर जो निविड़ अन्धकार है उसमें भी कहीं-न-कहीं करुणा अवश्य है। जहाँ कुछ नहीं है वहाँ भी कृपा है। इसके बारेमें उसने कभी शंका नहीं की।

ट्रैजेडी

साहित्यिक क्षेत्रमें पाश्चात्य नाटकमें जो ट्रैजेडी रखा जाता है उसकी यथार्थता या उसका मूल्य क्या है

वया वध हुए चरित्रोंकी नाट्य परिस्थितिमें जो ट्रैजडी हो सकती है वह बड़ी है या कि उनकी वधा होना अपने आपमें जो ट्रैजडी है वह ?

अगर नाटककार स्वतन्त्र चरित्रोंका आविष्कार कर सकता और फिर उनकी ट्रैजडी प्रस्तुत करता !

विशिष्ट ज्ञान

विचार और तर्कका सम्बन्ध सार्वजनीन अथवा व्यापकसे है। विशिष्ट का ज्ञान हमें उनसे नहीं मिलता उसका साधन हमारी अनुभूति है।

कलाके क्षेत्रमें इसका अर्थ कला भी ज्ञानका साधन है—विशिष्ट के ज्ञानका।

पेड़ और सीढ़ी

पश्चिमकी प्रतिभा कथनमें है पूर्वकी सङ्केतमें पश्चिमकी व्याख्यामें पूर्वकी सूत्रमें। पश्चिमके लिए सत्यकी परिभाषा कर देना उसको स्वायत्त कर लेना है। पूर्वके लिए सत्यको परिभाषित कर देना उसको पंगु कर देना है।

पश्चिमके लिए अर्थ ज्ञानमें है और ज्ञान एक सीढ़ी है। पहले आप एक सीढ़ीपर होते हैं और फिर दूसरीपर जब दूसरी सीढ़ीपर पहुँच जाते तब पहलीपर नहीं रहते। पूर्वके लिए अर्थ ज्ञानमें है और ज्ञान एक पनपता हुआ वृक्ष है। आप जिस भी डालपर हों उसी वृक्षपर रहते हैं।

परिधि और व्यास

पश्चिमकी खोज वृत्तकी परिधिकी है वह एक है उसका विनाश हो सकता है। पूर्वकी खोजें वृत्तके व्यासकी हैं। वे असंख्य हैं और उनकी विनाश भी असम्भ

यात्रार छार

पश्चिमी जन अमग्गिणनाम जारम्भ करना ह और अनाम्या तक पश्चना ह । पर्वी जन तग्म्धनाम आरम्भ करता ह और नान तक पहुचना ह ।

पूर्व और पश्चिम सभ्यताके आयाम

पाश्चात्य मस्कृतिका कद्र ह म । उमकी मूल स्थिति गप जगनम निरा नका सम्बन्ध ह ।

चीना सस्कृतिक मूल्म हम का भाव ह । उमकी खाज गप जगनम मामञ्जस्यकी मम्ब धकी खोज ह ।

भारनाय मस्कृतिका मन मान म और हम की एकात्मताका बाध ह । इसक लिए किसी मम्बन्धकी खाजका प्रश्न नहा ह मनकी स्वाकृति हा उमका इष्ट ह ।

पश्चिमी सभ्यनाका आयाम उत्मा ो घमद्गतम उ माही जनघानी तक

चीना सभ्यनाका आयाम अनुत्मिन दागनिकस अनुत्मिन नागनक

भारनाय सभ्यनाका आयाम अनुण्ठित स तग अनुत्मिन पागण्डी तक ।

पश्चिमी सभ्यना मधपका आरम्भ बनानी ह । ईमाइयनक यावजूद वह अधर्मी सभ्यना ह ।

पूर्वकी सभ्यता मनपर्वको निरावरण करके समस्वरताकी आस्था मानती है। अनीश्वरवादके बावजूद वह धार्मिक सभ्यता है।

पूर्व और पश्चिम : देश और काल

पश्चिमका काल-बोध एकांगी है। अर्थात् उसे तात्कालिकता और त्वराका बोध तो है किन्तु कालकी व्यापकता और घनिष्ठता नहीं। भारतको कालके विस्तारका बोध है लेकिन उसकी तीव्रताका नहीं।

दूसरी ओर भारतका देश-बोध एकांगी है। अर्थात् उसे निकट भौगोलिक परिस्थितिका बोध तो है किन्तु देशके विशाल प्रसारका नहीं।

यूरोपवासी देशके असीम विस्तारमें कालके एक बिन्दुपर जाता है। भारतवासी कालके अनन्त विस्तारमें देशके एक बिन्दुपर रहता है।

पूर्व और पश्चिम : काल-बोध

यूरोपीय व्यक्ति क्षणमें जीता है। अन्तरालसे उसे प्रयोजन नहीं है—इतना भी नहीं कि भूत और भविष्यका उपयोग वर्तमान जीवनको सम्पन्नतर बनानेके लिए करे।

भारतीय व्यक्ति अनन्तकालमें रहता है। उसके लिए वर्तमान काल एक असुविधाजनक धारा है जो भूत और भविष्यको मिलानेवाले उसके बनाये हुए पुलके नीचेसे बहती है।

पूर्व और पश्चिम : संक्षिप्त इतिहास

पश्चिमका एक संक्षिप्त इतिहास
ईसाको किसने मारा ?
—ईसाई जातिने।
ईसाइयतको किसने मारा
—ईसाई राष्ट्रने।

पूर्वका एक सत्य : इतिहास

करुणा आदर्श थी किन्तु दुःख जब स्वयं एक भ्रम है तो करुणा क्या भ्रान्ति कल्पना न होगी ?

स्वाधीन तो आत्मा है और वह अनश्वर भी है फिर दासताके विरोधमें प्रवृत्त होना क्या शक्तिका अपव्यय न होगा ?

हमारे भाई गिरते रहे पर वे पिछले जन्मके पापोंका फल भोग रहे थे।

हम भी गिरते रहे पर हम अगले जन्मके लिए पुण्य-संचय कर रहे थे।

ईश्वर-सुत, मानव-सुत

ईसाइयतने अपने मसीहाको ईश्वर-सुतका गौरव-पद देकर उसको सलीब वहन करनेका अधिकार छीन लिया।

क्योंकि सलीबको केवल मानव सुत उठा सकता है वही उसे उठाने आया है और वही आगे भी उठायेगा।

विस्मय और जिज्ञासा

पश्चिम अपने सम्मुख पहाड़ देखता है और शिखर तक रास्ता काटने लगता है ताकि पर्वतपर जयी हो सके और जान ले कि उसकी दूसरी पीठ पर क्या है।

जहाँ विस्मय है वहाँ जिज्ञासा है संस्कार है।

पूर्वके सम्मुख सागर है। वह रस्सी डालकर गहराई नापता है। गहराई जान ली जाती है लेकिन सागर अजान रह जाता है।

जहाँ विस्मय नष्ट हो जाता है वहाँ केवल पराजय मिलता है।

यात्रान्त यात्रारम्भ

पश्चिमकी प्रतिमा कल्पनामें है। उसकी प्रत्येक परिभाषा परिधिका निर्धारण करता है। अमुक क्योंकि अमुक है इसलिए उसमें इतर नहीं हो सकता, यह उनकी यात्राका अंत है।

पूर्वकी प्रतिमा विस्तारमें है। अमुक क्योंकि अमुक है इसलिए अमुकमें इतर और सब कुछ भी हो सकता है यह उसकी यात्राका आरम्भ है।

पूर्वका एक संक्षिप्त इतिहास

करुणा आत्मा थी किन्तु दुःख जब केवल एक भ्रम है तो करुणा ऐसा क्या भ्रान्ति कल्पना न होता ?

स्वाधीनता तो आत्मा है और वह अनश्वर भी है फिर दासताके विरोधमें प्रवृत्त होना क्या शक्तिका अपव्यय न होता ?

हमारे भाई गिरते रहे पर वे पिछले जन्मके पापोंका फल भोग रहे थे।

हम भी गिरते रहे पर हम अगले जन्मोंके लिए पुण्य-संचय कर रहे थे।

ईश्वर-सुत, मानव सुत

ईसाइयोंने अपने मसीहाको ईश्वर-सुतका गौरव-पद देकर उसका सलीब वहन करनेका अधिकार छीन लिया।

क्योंकि सलीबको केवल मानव सुत उठा सकता है वही उसे उठाता आया है और वही आगे भी उठायेगा।

विस्मय और जिज्ञासा

पश्चिम अपने सम्मुख पहाड़ देखता है और शिखर तक रास्ता काटने लगता है ताकि पर्वतपर जयी हो सके और जान ले कि उसकी दूसरी पीठ पर क्या है।

[illegible] विस्मय है वश जिज्ञासा है [illegible] है।

पूर्वके सम्मुख सागर है। वह रस्सी डालकर गहराई नापता है। गहराई जान ली जाती है लेकिन सागर अजान रह जाता है।

जहाँ विस्मय नष्ट हो जाता है वहाँ केवल पराजय मिलती है।

यात्रांत यात्रारम्भ

पश्चिमकी प्रतिभा कल्पनामें है। उसकी प्रत्येक परिभाषा परिधिका निर्धारण करता है। अमुक क्योंकि अमुक है इसलिए उसमें इतर नहीं हो सकता' यह उसकी यात्राका अंत है।

पूर्वकी प्रतिभा विस्तारमें है। अमुक क्योंकि अमुक है इसलिए अमुकमें इतर और सब कुछ भी हो सकता है यह उसकी यात्राका आरम्भ है।